विश्व हिंदी पत्रिका

2018

प्रधान संपादक
प्रो. विनोद कुमार मिश्र

संपादक
डॉ. माधुरी रामधारी

विश्व हिंदी सचिवालय
इंडिपेंडेंस स्ट्रीट, फ़ेनिक्स 73423,
मॉरीशस

World Hindi Secretariat
Independance Street,
Phoenix 73423, Mauritius

info@vishwahindi.com
वेबसाइट / Website : www.vishwahindi.com
फ़ोन / Phone : +230-6600800, **फ़ैक्स** / Fax: 00-230-6064855

ISSN No. : 1694-2477

सहायक संपादक
श्रीमती श्रद्धांजलि हजगैबी-बिहारी

संपादन सहयोग
डॉ. बीरसेन जगासिंह, डॉ. देवभरत सिरतन,
डॉ. संयुक्ता भुवन-रामसारा, डॉ. देविना अक्षायवर

टंकण टीम
श्रीमती विजया सरजु, श्रीमती त्रिशिला आपेगाडु, सुश्री जयश्री सिबालक

निवेदन

विश्व हिंदी पत्रिका में प्रकाशित लेखों के विचार लेखकों के अपने हैं।
विश्व हिंदी सचिवालय और संपादक मंडल का उनके विचारों से सहमत होना
आवश्यक नहीं है।

पृष्ठ सज्जा
आर. एस. प्रिंट्स

स्टार पब्लिकेशंस प्रा. लि., 4/5 बी, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-110002 (भारत) द्वारा प्रकाशित

अनुक्रम

हिंदी : स्वरूप, साहित्य एवं संस्कृति

1.	भाषा : संरचना, ठहराव और बहाव (सन्दर्भ - 'हिंदी' भाषा)	डॉ. रवीन्द्र कुमार पाठक	03
2.	हिंदी साहित्य का इतिहास : महत्त्व एवं प्रासंगिकता	डॉ. कृष्णा आचार्य	14
3.	हिंदी साहित्य में संस्कृति चिंतन	डॉ. बीरसेन जगासिंह	18
4.	फ़िजी में बहती भारतीय संस्कृति एवं हिंदी की गंगा	डॉ. विनय कुमार शर्मा	22
5.	दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीय लोकवृत्त में हिंदी और हिंदू संस्कृति के प्रश्न	प्रो. हरिमोहन	27
6.	हिंदी बाल साहित्य और भारतीय संस्कृति	डॉ. डी. विद्याधर	37

हिंदी-शिक्षण एवं शोध

7.	स्पेनी भाषियों को हिंदी व्याकरणिक लिंग अध्ययन में सरलताएँ व विषमताएँ	प्रो. विजयकुमारन सी.पी.वी.	41
8.	आई.सी.टी. आधारित हिंदी भाषाई अधिगम और शिक्षण का परिप्रेक्ष्य	डॉ. सी. जय शंकर बाबु	51
9.	अमेरिका में हिंदी-शिक्षण : सफलता और चुनौतियाँ	डॉ. अशोक ओझा	58
10.	हिंदी-अध्यापन का विदेशी संदर्भ और दक्षिण कोरिया	श्री दिविक रमेश	62
11.	हिंदी-शिक्षण में संप्रेषण कौशल : मॉरीशसीय संदर्भ में	डॉ. अलका धनपत	69
12.	सरस्वती हिंदी पाठशाला में हिंदी-शिक्षण	डॉ. धनराज शम्भु	74

हिंदी : सूचना-संचार एवं प्रौद्योगिकी

13.	फ़िजी में हिंदी पत्रकारिता के 103 वर्ष	डॉ. जवाहर कर्नावट	79
14.	हिंदी पत्रकारिता के शिल्प में जनभाषा का प्रभाव	श्री शैलेंद्र दुबे	83
15.	हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट का प्रदेय	डॉ. सहदेव वर्षाराणी निवृत्तीराव	88
16.	राजभाषा हिंदी प्रचार-प्रसार में एण्ड्रॉइड मोबाइल की भूमिका	श्री विजय प्रभाकर नगरकर	95
17.	हिंदी फ़िल्मों के संवादों में विश्व हिंदी	श्री सुरेश कुमार श्रीचंदानी	99

हिंदी : विविध आयाम

18.	उपनिवेशों में हिंदी	श्री भवानीदयाल संन्यासी	102
19.	भूमण्डलीकरण और हिंदी भाषा	डॉ. पद्माकर पाण्डुरंग घोरपड़े	107
20.	असम में हिंदी	श्रीमती अनुजा बेगम	112
21.	हिंदी भवन भोपाल में हिंदी	श्री गोवर्धन यादव	115
22.	भाषा की इच्छा मृत्यु	डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री	121

विद्वानों के वक्तव्य

23.	उज़्बेकिस्तान में हिंदी भाषा का अध्ययन तथा अध्यापन : वर्तमान और भविष्य	डॉ. सिरोजिद्दिन सुल्तानमुरातोविच नुर्मातोव	127
24.	वैश्विक हिंदी, भाषिक संपदा : विस्तार एवं संभावनाएँ	प्रो. वृषभ प्रसाद जैन	133

टिप्पणियाँ, अनुभव एवं विचार बिन्दु

25.	हिंदी ऐसे बन पाएगी राजकाज की भाषा	श्री उमेश चतुर्वेदी	141
26.	विश्व हिंदी सम्मेलन के संदर्भ में बैठका : धार्मिक-सांस्कृतिक नेतृत्व का प्रतिमान	श्री संजय युधिष्ठिर मनबोध	144

विश्व हिंदी सम्मेलन

27.	मेरा बचपन, सूरीनाम और सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन	श्रीमती उषा राजे सक्सेना	147
28.	पहला विश्व हिंदी सम्मेलन : एक अविस्मरणीय अनुभव	श्री सुरेश रामबर्ण	158
29.	पूर्व में विश्व हिंदी सम्मेलनों में पारित प्रस्तावों का कार्यान्वयन	डॉ. उदय नारायण गंगू	161
30.	10वें विश्व हिंदी सम्मेलन की सुमधुर स्मृतियाँ	डॉ. संयुक्ता भुवन-रामसारा	164
31.	विश्व हिंदी सम्मेलनों का प्रभाव	डॉ. सरिता बुद्धु	169
32.	11वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन : एक सुखद अनुभव	डॉ. देवभरत सिरतन	173

2018 में हिंदी जगत् की चयनित खबरें

33.	'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2018 की चयनित खबरें	विश्व हिंदी सचिवालय	179

श्रद्धांजलि

34.	मॉरीशस के लब्धप्रतिष्ठ हिंदी रचनाकार अभिमन्यु अनत को याद करते हुए	डॉ. देविना अक्षयवर	188
35.	श्रद्धांजलि 2018	विश्व हिंदी सचिवालय	192

MINISTER OF EDUCATION AND HUMAN RESOURCES, TERTIARY EDUCATION AND SCIENTIFIC RESEARCH

It is a great pleasure for me to be associated with the publication of this tenth issue of the "Vishwa Hindi Patrika". This year the publication of the "Patrika" follows in the slipstream of the 11th World Hindi Conference held in Mauritius in August 2018.

Since its establishment in 2008, the World Hindi Secretariat has been forging ahead in the accomplishment of its mission of promoting Hindi at the global level. It has organized various activities, workshops, conferences, seminars and competitions to this end. True, there is still some way to go - but we must be optimistic

With the collaboration and the full support of my Ministry, the Secretariat is translating with an eye on the future, the unflinching determination of both the Governments of Mauritius and India to pledge for the promotion of Hindi as an international language, and further the cause of Hindi towards its recognition at the United Nations as an official language. The Secretariat has therefore a challenging role to steer this vision to that effect.

I note that the 10th issue of the annual publication of "Vishwa Hindi Patrika" is dedicated to holistic research on the various dimensions of Hindi. Among other things, research becomes instrumental in explaining the process whereby, just as in the case of English language for instance, Hindi is fast transforming itself into a language that federates, one that has become a popular communication vehicle. This is as much due to the availability of modern technologies as it is induced by geographical mobility in a globalised world. I believe the different domains of research can also be contributory to accelerating the transition of Hindi to an international language.

It is noteworthy that research articles written by eminent scholars in the context of the 11th World Hindi Conference and observations made on various topics discussed in the parallel sessions of the Conference, are also incorporated in this edition of the "Patrika".

This magazine equally serves another purpose. It is paramount that people of the Indian Origin around the globe coming from the various Diaspora countries be kept well informed of the activities being undertaken world-wide. Undoubtedly "Vishwa Hindi Patrika" is called upon to leave no stone unturned in fulfilling this mission of disseminating Hindi and spreading the Indian ethos.

I would like to extend my heartfelt congratulations to the World Hindi Secretariat and to the editorial team as well as to all those who have contributed in one way or another in the launching of this 10th issue of the "Vishwa Hindi Patrika". I also seize this propitious opportunity to wish the World Hindi Secretariat plenty of success in its future endeavours.

Hon. (Mrs) Leela Devi Dookun-Luchoomun
Minister of Education and Human Resources,
Tertiary Education and Scientific Research

भारतीय उच्चायुक्त
पोर्ट लुई, मॉरिशस

HIGH COMMISSIONER OF INDIA
PORT LOUIS, MAURITIUS

सत्यमेव जयते

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि विश्व हिंदी सचिवालय विश्व हिंदी पत्रिका के दसवें अंक का प्रकाशन करने जा रहा है। पत्रिका समस्त हिंदी प्रेमियों के लिए अपना विशेष महत्त्व रखती है और विश्व भर में होने वाली हिंदी की सृजनात्मक गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करने के एक महत्त्वपूर्ण साधन के रूप में भी कार्य करती है।

विश्व हिंदी सचिवालय भारत और मॉरीशस दोनों देशों की परस्पर मित्रता, साझी परंपरा और साझी अस्मिता का प्रतीक होने के साथ–साथ दोनों देशों की सरकारों के हिंदी को वैश्विक मंच पर स्थापित करने के संयुक्त प्रयत्नों और प्रतिबद्धता का जीवंत प्रमाण भी है। पिछले कुछ समय से विश्व हिंदी सचिवालय ने आधुनिक तकनीकों से युक्त अपने नए भवन में कार्य करना प्रारंभ कर दिया है। प्रकृति का नियम है, किसी भी बीज को वृक्ष बनने तक एक निश्चित प्रक्रिया से गुज़रना पड़ता है। उसको अंकुरित, पल्लवित होने के लिए उर्वरा भूमि, स्वच्छ हवा–पानी और अनुकूल वातावरण की आवश्यकता होती है। यह हम सबके लिए सुखद है कि सचिवालय को मॉरीशस में हिंदी की एक उपजाऊ भूमि मिल चुकी है, बीज ने अपनी जड़ें भी सुदृढ़ कर ली हैं, बस ज़रूरत है उसे अनुकूल वातावरण प्रदान करने की, जिससे सचिवालय के हिंदी रूपी वृक्ष की शाखाएँ विश्व भर में लहराएँ। और इसका प्रमाण है अभी हाल ही में मॉरीशस में संपन्न हुआ ग्यारहवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन, जिसमें सचिवालय ने अपने उत्तरदायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह किया और हिंदी जगत् में अपनी सार्थक उपस्थिति दर्ज कराई।

मैं पत्रिका के संपादक मंडल को उनके स्तुत्य प्रयासों के लिए बधाई तथा शुभकामनाएँ देता हूँ तथा आशा करता हूँ कि नए वर्ष में विश्व हिंदी सचिवालय के अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने की राह सुगम होगी, उसकी गतिविधियों में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी और हिंदी को विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित करने और उसे वह उपयुक्त स्थान दिलाने में, जिसकी वह अधिकारिणी है, निश्चित ही सफलता मिलेगी।

अभय ठाकुर

(अभय ठाकुर)

प्रधान संपादक की ओर से

स्वयमेव मृगेन्द्रता
नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते वने ।
विक्रमार्जित सत्वस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता ?
(राज्याभिषेक समारोह से सिंह जंगल का राजा नहीं बनता, वरन् अपने पराक्रम से बनता है।)

इस सुभाषित के अनुरूप हिंदी में भी वह 'पराक्रम' है, जिसके बलबूते वह वैश्विक नेतृत्व कर सकती है। भारतीय समाज की सम्पूर्ण ऊर्जा तथा सामाजिक संस्कृति की सर्जनात्मक अभिव्यक्ति हिंदी में सर्वदा विद्यमान रही है। यह वृहत्तर भारत (भारत के बाहर फैले हुए भारतवंशियों को लेकर) की संस्कृति की व्यवहार भाषा है। हिंदी तो आम जन की आवश्यकताओं की भाषा के रूप में प्रकृति की कोख की अमूल्य भेंट है। यह प्रकृति और परिस्थिति दोनों रूपों में सामाजिक संस्कृति की संवाहिका रही है। यह आम जन, तीर्थ, बाज़ार, श्रमिक, क्रांतिकारी सहित हर समूह का नेतृत्व करती रही है। हिंदी का विकास भारत की लोक चेतना का विकास है तथा रूढ़ि–मुक्त भारतीय संस्कृति की मूल चेतना के संरक्षण का इतिहास भी है। इस भाषा की कुलीनता के अवरुद्ध द्वार पर प्रथम दस्तक कालिदास ने दी। 'विक्रमोर्वशीयम्' के चतुर्थ अंक के अपभ्रंश के अंश तथा लौकिक छंदों के प्रयोग को पुरानी हिंदी मानने में कोई संकट नहीं है, क्योंकि उनमें सरहपा,अब्दुर्रहमान और स्वयंभू का हिंदीपन परिलक्षित होता है। कवि के रूप में कालिदास संस्कृत के बड़े महाकवि हैं, तो हिंदी के प्रथम ज्ञात कवि भी। क्योंकि तत्कालीन युग में संस्कृत के समानान्तर लोकभाषाएँ भी विविध रूपों में पल्लवित व पुष्पित हो रही थी और उसमें लोक संस्कृति व लोकमानस चिह्नित हो रहा था। कालक्रम में वाचिक परम्परा के कारण यह भाषा बनी और इसके कवि भाषा कवि कहलाए, जिसमें चन्दबरदाई, विद्यापति, कबीर, सूर, जायसी, तुलसी, अमीर खुसरो आदि भाषा के कवि थे, जिसे आज हम हिंदी कहते हैं। जिस लोकभाषा की आहट अशोक के शिलालेखों और कालिदास की सृजन संपदा में सुनाई देती है वह मध्य युग की रूढ़ियों को तोड़ती हुई कबीर के यहाँ 'बहता नीर' बन गई, जिसने जनगंगा के तट पर सिद्धों, संतों और भक्तों ने साहित्य साधना की तथा बौद्धिक क्रांति के द्वारा जाति धर्म की दीवारों पर प्रहार किया। कबीर की ज़िन्दगी और हिंदी में एकरूपता दिखती है। जैसे गरीब ब्राह्मणी की कोख से जन्म, गरीब मुसलमान दम्पति द्वारा पालन पोषण, फिर भी एक शानदार मंज़िल तक पहुँचना वह भी अपने बलबूते। जैसे कबीर ने 'स्वयमेव मृगेन्द्रता' को चरितार्थ किया वैसे ही हिंदी को भी 'स्वयमेव मृगेन्द्रता'के पथ पर चलना होगा, तभी विश्वपथ का अनुगमन करते हुए वैश्विक यात्रा पूरी कर सकेगी।

पिछले एक हज़ार वर्ष से भी अधिक की इसकी यात्रा पर दृष्टि डालें तो पता चलता है कि यह अपनी भावनात्मक प्रकृति, भाषिक चेतना, सांस्कृतिक संतुलन, समृद्ध साहित्य परम्परा और सामाजिक समन्वय की विराट चेष्टा के चलते सम्पर्क भाषा का स्वरूप ग्रहण कर चुकी है। सम्पर्क भाषा के रूप में इसने भारत की सभी भाषाओं एवं बोलियों को आत्मसात करते हुए एकता के सूत्र को मज़बूती प्रदान की है। सैकड़ों वर्षों की गुलामी से लड़ते हुए हमने औपनिवेशिक दासता से तो मुक्ति पा ली है, किन्तु भाषाई दासता से मुक्ति प्राप्ति का संग्राम अभी और चलेगा क्योंकि भाषाई दासता से मुक्ति के मार्ग में सबसे बड़ा रोड़ा है अपनी भाषा के प्रति 'हीनताबोध' और उस हीनताबोध के पीछे उस दासता की आतंकी सोच, जिसने सांस्कृतिक और नैतिक मेरुदण्ड को तोड़कर रख दिया, हमारी सोच पर ताला जड़ दिया। प्राचीन शिक्षापद्धति एवं उदात्त सांस्कृतिक परम्पराओं को धूल में मिला दिया। शिक्षा के बड़े केंद्रों जहाँ क्रांति की वैचारिकी विकसित होती है, को हासिए पर रख दिया गया। उन्हें नष्ट या निस्तेज कर दिया गया, क्योंकि विदेशी आक्रांताओं को यह भली–भाँति पता था कि दुनिया की कोई भी बड़ी क्रांति ऐसी नहीं रही है, जिसके मूल में विद्या के श्रेष्ठ केन्द्र न रहे हों। तक्षशिला का एक आचार्य चाणक्य उठता है और यवन आक्रमणकारियों को राहें बदलने के लिए मजबूर कर देता है। गाँव के एक गड़ेरीये बालक को उठाता है और चक्रवर्ती सम्राट बना देता है, जिसने देश की सीमाओं को विस्तारित भी किया और सुरक्षित भी। इस बात को लॉर्ड मैकाले भली–भाँति जानता था। अतः

प्रधान संपादक की ओर से

उसने भारतीय शिक्षानीति में आमूल चूल परिवर्तन कर उपनिवेशवाद की मज़बूत आधारशिला रखी। उसने कहा था *''मैं नहीं कह सकता कि भारत राजनीतिक रूप से हमारे अधीन रह पाएगा, लेकिन उतना मैं अवश्य कह रहा हूँ कि यह देश राजनीतिक आज़ादी पाने के बाद भी अंग्रेज़ी मानसिकता, सभ्यता और भाषा की दासता से कभी मुक्त न हो सकेगा।'*

भाषाई दासता हमारी सोच को कुंठित कर देती है। स्वभाषा या निजभाषा में चिन्तन करना दूभर हो जाता है क्योंकि पराजित मन, पराजित राज्य और पराजित राष्ट्र तब तक पराजित नहीं होता जब तक वह सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करता है। किन्तु अनुभव यह कहता है कि विजेता के संस्कार व डरवश तथा लोभवश उसकी संस्कृति को स्वीकार कर लेता है। विद्या ही मुक्ति का मार्ग दिखाती है, लेकिन विद्या के केन्द्र ही जब नष्ट कर दिये जाएँ तो फिर कैसी मुक्ति और कैसी विद्या?

यूरोप का पुनर्जागरण हो, जापान का आधुनिकीकरण या फिर लेनिन की अक्टूबर क्रांति, सबके पीछे शिक्षा में आमूल चूल परिवर्तन रहा है। देखते–ही–देखते ये देश भी समृद्ध हुए और इनके विद्या के केंद्र भी विश्वस्तरीय बने। इन देशों को रूपांतरित व नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में इन्हीं विद्या केंद्रों की महनीय भूमिका रही है। इन सफलताओं से अमेरिका ने बहुत कुछ सीखा। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यूरोपीय देशों में जब मंदी छा गयी, अमेरीका ने अपना सम्पूर्ण ध्यान अपने विद्याकेंद्रों को उत्कृष्ट बनाने में लगा दिया। शिक्षा के क्षेत्र में बड़ा निवेश किया। परिणाम आज सामने है। ज्ञान की सभी शाखाओं के विश्व विद्या केंद्र आज वहाँ हैं। हम अमेरिका से और कुछ सीखें या न सीखें, किन्तु शिक्षा के महत्त्व को अवश्य सीखें। लोकतंत्र की व्यवस्था में हमारी सारी अपेक्षाएँ सरकार से होती हैं। कम–से–कम शिक्षा जैसे महत्त्वपूर्ण विषय को सरकार के भरोसे छोड़ना कहाँ तक उचित है? यह विचारणीय है। सरकारें अपनी वैचारिकी के चाबुक से शिक्षा का संचालन करना चाहती हैं। उनका मानना है कि शासन को सुचारु रूप से तभी संचालित किया जा सकता है जब विचारधारा विशेष की चासनी में पगी शिक्षा–व्यवस्था कायम रहेगी। फिर जनता की भाषा और सत्ता की भाषा के बीच बड़ी खाई बन जाती है। शासन तंत्र अपनी सहूलियत के हिसाब से शासकीय भाषा को लादने और थोपने का उपक्रम करता है। अतः तंत्र से यह उम्मीद करना बेमानी है कि वह जन आकांक्षाओं के अनुरूप शिक्षा–व्यवस्था लागू करेगा, जन भाषाएँ व निजभाषाएँ फूलेंगी व फलेंगी। निजभाषा सिर्फ़ संवाद और कामकाज के लिए नहीं होती हैं, परंतु संस्कृति की संवाहिका भी होती है। परंपराओं और अपनी प्राचीन सभ्यता पर गर्व करना सिखाती है। ब्रिटिश उपनिवेश के दौरान कुछ गिने–चुने लोगों ने निजभाषा की पैरोकारी की, जिसमें प्रथम नाम दयानंद सरस्वती का आता है। उनकी मातृभाषा गुजराती थी, संस्कृत के प्रकाण्ड ज्ञाता थे, फिर भी उन्होंने हिंदी को आर्यभाषा घोषित किया और 'सत्यार्थ प्रकाश' जैसी बहुमूल्य कृति का प्रणयन हिंदी में किया। आज भारत से बाहर यदि हिंदी का ध्वज दुनिया में कहीं भी दिखता है, तो श्रेय आर्य समाजियों को ही जाता है। स्वामी दयानंद सरस्वती का मानना था कि स्वभाषा के बिना स्वराज अधूरा रहेगा और हमारी पारंपरिक विरासत का संरक्षण और संवर्धन स्वभाषा में ही किया जा सकता है। स्वभाषा मौलिकता की जननी है और शिक्षा का माध्यम विदेशी नहीं स्वदेशी भाषा होना चाहिए।

स्वभाषा के दूसरे पक्षधर महात्मा गांधी थे। वे भी गुजराती थे। वे तो अंग्रेज़ी के प्रयोग करने पर 6 महीने के कारावास की सज़ा के पक्षधर थे।

भाषा के सवाल पर आज़ादी के बाद सबसे ज़ोरदार ढंग से आवाज़ उठाने वालों में डॉ. राममनोहर लोहिया प्रमुख थे। लोहिया जानते थे कि आज़ादी के बाद सत्ता के संचालन की चाभी जिनके पास होगी, उन्हें आम जनता से कोई सरोकार नहीं होगा। यह उसी वर्ग का विस्तार पटल होगा जिसने ब्रिटिश हुकूमत के साथ सत्ता की साझीदारी की। दिक्कत अंग्रेज़ी से नहीं अंग्रेज़ियत से थी। अंग्रेज़ियत मातृभूमि, मातृभाषा और लोकसंस्कृति की विरोधी होती है। भाषा प्रयोग के भारतीय प्रसंग में सामंती प्रभाव के कारण भारतीय मेधा पश्चिम की गतानुगतिक बनकर रह गई है। हमारा मौलिक चिन्तन व कल्पनाशक्ति उपनिवेश की उस भाषा के ककहरे व व्याकरण में उलझकर रह गई है, जिस भाषा का व्याकरण अस्पष्ट है, भाषा–विज्ञान की कसौटी पर खरा न उतरने वाली भाषा है, जिसका शब्दकोश भानुमती का कुनबा है, जिसमें ग्रीक, लैटिन, जर्मन, फ्रेंच, डच, हिंदी, उर्दू, संस्कृत आदि दुनिया भर की भाषाओं के शब्द मिल जाएँगे। जिस भाषा का अपना कोई व्युत्पत्ति शास्त्र नहीं है, इस भाषा ने एक भी ऐसा ग्रंथ दिया जिसने किसी धर्म, संस्कृति या वैचारिक आन्दोलन का या क्रांति का सूत्रपात किया हो। यदि इसे ईसाइयों की प्रमुख भाषा मान भी लें, तो भी 'बाइबिल' अंग्रेज़ी में नहीं लिखी गई है। कुरान शरीफ़, हदीस, वेद, पुराण, गीता, महाभारत, जेंद अवेस्ता, दास कैपिटल सरीखे तमाम क्रांतिकारी ग्रंथ अंग्रेज़ी में नहीं लिखे गये। उपनिवेश के

प्रधान संपादक की ओर से

भाषाई प्रभाव के परिणामस्वरूप मानसिक क्षमताओं का ह्रास हुआ है। स्वावलंबन और सर्वोपरि बनने का सपना आज तक पूरा न हो सका। बदलते दौर में भारतीय भाषाओं की धार कुंद पड़ रही है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषानीति की भी समीक्षा अत्यंत आवश्यक है। आज भी 6 भाषाओं का विशेषाधिकार ही प्रचलन में है। यदि शीघ्र ही रचनात्मक व सार्थक कदम न उठाए गए तो हिंदी सहित दुनिया की तमाम समृद्ध भाषाएँ वर्नाक्यूलर भाषा बनकर रह जाएँगी और हज़ारों भाषाएँ खत्म हो जाएँगी। एक बोली या भाषा का खत्म होना पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचित परम्पराओं, संस्कृति व सभ्यता का खत्म होना है। सूरज को कुछ निजी मुट्ठियों में बंद कर प्रकाश का पक्षपातपूर्ण वितरण करने वाली महाशक्तियों का विरोध जायज़ है। यदि राष्ट्रसंघ की वैश्विक स्वीकार्यता बढ़ानी है तथा विश्व लोकतंत्र को मज़बूत करना है, तो यह भेद–भाव दूर किया जाना चाहिए।

वैश्विक एकता तभी सुदृढ़ होगी जब संस्कृति की धारा निरंतर बहती रहेगी। औपनिवेशिक मानसिकता संस्कृति की निरंतरता में अवरोध उत्पन्न करती है, इसीलिए विश्व ज्ञान से अवगत भारतीय मनीषियों ने उपनिवेश की भाषा का विरोध किया था, जिनमें अरविंद घोष, तिलक, गोखले, सुभाषचद्र बोस, महात्मा गांधी, निजिलिंनगप्पा सहित अनेक हिंदीतर भाषी प्रमुख थे। इनका मत था कि अब 'शकुन्तला' और 'गौतमबुद्ध' के साथ 'दुष्यंत' भी पालि में बातचीत करें, ताकि सांस्कृतिक क्रांति का सूत्रपात हो। अन्यथा सत्ता और जनता की भाषा का भेद नकारात्मक लोकतंत्र की ओर इशारा करेगा। भाषा के दमनकारी हथियार का प्रयोग वर्जित हो।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि उपनिवेश की भाषा का तिलिस्म टूटे और स्वभाषा में प्रारंभिक से लेकर उच्च स्तर तक शिक्षा प्रदान की जाए, ताकि मानव मात्र की मुक्ति का मार्ग प्रशस्त हो – ''सा विद्या या विमुक्तये'' का उद्घोष चरितार्थ हो। आत्माभिव्यक्ति का अधिकार मिले। अभी भी वक्त है संभलने का –

आज तूफ़ान से बचने की कोई राह तो है।
कल न तदबीर चलेगी न मुकद्दर होगा।

– प्रो. विनोद कुमार मिश्र
महासचिव

संपादकीय

' संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जायताम् '

11वें विश्व हिंदी सम्मेलन को संपन्न हुए चार महीने व्यतीत हो चुके हैं। आज भी जब सम्मेलन की याद आती है तब मन में वही उमंग जाग उठती है, जो सम्मेलन के समय तीव्रतापूर्वक अनुभूत हुई थी। उस अकथित उमंग के पीछे मुख्य कारण था –एक ही स्थान पर विश्व के पैंतीस देशों के लगभग 2100 हिंदी अनुरागियों (600 मॉरीशस से और 1500 विदेश से) का एक–साथ जुड़ना, हिंदी के संवर्धन हेतु एकजुट होकर गंभीरतापूर्वक विचार करना तथा सम्मेलन की महत्त्वपूर्ण अनुशंसाओं के क्रियान्वयन की ओर परस्पर सहयोग के द्वार का विस्तार करना। विश्व के जिन देशों से प्रतिभागी एक छत के नीचे आए थे, वे इस प्रकार थे –

मॉरीशस	सूरीनाम	नोर्वे	रूस	दक्षिण कोरिया
भारत	त्रिनिडाड व टोबेगो	स्वेदेन	जापान	मंगोलिया
नेपाल	अमेरिका	न्यूज़ीलैण्ड	चीन	चाड
बांग्लादेश	कनाडा	स्वित्ज़रलैण्ड	थाईलैण्ड	सेशेल्स
श्रीलंका	इंग्लैण्ड	पोलैण्ड	विएतनाम	कज़ाखस्तान
फ़िजी	इटली	बुलगारिया	बहामास	ताजिकिस्तान
गयाना	जर्मनी	इण्डोनेशिया	दक्षिण अफ़्रीका	उज़्बेकिस्तान

18 अगस्त 2018 के पूर्वाह्न दस बजे उद्घाटन सत्र का समय निर्धारित किया गया था, परन्तु इस से तीन घंटे पूर्व प्रतिभागी 'पाय' स्थित स्वामी विवेकानन्द अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन केंद्र, जिसे सम्मेलन के संदर्भ में 'गोस्वामी तुलसीदास नगर' नाम दिया गया था, में पदार्पण करने लगे। आठ बजे के बाद प्रतिभागी भारी संख्या में 'गोस्वामी तुलसीदास नगर' की ओर बढ़ते हुए नज़र आने लगे। उनकी चमकती आखों में वही असाधारण उत्साह और चेहरे पर वही प्रफुल्लता व आत्मीयता परिलक्षित हो रही थी, जो उनके स्वागत में प्रवेश द्वार के समीप हाथ जोड़कर खड़े मॉरीशसीय अधिकारी अनुभव कर रहे थे। 'अभिमन्यु अनत कक्ष' में उद्घाटन सत्र सम्पन्न होना निश्चित था। उसके भीतर प्रवेश करते ही परिचित प्रतिभागी एक–दूसरे से प्रेम–पूर्वक मिलने लगे और भाषाई संबंधों को गहराने में संलग्न हो गए। जो अपरिचित थे, वे भी आपस में घुल–मिलकर जान–पहचान बढ़ाने लगे। देखते–देखते सभागार का सम्पूर्ण वातावरण परस्पर सौहार्द की उष्णता से व्याप्त हो गया।

प्रतिभागियों में हिंदी के विद्यार्थियों से लेकर शिक्षक, प्राध्यापक, लेखक, पत्रकार, अधिकारी और मंत्री गण भी थे। अलग–अलग स्तर और भिन्न वर्ग के होते हुए भी उनके मध्य सहज वार्तालाप की श्रृंखला बँध गयी। हरेक को कुछ अपना बोलने और कुछ दूसरे के मुख से सुनने की तीव्र अभिलाषा थी। विशेषकर यह जानने की भारी उत्सुकता थी कि देश–विदेश में हिंदी और भारतीय संस्कृति की क्या स्थिति एवं संभावनाएँ हैं। समानांतर सत्रों के अतिरिक्त सामान्य संवादों तथा मीडियाकर्मियों द्वारा प्रतिदिन लिए जा रहे साक्षात्कारों का भी केन्द्रीय विषय 'हिंदी विश्व एवं भारतीय संस्कृति' ही था। जब किसी प्रतिभागी के मुख से अपने देश में हिंदी और भारतीय संस्कृति के विकास हेतु हो रहे प्रशंसनीय कार्यों की दिलचस्प चर्चा होती, तब श्रोताओं का मन आनंद से खिल उठता और जब कोई अपने देश में हिंदी के प्रचार संबंधी विकट समस्याओं का उल्लेख करता, तब सुनने वाले पीड़ा से विकल हो जाते। परन्तु संभावित समाधानों की

संपादकीय

ओर संकेत करते हुए, वे चुनौतियों का डटकर सामना करने का प्रोत्साहन अवश्य देते। कुछ प्रतिभागी समस्याओं को सुलझाने के लिए व्यक्तिगत रूप से सहायता करने का प्रस्ताव रखते। हिंदी भाषा को गतिमान बनाए रखने हेतु सहकारिता और समंवयात्मकता की यह छटा दर्शनीय थी।

आपसी सहयोग का गहन भाव विशेषकर सम्मेलन के उद्घाटन सत्र और समापन सत्र के उपयुक्त मंचों से व्यक्त किया गया। भारत की विदेश मंत्री माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने सम्मेलन प्रस्तावना में कहा कि यदि मॉरीशस का राष्ट्रीय पक्षी 'डोडो' किसी कारणवश कठिनाई में पड़े, तो भारत का राष्ट्रीय पक्षी 'मोर' उसके संरक्षाण हेतु तत्काल प्रस्तुत होगा। व्यापक भाव यह है कि अगर किसी एक देश में हिंदी को संकट का सामना करना पड़े, तो उसकी सुरक्षा हेतु भारत शीघ्रतापूर्वक कदम उठाएगा। सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में मॉरीशस के प्रधान मंत्री माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ ने यह उद्गार व्यक्त किया कि हिंदी के भौगोलिक विस्तार में मॉरीशस भारत के साथ चलने में गौरव की अनुभूति करता है। समापन सत्र में भी मॉरीशस के मार्गदर्शक एवं रोड्रिग्स मंत्री, माननीय सर अनिरुद्ध जगन्न. ाथ ने गर्व के साथ उल्लेख किया कि हिंदी के प्रचार–प्रसार में आज तक मॉरीशस ने भारत का साथ दिया है और आगे भी देता रहेगा। भाव की एकात्मकता बलवती होकर हिंदी के उज्जवल भविष्य का शुभ संकेत दे रही थी।

श्रद्धांजलि सभा के अंतर्गत जब भारत, मॉरीशस, फ़िजी, अमेरिका, यूरोप, कनाडा, अफ़्रीका, चीन आदि अलग अलग देशों के प्रतिनिधि स्वर्गीय श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के प्रति श्रद्धा–सुमन अर्पित करने के लिए क्रमिक रूप से मंच पर आए, तब सबकी वाणी में अद्भुत समानता देखी गयी। उनके शब्द और शैली भले ही भिन्न थी, परन्तु भारत के एक समर्पित राजनेता और एक असाधारण हिंदी प्रेमी के प्रति श्रद्धा और सम्मान का भाव समान था। हरेक के वक्तव्य का यही इशारा था कि दिवंगत श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के भाषा–प्रेम और सौहार्द को अपनाकर ही उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि दी जा सकती है। शायद ही कभी समूचा विश्व किसी एक मंच पर एक हिंदी प्रेमी के प्रति श्रद्धा की समान अभिव्यक्ति करने के लिए उपस्थित हुआ हो!

समानांतर सत्रों के अंतर्गत कहीं–कहीं मतभेद दिखाई दिया। परन्तु इसे मनभेद नहीं माना जा सकता, क्योंकि आलेख प्रस्तुतकर्ता सम्मेलन के मुख्य विषय या उपविषय पर बोलते समय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हिंदी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा बनाने के रोडमेप की ओर संकेत कर रहे थे। सम्मेलन के आयोजनकर्ता भी विश्व हिंदी परिवार के सदस्यों की समान आकांक्षा से अनभिज्ञ नहीं थे। इस तथ्य से भी परिचित थे कि भारत की राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण के देशों में आकर्षण बढ़ता जा रहा है। इसीलिए सम्मेलन प्रस्तावना में भारत की विदेश मंत्री माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने विश्वासपूर्वक कहा कि योग–दिवस के लिए जब भारत ने177 देशों का समर्थन प्राप्त किया है, तब हिंदी को संयुक्त राष्ट्रसंघ में मान्यता दिलाने के लिए 129 देशों का समर्थन अवश्य प्राप्त करेगा। समापन सत्र के मुख्य अतिथि मॉरीशस के कार्यवाहक राष्ट्रपति महामहिम श्री परमशिवम पिल्लैवयापुरी थे। उन्होंने सम्मेलन की समाप्ति की उद्घोषणा करने से पूर्व यह उल्लेख करना आवश्यक समझा कि हिंदी को संयुक्त राष्ट्र में गौरवशाली स्थान दिलाने के लिए मॉरीशस भारत के साथ मिलकर हर संभव प्रयास करेगा।

हिंदी के हित के लिए हाथ–में–हाथ डालकर चलने का स्वर मात्र 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान ही नहीं, अपितु 1975 से लेकर अब तक के सभी विश्व हिंदी सम्मेलनों में प्रतिध्वनित होता आ रहा है। प्रारम्भिक सम्मेलनों के बोध वाक्य 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के पीछे आपसी सहयोग और सौहार्द के बल पर पूरे विश्व को हिंदी के माध्यम से जोड़ने और उसे एक कुटुम्ब का रूप देने का जो भाव निहित था, वही भाव विश्व हिंदी सम्मेलन के 11वें संस्करण में भी उपस्थित था। इसी भाव की पुनः अनुभूति करने पर यह विश्वास दृढ़तम हुआ है कि हिंदी के वैश्विक विस्तार का मूल मन्त्र है –'संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जायताम्' अर्थात् हम सब एक साथ चलें, एक समान बोलें और हमारा मन एक हो। भावी विश्व हिंदी सम्मेलनों में भी यही मंत्र गुंजायमान रहेगा।

डॉ. माधुरी रामधारी
उपमहासचिव

हिंदी : स्वरूप, साहित्य एवं संस्कृति

1. भाषा : संरचना, ठहराव और बहाव (सन्दर्भ - 'हिंदी' भाषा) - डॉ. रवीन्द्र कुमार पाठक

2. हिंदी साहित्य का इतिहास : महत्त्व एवं प्रासंगिकता - डॉ. कृष्णा आचार्य

3. हिंदी साहित्य में संस्कृति चिंतन - डॉ. बीरसेन जगासिंह

4. फ़िजी में बहती भारतीय संस्कृति एवं हिंदी की गंगा - डॉ. विनय कुमार शर्मा

5. दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीय लोकवृत्त में हिंदी और हिंदू संस्कृति के प्रश्न - प्रो. हरिमोहन

6. हिंदी बाल साहित्य और भारतीय संस्कृति - डॉ. डी. विद्याधर

1

भाषा : संरचना, ठहराव और बहाव
(सन्दर्भ – 'हिंदी' भाषा)

– डॉ. रवीन्द्र कुमार पाठक

शिक्षा :
- 1999 – एम.ए. (हिंदी), काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
- 2004– '**हिंदी के प्रमुख व्याकरणों का समीक्षात्मक अनुशीलन**' विषय पर पी.एच.डी.

व्यवसाय :
- सह–प्राध्यापक (हिंदी)
- अध्यक्ष, 'हिंदी विभाग, दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गया
- 'हिंदी–व्याकरण और भाषाशास्त्र' पर शोध तथा स्त्री और लिंग (ज़ेण्डर) पर अध्ययन

प्रकाशन :
- भाषाशास्त्र, काव्यशास्त्र व हाशिये की वैचारिकी (खासकर स्त्री–विमर्श) से सम्बद्ध शोध और आलोचनात्मक लेखन
- अब तक 5 पुस्तकें (3 स्वतंत्र, 2 सम्पादित) और 60 से अधिक स्वतंत्र आलेख
- पुस्तकें :– '**हिंदी–व्याकरण के नवीन क्षितिज**', '**समान्तर दृष्टि की राह**', '**जनसंख्या–समस्या के स्त्री पाठ के रास्ते...**'
- 'भारतीय भाषा परिषद्' (कोलकाता) द्वारा निर्मित '**हिंदी–साहित्य ज्ञानकोश**' (दस खण्ड) के लिए 25 प्रविष्टियों का लेखन
- 'एन.सी.ई.आर.टी.'(दिल्ली) द्वारा निर्मित पाठ्य/सन्दर्भ–पुस्तकों के लिए विषय–विशेषज्ञ के रूप में पाठ–लेखन/संपादन
- 'चेतांशी' पत्रिका (पटना) में भाषा और स्त्री के सम्बन्ध पर '**आधी भाषा**' नाम से कॉलम–लेखन

भाषा आमतौर पर भाव या विचार की अभिव्यक्ति का साधन मानी जाती है, किन्तु उसकी भूमिका इससे बहुत बड़ी है। हमें समाज या विश्व का बोध भी भाषा के ही माध्यम से होता है। भाषा बहु–समर्थ संरचना है। हमारी मति व कृति का अधिकांश उसी के ज़रिये या उसी में व्यक्त होता है। भारतीय व्याकरण–दर्शन के शिखर व्यक्तित्व भर्तृहरि ने उसकी क्षमता के बारे में यहाँ तक घोषणा कर दी है कि जगत् में ऐसा कोई प्रत्यय या विचार नहीं है, जो भाषा के अधीन या उस पर आश्रित नहीं है – ''***नसोस्तिप्रत्ययोलोकेयः शब्दानुगमादृते।***'' ('वाक्यपदीयम्') सही बात तो यह है कि समाज की (कम–से–कम इस रूप में) रचना ही न होती, यदि भाषा जैसी सर्वसंभावी संरचना मौजूद न होती। प्रयोग के लिहाज से देखें, तो भाषा अभिव्यक्ति से पहले चिन्तन का माध्यम है। पहले हम सोचते हैं, उसके बाद उसकी अभिव्यक्ति करते हैं – बोल या लिखकर। अन्तर्मन में बिखरे अर्थों या विचारों को संकलित करने अथवा अपूर्व–असंभव वस्तु या घटना की कल्पना करने में हमारे लिए उपकारी है; तो 'भाषा' ही। इन बातों के साथ, एक विलक्षण बात यह है कि 'भाषा' के सहारे हम केवल अपने को प्रकट नहीं करते, बल्कि कई बार अपने–आप को छुपाते भी हैं। कई बार हम अपना मन्तव्य, अंतर्दशा या वस्तुस्थिति को भाषा के आवरण में लपेटकर सामने वाले व्यक्ति/समाज के लिए उसे अगोचर बना देते हैं। (ज़ाहिर–सी बात है कि यदि भाषा नहीं होती, तो मनुष्य के लिए अपने अन्तःसत्य को छुपाना या झूठ बोलना सम्भव नहीं होता।) कुल मिलाकर, *भाषा बोध, चिन्तन, सम्प्रेषण (अभिव्यक्ति) और पारस्परिक सहयोग का माध्यम है, जिसका स्वरूप है सार्थक ध्वनि–प्रतीकों (शब्दों, वाक्यों) की व्यवस्था। ये ध्वनि–प्रतीक अर्थ–विशेष से यादृच्छिक तौर पर जुड़े रहते हैं और इनके (ध्वनि–प्रतीकों और अर्थ–विशेषों के) रूढ़ सम्बन्ध से नियमित पद्धति या व्यवस्था के रूप में 'भाषा' की सत्ता होती है।* कुल मिलाकर, भाषा के चार तरह के उपयोग कहे जा सकते हैं – चिन्तन करना; भाव/विचार की अभिव्यक्ति करना या सूचना देना; प्रेरणा जगाना और रस–बोध करना–कराना।[1]

इन्सान की भाषा सीखने की प्रवृत्ति जन्मजात होती है। अपने भाषिक समाज में रहते हुए वह भाषा सुनता है, भाषिक प्रयोग देखता है, मन–ही–मन उनका विश्लेषण करता है और इस तरह से भाषा के नियमों को आत्मसात करते रहता है। इसी प्रक्रिया से निरन्तर गुज़रते, वह नियमबद्ध व्यवहार के रूप में कोई भाषा सीखता है।

भाषा एक नियमित व्यवस्था है:

हम जो बाह्य जगत् में भाषिक व्यवहार (भाषण/बोलना, लेखन/लिखना) करते हैं, उसका आधार है मन में बैठी हुई '**भाषा–व्यवस्था**' या '**भाषा–संरचना**', जिसका स्वरूप स्मृतिमय होता है। मनःस्थ भाषिक व्यवस्था शब्द व अर्थ के सम्बन्ध (मानसिक शब्दकोश) तथा व्याकरणिक संरचना के रूप में होती है। किसी समुदाय के सभी सदस्यों की चेतना में भाषा–विशेष की वह व्यवस्था कायम रहती है, जिसके आधार पर उनका समस्त '**भाषिक व्यवहार**' (भाषण–श्रवण, लेखन–पठन, चिन्तन/सोचना आदि) होते हैं। कोई व्यक्ति (वक्ता/प्रयोक्ता) अपने मानस में अवस्थित उसी **भाषा–व्यवस्था** (या **भाषा–संरचना**) के आधार पर कोई भाषिक प्रयोग करता है, जिसका लक्ष्य होता है –सामने वाले व्यक्ति/समाज (श्रोता/ग्रहीता) के मन में स्थित उसी प्रकार की भाषा–संरचना को सुगबुगाना। श्रोता/ग्रहीता उसी के आधार पर वक्ता/प्रयोक्ता के कथन/लेखन का तात्पर्य ग्रहण कर पाता है, यानी सम्प्रेषण का कार्य सम्पन्न होता है।[2]

इस तरह, स्पष्ट है कि 'भाषा' द्विस्तरीय स्वरूप वाली जटिल व्यवस्था का नाम है – भाषा–व्यवस्था (संरचना) और भाषा–व्यवहार।[3] अर्थात्, **भाषा = मनःस्थ भाषा–संरचना + तदनुरूप भाषा–प्रयोग।**

भाषा के उक्त दोनों स्तर या आयाम परस्पर–आधारित हैं – मनःस्थ भाषा–संरचना के आधार पर हमारा भाषा–प्रयोग (व्यवहार) होता है और आसपास के भाषिक व्यवहारों के आधार पर हमारे मन में भाषा–संरचना कायम होती है अथवा उसपर वे प्रभाव डालते हैं। 'भाषा' नामक वस्तु (यानी उसके उक्त दोनों आयाम) स्थिर या जड़ नहीं है; बल्कि देश व काल के सापेक्ष वह परिवर्तनशील है, जिसपर थोड़ा ठहरकर हम विचार करते हैं। फ़िलहाल मन में बैठी भाषा–व्यवस्था के एक घटक शब्दावली पर विचार करते हैं।

मनःस्थ भाषा में विद्यमान शब्द (ध्वनि–प्रतीक) और अर्थ–विशेष का सम्बन्ध तर्कसंगत न होकर यादृच्छिक (इच्छित) होता है। परन्तु, वह व्यक्तिगत इच्छा का परिणाम नहीं होता, बल्कि उसपर सामाजिक स्वीकृति की मुहर लगी होती है। फिर, वह समाज–स्वीकृत सम्बन्ध परम्परा–प्रवाह में गतिमान (रूढ़) होता है। जैसे – 'पेड़' शब्द है, जो किसी खास अर्थ में बँधा हुआ है। यह इच्छित बन्धन है। कोई तर्क करे कि सामने वाली वस्तु को हम 'पेड़' ही क्यों कहें – 'पत्थर', 'नदी', 'पशु' आदि क्यों न कहें? तो, इसका कोई तर्कपूर्ण समाधान नहीं हो सकता। भाषा में अर्थ–विशेष और शब्द–विशेष का सम्बन्ध सामाजिक स्तर पर ऐच्छिक रूप से बना लिया गया है – यही है यादृच्छिकता। इसी का अगला परिणाम है कि हर भाषा या भाषिक समूह में 'पेड़' के लिए अलग शब्द हैं। परन्तु, ध्यातव्य है कि किसी भाषा में कोई शब्द व्यक्तिगत रुचि से नहीं, बल्कि उस भाषिक समूह की सामाजिक स्वीकृति से ही आकार लेता है। इसीलिए भाषा एक सामाजिक व्यवस्था है। भाषा का शब्द–भण्डार बोलने वालों की आवश्यकताओं के अनुसार बनता है, जो कि उसके आसपास के माहौल के सापेक्ष है। हर भाषा की खास शब्दावली का यही कारण है।

किसी भाषिक समुदाय में जन्मा शिशु (नवजात) और नवागत (प्रवजन से आया हुआ) सदस्य, अपने आसपास/चारों ओर फैले भाषाई व्यवहारों के वातावरण के भीतर से 'भाषा–व्यवस्था' या भाषा की नियमबद्ध संरचना को आत्मसात करता है। आसपास व्यवहृत हो रहे वाक्यों/रचनाओं का अचेत ढंग से मन–ही–मन विश्लेषण करते हुए, उनमें निहित शब्दार्थ–सम्बन्ध (शब्दावली) और व्याकरणिक अन्वय का मानसिक स्तर पर संग्रह करते हुए, स्मृति के रूप में 'भाषा–व्यवस्था' को जमा रहा होता है। यही है समाज में रहकर भाषा सीखना। कोई नवजात/नवागत पहले शब्द यानी एक शब्दमय सरल वाक्य सीखता है, फिर विकास–क्रम में अनेक–शब्दमय एवं जटिल वाक्य सीखता है। 'भाषा–व्यवस्था' सामाजिक निर्मिति है, जो समाज के हर सदस्य के मन अथवा सामूहिक मन में कायम रहती है। उसी व्यवस्था के सहारे, प्रयोक्ता अपनी सर्जनात्मक क्षमता के ज़रिये अनेक/गणनातीत प्रयोगों की ओर बढ़ रहा होता है। हमारा पूरा बाहरी वाक्–व्यवहार (वाचन–श्रवण–लेखन–पठन) और आन्तरिक व्यवहार (चिन्तन, बोध) मनःस्थ उसी 'भाषा–व्यवस्था' के आधार पर होता है – उसी से प्रेरित, प्रसूत होता है (**वक्ता/लेखक**) और उसी के ज़रिये गृहीत और उसी में परिणत होता है (**श्रोता/पाठक**)। 'भाषा–व्यवस्था' एक साथ 'भाषा–व्यवहार' के लिए अपेक्षित साधन भी है और सामाजिक चेतना के धरातल पर

'भाषा–व्यवस्था' के संचित कोश के रूप में उसका परिणाम भी, जिसका पहले भी संकेत किया जा चुका है।

भाषा–व्यवहार मूलतः वाक्यात्मक :

हम जानते हैं कि भाषा सम्प्रेषण की व्यवस्था है, परन्तु ध्यातव्य यह है कि सम्प्रेषण वाक्य में होता है। भाषा–विज्ञान के एक सिद्धान्त के अनुसार इन्सान की अभिव्यक्ति की न्यूनतम सार्थक इकाई वाक्य ही है, क्योंकि वह वाक्यों में ही सोचता है और अपनी मानसिक प्रक्रिया को आवश्यकता व इच्छा के अनुसार वाक्य के रूप में ही अभिव्यक्त करता है, चाहे वाक्य एक पद का ही क्यों न हो, चाहे वह अनेक पदों का हो या अनुच्छेद भर का (यानी 'प्रोक्ति' का रूप)। यानी, भाषिक व्यवहार या सम्प्रेषण की न्यूनतम इकाई 'वाक्य' से कम हो ही नहीं सकती। वाक्य से नीचे उतरने पर अर्थ की समग्रता ही खण्डित हो जाती है।

शब्द का बोध्य अर्थ कई बार एक–एक वस्तु का रूप न होकर पूर्ण अभिप्राय (विचार/भाव)के रूप में भी होता है। एक उदाहरण सामने रखकर विचार करते हैं, जिसमें वक्ता व श्रोता आमने–सामने हैं और भाषिक प्रयोग का रूप 'संलाप' (बातचीत) का है :

- *स्त्री की स्थिति आज कैसी है?*
- *अच्छी।*
- *बिल्कुल अच्छी?*
- *नहीं। पहले से अच्छी।*
- *कैसे?*

इस प्रयोग में आये 'अच्छी', 'कैसे' आदि शब्द/पद वाक्य–स्तरीय अर्थ देते हैं। 'अच्छी' का अर्थ सन्दर्भ–निरपेक्ष 'अच्छी' मात्रा नहीं है, बल्कि 'स्त्री की स्थिति आज अच्छी है' का एक पूरा अर्थ देता है यह पद। इसी तरह, किसी संलाप या एकमुखी कथन में आये 'जा', 'उठ', 'गया', 'पधारिये' आदि एकाकी पद भी वाक्य–स्तरीय अर्थ देते हैं। कौन पढ़ रहा है? क्या खरीद लाये? रमेश क्या बना रहा है? सामने क्या है? इन प्रश्नों के उत्तर के रूप में सुनाई पड़ने वाले 'सलमा', 'किताब', 'चावल', 'गाय' आदि भी वाक्य–स्तरीय अर्थ देते हैं। इसके साथ, जब हम किसी को सम्बोधित करते हैं (रजनी!, डेविड! आदि) तो सम्बोधित पद एक वाक्य का अर्थ देता है, जिसका बोध्य यह भाव होता है कि 'ओ रजनी / डेविड! मैं तुझसे कुछ कह रहा/रही हूँ, वह सुनो' या 'मैं तुझ पर खुश / नाराज़ हूँ' आदि। इसी तरह अभिवादन के प्रसंग में 'प्रणाम! नमस्ते! आशीष!' आदि कहना भी पूरे वाक्य का अर्थ ('मैं नमस्ते कर रहा/रही हूँ।' आदि) देता है।

इन वाक्यों के सन्दर्भ में हम सहज ही समझ सकते हैं कि सम्प्रेषण हेतु हम कोई भी पद या शब्द प्रयुक्त करें, वह अर्थ के लिहाज़ से वाक्यात्मक ही होता है, क्योंकि वक्ता के मन में उसके प्रयोग के समय उस पद के आगे–पीछे एक समग्र–अर्थमय सन्दर्भ होता है, जिसका बोध कराने के लिए ही वक्ता वह अकेला पद बोलता है। उसी कारण, श्रोता भी उस एकाकी पद को एक वाक्यगत अर्थ में ग्रहण भी कर पाता है।

भाषा सीखने के क्रम में ऐसा देखा गया है कि पहले वर्ष के अन्त तक अव्यक्त और अस्पष्ट ध्वनियाँ शिशु की व्यक्त और स्पष्ट ध्वनियाँ (शब्द) बनने लगती हैं। पहले वर्ष में इस तरह वह चार–पाँच शब्द बोल लेता है। पहले एक शब्द, बाद में दो शब्दों के कुछ वाक्य प्रकार आदि। दूसरे वर्ष में उसका शब्द–भण्डार बढ़कर दो–चार सौ शब्दों तक का हो जाता है। साथ ही, भाषा–विशेष (जिस भाषिक समुदाय में वह रहता है) की व्याकरणिक व्यवस्था भी उसके वाग्व्यवहार में बनने लगती है। पर, इसका मतलब यह नहीं कि बच्चा ध्वनि से शब्द और शब्दों से वाक्य बनाना सीख रहा होता है। अपने मन में वह जो कुछ सोचता है, वह वाक्यार्थ ही होता है, जिसे सम्प्रेषित करने की कोशिश करता है। किन्तु, वागिन्द्रिय, धारणा–शक्ति आदि से जुड़ीं कई प्रकार की अपनी असमर्थताओं के चलते वह व्याकरणिक दृष्टि से पूर्ण वाक्य नहीं बोल पाता। वस्तुतः, मन से हर बार वह वाक्य ही बोल रहा होता है, पर उच्चारण में वह प्रकट नहीं हो पाता और हमें उसके वागंग अक्सर टूटे–फूटे शब्दों का उच्चारण करते दिखते हैं। बच्चा जब पहली साँस लेता है, तब उस समय से ही आसपास सम्प्रेषण के (वाक्यमय) संसार से मुखातिब होता है। वह उसे महसूस करता है, उसी में खुद सम्प्रेषण करना चाहता है। आसपास बोल रहे जनों का अनुकरण करना चाहता है। उस क्रम में अधूरे रूप में 'लोती' (रोटी) आदि बोल पाता है। विकास–क्रम में वह अपनी असमर्थताओं से धीरे–धीरे छुटकारा पाते जाता है,

जिसे हम (ध्वनियाँ जोड़कर शब्द और शब्द जोड़कर उनसे वाक्य बनाना सीखते हुए) उसका भाषा सीखना कहते हैं। किन्तु यह बराबर ध्यातव्य है कि भाषा सीखने का उसका क्रम वाक्य से ध्वनि की ओर होता है।

बोध के स्तर पर हम सब वाक्य ही सोचते हैं, ध्वनि तो सबसे अन्त में आती है। इसे इस तरह समझ सकते हैं। प्राकृतिक बोध में सबसे पहले वाक्य ही आता है और उसकी घटक इकाइयों का विश्लेषण/विखण्डन करते हुए, वह शब्द और अन्त में ध्वनि तक पहुँचता है। यह उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार बच्चे या हम सबके प्राथमिक बोध में 'दूध' या कोई फल समग्र रूप में आता है, उसके अणु–परमाणु तक तो सबसे आखिर में (और वह भी ज्ञान या विश्लेषण–क्षमता के अत्यधिक विकास के बाद) हम पहुँचते हैं। जिस चीज़ से सीधे–सीधे जीवन–प्रयोजन सिद्ध हो, वह पहले और उसके घटक बाद में वाक्य पहले, ध्वनि बाद में फल पहले, उसके रेशे बाद में।

भाषा–प्रयोग के सन्दर्भ में अध्याहृत (कभी–कभी विगत भी) वाक्य ('नमस्ते', 'लोती' आदि) बच्चे और बड़े दोनों बोलते हैं, परन्तु इस प्रसंग में बच्चे और बड़े में अन्तर यही होता है कि बड़े जहाँ भाषिक दृष्टि से समर्थता (व्याकरणिक संरचना की दृष्टि से पूर्ण वाक्य उच्चरित करने की क्षमता होने) के बावजूद, शैली या लाघव के लिए एकपदीय या अधूरे (अध्याहृत) वाक्य बोलते हैं, वह भी किसी पूर्व–उपस्थित सन्दर्भ में ही; वहीं बच्चे बिना किसी पूर्व–सन्दर्भ के अपनी उक्त असमर्थता के चलते ऐसे प्रयोग करते हैं।

पर, जो भी ऐसा प्रयोग करे, एक बात स्पष्ट है कि हर बार गहन संरचना (Deep structure)[4] के स्तर पर हर बार पूरा वाक्य आकार लेता है (जैसे – 'देखो, गाय खड़ी है', 'मैं आपको नमस्ते कर रहा/रही हूँ', 'मुझे रोटी दो' आदि), लेकिन बाह्य संरचना (Surface structure) यानी उच्चारण तक आते–आते वह अधूरा या विगत (जैसे – 'गाय', 'नमस्ते', 'रोटी/लोती' आदि) होकर रह जाता या रख दिया जाता है।

भाषा–भेद और भाषाई परिवर्तनशीलता :

किसी भाषिक समुदाय में 'भाषा–संरचना' एक सामाजिक निर्मिति के रूप में व्यक्ति–व्यक्ति के मानस में कायम रहती है, जिसके आधार पर हर व्यक्ति का '**भाषिक व्यवहार**' होता है।[5] परन्तु, किसी भाषिक समाज का हर सदस्य सूक्ष्मता से विचार करने पर, दूसरे से अलग होता है। यह अलगाव कुछ हद तक उसके प्राकृतिक गठन (वाक्–यंत्र, स्नायु–तंत्र आदि) से है, तो मूलतः पालन–पोषण के उसके माहौल से है। ऊपरी तौर पर माहौल एक भी हो, तो सूक्ष्म माहौल में बहुत अन्तर होता है या हो सकता है। शिक्षा, रोज़ी–रोटी, परम्परा, सामाजिक स्थिति आदि से जुड़े अनेकानेक स्तरों के हिसाब से अन्ततः हर व्यक्ति दूसरे से अलग हो जाता है। इस कारण, हर व्यक्ति के भाषिक व्यवहार में कुछ ऐसी विशेषताएँ होती हैं, जो दूसरे से उसे अलग करती हैं। उच्चारण (ध्वनि), शब्द–चयन, अर्थ/भाव–संरचना आदि सबमें यह सूक्ष्म भेद दिखाई देता है। हर व्यक्ति में 'भाषा' को अपनी रुचि/क्षमता के अनुसार कुछ घुमाने–बदलने की प्रवृत्ति होती है। परन्तु, किसी भाषिक समुदाय में 'भाषा' कोई व्यक्तिगत इकाई नहीं, बल्कि एक सामाजिक व्यवस्था होती है।[6] भाषा समाज के सभी सदस्यों के रुचि–भेद, ध्वनि–भेद, भाषिक संरचना–भेद या अर्थ–बोध के भेद को समेटकर व्यापक स्तर पर समन्वय उपस्थित करती है। तभी तो वह व्यक्तिगत नहीं सार्वजनिक माध्यम है। किसी समाज के हर सदस्य का भाषिक व्यवहार अलग–अलग होगा, तो भाषा का जो मूल उद्देश्य (सम्प्रेषण) है, वही विनष्ट हो जाएगा। इसी से एक सार्वजनिक संरचना की ज़रूरत है। 'भाषा' वही तो है।

भाषा चूँकि व्यक्तिगत इकाई नहीं है, इसलिए व्यक्तियों के रुचि–भेद, आदतों के अन्तर से वह नहीं बदलती। व्यक्तियों के रुचि–भेद से अथवा एक ही व्यक्ति के अलग–अलग सन्दर्भ/विषय में किये गये विविध–रूप प्रयोगों से 'भाषा' नहीं बदलती। वे तो एक ही भाषा के अन्तर्गत शैली–भेद भर लाते हैं। भाषा–प्रयोग में भी व्यक्ति स्वाधीनता/स्वतंत्रता चाहता है, जो एक सीमा के अन्तर्गत ही सम्भव है। वह सीमा है – 'शैली–भेद'। व्यक्ति नयी–नयी शैलियों या भंगिमाओं में प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र है। शब्दों के चयन, उनकी सजावट या शब्द–क्रम अथवा भाषा वाचिक हो, तो उच्चारण के बल, सुर के स्तर आदि में उसकी रुचि परिलक्षित हो सकती है, किन्तु वह अपने बूते किसी भाषिक परिवर्तन या नयी भाषा के जन्म का कारण नहीं बन सकता। किसी व्यक्ति/व्यक्तियों द्वारा किये गये प्रयत्न या

विचलन जब तक व्यापक सामाजिक स्वीकृति न पा जाएँ, तब तक वे 'भाषा–संरचना' में परिवर्तन के रूप में नहीं गिने जाते। व्यक्ति भाषिक प्रयोग के क्षेत्र में जो भी नया प्रयोग करेगा, वह समाज–स्वीकृत भाषिक संरचना के दायरे में ही करेगा। बहुत अधिक हुआ, तो वह अपने से 5–10 शब्द बना सकता है और उसे समाज में प्रयुक्त करा भी सकता है, पर एकदम किसी नयी भाषा का सर्जन नहीं कर सकता। इस संदर्भ में, वह सर्जन की अपेक्षा अर्जन का मोहताज है। उसके बनाए शब्द भी तभी सार्थक होंगे, जब समाज–स्वीकृत भाषिक संरचना के अंग बन जाएँ। साथ ही, वह जो भी शब्द बनाए, वह होगा समाज की भाषा–विशेष की ध्वनि–प्रकृति के अनुकूल ही। अर्थात्, व्यक्तिगत प्रयत्न या विचलन भाषा–परिवर्तन का हेतु नहीं है।

फिर भी, भाषा परिवर्तित होने वाली वस्तु है। देश और काल के अन्तर से – ऐतिहासिक एवं भौगोलिक सन्दर्भ में हम देख सकते हैं कि किसी 'भाषा' की ध्वनियाँ, शब्द, शब्द–भण्डार, व्याकरणिक गठन एवं अर्थ की संरचनाएँ बदल जाती हैं। जैसे – एक काल का 'अग्नि' शब्द, दूसरे काल में 'आग' बन जाता है, एक समय में काले रंग के लिए प्रयुक्त 'स्याही' शब्द आज हर किसी रंग की रोशनाई के लिए इस्तेमाल हो रहा है। इस प्रकार के परिवर्तन का आधार है समाज। 'भाषा' सामाजिक इकाई है, इसलिए समाज ही बदल जाए, तो भाषा कैसे नहीं बदलेगी? सूक्ष्म रूप से देखें, तो विविध कारकों से समाज में क्रमिक परिवर्तन सतत हो रहा है और तदनुरूप उसकी भाषा में भी। पर, वे बदलाव आमतौर पर नज़र नहीं आते। लघु काल के सापेक्ष देखने पर समाज एवं उसकी भाषा स्थिर ही प्रतीत होते हैं, किन्तु दीर्घ काल के सन्दर्भ में आकलन करें, तो वे स्पष्ट रूप से बदले नज़र आते हैं। हाँ, भाषा–व्यवहार का मौखिक रूप शीघ्रता से बदलता है, लिखित देर से।

भाषा में हो रहा परिवर्तन थोड़ा धीमा हो, जिससे सापेक्ष रूप से उसकी स्थिरता बनी रहे – यह ज़रूरी होता है, क्योंकि क्षण–क्षण वह बदलती रही, तो एक पीढ़ी की बात दूसरी पीढ़ी के लिए अबूझ हो जाएगी अथवा एक स्थान की बोलचाल दूसरे स्थान के लोगों के सिर के ऊपर से गुज़र जाएगी, कुछ भी उनके पल्ले न पड़ेगा। इसी से ज़रूरी होता है, किसी भाषिक समुदाय की भाषा का मानकीकरण। मानकीकरण के साधन हैं 'व्याकरण' व 'शब्दकोश'। ये किसी भाषा की विविधरूपता और नित्य परिवर्तनशीलता के बीच से उस भाषा की संरचना का एक रूप निकालकर सामने रखते हैं, उसे एक निश्चित आकार देते हैं, जिससे उसके स्थानगत व कालगत विभेदों में एक समन्वय व ठहराव–सा आता है।

जिसे आमतौर पर हम 'व्याकरण' या 'शब्दकोश' कहते हैं, वह सायास विवेचित होता है, अर्थात् प्रयासपूर्वक मानकीकरण। परन्तु, एक स्तर पर देखें, तो किसी भाषिक समुदाय के जनों की चेतना (सामूहिक चेतना) में बैठा हुआ, स्वतः निहित 'व्याकरण' या 'शब्दकोश' भी होता है, जो उस समुदाय के अलग–अलग व्यक्तियों की अलग–अलग भाषिक प्रवृत्तियों में समन्वय लाते रहता है, उन्हें एक खास भाषिक–संरचना में बाँधकर यह क्रिया समाज में चल रहे तथाकथित शिष्ट भाषिक प्रयोगों की देखादेखी आम जनों के ढलते रहने के रूप में घटित होती है। इस प्रकार यह अनायास हो रहा मानकीकरण है। पर, इस मानकीकरण का दायरा सीमित है। यह किसी भाषा के रूपों को कम समय या सीमित स्थान के दायरे में ही स्थिर रख पाता है। भाषा के परिवर्तन की गति को यह कम ही बाँध पाता है। इससे कोई भाषा एक–दो पीढ़ी तक भले वही रह जाए, दस–बीस कोस तक भले वही रह जाए, पर उसके आगे वह बदले बिना नहीं रहती। उसकी ध्वनि–संरचना, शब्द–भण्डार, व्याकरणिक संरचना सबमें पर्याप्त अन्तर आ जाता है। जैसे–जैसे अन्तर आता है, वैसे–वैसे सामूहिक चेतना में निहित 'व्याकरण' व 'शब्द–कोश' के रूप में बनी भाषा–व्यवस्था भी परिवर्तित होती जाती है। यानी, कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि अनायास जैसी चल रही इस मानकीकरण की प्रक्रिया का ज़ोर और दायरा बहुत कम है।

इस स्थिति में ज़रूरत हो जाती है भाषा के सायास मानकीकरण की – उसकी शब्द–सम्पदा को व्यवस्थित और विवेचित करने की, उसकी व्याकरणिक संरचना की विवेचना की। 'व्याकरण' किसी भाषा के मौजूद अनेक विभाषीय रूपों के बीच किसी/किन्हीं खास का चुनाव करके उसे/उनको व्यवस्थित करता है और उसी एकरूप व्यवस्था के ज़रिये भाषा की संरचना की व्यवस्था करता है। वह भाषा–प्रयोक्ताओं के

सामने भाषा–रूप का एक आदर्श रखता है और उसी रूप के आस–पास भाषा–प्रयोग करने की अमूर्त प्रेरणा–सी देता है। इससे लोगों का भाषिक व्यवहार नियमित होने लगता है और स्थान बदलने पर भी मोटे तौर पर स्थिर–सा रहता है। अर्थात् भाषा दीर्घकालिक स्थिरता–सी पाती है, जो सम्प्रेषण के लिए ज़रूरी है। परन्तु, इससे कोई भाषा अनन्त काल के लिए स्थिर नहीं हो जाती। चाहे कितनी भी शक्ति लगा ली जाए, किसी भाषा का रूपान्तरण ठहर जाने वाली चीज़ नहीं। वह सामाजिक–संरचना में नित परिवर्तन के सापेक्ष कमोबेश परिवर्तित होती ही रहती है, परन्तु छिटपुट बदलावों को 'व्याकरण' असाधु ठहराते हुए, निरन्तर पूर्वरूप की ही संस्तुति करते हुए, उपेक्षित करते रहता है। किन्तु, वे ही अल्प परिवर्तन कालक्रम से जब संचित होते–होते कुछ बड़े दिखाई देने लगते हैं, तब 'भाषा का परिवर्तन हो गया है' जैसा प्रतीत होने लगता है। तब, (पूर्व–रूप को ही बराबर समर्थन दे रहे) 'व्याकरण' को भी भाषा–परिवर्तन के उस ठोस तथ्य के आधार पर खुद में बदलाव लाना पड़ता है। ***भाषा–परिवर्तन > व्याकरण द्वारा मानकीकरण > फिर, भाषा–परिवर्तन > व्याकरण में बदलाव और बदले रूप में व्याकरण द्वारा मानकीकरण > फिर, भाषा–परिवर्तन > फिर, व्याकरण में बदलाव...*** सतत यह क्रम चलता रहता है।

यह तो ठीक है कि समाज की संरचना में परिवर्तन के सापेक्ष उसकी भाषा में भी परिवर्तन होता है, परन्तु भाषा के सभी तत्त्व, ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ, शब्दावली, बराबर और समान मात्रा में ही परिवर्तित होते चलें, यह ज़रूरी नहीं। कभी शब्द का ध्वनिगत स्वरूप भर बदलता है, अर्थ वही रहता है, जैसे – 'अग्नि' से 'आग' हुआ, तो कभी शब्द वही रहता है, केवल अर्थ बदल जाता है, जैसे – 'आकाशवाणी' शब्द प्राचीन साहित्य में देववाणी के लिए आता था, आज 'ऑल इंडिया रेडियो' के लिए आ रहा है। इसी तरह प्राचीन साहित्य में 'किन्नर' शब्द का प्रयोग पर्वतीय क्षेत्र की मानव–जाति विशेष के लिए होता था, आज स्त्री–पुरुष से इतर तीसरे लिंग के लिए हो रहा है। सबसे धीमी गति से बदलता है; उसका वाक्य–गठन या व्याकरणिक संरचना। परन्तु, इतना स्पष्ट है कि भाषा का कोई तत्त्व अपरिवर्तनीय नहीं है। परिवर्तन की प्रक्रिया में भाषा के बाह्य (शब्द-भण्डार, अर्थ) और आन्तरिक (व्याकरण, ध्वनि-प्रकृति) स्वरूप में अन्तर आता है, जिससे कालक्रम में एक भाषा से दूसरी भाषा का भी विकास हो जाता है। परिवर्तन की प्रक्रिया में कभी ऐसा होता है कि किसी भाषा के आंतरिक स्वरूप में अन्तर आता है, उसमें बाहर से शब्द, ध्वनियाँ आदि आकर उसकी '**ध्वनि–प्रकृति**' या '**भाव–प्रकृति**'[7] में मिश्रण करते हैं; परन्तु भाषा मोटे तौर पर वही रहती है। जैसे – किसी समय की 'खड़ी बोली' (हिंदी) में डॉक्टर, ऑफ़िस जैसे शब्द और 'ऑ, 'ख़', 'ज़' जैसी ध्वनियाँ नहीं थीं, आज हैं; फिर भी भाषा तो वही है 'खड़ी बोली' (हिंदी)। इसी तरह कुछ लोग शहरी संस्कार वश हिंदी को अंग्रेज़ी शब्दों से बोझिल बनाकर बोलें, तो भी कोई नयी भाषा न होकर वह (हिंग्लिश/हंग्रेज़ी) 'हिंदी' ही होती है। किन्तु, परिवर्तन की प्रक्रिया इतनी ही नहीं है। इसके तहत कभी–कभी एक भाषा से दूसरी ही भाषा का विकास हो जाता है, तो कभी कोई भाषा इस प्रक्रिया में पड़कर पूरी तरह विलुप्त भी हो जाती है और उसकी जगह दूसरी भाषा ले लेती है। जैसे – 'अपभ्रंश' में अन्य भाषा–स्रोतों के मेल से काल–क्रम में उसका विकास 'हिंदी' के रूप में हुआ। अमेरिका की अधिकतर कथित नीग्रो भाषाएँ आज विलुप्त हो चुकी हैं, अंग्रेज़ी ने उनकी जगह ले ली है। कुछ नीग्रो अब भी थोड़े से प्राचीन शब्द बचाए हुए हैं, जो अंग्रेज़ी में मिलाकर बोलते हैं। इसी तरह, अरुणाचल प्रदेश व झारखण्ड की आदिवासी भाषाओं पर बड़ी आबादी की भाषा हिंदी प्रभावी है, जिससे भविष्य में उनमें से कई के विलोप की आशंका है। मिज़ोरम–मेघालय आदि में तो अंग्रेज़ी के प्रभाव से कई छोटी–छोटी आदिवासी भाषाएँ तो लुप्त भी हो चुकी होंगी। 'यूनेस्को' के 2008 ई. के एक अध्ययन के अनुसार (Unesco Atlas of the Word's Languages in Danger, www.unesco.org/culture/language Atlas), विश्व में 6780 भाषाएँ बोली जाती हैं। उनमें से 6480 भाषाओं के बोलने वाले कुल 1.5 करोड़ हैं। भूमण्डलीकरण के चलते उनपर खतरा है। 2021 तक उनमें से 96 प्रतिशत भाषाओं के विलुप्त हो जाने की आशंका 'यूनेस्को' को है। बड़े समूह की भाषा के दबाव–वश भारत की 198 भाषाएँ आज विलुप्ति की ओर हैं, जिनमें आदी, अंगामी, बोड़ो, हो, खासी, बिरहोर, वुफडुख, मिजो, शेरपा आदि हैं।

इस विवेचन से यह संकेत मिलता है कि किसी भाषा के

परिवर्तन में बाह्य कारक भी बड़ी भूमिका निभाते हैं। हम जानते हैं कि कोई भाषा किसी–न–किसी भाषिक समूह (जन–समुदाय) की ही होती है। जब दो भाषिक समुदाय एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, तब भाषा परिवर्तित होने लगती हैं। परिवर्तन का सबसे प्रारम्भिक और व्यापक रूप होता है, उनमें शब्दावली का आदान–प्रदान। शब्दों के ज़रिये एक भाषा की वे ध्वनियाँ भी दूसरी भाषा में प्रविष्ट होती हैं, जो दूसरी भाषा में पहले से नहीं थीं अथवा दूसरी भाषा की ध्वनि–प्रकृति के अनुकूल नहीं हैं। इससे उस भाषा में दो प्रकार की ध्वनि–प्रकृतियों का सम्मिश्रण होने लगता है। उदाहरणस्वरूप, हिंदी भाषा ऐतिहासिक कारणों से अरबी, तुर्की, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के सम्पर्क में आयी, जिससे इनके शब्द 'हिंदी' में आये – क़दम, फ़ुर्सत, ख़ाक, ख़ुदा (**फ़ारसी**), ताबीज़, कागज़, ख़राब (**अरबी**), सौग़ात, दारोग़ा (**तुर्की**), टॉफ़ी, टॉकीज़, हॉल (**अंग्रेज़ी**) आदि। इन शब्दों से लगी ध्वनियाँ – 'क़', 'ख़', '.ग', 'ज़', 'फ़' और 'ऑ' – भी इस प्रक्रिया से हिंदी भाषा की अंग बनीं। अहिंदी भाषी जन जब हिंदी बोलते हैं, तब वे सहज रीति से अपनी मातृभाषा की ध्वनि–प्रकृति में रंगकर ही हिंदी शब्दों का उच्चारण करते हैं। जैसे – बंगाली व्यक्ति हिंदी का 'अनिल' बोलेगा तो अपनी ध्वनि–प्रकृति के अनुसार 'ओनील' बना देगा। यह भी भाषा–परिवर्तन का ही एक पक्ष है। इसी तरह, एक भाषा का शब्द दूसरी भाषा में जाने पर उस भाषा की स्थानीय विशेषता के प्रभाव में आकर कभी अर्थ–परिवर्तन भी कर लेता है। अंग्रेज़ी का 'ग्लास' (गिलास) शब्द, जो काँच या काँच से बने (आकार–विशेष के) जलपात्र के लिए प्रयुक्त था, हिंदी में आकर वह काँसा, चाँदी, पीतल, स्टील, प्लास्टिक, मिट्टी सबसे बने जलपात्र के लिए प्रयुक्त हो रहा है। दो भाषाओं के सम्पर्क के कारण उनमें व्याकरणिक तत्त्वों का भी आदान–प्रदान होता है। आज के अंग्रेज़ी पढ़े–लिखे लोगों का वाक्य–विन्यास बहुत कुछ अंग्रेज़ी–विन्यास के दर्रे पर होता है। अंग्रेज़ी से हिंदी–अनुवाद के समय भी इसकी झलक मिलती है। "व्यक्ति जिसने हिंदी–गीत को शिखर पर पहुँचाया, महादेवी वर्मा हैं" जैसा वाक्य–रूप अंग्रेज़ी के "The person who reached the Hindi Lyric to zenith, is Mahadevi Verma" के असर से बना है। इस वाक्य में आया 'वह' The की छाया है। वैसे हिंदी की प्रकृति के अनुकूल वाक्य रहा है – ''जिस व्यक्ति ने हिंदी गीत को शिखर पर पहुँचाया, वे महादेवी वर्मा हैं।''

हिंदी में कई फ़ारसी प्रत्यय/शब्दांश भी आकर यहाँ की व्युत्पत्ति–प्रक्रिया को प्रभावित करने लगे। जैसे – फ़ारसी से आये 'दार' (रसदार, फलदार) और 'बे' (बेमेल, बेनाम)। भाषाई संपर्क कई बार रूप–प्रक्रिया में भी दख़ल देने लगते हैं। दिल्ली में '**तुम्हें कल आना है**' की जगह अक्सर ऐसा प्रयोग सुनने में आता है – ''**तुमने कल आना है।**'' पंजाबी–प्रभाव से 'तुम्हें' की जगह 'तुमने' जैसा रूप बन जाता है। इसी तरह, हिंदी की प्रकृति के अनुसार 'मकान' व 'बुक' के परसर्ग विभक्ति बहुवचन रूप 'बुकों', 'मकानों' होंगे; परन्तु जिन भाषाओं से ये शब्द आये, उनकी रूप–रचना के प्रभाव–स्वरूप 'मकानात' व 'बुक्स' रूप में भी यदा–कदा किसी के मुँह से सुनाई पड़ जाते हैं। (बुक्स से पढ़ो। मकानात में आग लगी।) इसी तरह, अरबी–फ़ारसी से आये 'रूह', 'बू', 'ताकत' आदि के लिंग के असर से परम्परा प्राप्त 'आत्मा', 'गंध', 'सामर्थ्य' आदि स्त्रीलिंग हो गये।

उक्त विवेचन से किसी भाषा के परिवर्तन के लिए बाह्य कारकों की एक झलक मिलती है। जब दो भाषिक समुदाय एक–दूसरे के सम्पर्क में आते हैं, तब उनकी भाषाएँ भी परस्पर प्रभावित और तदनुरूप परिवर्तित होने लगती हैं। उनका सम्पर्क कई रूपों में हो सकता है – कभी सहयोग, तो कभी संघर्ष–आधिपत्य–शोषण और दमन के रूप में। सम्पर्क के कारण राजनैतिक, धार्मिक–सांस्कृतिक या व्यापारिक कुछ भी हो सकते हैं। एक भाषा के शब्द दूसरी भाषा में आना और दूसरी भाषा के शब्द पहली में जाना सम्पर्क के पहले रूप का लक्षण है। एक भाषा के प्रयोक्ता (भाषा–भाषी) दूसरे पर आधिपत्य जमाकर उनका, उनकी भाषा का दमन भी कर सकते हैं। विलुप्त हो रही भाषाएँ या किसी भाषा की विलुप्त हो रही भाषिक विशेषताएँ इसके प्रमाण हैं, जो सम्पर्क के दूसरे रूप की सूचक हैं। साथ ही, सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि किसी भाषा की जो अपनी खास **ध्वनि–प्रकृति** व **भाव–प्रकृति** होती है (जो एक तरह से उस भाषा के प्रयोक्ताओं की दीर्घ काल में बनी हुई भाषिक प्रवृत्तियों या आदतों का समुच्चय होती है), उसी के सापेक्ष बाहरी प्रभावों की ग्राह्यता या अग्राह्यता की मात्रा निर्धारित

होती है। सम्पर्क के इन प्रकारों में कोई भाषा कितनी बदलेगी या दोनों में से कौन–सी भाषा अधिक बदलेगी, इसके निर्धारक तत्त्व हैं जो भाषाओं में अन्य प्रभावों को अपनाने/पचाने की ताकत, उन भाषा–भाषियों का समाज–गठन, स्वभाव–प्रेम, उनकी प्रतिरोध–शक्ति और बाह्य प्रभावों की तीव्रता आदि। किसी भाषा की परिवर्तनशीलता में बाह्य प्रभावों की ताकत के साथ भाषा–भाषियों की अपनी अन्तर्निहित विशेषताएँ भी भूमिका निभाती हैं। किन्तु, सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य है किसी भाषा की प्रकृति (ध्वनि–प्रकृति और भाव–प्रकृति), जो प्रयोक्ताओं की दीर्घकाल में बनी हुई भाषिक प्रवृत्तियों/आदतों का समुच्चय है। किसी भाषा में जब आगत शब्दों के सहारे कुछ नयी ध्वनियाँ प्रविष्ट होती हैं, तब भी वे उस भाषा की अंग तब तक नहीं बनेंगी, जब तक उसके प्रयोक्ताओं को अपनी भाषिक आदतों (ध्वनि–प्रकृति) के अनुकूल न लगें। जैसे – अरबी से आये 'ख़राब' शब्द को आम हिंदी भाषी (नुक्ता–विहीन) 'खराब' बोलते हैं। यानी, 'ख़' को अपनी ध्वनि–प्रकृति में रंगकर 'ख' बोलते हैं। कठिन लगने वाले प्रयोगों से दूर रहना इन्सान की सहज प्रवृत्ति है, जिसे 'प्रयत्न–लाघव' या 'मुख–सुख' कहते हैं। कठिनाई अपनी भाषिक आदत के सापेक्ष महसूस होती है। पंजाबी लोग 'स्कूल' को 'सकूल' इसी के तहत बोलते हैं।

असली आन्तरिक कारण भाषा–विशेष की ध्वनि/भाव–प्रकृति (यानी व्याकरणिक संरचना) में ही छिपे हैं। बंगला की ध्वनि–प्रकृति 'श' कार प्रधान है, जिसके कारण बंगाली जन हिंदी अथवा अन्य भाषाओं के भाषण–क्रम में 'स' वाले शब्दों में भी सहज ही 'श' उच्चारित कर बैठते हैं। यह इसी का प्रमाण है। बाह्य प्रभावों में सांस्कृतिक प्रभावों की भी बड़ी भूमिका है। भक्ति आन्दोलन के प्रभाव से मध्यकालीन आर्य भाषाएँ संस्कृत शब्दों की ओर उन्मुख हुईं। हिंदी में शब्दावली का तत्सम प्रधान रहना उसी का असर है। यदि भौगोलिक बाधा की अतिशयता के कारण किसी समुदाय का बाहरी सम्पर्क न हो या वह अलग–थलग–सा हो, तो इतना तय है कि उसकी भाषा में परिवर्तन की गति बहुत कम होगी। कालक्रम से उसमें भी परिवर्तन होगा (धीमी गति से ही सही), जिसका कारण उस समुदाय और उसकी भाषा में आन्तरिक कशमकश ही होगा। यहाँ व्यक्ति के रुचि भेद/परिवर्तन और समाज की रूढ़िप्रियता की वह आंतरिक कशमकश भाषा में भी खेल दिखाएगी।

भाषा के ध्वनि–परिवर्तन के आन्तरिक कारणों में 'प्रयत्न–लाघव' की ज़ोरदार चर्चा होती है, जिसकी आगम, लोप, विकार, विपर्यय, समीकरण, विषमीकरण, स्वर–भक्ति आदि दिशाएँ बतायी जाती हैं। प्रयत्न–लाघव या उच्चारण–सुकरता यानी कम श्रम करके काम चलाने की प्रवृत्ति से भी भाषा के शब्द बदलते दिखे हैं। जैसे – 'स्टूल' का 'टूल' या 'मैडम' का 'मैम' हो जाना। किन्तु, ध्यातव्य है कि 'प्रयत्न–लाघव' के तहत किसी शब्द में हुए ध्वनि–लोप या ध्वनि–आगम आदि की व्याख्या केवल यह कहकर नहीं की जा सकती कि 'कम/आसान श्रम करना चाहा, इसलिए ऐसा न बोल के ऐसा बोल दिया' वस्तुतः भाषा का परिवर्तन व्यक्तिगत (प्रयत्न–लाघव) कारण से नहीं होता। पंजाबी लोग 'स्टूल' को 'सटूल' या 'स्कूल' को 'सकूल' बोलते हैं, तो यह कौन–सा प्रयत्न–लाघव हुआ? मुख–सुख या प्रयत्न–लाघव का कोई सर्वमान्य, सार्वभौम नियम नहीं बनाया जा सकता। एक के लिए यदि संयुक्ताक्षर का उच्चारण दुष्कर है, तो दूसरे के लिए सुकर। (अंग्रेज़ी में सैकड़ों संयुक्ताक्षर वाले शब्द आसानी से व्यवहृत हैं। वहीं हिंदी वाले, खासकर जनपदीय भाषाओं वाले 'भक्त' आदि को 'भगत' आदि कर लेते हैं।) यदि 'प्रयत्न–लाघव' की निश्चित व सहज प्रवृत्ति इन्सान में सदा होती है, तो सभी लोग हर बार कम शब्दों में ही बोलकर काम क्यों नहीं चला लेते? कई बार वे लम्बे–लम्बे प्रलाप या बकवास क्यों करते हैं? आज भी हम कितने बड़े–बड़े शब्दों को सहज ही ढो रहे हैं ('पर्यावरण', 'अंतरराष्ट्रीय', 'एक्सरसाइज़'– न जाने कितने), पहले भी ढोते थे। सही बात यह है कि कहाँ 'प्रयत्न–लाघव' या 'लोप' आदि होंगे, कहाँ नहीं ? – इसके कोई निश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते। लोप, आगम, समीकरण, विपर्यय आदि ध्वनि–परिवर्तन की दिशाएँ नियमित नहीं हैं। चूँकि यह नहीं बताया जा सकता कि कहाँ/कब/किस स्थिति में ये घटित होंगे, कहाँ नहीं अथवा एक परिस्थिति में ये घटित हुए, तो उसी तरह की अन्य परिस्थिति में क्यों न घटित हो सके? इसलिए, ये दिशाएँ (या प्रयत्न–लाघव) भाषा–विशेष के ध्वनि–परिवर्तन का विवरण देने में सहायक भर हैं। ये सिद्धान्त का रूप नहीं ले सकते। (डॉ. रामविलास शर्मा ने

'**भाषा और समाज**' पुस्तक में ऐसा ही प्रतिपादित किया है।) उक्त दिशाओं में कहीं–कहीं हुआ ध्वनि–परिवर्तन वस्तुतः किसी भाषा की ध्वनि–प्रकृति के तहत अनुकूलित होने की प्रक्रिया के अंग हैं। इस दिशा में ही व्याख्या की ज़रूरत है। पंजाबी में 'सकूल', 'सटूल' होना और हिंदी क्षेत्र में 'टूल' और कहीं–कहीं 'इस्कूल' होना अपनी–अपनी ध्वनि–प्रकृति के लिहाज़ से अनुकूलन के प्रमाण हैं।

भाषा के ध्वनि–परिवर्तन के अन्य आंतरिक कारणों में 'अपूर्ण अनुकरण' (जैसे – 'गंगा जी' शब्द का अपूर्ण अनुकरण अंग्रेज़ी में उसे 'गैंजेज़/गंगेज' बना देता है। शिशु 'रोटी' को 'लोती' कहता है), अज्ञान–जन्य 'भ्रामक व्युत्पत्ति/सादृश्य' (जैसे – 'देहाती' के तर्ज पर 'शहराती' हो जाना, 'पंडित जी' का 'पंडी जी' हो जाना), भावातिरेक (जैसे – 'बेटी' को 'बिट्टो/बिटिया', 'बहन' को 'बहिनिया' आदि बोलना) आदि भी गिनाये जाते हैं। इनसे भी ध्वनि–परिवर्तन को समझने में मदद मिलती है, किन्तु ये भी सिद्धान्त नहीं बन सकते। कारण, शिक्षा अथवा बेहतर प्रयोक्ताओं के अनुकरण द्वारा इन्हें सुधार सकते हैं। किन्तु, इनकी भी परिवर्तन में भूमिका से इन्कार नहीं किया जा सकता। बस! दो बातें ध्यातव्य हैं। पहली तो यह कि ऐसे परिवर्तन भी वक्ता अपनी ध्वनि–प्रकृति के अनुकूल ही करता है। दूसरी बात, जो अधिक महत्त्वपूर्ण है, वह यह है कि कोई भी ऐसा परिवर्तन व्यक्तिगत विचलन के रूप में न होकर सामाजिक स्वीकृति/प्रवृत्ति के रूप में स्थिर होने पर ही भाषा में परिवर्तन लाता है।

भाषिक परिवर्तन का एक बृहत् आयाम भाषाविज्ञानियों के इस मन्तव्य में भी निहित है कि भाषा–विकास चक्रवत् चलते रहता है – 'अयोगात्मकता' से 'योगात्मकता' की ओर और 'योगात्मकता' से 'अयोगात्मकता' की ओर अनवरत चलता रहता है।[8] जैसे – 'लातिन' (लैटिन) और 'संस्कृत' अधिक 'योगात्मक' थीं, पर इनसे विकसित क्रमशः 'हिंदी' और 'फ़्रांसीसी' अपेक्षाकृत वियोगात्मक हो गयीं। सम्भव है, ये आगे और वियोगात्मक होते–होते 'चीनी' जैसी अयोगात्मक बन जाएँ। फिर, 'चीनी' का भी जिस तरह विकास हुआ है, उससे यह अनुमान लगाना कदाचित् अनुचित नहीं होगा कि वह अयोगात्मकता' से आगे की ओर धीरे–धीरे बढ़ रही है। (उसमें भी लम्बे कालखण्ड में कुछ योगात्मक प्रवृत्तियाँ पनप सकती हैं।) किसी भाषा के विकास के इतिहास से ही जुड़ा है; उसे मिलने वाला हर सांस्कृतिक अवसर, चाहे इसका रूप उसको लिपि उपलब्ध होना या साहित्य–रचना, शिक्षा, राजनीति आदि का माध्यम बनना है। अपने प्रयुक्ति–क्षेत्र के विस्तार या विलक्षणता से भी भाषिक परिवर्तन होता है – भले वह शैली–भेद तक ही सीमित रहे।

भाषा–भेद और भाषाई परिवर्तनशीलता का ही एक आयाम है – किसी एक भाषा–क्षेत्र में मौजूद अलग–अलग विभाषाएँ या बोलियाँ। विभाषाओं / बोलियों (Dialects) की बहुलता का आधार है – भौगोलिक रूप से विभक्त हुए मानव–समूहों की अलग–अलग स्थानगत सांस्कृतिक विशेषता। ऐसे अलग–अलग सांस्कृतिक समूह की अलग–अलग भाषिक संरचना होती है, उसी को कुछ लोग उस भाषा की बोली कहते हैं। जैसे – हिंदी (खड़ी बोली) एक भाषा है, जिसके सैंकड़ों रूप हैं। 'दिल्ली' (भारत) की हिंदी अलग है, 'पटना' (बिहार, भारत) की अलग, तो 'लखनऊ' (उत्तर प्रदेश, भारत) की अलग; इसी तरह भारत और तदितर देशों के अन्य हिस्सों (चेन्नई, हैदराबाद, अरुणाचल, इंग्लैण्ड, मॉरीशस, फ़िजी आदि) की भी हिंदी अलग–अलग होगी। ये ही 'हिंदी' भाषा की विभाषाएँ या बोलियाँ हैं। उसी तरह, 'पलामू' (झारखण्ड, भारत), 'पटना' (बिहार, भारत) और गया (बिहार, भारत) की 'मगही' भाषा अलग–अलग है। इसी तरह, 'आरा' (भोजपुर, भारत), 'बलिया' (उत्तर प्रदेश, भारत) और 'बनारस' (उत्तर प्रदेश) की 'भोजपुरी' भाषा भी अलग–अलग है। 'भोजपुरी' तो भारत के अलावा भी, दुनिया के कई देशों में पहुँची हुई है, जैसे – मॉरीशस, सूरीनाम, गुयाना, त्रिनिदाद–टोबैगो, फ़िजी आदि। ज़ाहिर–सी बात है कि इन हिस्सों की 'भोजपुरी' भी अलग–अलग होगी। ये क्रमशः 'मगही' और 'भोजपुरी' की विभाषाओं या बोलियों के उदाहरण हैं। इनमें से किसी एक के बोलने वाले के लिए जब दूसरे के बोलने वाले की भाषा बोधगम्य नहीं रह जाए, तो वह अन्तर दो विभाषाओं का न रहकर, दो भाषाओं का हो जाता है।

जिस गति से किसी भाषा की शब्द–सम्पदा और उससे लगीं ध्वनियों में बदलाव आता है, उस गति से उसकी व्याकरणिक विशेषताएँ नहीं बदल पातीं। योगात्मक भाषाओं के सन्दर्भ में,

कहा जा सकता है कि उनके व्याकरण के बदलाव को सर्वनाम, संख्यावाचक शब्द, क्रियापद, विभक्ति/परसर्ग, प्रत्यय, अव्यय आदि तत्त्वों को कसौटी बनाकर मापा जा सकता है, जिन्हें पं. किशोरीदास वाजपेयी '**भाषा के मूलधन**' कहते हैं।[9] इन्हीं पर किसी भाषा की निजता सर्वाधिक टिकी रहती है। ये किसी भाषा में उधार नहीं लिये जाते, आयातित नहीं होते, बल्कि उस भाषा के अपने विकास होते हैं, खासकर प्रथम चार। किसी योगात्मक भाषा में ये यदि आमूल–चूल बदलाव को प्राप्त हो जाते हैं, तो मान लेना पड़ता है कि भाषा बदल गयी, यानी एक भाषा से दूसरी भाषा जनम चुकी है। पर, इसके साथ अयोगात्मक भाषाओं का भी तो सवाल है ! उस सन्दर्भ में, कदाचित् यह कहना होगा कि अयोगात्मकता की स्थिति को पारकर उनमें (उपसर्ग, विभक्ति, प्रत्यय जैसे) प्रकट सम्बन्ध–तत्त्वों का विकास हो जाए, तो वे भाषाएँ परिवर्तित मान ली जाएँगी। किसी भाषा के इतिहास को देखकर यह समझ सकते हैं कि इस तरह के परिवर्तन में सैंकड़ों–हज़ारों साल लगते हैं। पर, जब भाषा का आन्तरिक व्याकरण बदल जाता है, तभी भाषा का पूर्णतया बदल जाना कहा जाता है।

सन्दर्भ और टिप्पणियाँ :

1. देवेन्द्रनाथ शर्मा (1966) 'भाषा विज्ञान की भूमिका' (संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण, 2001 की तीसरी आवृत्ति 2005), राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ – 35
   ''सामाजिक दृष्टि से भाषा के चार मुख्य उपयोग हैं – (1) सूचन (2) प्रेरण (3) रसन (4) चिन्तन।''
2. वही
   ''भाषा की उत्पत्ति मन से होती है और उसकी परिणति भी मन में ही होती है, अर्थात् वक्ता और श्रोता, दोनों के मन को प्रतीति की दृष्टि से एक सूत्र में अनुस्यूत करना भाषा का उद्देश्य है।''
3. भाषा–व्यवस्था को प्रसिद्ध भाषाविज्ञानी सस्यूर [Ferdinand de Saussure] ने ['Course in General Linguistics' पुस्तक में, 'लांग्' (Langue) कहा, जिसे अंग्रेज़ी में Tongue कहते हैं। भाषा के बाह्य व्यवहार (सामाजिक सम्प्रेषण हेतु भाषिक प्रयोग) को उन्होंने 'पैरोल' (Parole) कहा, जिसे अंग्रेज़ी में Speech कहते हैं। प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा ने इनके लिए क्रमशः 'वाणी' और 'भाषा' शब्दों का प्रयोग किया है। शर्मा जी ने 'भर्तृहरि और आधुनिक भाषा–चिन्तन : एक तुलनात्मक विश्लेषण' शीर्षक आलेख [जो डॉ. पुष्पेन्द्र कुमार द्वारा सम्पादित और 'नाग प्रकाशन' से प्रकाशित 'भारतीय आचार्यों का भाषा–चिन्तन' पुस्तक में संकलित (पृ.115-131) है] में उक्त भाषिक स्तरों को भर्तृहरि द्वारा 'वाक्यपदीयम्' में प्रतिपादित क्रमशः 'वैखरी' और 'मध्यमा' नामक वाक्–स्तरों से तुलनीय माना है।
4. रवीन्द्र कुमार पाठक, 'व्याकरण की सार्वभौमिकता : यथार्थ और सम्भावना', 'मध्यभारती' (पूर्वसमीक्षित अर्द्धवार्षिक पत्रिका), अंक 67, जुलाई–दिसम्बर, 2014, डॉ. ह.सिं. गौर विश्वविद्यालय, सागर, पृष्ठ 95
   ''हर अभिव्यक्त (उच्चरित/लिखित) वाक्य एक 'बाह्य संरचना' (Surface structure) है, जिसकी एक 'आन्तरिक/गहन संरचना' (Deep structure) होती है, जो मानसिक संरचना का अंग होती है। आन्तरिक संरचना की ही बाह्य परिणति होता है वह अभिव्यक्त (उच्चरित/लिखित) वाक्य।''
5. अमेरिकी भाषावैज्ञानिक नोएम चॉम्स्की के मत के आधार पर कहा जा सकता है कि भाषा किसी (व्याकरणिक) संरचना–विशेष का नाम नहीं है, बल्कि मनुष्य की चेतना में निहित भाषिक क्षमता के रूप में भाषा एक सम्भावना है। इसी क्षमता के बल पर मानव अनन्त रूप में भाषा का उत्पादन या प्रयोग कर सकता है – अनन्त प्रकार की संरचना या शैली में वाक्य बोल–लिख या समझ सकता है। सृजनशीलता के तहत यदि कोई ऐसा भी प्रयोग कर दे, जो प्रचलित भाषा–संरचना से हटकर हो अथवा विवेचित व्याकरण की दृष्टि में विचलित हो, तो भी व्याकरण उसे अपनी उसी व्याख्या में समाहित करने की चेष्टा करता है, जो प्रचलित भाषा–संरचना के सन्दर्भ में की गयी है, जब कि वैसा विचलन हर बार व्यक्ति की स्वतंत्र चेतना से किया गया भाषा का अभिनव प्रयोग होता है। ऐसे प्रयोग जब थोक मात्रा में सामने आ जाते हैं और उन्हें जब मौजूदा व्याकरण अपनी काया में समाहित कर पाने में असमर्थ होता है, तब उसका स्वरूप बदलना पड़ता है। वही कहलाता है, भाषा–संरचना के परिवर्तित होने पर व्याकरण का परिवर्तित होना।
   इस सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि चॉम्स्की का दोष केवल यही है कि उन्होंने व्यक्ति–आधारित चेतना को देखा, जबकि भाषा मूलतः समाज–संरचना के सापेक्ष परिवर्तनशील है। वह व्यक्तिगत विचलन से नहीं बदलती।

6. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी (2007), 'कुटज' निबन्ध, 'कुटज', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
   ''नाम इसलिए बड़ा नहीं होता कि वह नाम है। वह इसलिए बड़ा होता है कि उसे सामाजिक स्वीकृति मिली होती है। रूप व्यक्ति–सत्य है, नाम समाज–सत्य। नाम उस पद को कहते हैं, जिस पर समाज की मुहर लगी होती है।''
7. रामविलास शर्मा (2008),'भाषा और समाज', छठा संस्करण, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., दिल्ली, पृष्ठ 96
   (ये पारिभाषक शब्द विख्यात भाषाविज्ञानी डॉ. रामविलास शर्मा के हैं। उन्होंने अपनी उक्त पुस्तक में कहा है :–''भाषा की ध्वनि–प्रकृति के समान उसकी एक भाव–प्रकृति होती है, जो शब्द–निर्माण, वाक्य–रचना और व्याकरण के विभिन्न अंगों में प्रकट होती है।'')
8. जिन भाषाओं में प्रत्यय, विभक्ति/परसर्ग आदि व्याकरणिक तत्त्वों से वाक्यगत शब्दों के व्याकरणिक सम्बन्ध की रचना होती है, उन्हें योगात्मक भाषा कहते हैं। जैसे – संस्कृत, फ़ारसी, तुर्की, रूसी, अंग्रेज़ी, हिंदी, संथाली आदि। जिन भाषाओं में प्रत्यय, विभक्ति/परसर्ग आदि व्याकरणिक सम्बन्धकारी तत्त्व नहीं होते और बिना इनके योग के वाक्यगत शब्दों के व्याकरणिक सम्बन्ध की रचना होती है, उन्हें अयोगात्मक भाषा कहते हैं। जैसे – चीनी, तिब्बती, स्यामी, अनामी, सुडानी आदि। इन भाषाओं में हर शब्द स्वतन्त्र होता है तथा किसी शब्द से किसी शब्द की व्युत्पत्ति नहीं होती। वाक्य में शब्द–क्रम, सुर (Tone) तथा कहीं–कहीं स्वतन्त्र सम्बन्ध सूचक अव्ययों के प्रयोग से वाक्यगत शब्दों की व्याकरणिक कोटि या उनके व्याकरणिक सम्बन्ध का बोध होता है।
9. भाषा के मूलधन की अवधरणा सर्वप्रथम पं. किशोरीदास वाजपेयी (1898.1981ई.) ने रखी। पर, उनका विवरण देते समय वाजपेयी जी का ध्यान कदाचित् अयोगात्मक भाषाओं पर न गया, जिनमें परसर्ग / विभक्ति या प्रत्यय जैसे व्याकरणिक तत्त्व नहीं होते। भले सर्वनाम, संख्यावाचक, क्रिया / धातु, अव्यय आदि कोटियाँ हो लें। उनमें अर्थ के स्तर पर कारक जैसे तत्त्व अन्तर्भुक्त होते हैं, पर उन्हें प्रकट करने वाले विभक्ति–तत्त्व नहीं होते।

उपकारी ग्रंथ–सूची (Bibliography) :

1. उदयनारायण तिवारी (2016), 'हिंदी भाषा का उद्‌भव और विकास', लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
2. किशोरीदास वाजपेयी (1976), 'हिंदी शब्दानुशासन', द्वितीय संस्करण, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
3. देवेन्द्रनाथ शर्मा (1966), 'भाषाविज्ञान की भूमिका' (संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण, 2001 की तीसरी आवृत्ति 2005), राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
4. रामविलास शर्मा (2008), 'भाषा और समाज', छठा संस्करण, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., दिल्ली
5. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी (2007), एकुटज, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
6. के. ए. एस. अय्यर (1991), 'भर्तृहरि का वाक्यपदीय', राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
7. रवीन्द्र कुमार पाठक, 'व्याकरण की सार्वभौमिकता : यथार्थ और सम्भावना', 'मध्यभारती' (पूर्वसमीक्षित अर्द्धवार्षिक पत्रिका), अंक 67, जुलाई–दिसम्बर, 2014, डॉ. ह.सिं. गौर विश्वविद्यालय, सागर
8. Ferdinand de Saussure, 'Course in General Linguistics', Edited by Charles Bally ınd ılbert Sechehaye, McGraw-Hill Book Company, New York
9. Noam Chomsky (1965), ıspects of the Theory of Syntax, The M.I.T. Press, Massachusetts Institute of Technology, Massachusetts
10. Noam Chomsky (2002), Syntactic Structure, Second Edition, Mouton De Gruyter, Berline- New York
11. Unesco ıtlas of the Word's Languages in Danger, www.unesco.org/culture/language ıtlas

गया, बिहार, भारत
rkpathakaubr@gmail.com

2

हिंदी साहित्य का इतिहास : महत्त्व एवं प्रासंगिकता

— डॉ. कृष्णा आचार्य

जन्म : 13.11.1967

शिक्षा :

- पी.एच.एड.
- एम.फ़िल.
- एम.ए. (हिंदी)
- बी.एड.
- सी.पी.एड
- एम.एड
- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा में डिप्लोमा

व्यवसाय : शारीरिक शिक्षिका (सरकारी)

प्रकाशन :

- शोध पुस्तक – 'आचार्य श्री तुलसी साहित्य में नारी चेतना'
- कविता–संग्रह – 'वक्त की ठंडी रेत पर'
- पत्र–पत्रिकाओं में शिक्षा, साहित्य, संस्कृति आदि विषयों पर आलेख व रचनाएँ

हिंदी साहित्य का इतिहास

विचारों–भावों के आदान–प्रदान के साधन को प्रायः भाषा कहा जाता है। व्यापक अर्थ में भाषा की परिभाषा यह होगी कि जिन साधनों से विचारों का आपस में लेन–देन किया जाता है, उसी को भाषा की संज्ञा दी जाती है अथवा भावाभिव्यक्ति के साधन ही भाषा कहलाती है। इस दृष्टि से पशु–पक्षियों की बोलियाँ, इंगित भाषा के अंतर्गत आती हैं। सामान्यतः समान धर्म–जीव एक ही प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं, सम्पर्क के फलस्वरूप पशु–पक्षी और मनुष्य भी एक–दूसरे की भाषा समझ लेते हैं। चाहे वे बोल न सकें, सुखद जीवन की दृष्टि से भाषा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पारस्परिक व्यवहार के लिए दो प्रकार से शब्दों व संकेतों द्वारा आवश्यक स्वरूप सामने आते हैं। रेलवे ट्रेनों के चालन में, सड़क यातायात, होंठों तथा मुँह के भावों द्वारा हाथों के इशारों आदि से संकेत वाली भाषा होती है। जीवन में इसका भी अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है, किन्तु भाषा–विज्ञान के अनुसार ''भाषा–विज्ञान उस भाषा को ही भाषा मानता है, जिसका कुछ अर्थ होता है। काल, देश, व्यक्ति, स्तर आदि के आधार पर भाषा के स्वरूप में परिवर्तन होता रहता है।'' एक लोक प्रचलित कहावत सिद्ध करती है कि ''तीन कोस पे बदले पानी, बारह कोस पे बानी।''

1000 से आधुनिक आर्य भाषाओं का काल आरंभ होता है, यद्यपि इन भाषाओं में साहित्य की रचना का श्रीगणेश 10वीं सदी के अंत में अथवा 11वीं सदी के आरंभ में हुआ, ये बोलचाल की भाषा बन गईं, इसी में विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाओं जैसे हिंदी, बँगला, राजस्थानी आदि की उत्पत्ति विभिन्न अपभ्रंशों से हुई। पश्चिमी हिंदी का उदय शौरसेनी अपभ्रंश से तथा पूर्वी हिंदी का उदय अर्द्धमागधी अपभ्रंश से हुआ।

अपभ्रंश के साहित्यिक रूप ग्रहण कर लेने के साथ ही आधुनिक भारतीय भाषाओं का युग आरंभ हो जाता है, इसी क्रम में शूरसेन क्षेत्र में व जनसाधारण के क्षेत्र में बोलचाल की कई भाषाएँ उभरकर आईं, जो जनभाषा अवहट्ठ भी कहलाई। आजकल इसे पुरानी हिंदी कहा जाता है। कालान्तर में इसी भाषा में साहित्य की रचना की जाने लगी। पं. रामचन्द्र शुक्ल एवं डॉ. धीरेन्द्र वर्मा जैसे विद्वानों ने अवहट्ठ को अपभ्रंश तथा हिंदी के बीच की कड़ी माना है। विभिन्न विद्वानों के मतों के सार रूप में स्पष्ट होता है कि हिंदी तथा अन्य आधुनिक आर्य भाषाओं का आविर्भाव काल दसवीं शताब्दी के आसपास आरंभ होता है। चन्दबरदाई कृत पृथ्वीराज रासो में अवहट्ठ अथवा पुरानी हिंदी के दर्शन होते हैं, तो विद्यापति की 'कीर्तिलता' की भाषा भी अवहट्ठ ही है।

साहित्य विकास के परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा के विकास का काल–विभाजन इस प्रकार हुआ है :

1. आदिकाल– 1000 ई. से 1400 ई. तक।
2. मध्यकाल– 1400 ई. से 1800 ई. तक।
3. आधुनिक काल– 1800 ई. से अद्यतन।

हिंदी साहित्य का विकास

भाषा की दृष्टि से हिंदी साहित्य के प्रारंभ (आदिकाल) का निर्णय करने के सन्दर्भ में हमारे सामने दो मत आते हैं : पहला – विद्वानों का एक वर्ग अपभ्रंश को पुरानी हिंदी मानता है तो दूसरा विक्रम संवत् की आठवीं शताब्दी की रचनाओं को हिंदी की रचनाएँ मानता है। इसी वर्ग के विद्वानों में सर जॉर्ज ग्रियर्सन, मिश्रबंधु, राहुल सांकृत्यायन, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, डॉ. रामकुमार वर्मा तथा शिवनाथ सिंह सेंगर हैं।

शिवनाथ सिंह सेंगर ने 'पुष्य' नामक कवि को हिंदी का प्रथम कवि माना है, जो आठवीं शताब्दी के थे। इसी आधार पर वे हिंदी साहित्य का आरम्भ भी आठवीं शताब्दी से मानते हैं। राहुल सांकृत्यायन 'स्वबन्धु' नामक कवि को हिंदी का प्रथम कवि मानते हैं, क्योंकि उनके अनुसार आठवीं शताब्दी में 'पुष्य' नाम के कवि और उसके ग्रंथ का केवल उल्लेख मिलता है। इसी आधार पर पं. रामचन्द्र शुक्ल 'पुष्य' को हिंदी का प्रथम कवि न मानकर, सिद्ध कवि 'सरहपा' को हिंदी का प्रथम कवि मानते हैं, जिसका समय संवत् 690 विक्रम के आसपास का है। अतः हिंदी काव्य भाषा के पुराने रूप का पता हमें विक्रम की सातवीं शताब्दी के अंतिम चरण में लगता है।

हेमचंद्राचार्य ने दो प्रकार की अपभ्रंश भाषाओं की चर्चा की है – एक तो वह परिनिष्ठित अपभ्रंश है, जिसका व्याकरण स्वयं उन्होंने लिखा, दूसरी – जिसे उन्होंने 'ग्राम्य' भाषा कहा। यह प्रथम भाषा से आगे बढ़ी हुई बतायी गयी है। बौद्धों के दोहे और पद, प्राकृत के अधिकांश पद, 'संदेशरासक' आदि रचनाएँ इसी में लिखी गई हैं, वस्तुतः यही भाषा आगे चलकर आधुनिक देशी भाषा के रूप में विकसित हुई। इसकी भाषा शैली, काव्यगत अधिकार, स्थापना पद्धति, छंद आदि ज्यों के त्यों परवर्ती हिंदी साहित्य में आ गये। यही परवर्ती परिनिष्ठित अपभ्रंश ही 'अवहट्ठ' कहलाई। इसी से हिंदी भाषा का उत्थान और साहित्य का अभ्युदय हुआ। ज्योतिश्वर ठाकुर, दामोदर पंडित और अदहमाण ने अपने समय में इसके प्रयोग का उदाहरण दिया है। डॉ. उदयनारायण तिवारी ने एतद् विनायक सामग्री का परीक्षण करने के उपरान्त यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि 'अपभ्रंश' के अनन्तर यही अवहट्ठ भाषा साहित्य की भाषा कहलाती थी।

हिंदी के विशिष्ट कवि विद्यापति ने अवहट्ठ में 'कीर्तिलता' की रचना की, इस समय तक विकसित अवहट्ठ को सर्वजन–संवेद्य बनाने के लिये उन्होंने इसे 'देसीलबयना' कहा भी और उनके समान रूप प्रदान करने का प्रयत्न भी किया–

''मवकई वाणी बहुजन भावई। पाहुए सम को भझन पावट्ठ। देसीलबयना सबजन मिट्ठा। ते अइरून जम्पऔ अवहट्ठा''।

इस देसिलबयना में ही अपने पद रचकर हिंदी साहित्य की सुदृढ़ नींव स्थापित की। विद्यापति के बाद वाले मिथिला के प्रसिद्ध पं. मतीराम श्री कोपन ने विद्यापति की इस देसिलबयना को अपने 'राग–तरंगिनी' संग्रह में मिथिलाभ्रंश कहा है। अपभ्रंश को अवहट्ठ का रूप मान लेने पर ब्रजभाषा को भी अवहट्ठ का रूप मानना पड़ता है, यह भी स्पष्ट होता है कि जिस समय विद्यापति रचना कर रहे थे, उस समय मैथिली का विकास नहीं हो पाया था।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के विकास पर विचार करने के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अवहट्ठ के अनन्तर हिंदी प्रदेश में ब्रज और अवधी का ही आधिपत्य दिखाई पड़ता है, यद्यपि बुंदेली, खड़ी बोली के भी कुछ रूप आते हैं। इस आधार पर भाषा–रूप के अनुसार हिंदी साहित्य के विकास को इस प्रकार समझा जा सकता है –

1. पृष्ठभूमि–अवहट्ठ काल
2. उन्मेष–पुरानी ब्रजी, ब्रजबुलि, कौरवी या खड़ी बोली एवं अवधी का काल।
3. पूर्वभाग–ब्रजभाषा अवधी का काल।
4. उत्तरभाग–खड़ी बोली का काल।

नवीन शोधों के आधार पर अधिकांश वे ग्रंथ अप्रामाणिक सिद्ध हो चुके हैं, जिनके आधार पर आचार्य रामचंद्र शुक्ल के आदिकाल को वीरगाथा काल नाम दिया गया है। इसके अतिरिक्त, जैन साहित्य एवं सिद्ध साहित्य इतना विपुल है कि अब यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि आदिकाल की मुख्य प्रवृत्ति वीर भावना ही है।

हिंदी साहित्य की प्रासंगिकता एवं महत्ता

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में हिंदी का स्थान सर्वोपरि है, चूँकि हिंदी भाषा–भाषियों की संख्या सर्वाधिक है। अस्तु! हिंदी भारत की स्वयंसिद्ध राष्ट्रभाषा है। गंगोत्री से गंगाजल लेकर सेतु श्री रामेश्वर तक पैदल चलकर जाने वाले कांवरधारी हिंदी बोलते हैं और जनता की भाषा हिंदी द्वारा अपने जीवन की आवश्यकताओं में भरपूर उपयोग करते हैं।

आधुनिक आर्य भाषाओं में प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं की सर्वाधिक संख्या हिंदी की पत्र–पत्रिकाओं की है। सर्वाधिक पढ़ी जाने वाली रचनाएँ भी हिंदी की ही हैं। अभी तक हिंदी शब्द हिन्द–हिन्दुस्तान के निवासी के वाचक रूप में किया जाता रहा है। कवि इकबाल ने अपने प्रसिद्ध गीत 'सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा' लिखा है। इस दृष्टि से हिंदी शब्द साम्प्रदायिकता को अस्वीकार कर उदारमना एवं राष्ट्रप्रेमी मुसलमान हिंदी के नाम पर हिन्द के साथ मिलकर एकता का अनुभव बड़े गर्व के साथ करते हैं, जिसमें सर्वप्रथम नाम आता है, खड़ी बोली के प्रथम कवि, राष्ट्रप्रेमी अमीर खुसरो का।

हिंदी संस्कृत भाषा की वंशज है और उसकी तरह राष्ट्र की अस्मिता भी। हिंदी की उपभाषा ब्रजभाषा को 15वीं सदी में महाप्रभु वल्लभाचार्य ने कृष्णभक्ति के प्रचार का माध्यम बनाया था। बंगाल में कृष्णभक्तिपरक बंगला की रचनाओं की भाषा को 'ब्रजबुलि' कहा गया है। 19वीं सदी के अंतिम चरण में स्वामी दयानंद ने आर्य धर्म एवं आर्य संस्कृति का संदेश भारत के कोने–कोने में पहुँचाने के लिये हिंदी को अपनाया, इतना ही नहीं स्वतंत्रता आंदोलन को जन–जन तक पहुँचाने के लिये समस्त राजनीतिक सेवाओं एवं दलों ने हिंदी भाषा में खूब कार्य किया। जन–जागरण हेतु दक्षिण भारत में भी हिंदी का प्रचार किया गया। इसके पुरोधा थे चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य। महात्मा गांधी ने तो हिंदी को लक्ष्य करके यहाँ तक कह दिया था कि हिंदी का प्रश्न मेरे लिये स्वराज्य का प्रश्न है और ऐसा क्यों न हो? हिंदी समस्त भारत राष्ट्र को एकता के सूत्र में जोड़ती है और भावनात्मक एकता के लिये उपयुक्त वातावरण प्रस्तुत करती है।

इच्छा न होते हुए भी तत्कालीन सरकार के मुखिया तथा उनके मंत्रिमंडल को संविधान में राजभाषा के स्थान पर हिंदी को स्वीकारना पड़ा। हिंदी को भाषा के रूप में कभी राज्याश्रय प्राप्त नहीं हुआ तथापि वह जनभाषा के रूप में निरन्तर पल्लवित होती रही है, इसकी तुलना उस हरी दूब से की जा सकती है, जो बिना किसी सहारे, सिंचन एवं संरक्षण के सदैव हरी–भरी अथवा सदाबहार बनी रहती है। स्पष्ट है कि वह भारत के जन–जन की भाषा है, जनमन को प्यारी है और जनता के सहयोग से निरन्तर विकास एवं प्रवाहमयी बनी रहती है।

हिंदी साहित्य का इतिहास एक हज़ार वर्ष पुराना है, यद्यपि हिंदी को अपभ्रंश की गोद में उठाया जाए, तो उसके साहित्य के प्रारंभिक रूप के दर्शन 7वीं सदी में हो जाते हैं। हिंदी में सिद्धों व नाथों की रचनाओं के बाद विपुल भक्ति साहित्य मिलता है। ये रचनाएँ श्री राम और श्री कृष्ण की भक्ति से संबंधित हैं। स्वतंत्रता संग्राम में भी आज़ादी के जोशीले गीत हिंदी में ही लिखे गये थे। स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए हिंदी भाषा और उसके साहित्य का ज्ञान भी ज़रूरी है, क्योंकि यह हमारे देश की पहचान तथा हिन्द अथवा हिन्दुस्तान की पर्यायवाची है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि हिंदी साहित्य का प्रचुर भंडार, हिंदी की शान व हम सब का गौरव है। हिंदी के कवि कबीर, सूर, तुलसी तथा उपन्यास लेखक मुंशी प्रेमचंद विशेष रूप से अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त साहित्यकार माने जाते हैं। साहित्य में नोबेल पुरस्कार से पुरस्कृत गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की विश्व भर में अपनी अमर पहचान है। इनकी रचनाओं का अध्ययन करने के लिये अनेक विदेशी प्रतिवर्ष यहाँ आते हैं। उक्त साहित्यकारों को अनेक विश्वविद्यालयों में भी पढ़ाया जाता है। प्रत्येक को अनेक भाषाओं में अनुवादित किया जा चुका है। सार रूप में, हिंदी का साहित्य भारत एवं भारतीयों की पहचान है। अस्तु! हिंदी साहित्य की महिमा निर्विवाद है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सम्पर्क भाषा की दृष्टि से हिंदी का साहित्य सर्वथा प्रासंगिक है, उसमें भारतीय संस्कृति और परम्परा पूर्णरूपेण शाश्वत उपलब्ध होती है। जब तक भारत और भारतीयता है, तब तक हिंदी साहित्य की महत्ता और प्रासंगिकता कायम रहेगी।

शोध–संदर्भ :

- अपभ्रंश काल, पं. रामचंद्र शुक्ल – हिंदी साहित्य का इतिहास।
- पं. रामचंद्र शुक्ल ने अपनी अमर कृति 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में अपभ्रंश व्याकरण शब्दानुशासन के रचयिता प्रसिद्ध प्रकाण्ड विद्वान हेमचन्द्र द्वारा प्रस्तुत दोहे उद्धृत करते हुए बताया है कि 11वीं शताब्दी तक हिंदी का साहित्यिक रूप विकसित हो चुका था। यथा –

'भल्ला हुआ जू मारिया बहिणि म्हारा कंतु
लज्जेजं तु वयंसिअह जै भग्गा घरू एंतु'

- प्रतियोगी परीक्षा में उपयोगी पुस्तक उपकार सिविल सर्विसिज मुख्य परीक्षा – डॉ. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी से विषयवस्तु
- हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल।

बीकानेर, राजस्थान, भारत
drkrishnaacharya@gmail.com

भाषा संस्कृति का वाहन है और उसका अंग भी।

– रामविलास शर्मा

हम भाषा को नहीं बनाते, भाषा ही हमको बनाती है। थोड़े से प्रयोजनीय शब्द गढ़ लेना भाषा बनाना नहीं, वह केवल अपनी सुविधा बनाना है।

– अज्ञेय

संस्कृति का असली अर्थ है – 'जीवन में साझेदारी'। दूसरे के जीवन में शामिल होना और दूसरे को अपने जीवन में शामिल करना संस्कृति है।

– दादा धर्माधिकारी

3

हिंदी साहित्य में संस्कृति चिंतन

– डॉ. बीरसेन जगासिंह

जन्म : 20 मार्च 1946

शिक्षा :
- पी.एच.डी.
- एम.ए.
- पी.जी.सी.ई
- साहित्य रत्न

व्यवसाय :
- **(संप्रति)** सेवानिवृत्त वरिष्ठ व्याख्याता
- सृजनात्मक लेखन एवं प्रकाशन विभाग, महात्मा गांधी संस्थान के पूर्व अध्यक्ष
- संपादक – 'वसंत' त्रैमासिक पत्रिका व 'रिमझिम' द्विमासिक बाल पत्रिका, महात्मा गांधी संस्थान
- रेडियो मॉरीशस से साप्ताहिक कार्यक्रम

प्रकाशन :
- पुष्पांजलि
- क्षितीज (कविता–संग्रह)
- क्षितिज के पार (कविता–संग्रह)
- सैलाबों के बीच (कहानी–संग्रह)
- त्रिकोण का केंद्र (कहानी–संग्रह)
- मॉरीशस की पाँच बाल कहानियाँ
- मॉरीशस की 15 बाल कहानियाँ
- मॉरीशस से 101 लघु कथाएँ
- ट्रिनिडाड के आमने–सामने (यात्रावृत्तांत)
- भारत के आमने–सामने (यात्रावृत्तांत)
- मेरी कोठरियाँ (यात्रावृत्तांत)
- 'आक्रोश' मासिक समाचार–पत्र में रचनाएँ व विशेष सहयोग

सम्मान :
- विश्व हिंदी सम्मान, विश्व हिंदी सम्मेलन, न्यू यॉर्क, 2007
- आप मॉरीशस, भारत एवं ट्रिनिडाड द्वारा भी सम्मानित हुए हैं।

प्रस्तावना

विश्व की किसी भी समृद्ध भाषा के साहित्य का अवलोकन करते समय उसमें उस देश की संस्कृति की झलक मिल ही जाएगी, जिस देश में उस भाषा की उत्पत्ति, विकास और प्रसार वर्षों से होते आ रहे हों। उदाहरण अंग्रेज़ी, फ्रेंच या हिंदी जैसी अंतरराष्ट्रीय भाषाओं के साहित्य से लिए जा सकते हैं। हिंदी साहित्य में भारतीय संस्कृति प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूपों में विद्यमान होना स्वाभाविक है। भारत के बहुसंख्यक नागरिकों की भाषा हिंदी है। भारतीय जनता को लेकर रचित हिंदी भाषा के साहित्य में उसकी सोच–समझ, हँसी–खुशी, दुख–दर्द, हर्ष–उल्लास, आस्था–विश्वास, पर्व–त्यौहार, आशा–आकांक्षा, सफलता–विफलता, धार्मिक मान्यता, विडम्बना आदि का समावेश देखा जा सकता है। हिंदी साहित्य में संस्कृति–चिंतन सदा एक जैसा नहीं माना जाना चाहिए। देश में आंतरिक एवं बाह्य प्रभावों तथा आवश्यकताओं–आविष्कारों के फलस्वरूप जन–जीवन हर काल एवं परिस्थिति में परिवर्तित होता रहता है। जो बदलता नहीं और युगों से यथावत स्थिर है, जैसे झूठ न बोलना, चोरी न करना, शिष्टाचार, बड़ों का आदर, माँ–बाप की सेवा, देश–प्रेम, खुशियाँ मनाना, पिता की आज्ञा का पालन आदि सांस्कृतिक मूल्यों का समावेश साहित्य में हरेक काल में देखा जा सकता है। इनके विपरीत आचरण भी होते देखे जा सकते हैं, परंतु कर्मफल की नकारात्मकता के साथ। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाए, तो वैश्विक भाषा होने पर भी अंग्रेज़ी–फ्रेंच की अपेक्षा हिंदी साहित्य में संस्कृति को लेकर सजगता अपेक्षाकृत अधिक उपलब्ध है।

विषय–प्रवेश

राष्ट्रकवि श्री रामधारी सिंह दिनकर की प्रसिद्ध कालजयी रचना – ''संस्कृति के चार अध्याय''[1] में देश, काल और परिस्थिति के दर्पण में यह भी दर्शाया गया है कि भारतीय संस्कृति के शाश्वत स्रोत वेदों, उपनिषदों, शास्त्रों एवं अन्य आर्ष ग्रंथों में उपलब्ध परम्परागत अक्षय एवं शाश्वत सांस्कृतिक मूल्यों को अन्यान्य तरीकों से अवश्य पारिभाषित किया गया,

विभिन्न भाषाओं में तथा साहित्यिक विधाओं में, परंतु भारतीय सांस्कृतिक मूल्य हिंदी–साहित्य में हरेक काल में, चाहे परिवर्तित रूपों में सही, उपलब्ध रहे हैं। इस्लाम के प्रवेश से पूर्व, बौद्ध धर्म से पूरा भारत आंदोलित हो गया था। इस्लाम की मान्यताओं ने पुनः भारतीय परंपरागत आस्था–विश्वास को पूर्णतः झकझोर दिया। पश्चिमी महाशक्ति राष्ट्र इंग्लैंड के आगमन और सत्तासीन होने पर पूर्ण रूप से जन जीवन प्रभावित हुआ, परंतु भारत के हिंदुस्तान और इंडिया में परिवर्तित होने पर भी भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों में पूरे रूप से परिवर्तन नहीं देखा गया। इस तथ्य से परिपूर्ण है हिंदी साहित्य। देश का राजनैतिक विभाजन होने पर चाहे विश्व मानचित्र पर पाकिस्तान और बांग्लादेश अस्तित्व में आए, परंतु बृहत्तर भारत के इन देशों में सांस्कृतिक एकता न्युनाधिक रूपों में विद्यमान है। भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्य तीनों देशों में हिंदी, उर्दू और बंगला भाषाओं में और इन भाषाओं के साहित्य में उपलब्ध हैं। हिंदी साहित्य में विशेषकर, अनेक सांस्कृतिक उदाहरण मिल जाएँगे, जो वैदिक काल में थे और लौकिक संस्कृत से होते हुए हिंदी साहित्य में उपलब्ध हैं।

आर्ष ग्रंथों से महाकाव्यों तक

एक ओर वैदिक सूक्ति 'अहिंसा परमो धर्म' पर आधारित बौद्ध धर्म वैश्विक धर्म बनकर फैला, दूसरी ओर युद्धों की अपेक्षा आज भी हिंदी साहित्य में हिंसा नहीं अहिंसा की विजय दर्शायी जाती है। 'तैत्तिरीय उपनिषद्'[2] का एक उदाहरण देना चाहूँगा : ''सत्यं वद, धर्मं चर'' (।।4।।, 1/11)। वैदिक काल एवं उपनिषद् अर्थात् वेदांत काल में उपलब्ध इस शाश्वत सांस्कृतिक सत्य को बाद में भी लौकिक संस्कृत काल में भारत के अमर महाकाव्यों, रामायण एवं महाभारत में महर्षि वाल्मीकि एवं महर्षि व्यास ने श्रीराम एवं श्री कृष्ण के जीवन के साथ ताने–बाने बुनकर सत्य एवं धर्म की वैदिक सांस्कृतिक परम्परा को जीवित रखा। रामायण में मुख्यतः 'सत्य' को भी उजागर किया गया और महाभारत में विशेष रूप से 'धर्म' को। ''धर्मो रक्षति रक्षितः।''

हिंदी साहित्य में

लौकिक संस्कृत में रचित अमर एवं आदि महाकाव्य रामायण को आधार मानकर समय के साथ विभिन्न भाषाओं में अनेक महाकाव्य रचे गए। अवधी में रचा गोस्वामी तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' हिंदी साहित्य में संस्कृति चिंतन का उत्कृष्ट उदाहरण है। श्रीराम का जीवन ही भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्यों से ओत–प्रोत है। जीवन भर उन्होंने दुख उठाकर भी मूल्यों की रक्षा की। मर्यादित रहे, मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाए। उसी औपनिषद् 'सत्यं वद, धर्मं चर' को श्रीराम के जीवन एवं रामायण तथा रामचरितमानस जैसे हिंदी के अमर महाकाव्य में फलित होते देखा गया है। वैदिक सांस्कृतिक परम्परा हिंदी साहित्य में उपलब्ध है। भारतेंदु के 'सत्य हरिश्चंद्र' शीर्षक अमर नाटक में ''सत्यं वद...'' की पराकाष्ठा देखी जा सकती है। सत्य के लिए राजा ने पत्नी शैव्या को बेचा, स्वयं बिका, पुत्र रोहिताश्व के मरने पर शैव्या से कर के रूप में उनके वस्त्र का आधा भाग फड़वाकर ले लिया! परंतु उनकी सत्यता नहीं छूटी। भारतीय संस्कृति के अनेक मूल्यों को हिंदी साहित्य की अमर कृतियों में पाया जाता है।

'सत्यं वद, धर्मं चर।' तैत्तिरीयोपनिषद् की इस सूक्ति की संक्षेप में 'सत्यं वद' की सोदाहरण प्रस्तुति के पश्चात् '... धर्मं चर', अंश पर विचार किया जाना चाहिए। मैं वैदिक काल में बाद के 'महाभारत' महाकाव्य का उदाहरण देना चाहूँगा। वैदिक काल के धर्म के महत्त्व को 'महाभारत' में यथावत पाते हैं। अधर्म अवश्य बढ़े थे। धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश साबित किया गया है –

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।7।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।।8।।[3]

रामायण के श्री राम ने भी तो अधर्म एवं अधर्मी का नाश किया था। महाभारत में भी यही हुआ। 'युगे–युगे' मैं युग–युग में प्रकट होता हूँ, धर्म की स्थापना के लिए। 'सत्यं वद, धर्मं चर।' की उपनिषदीय सार्थकता एवं सत्यता वैदिक काल से अविरल

धाराओं के रूप में लौकिक संस्कृत में प्रवाहित हुईं। रामायण एवं महाभारत, दोनों महाकाव्य प्रमाण स्वरूप उपलब्ध हैं। ऐतिहासिक विभाजन एवं भारतीय जनता, बौद्ध धर्म से, इस्लाम से और अंग्रेज़ों के धर्म परिवर्तन कुचक्र से प्रभावित हुई, परन्तु 'देश, काल, परिस्थिति' एवं विभाजन की सीमाओं से परे बृहत्तर भारत में भारतीय संस्कृति अविच्छिन्न रही। इस्लाम की कट्टरता की अपेक्षा कबीर, रहीम रसखान और जायसी पैदा हुए, जिन पर हिंदी साहित्य को गर्व है। इनकी कृतियों में भारतीय संस्कृति मुखरित हुई है। अंग्रेज़ों के शासन–काल में प्रेमचन्द पैदा हुए। उनके उपन्यासों में विभिन्न विषयों को उठाया गया, परंतु उपन्यासों की भाँति उनकी कहानियों में भी भारतीय संस्कृति की महानता दर्शायी गई है। 'कफ़न' कहानी में गरीबों के गरीब माधव और घीसू भी जानते हैं कि अंत्येष्टि करने के लिए झोंपड़ी में पड़ी लाश को कफ़न चाहिए। युगों पुरानी सांस्कृतिक परम्परा से वे किसी भी आम भारतवंशी व्यक्ति की तरह इस तथ्य से अवगत हैं। 'गोदान'[4] में प्रेमचंद ने देहातों में पर्व–त्यौहारों का विशद् वर्णन किया है।

'देहातों में साल के छः महीने किसी–न–किसी उत्सव में ढोल–मंजीरा बजता रहता है। होली के एक महीना पहले से एक महीना बाद तक फाग उड़ती है। आषाढ़ लगते ही आल्हा शुरू हो जाता है और सावन–भादों में कजलियाँ होती हैं। कजलियों के बाद रामायण–गान होने लगता है।'

'गोदान' में वर्णित देहातों में जीवित इस सांस्कृतिक उदाहरण का महत्त्व अत्यधिक है। हिंदी के आधुनिक युग के स्वतंत्रतापूर्व साहित्य–सागर में डूबने की अपेक्षा मात्र कथा–सम्राट प्रेमचंद के कथा साहित्य से दो उदाहरण दिए हैं, जो पर्याप्त हैं।

मॉरीशसीय हिंदी साहित्य में भारतीय संस्कृति

जहाँ तक भारतेतर देशों के हिंदी साहित्य में संस्कृति चिन्तन का प्रश्न है, मॉरीशस का उदाहरण लिया जाना उचित और आवश्यक भी है। मॉरीशस में भाषा और संस्कृति साथ–साथ फूलीं–फलीं। भोजपुरी भाषियों ने हिंदी सीखी और समय के साथ साहित्य भी रचा। श्री जयनारायण रॉय के अनुसार ''गोरे मालिकों के दबाव में आकर पूर्वजों ने रामायण–पाठ भी बंद कर दिया था। बाद में रामायण मंडलियाँ बनीं, सत्संग के बाद हस्तलिखित रामचरितमानस की प्रतियाँ तैयार की जाती थीं। पुरोहितों ने हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति की अनमोल सेवाएँ कीं।''[5] हिंदी साहित्य के मॉरीशस में रचे जाने से पूर्व, सभी हिंदी तथा भोजपुरी भाषी एक राय से स्वीकार करते रहे –

'भाषा गई तो संस्कृति गई!'[6]

हिंदी प्रचारिणी सभा, मॉरीशस की यह अनमोल सूक्ति 1925 से ही प्रसिद्ध हो चुकी थी। प्रो. वासुदेव विष्णुदयाल[7] के स्वदेश 1939 में लौटने के बाद उनके द्वारा प्रारम्भ 'जन आन्दोलन' का सर्वप्रमुख उद्देश्य ही भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार करना था। उन्होंने अंग्रेज़ी–फ्रेंच में पुस्तकें लिखीं, परन्तु सांस्कृतिक प्रचार कार्य हिंदी में किया। उनका प्रवचन हिंदी में होता था। उन्होंने तीन सौ तक छोटी–बड़ी पुस्तिकाएँ–पुस्तकें लिखीं, जो अधिकतर हिंदी ही में थीं। उन्होंने कहानी–कविता की रचना नहीं कीं, परंतु विद्वतापूर्ण उच्चस्तरीय निबन्ध, लेख, अनुवाद आदि का देश में सांस्कृतिक जागरण को ध्यान में रखकर सृजन किया। विष्णुदयाल जी की अपेक्षा जयनारायण रॉय जी मॉरीशस के प्रथम नाटककार एवं कहानीकार हुए। हाँ! प्रो. विष्णुदयाल ने अकेले ही किसी भी हिंदी–संस्था से कहीं अधिक हिंदी का प्रचार कार्य किया।

हिंदी के इन दिग्गजों के पश्चात् स्वनाम धन्य अभिमन्यु अनत[8] का मॉरीशसीय साहित्य गगन में उदय हुआ। उनके बारे में पूजानन्द नेमा ने उचित लिखा था –

'अभी घर का निर्माण हो ही रहा था कि
आँगन में एक फूल खिल गया!'[9]

अभिमन्यु का प्रथम उपन्यास 'और नदी बहती रही' 1970 में छपने के बाद उनकी कलम ने रुकने का नाम नहीं लिया। उपन्यासों और कहानियों के अलावा उन्होंने नाटक और कविता विधा में भी कलम चलाई। उनकी प्रमुख लेखन–विधाएँ उपन्यास एवं कहानी हैं। उन्हें मॉरीशस का कथा–सम्राट कहा जाता है। भारतेतर देशों में प्रस्तुत शोध–पत्र में मात्र मॉरीशस को लिया गया है। मॉरीशसीय हिंदी साहित्य में संस्कृति चिंतन का

आधार स्वरूप भी मात्र कथाकार अभिमन्यु अनत को लिया गया है। अनत के सर्वाधिक चर्चित एवं प्रसिद्ध उपन्यास 'लाल पसीना'[10] से एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है

'भगवान से बड़ा कौन हो सकता है?... महावीर स्वामी (हनुमान) का नाम लेने से ही संकट दूर हो जाता है। आज हनुमानजी की ही हम गुहार करेंगे। हम लोग चालीसा का पाठ एक साथ शुरू करें। पुजारी ने ज़ोरों के साथ हनुमान चालीसा का पाठ शुरू किया। लोगों ने स्वर मिलाया। दाऊद मियाँ और हनीफ़ एक ही जगह पर बैठे दुआएँ करने लगे।' [11]

भारतीय गिरमिटिए हिन्दू और मुसलमान भी मॉरीशस आए हुए थे। यात्रा एक साथ करने के कारण वे एक–दूसरे को 'जहाजी भाई' कहा करते थे। एक–दूसरे की संस्कृति, मान्यता, धर्म और विश्वास को कभी नकारते नहीं थे। अभिमन्यु इन तथ्यों से भली–भाँति अवगत थे। अतः न हिन्दू संस्कृति और न ही मुस्लिम संस्कृति, अपितु भारतीय संस्कृति को विविध रूपों में उनके द्वारा रचित साहित्य में देखा जा सकता है। अनत ही की भाँति अधिकतर मॉरीशसीय हिंदी साहित्यकारों ने भारतीय संस्कृति को अपनी रचनाओं में मुखरित किया है। मॉरीशस के नागरिकों के पूर्वज यूरोप, अफ़्रीका, चीन और भारत से पधारे थे। सभी की अपनी–अपनी भाषा एवं संस्कृति है। जब मॉरीशसीय संस्कृति का प्रश्न उठता है तब किसी गुलदस्ते के रंग–बिरंगे फूलों की तरह हरेक की सुगंध और विशेषता मिलकर 'अनेकता में एकता' प्रमाणित करते हैं। यह भी सच है कि मॉरीशसीय हिंदी साहित्यकारों का झुकाव भारतीय संस्कृति की ओर सर्वाधिक पाया जाता है।

उपसंहार

युगों प्राचीन भारतीय संस्कृति वैदिक काल से लेकर आज 2018 तक देशों की सीमाओं से परे वैश्विक धरातल पर नित्य नवीनताएँ लिए प्रसार पा रही है। मॉरीशस में प्रारम्भ ही में हिंदी भाषा एवं भारतीय संस्कृति के पारस्परिक संबंधों को पहचान कर दोनों को साथ–साथ प्रचारित–प्रसारित किया जाता रहा है। 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के मुख्य विषय : 'हिंदी विश्व एवं भारतीय संस्कृति' की सार्थकता सर्वाधिक मॉरीशस पर ही लागू होती है। आज हिंदी, हिंदी साहित्य, भारत और भारतीय संस्कृति उतनी ही हमारी है, जितनी कि भारत की है।

जय हिंदी!

संदर्भ–ग्रंथ :

1. संस्कृति के चार अध्याय, श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' प्रकाशक : साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 1956
2. तैत्तिरीय उपनिषद्
   प्रकाशक : श्री रामकृष्ण मठ, मद्रास
   सत्यार्थ प्रकाश – महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा उद्धृत्
   प्रकाशक : सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली
3. श्रीमद्भागवदगीता – महर्षि वेदव्यास
   संपादक : राधेश्याम गुप्त
   प्रकाशक : नीता प्रकाशन, नई दिल्ली (2012)
4. गोदान – प्रेमचंद
   प्रकाशक : सरस्वती प्रेस इलाहाबाद – 1966
   पृष्ठ 219 में
5. मॉरीशस में हिंदी भाषा का संक्षिप्त इतिहास – श्री जयनारायण रॉय, प्रकाशक : यशपाल जैन, पृष्ठ 54
6. सूरुज प्रसाद मंगर 'भगत' – मंत्री– हिंदी प्रचारिणी सभा की प्रसिद्ध सूक्ति
7. Life in Greater India – Prof. Basdeo Bissoondoyal
   Publisher : Bharatiya Vidya Bhawan, Mumbai, 1984
8. अभिमन्यु अनत – मॉरीशस का कथा–सम्राट (1937 - 2018)
9. Pujanand Nemah, Ex. Assistant Editor - Vasant & Rimjhim, MGI
10. लाल पसीना – राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली –1977
11. लाल पसीना – पृष्ठ 284

कारोलिन, बेल–एर, मॉरीशस
beersen.jugasing@icloud.com

4

फ़िजी में बहती भारतीय संस्कृति एवं हिंदी की गंगा

– डॉ. विनय कुमार शर्मा

जन्म : 01.07.1972

शिक्षा :

- पी.एच.डी (हिंदी)
- एम. ए. (हिंदी, संस्कृत)
- डी. लिट् (हिंदी) स्वर्ण पदक प्राप्त
- परास्नातक डिप्लोमा (पत्रकारिता एवं जनसंचार)

व्यवसाय : मुख्य संपादक, शोध संचार बूलेटिन

प्रकाशन :

- देश के विभिन्न प्रतिष्ठित समाचार–पत्रों एवं पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित
- बीबीसी लंदन और हिंदी, 2015
- हिंदी का वैश्विक परिदृश्य, 2015
- उच्च शिक्षा : दशा और दिशा, 2010 तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :

- 'राजभाषा गौरव सम्मान', भारत के माननीय राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी द्वारा राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार–प्रसार हेतु राष्ट्रपति भवन में सम्मानित
- गरिमामयी सीनियर फ़ेलोशिप से सम्मानित, भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय

प्रशान्त महासागर में ऑस्ट्रेलिया के निकट स्थित है यह देश। वहाँ अब लगभग 52 प्रतिशत भारतवंशी रह रहे हैं। ये मूल रूप से सनातन धर्मावलम्बी थे। फ़िजी लगभग 100 वर्षों तक ब्रिटेन का उपनिवेश रहा है, अतएव अंग्रेज़ी भी वहाँ बहुशः प्रयुक्त होती है। इन श्रमिकों को आरम्भ में अनेक प्रकार की यातनाएँ दी गयीं। अस्तु, इन्होंने यह अनुभव किया कि गोरों से निपटने के लिए संगठित होना बहुत आवश्यक है। संगठन का आधार था भारतीय धर्म और उसका माध्यम थी हिंदी भाषा। ये गिरमिटिया लोग अपने साथ रामायण, कबीर भजनावली, हनुमान चालीसा, सत्यनारायण कथा, विश्राम सागर, आल्हा, बिरहा, पद, भजन आदि ले गए थे। इन्होंने वहाँ प्रति संध्याकाल पेड़ों के नीचे एकत्र होकर ढोलक, हारमोनियम एवं मंजीरे के साथ सामूहिक रूप से गाना शुरू कर दिया। धीरे–धीरे इनका एक सुदृढ़ संगठन तैयार हो गया। इन्होंने गाँव–गाँव जाकर भारतवंशियों को नव जागरण का संदेश दिया। उनका यह नारा था –

उठो–उठो ऐ फ़िजी वालो, अब अपनी आँखें खोलो।
हिंदी ही है अपनी भाषा, हिंदी पढ़ो, लिखो, बोलो।।

इससे फ़िजी की राजधानी सूवा, कीतिलेव टापू और मनुआलेन आदि स्थानों में अवधी, भोजपुरी, खड़ी बोली मिश्रित हिंदी जनप्रिय हो गयी और उसे 'फ़िजी बात' का नाम दिया गया। 'भूतलेन की कथा' कृति में विलास लाल, आशुतोष एवं योगेन्द्र ने इसकी विस्तृत चर्चा की है।

हिंदी के प्रचार के लिए गिरमिटियों ने लोक साहित्य का सहारा लिया। ये लोकगीत वे अवध क्षेत्र से लेकर गए थे। उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ देखिए–

पुरबी चले री बयरिया, गेंद्वा गमगम गमकै ना।
हमरे माथे केर टिकुलिया रतिया चम–चम चमकै ना।
हमरे हाथे केर कॅगनवा रतिया खन–खन खनकै ना।
हमरे गोड़े केर पयलिया रतिया छम–छम छमकै ना।

फ़िजी में प्रवासी भारतीयों का आगमन 15 मई सन् 1879 ई. को हुआ। तब से लगातार लगभग चालीस वर्षों तक वे मज़दूरों के रूप में यहाँ आते रहे। सन् 1916 ई. तक 60,000 से भी अधिक प्रवासी फ़िजी पहुँचते रहे और श्रमिक के रूप में इस छोटे से द्वीप को आबाद करते रहे।

भारतवर्ष तब ब्रिटिश सरकार के अधीन था। भारत से दूर सुदूर पूर्व में प्रशांत महासागर के दक्षिण प्रांत में 400 से भी अधिक छोटे–छोटे द्वीपों का समूह फ़िजी भी ग्रेट ब्रिटेन का एक उपनिवेश था। गन्ना उत्पादन के लिए यह देश अत्यधिक

अनुकूल एवं उपयुक्त पाया गया। पड़ोसी देश आस्ट्रेलिया की एक चीनी कम्पनी फ़िजी में गन्ने का व्यापार सँभाल रही थी। गन्ना–खेतों में काम करने के लिए सही श्रमिक मिल नहीं रहे थे।

देश के आदिम निवासी खेत में काम करना नहीं चाहते थे। यह उनकी प्रकृति के विपरीत था। वे मौज–मस्ती और आज जियो कल देखा जाएगा की भावना से ओतप्रोत थे। फिर भला वे खेत में क्यों काम करते? देश में प्राकृतिक सम्पदा की कमी नहीं थी। यहाँ के समुद्र और नदियों में विभिन्न प्रकार की मछलियों की बहुतायत रही और छोटे बड़े वनों में जड़–पदार्थ की कमी कभी भी नहीं रही। जीविका के लिए तो उन्हें आवश्यक वस्तुएँ स्वतः ही उपलब्ध थीं। फिर भला मेहनत मशक्कत कर जीविकोपार्जन की आवश्यकता ही कहाँ रही? गन्ने के खेतों में मज़दूर बनकर कड़ी मेहनत करना उनके स्वभाव के विपरीत था।

पास–पड़ोस के कुछ अन्य द्वीपों से भी श्रमिक लाए गए। लेकिन उनके द्वारा भी गन्ने की खेती बढ़ाई नहीं जा सकी। कुछ अन्य देशों से भी श्रमिक आयात किए गए, लेकिन उनका भी समय गन्ने के मीठे और स्वादिष्ट रस चूसने में अधिक बीता, खेतों में मरना उन्हें नहीं भाया। अन्ततः भारतवर्ष से प्रवासी भारतीयों को ही इस कार्य सम्पादन के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समझा गया, क्योंकि वे मॉरीशस, सूरीनाम, गयाना जैसे उपनिवेशों में अपनी योग्यता पहले ही प्रकट कर चुके थे। अतः यह स्वाभाविक था कि फ़िजी में गन्ने की खेती को सफल बनाने के लिए भारत से ही श्रमिक आयात किए जाएँ। शासकों का निर्णय कार्यरूप में परिणत हुआ और यहाँ की गन्ना–कम्पनी को इस ओर आशातीत सफलता मिली।

हज़ारों प्रवासी भारतीय श्रमिक फ़िजी लाए गए और पाँच वर्षों का शर्तबंदी जीवन व्यतीत कर उनमें से अधिकांश गिरमिटिया यहीं बस गए। गन्ने की खेती को और भी अधिक बढ़ावा मिला। 'शर्तबन्द' अथवा 'अग्रीमेण्ट' के अन्तर्गत आने के कारण वे शर्तबन्द मज़दूर कहलाए और अंग्रेज़ी का तत्सम शब्द 'अग्रीमेण्ट' बिगड़कर 'गिरमिट' हो गया और ऐसे 'गिरमिटिया' कहलाए।

गिरमिट काल में साहित्य रचना नगण्य ही रही है। लेकिन हिंदी जीवित रही। इन दिनों पारम्परिक एवं तत्कालीन परिस्थितियों पर आधारित लोकगीतों का ही बोलबाला था, जो विशेषतः लोक रीतियों को पुष्ट करता रहा, उनका संरक्षण और संवर्धन करता रहा।

गिरमिट काल के पश्चात् हिंदी का विकास

सन् 1916 में गिरमिट प्रथा का अन्त हो गया, लेकिन 1920 तक उसका प्रभाव बना ही रहा। दैनिक जीवन में कोई विशेष बदलाव नहीं आया। लेकिन हाँ, 1920 के बाद अनेक परिवर्तन होने लगे। लोगों के जीने की व्यवस्था में सुधार होने लगा, लोगों के सोचने–विचारने में भी परिवर्तन आने लगा। व्यवस्थित एवं उन्नत जीवन जीने का संघर्ष ज़ोर पकड़ने लगा। भारतवर्ष से हिंदी की किताबें मँगाई जाने लगीं। किस्सा–कहानी, नाटक–नौटंकी, मेला–ठेला आदि के माध्यम से हिंदी का प्रचार–प्रसार बढ़ने लगा। लोगों में अपने व्यक्तित्व, अपना परिचय आदि बनाए रखने की प्रवृत्ति का विकास हुआ।

पाठशालाओं के साथ लिखित साहित्य की ओर भी आकर्षित होना स्वाभाविक था। पाठशालाओं में औपचारिक रूप से पढ़ाए जाने के लिए तथा अपने ज्ञान संवर्धन हेतु किताबें मँगाई जाने लगीं। फलस्वरूप सदाबृज–सारंगा, गुलबकावली, गुलसनोवर, हातिमताई, सिंहासन बत्तीसी, बैताल–पचीसी जैसी सहज ग्राह्य पुस्तकों का प्रचार–प्रसार बढ़ने लगा।

किस्सा–कहानी के कारण बैठकें जमने लगीं। आल्हखण्ड, भरथरी, सारंगा आदि की स्वर–लहरियाँ गूँजने लगीं। मंदिरों का निर्माण होने लगा, रामायण–पाठ होने लगे, आल्हा की बैठकें जमने लगीं और साथ ही धार्मिक अनुष्ठान भी होने लगे। धर्म प्रचार हेतु ब्राह्मण–पुरोहित आगे बढ़े। पुरुषों और महिलाओं की मण्डलियाँ गाँव–गाँव में बनने लगीं और फिर रामनवमी, कृष्ण जन्माष्टमी, दिवाली आदि त्यौहारों का आयोजन होने लगा।

धार्मिक पर्वों और उत्सवों की अभिवृद्धि के साथ–साथ, राष्ट्र के अनेक इलाकों में रामलीला और दशहरा का भी आयोजन होने लगा। रामायण, प्रेम सागर, विश्राम सागर, आल्हखण्ड जैसे ग्रन्थ जहाँ हिंदी भाषा को बनाए रखने की प्रेरणा देने लगे, वहीं औपचारिक रूप से हिंदी पढ़ाने के प्रति भी प्रबुद्ध समुदाय का ध्यान खींचा गया। प्रायः सभी भारतीय पाठशालाओं में शिक्षा का

माध्यम हिंदी ही बनी और वर्षों तक इन पाठशालाओं में शिक्षण का माध्यम हिंदी रही।

हिंदी की स्थापना में बहुत से लोगों ने हाथ लगाया। कई पढ़े–लिखे हिंदी–प्रेमी अपनी रचनाएँ भी हिंदी में करने लगे और जैसे–तैसे उनके प्रकाशन की भी व्यवस्था होने लगी। इस प्रवाह को सुनियोजित एवं व्यवस्थित करने के लिए तथा स्थानीय लोगों के उत्साहवर्धन के लिए हिंदी–प्रेस और हिंदी समाचार–पत्रों को बढ़ावा दिया जाना स्वाभाविक ही था। 'जागृति', 'फ़िजी समाचार', 'शान्तिदूत' और 'प्रशान्त समाचार' सामने आए। इन समाचार–पत्रों के साथ–साथ फुटकर पत्र–पत्रिकाएँ भी प्रकाशित होने लगीं।

काल–विभाजन

उद्‌भव काल : सन् 1879–1920 ई.

फ़िजी में 1879–1920 तक भारतवर्ष से गन्ने के खेतों तथा चीनी मिलों में काम करने के लिए भारतीय श्रमिक लाए जाते रहे। वे साधारण जन अपने साथ अपनी भाषा, संस्कृति एवं धर्म लाए। फ़िजी के लिए श्रमिकों को भारत के विभिन्न प्रान्तों से लाकर कलकत्ता से पानी के जहाज़ों द्वारा फ़िजी लाया जाता था। कलकत्ता से आख़िरी बार अपनी मातृभूमि से विदा होने के कारण इन बिछुड़े हुए लोगों को 'कलकतिया' और एक ही जहाज़ में सभी को एक साथ सफ़र करने के कारण 'जहाज़ी भाई' कहा जाने लगा। 'कलकतिया' एवं 'जहाज़ी भाई' शब्दों ने फ़िजी में आए प्रवासी भारतीयों को आत्मीयता के बंधन में बाँधकर और भी करीब ला दिया। इनमें से अधिकांश लोग हिंदी बोलते थे, इसलिए हिंदी ही प्रवासी भारतीयों की संपर्क भाषा बनी।

फ़िजी में हिंदी के इस उद्‌भव काल को 'गिरमिट काल' कहना ज़्यादा समीचीन होगा। यह काल हमारे पूज्य पूर्वजों के लिए उत्पीड़न, शोषण एवं निराशा का काल था। इन्हें इन्सान कम, पशु अथवा गुलामों से भी गिरे हुए रूप में औपनिवेशिक मालिकों ने देखा। उनका व्यवहार भी अधिकांशतः अमानुषिक, क्रूर, अत्याचार तथा अन्याय से भरपूर था। तब हिंदी पढ़ना–पढ़ाना बिल्कुल कानून विरोधी माना जाता था। फिर भी अपने को राम जी जैसे बनवासी मानते हुए धर्म की भावना से ओतप्रोत भारतीयों ने अपनी भाषा की ज्योति जलाए रखने का दृढ़ संकल्प लिया। इस बीच दीनबन्धु सी.एफ़. एंड्रूज़ जैसे अच्छे अंग्रेज़ पादरी भी इस देश में आए और प्रवासी भारतीयों के प्रति गहन संवेदना एवं सहिष्णुता का व्यवहार किया। शिक्षा के क्षेत्र में विशेष बल दिया जाने लगा और लोगों ने तुलसी के रामचरितमानस को अपने दामन में बाँधे रखा। जिन लोगों को हनुमान चालीसा, मानस की चौपाई, कबीर के दोहे याद रहे, साथ ही पूजा–पाठ के कुछ मन्त्र, संस्कृत के कुछ श्लोक, ग्राम्य जीवन की कुछ कहावतें, मुहावरे और लोकोक्तियाँ याद रहीं, कबीर, सूर, मीरा, रैदास और तुलसी के भजन–कीर्तन याद रहे और महिलाओं द्वारा गाए जाने वाले लोक–गीत याद थे, उन सभी का इस काल में भरपूर प्रयोग किया।

विकास कालः सन् 1921–1970 ई.

अपने इस विकास काल में हिंदी लगभग पूर्णरूप से प्रवासी भारतीयों की सम्पर्क भाषा का स्थान ले चुकी थी। औपनिवेशिक अधिकारियों एवं कर्मचारियों को भी भारतीयों को समझने और समझाने के लिए उनकी भाषा सीखनी पड़ी। यहाँ तक कि बहुत से आदिम निवासी भी कुछ–कुछ हिंदी बोलने और समझने लगे। कालान्तर में हिन्दुस्तानियों का सम्पर्क फ़िजी वासियों और अंग्रेज़ी से अधिक बढ़ जाने के कारण उनकी भाषाओं के शब्द प्रचुर मात्रा में हिंदी में प्रविष्ट हुए। हिंदी के शब्द समूह में बहुत से देशज शब्द भी प्रविष्ट हुए। 'गिरमिट', 'फुलाव', 'कंटाप', 'दरेसी', 'कम्यर', 'बेलो' जैसे शब्द फ़िजी में ही पैदा होकर हिंदी में समाहित हो गए।

फ़िजियन भाषा के 'तलनवा', 'डालो', 'ऊबी', 'चिकाउ', 'तानोवा', 'विनाका', 'तेईतेईस', 'केरेकेरे', 'लेंगा', 'तुई' जैसे अनेक शब्दों को हिंदी ने अपने में समाहित कर लिया। अन्य भाषाओं के 'सपहिया', 'दरूका', 'निगोंची', 'आरकाठी', 'सलूका', 'दारू', 'सुल्लू' जैसे शब्द हिंदी का शब्द–भण्डार भरने लगे।

हिंदी के इस विकास काल में पं. अयोध्या प्रसाद किसानों के नेता के रूप में उभरे। इन्होंने गन्ने के किसानों के लिए 'किसान संघ' बनाकर किसानों की माली हालत सुधारने में बहुत बड़ा योगदान दिया। पण्डित जी मात्र किसान नेता ही नहीं थे, अपितु हिंदी के एक अच्छे विद्वान भी थे। मैथिलीशरण गुप्त की रचना

''भारत–भारती'' द्वारा आपने प्रवासी भारतीयों में एक उत्साह, प्रेरणा तथा नव स्फूर्ति जगाई। 'हम क्या थे, क्या हो गए और क्या होंगे अभी' जैसी प्रेरक वाणी से उन्होंने लोगों को जगाया तथा उनकी अपनी पहचान को सुरक्षित करने पर बल दिया।

शर्तबन्दी प्रथा से मुक्त होकर प्रवासी भारतीयों ने अपने तथा अपनी पीढ़ियों के भविष्य की चिन्ता की। उन्हें लगा कि मात्र किसानी कर लेने से, कुछ अच्छे मकान और सम्पत्ति एकत्रित कर लेने से ही काम नहीं चलेगा, अपितु जीवन को सम्पन्नता प्रदान करने के लिए विद्या की भी आवश्यकता होगी। पण्डित–पुरोहित, किस्सागोई, भजनीक आदि तो जैसे–तैसे हिंदी का प्रचार–प्रसार कर ही रहे थे, लेकिन तुलसी के मानस ने लोगों में हिंदी की जान फूँक दी। गाँव–गाँव, बस्ती–बस्ती में मानस की चौपाइयाँ, सूर–तुलसी के भजन, महिलाओं के मधुर लोकगीत अब गूँजने लगे थे। वातावरण में सत्यनारायण व्रत कथा, हनुमान–रोठ, सूर्य पुराण भी स्पन्दित होने लगे। आर्य–समाज, सनातन धर्म, ईसाई मतावलम्बियों तथा सामाजिक संस्थाओं द्वारा विद्यालयों की स्थापना होने लगी। देश के अनेक भागों में इन धार्मिक एवं संगम जैसी सामाजिक संस्थाओं ने इस ओर भारी योगदान दिया। बाद में इस्लामी एवं सिख भाइयों ने भी कुछ विद्यालयों की स्थापना की।

इस युग में पण्डित कमला प्रसाद मिश्र जैसे प्रकाण्ड भाषाविद् एवं अद्वितीय कवि का अवतरण हुआ। पण्डित जी ने हिंदी, संस्कृत, अंग्रेज़ी, रूसी, फ़ारसी, अरबी और हिब्रू जैसी अनेक भाषाएँ पढ़ीं और उनके साहित्य का अध्ययन किया। फ़िजी में पण्डित जी ही एकमात्र ऐसे महान् कवि हुए, जिन्होंने उच्चकोटि की हज़ारों कविताओं की रचना की। पण्डित जी की कविताएँ छायावाद के महान् कवियों के समकक्ष आसानी से रखी जा सकती हैं। पण्डित जी की कविताओं ने सिर्फ़ कल्पनाओं में विहार नहीं किया, अपितु धरती पर उतरकर यथार्थ का चित्रण करते हुए अनेक व्यंग्य रचनाएँ हमें प्रदान कीं। पण्डित जी की कविताएँ छायावादी संस्कार से कभी बंधी नहीं रहीं। उनका काव्य–संसार निरंतर विकासशील रहा। इसलिए उनकी काव्य–भाषा पर छायावादोत्तर व्यक्तिवादी और प्रगतिवादी कविता के मुहावरों को भी स्पष्ट पहचाना जा सकता है। पण्डित जी की अनेक कविताओं में फ़िजी का प्राकृतिक सौन्दर्य शब्दबद्ध है। उसके मनोरम समुद्र–तट, सदाबहार मौसम, दूर–दूर तक फैली हरियाली, नदियाँ और पहाड़ सभी उनकी कविताओं में रूपाकार लेते हैं।

फ़िजी की मिट्टी की सुगन्ध से ओतप्रोत प्रकृति का यह चित्रण उनके राष्ट्र प्रेम का ही द्योतक है। पण्डित जी साहित्य रचना के साथ–साथ पत्रकारिता की ओर भी ध्यान रखते रहे। उन्हें लगता था कि फ़िजी में प्रवासी भारतीयों की अस्मिता की रक्षा के लिए हिंदी पत्रकारिता की भी बड़ी आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति आपके द्वारा सम्पादित साप्ताहिक ''जागृति'' और बाद में 'जय फ़िजी' के प्रकाशन से होती है।

'जय फ़िजी' के माध्यम से पण्डित जी ने फ़िजी में हिंदी भाषा और साहित्य की ज्योति को निरन्तर जलाए रखने का महान कार्य सम्पन्न किया। पण्डित जी अपने साथ–साथ देश के अनेक लोगों को हिंदी में कविता, कहानी, दोहे, रसिया, चैताल तथा अन्य प्रकार के लोक–गीतों एवं ग्राम्य वार्ताओं को लिखने के लिए प्रेरित करते रहे और लिखवाते भी रहे।

वर्तमान काल : सन्1970 से आज तक

सन् 1970 ई. में विजय दशमी के दिन ब्रिटिश शासनाधिकार से फ़िजी स्वतन्त्र हो गया। आज ही के दिन प्रथम बार हिन्दुओं ने विजय दशमी के साथ–साथ फ़िजी की स्वतन्त्रता धूमधाम से मनाते हुए रामकथा से सम्बन्धित 30 झाँकियाँ और 12 घोड़ों की सवारियाँ 'राम की सवारी' नामक जुलूस में निकालीं। इन्हीं दिनों 'हिंदी महापरिषद् फ़िजी' की भी स्थापना हुई, जिसके प्रमुख संरक्षक नवोदित राष्ट्र के प्रधानमंत्री रातू सर कमिसेसे मारा, संरक्षक प्रतिपक्षी दल के नेता जनाब सद्दीक कोया तथा संस्थापक अध्यक्ष पं. विवेकानन्द शर्मा थे।

इसी दशक में नागपुर भारत में प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन भी आयोजित हुआ, जिसमें मॉरीशस के साथ–साथ फ़िजी ने भी बड़ी संख्या में अपना प्रतिनिधित्व प्रदान किया। इसी महान सम्मेलन में मॉरीशस तथा फ़िजी के ज़ोरदार प्रस्ताव के फलस्वरूप हिंदी यूनेस्को की एक औपचारिक भाषा स्वीकार कर ली गई। इसका अच्छा प्रभाव फ़िजी के प्रवासी भारतीयों पर भी पड़ा और फ़िजी में अनेक समाचार–पत्र और पत्रिकाएँ उभरकर सामने आईं। इन्हीं

दिनों 'जय फ़िजी', 'प्रशान्त समाचार', 'सनातन सन्देश' और 'उदयाचल' आदि का प्रकाशन आरम्भ हुआ। अनेक विद्यालयों में हिंदी को प्रमुख विषय के रूप में पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। हिंदी की अनेक रचनाएँ प्रकाशित होने लगीं और राष्ट्रकवि पं. कमला प्रसाद मिश्र के साथ–साथ जोगिन्द्र सिंह 'कंबल', बाबू हरनाम सिंह, ईश्वरी प्रसाद चौधरी तथा अन्य कई हिंदी रचनाकार उभरकर सामने आए।

इन्हीं दिनों पं. विवेकानंद शर्मा जी की भी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुईं, जिनमें 'जब मानवता कराह उठी', 'प्रशांत की लहरें', 'प्रधानमंत्री रातू मारा', 'गुलाब के फूल', 'फ़िजी में सनातन धर्म : सौ साल' आदि उल्लेखनीय हैं। आप ही की रचनाएँ 'विश्वकोश : भारतीय संस्कृति, अनजान क्षितिज की ओर', 'प्रशांत की लहरें' (नवीन संस्करण) आदि ने हिंदी साहित्य की अभिवृद्धि में अपना नाम दर्ज कराया।

अभी तक रेडियो फ़िजी एकमात्र रेडियो स्टेशन था। लेकिन अब नवतरंग रेडियो, फ़िजी टू और बूला एफ़.एम. 98 हिंदी कार्यक्रम प्रसारित करने के लिए सामने आए। अब तो चौबीसों घण्टे हिंदी कार्यक्रम प्रसारित होने लगे हैं। 'फ़िजी वन' दूरदर्शन भी दिन में एक बार हिंदी में समाचार प्रस्तुत करता है और हर रविवार को 'झरोखा'। समाचार–पत्र के रूप में 'शान्ति दूत' अग्रणी बना रहा और कुछ फुटकर समाचार–पत्र भी सामने आए, लेकिन अधिक समय तक ठहर न सके।

'संस्कृति' एकमात्र निरन्तर प्रकाशित होने वाली पत्रिका भी हिंदी साहित्य एवं संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए देश की सेवा के प्रति कटिबद्ध है। फ़िजी, हिंदी 'संस्कृति' के साथ–साथ हिंदी महापरिषद् फ़िजी एक और मासिक बुलेटिन 'लहर' प्रकाशित कर, निःशुल्क वितरित कर रही है।

संदर्भ :

1. विश्व में हिंदी, खण्ड–1, हरिबाबू कंसल, पृष्ठ 213, सुधांशु बंधु प्रकाशन, ई–9/23, बसंत बिहार, नई दिल्ली।
2. विश्व में हिंदी, खण्ड–2, हरिबाबू कंसल, पृष्ठ 271, सुधांशु बंधु प्रकाशन, ई–9/23, बसंत बिहार, नई दिल्ली।
3. भूमंडलीकरण बाज़ार और हिंदी–सुधीश पचैरी, पृष्ठ 56, अनुराग प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. संवेदना के देश में–डॉ. महेश दिवाकर, पृष्ठ 41, विश्व पुस्तक प्रकाशन, पश्चिम बिहार, नई दिल्ली।
5. विदेशी विद्वानों का हिंदी–प्रेम– जगदीश प्रसाद बरनवाल 'कुन्द', पृष्ठ 81, मेघा बुक्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली।
6. स्पाइल दर्पण, ओस्लो, नार्वे से प्रकाशित, संपादक–डॉ. सुरेशचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ 22
7. वसुधा–कनाडा से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका, संपादक–स्नेह ठाकुर, पृष्ठ 18
8. 'विश्व हिंदी रचना' सम्पादक : कमल किशोर गोयनका, पृष्ठ 18, भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद्, इन्द्रप्रस्थ इस्टेट, नई दिल्ली– 10002, प्रथम संस्करण–2003।
9. 'विश्वभाषा हिंदी', डॉ. महावीर सरन जैन, पृष्ठ–25, केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, प्रथम, संस्करण–1999।
10. 'गगनांचल, जुलाई–सितम्बर, 2004 में प्रकाशित डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा का लेख, फ़िजी में हिंदी की साहित्यिक परिधि, पृष्ठ 110–134।
11. 'गगनांचल', विश्व हिंदी अंकः जनवरी–मार्च, 1996, पृष्ठ 150।

लखनऊ, भारत

dr.vinaysharma123@gmail.com

5

दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीय लोकवृत्त में हिंदी और हिंदू संस्कृति के प्रश्न

– प्रो. हरिमोहन

प्रवासी साहित्य पर इधर हिंदी में बहुत लिखा जा रहा है और यह एक चर्चित साहित्यिक 'विमर्श' बन चुका है। आरम्भ में 'प्रवासी साहित्य' को अलग से पहचानने में और उसकी स्वीकृति में साहित्यकारों ने कोई रुचि नहीं दिखाई; यहाँ तक कि इसे दोयम दर्जे का कहा गया। किंतु डॉ. कमल किशोर गोयनका, जैसे सचेत सांस्कृतिक दृष्टि–सम्पन्न समीक्षकों ने इस साहित्य के मर्म को समझा और उसे सम्मानपूर्वक स्थापित किया। प्रवासी भारतीयों एवं उनसे बिछड़े भारत में ही छूटे परिजनों की पीड़ा, छटपटाहट, संघर्ष, दर्द एवं द्वंद्व को वे ही समझ सकते हैं, जिनको इसका व्यक्तिगत अनुभव हुआ हो। **शब्दयोग** के अप्रैल 2008 (4) अंक में गोयनका जी ने उद्धृत किया है कि *''राजेन्द्र यादव ने 'हंस' के मई 2007 के अंक में जो सम्पादकीय लिखा है, उसमें तो यहाँ तक लिखा है कि यह बी.जे.पी. वाला साहित्य है, आधुनिकता से शून्य है और भारत जैसे साहित्यिक मुहावरे का पूर्णतः अभाव है। खेदजनक है कि ये मार्क्सवादी प्रवासी भारतवंशियों के इतिहास को नहीं जानते और यदि जानते हैं, तो उसका उल्लेख नहीं करते।''* राजेन्द्र यादव एवं उनके कुछ 'अनुयायी' लम्बे समय तक प्रवासी साहित्य को 'नॉस्टालजिया' का साहित्य कहते रहे। किंतु आज 'प्रवासी साहित्य' अपनी स्वीकृति पा चुका है। यह हिंदी साहित्य का विस्तार है।

इस संदर्भ में डॉ. कृष्ण कुमार का एक कथन विशेष रूप से विचारणीय है (vishvambharaa.blogspot.com 12 –Dec-2012, **प्रवासी हिंदी एवं प्रवासी साहित्य के अंर्तसंबंध**)। वे कहते हैं कि इतिहास इस बात का साक्षी है कि उन्नीसवीं सदी से लेकर अब तक जिन देशों में भी प्रवासी भारतीयों ने अपने घर बनाए, वे भौतिक रूप से हर मामले में सफल रहे हैं। इनके मुख्य कारण इनकी मेहनत, लगन, निष्ठा एवं आस्था ही रहे हैं। भले ही रंगभेद के कारण उनके साथ अमानवीय व्यवहार भी हुए, किंतु उन्होंने भौतिक रूप से अपने को सुखी बनाया और धनी हुए । मॉरीशस, सूरीनाम, गयाना, ट्रिनिडाड, फ़िजी और दक्षिण अफ़्रीका में बसे प्रवासी भारतीयों को शासकों के अमानवीय व्यवहार जब असह्य हो गए, तब उन्होंने सामूहिक रूप से भारतीय सरकार से हस्तक्षेप करने की प्रार्थना की गुहार लगाई। तत्कालीन भारत सरकार ने भी अमानवीय और संवेदनहीन, राजनीतिक निर्णय लेकर सहायता देने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। ये प्रवासी तिलमिला गए, यह जानकर कि जननी ने भी अपने नैतिक–

जन्म : 11 फ़रवरी, 1953

शिक्षा : एम.ए., पी.एच.डी., डी.लिट्.

व्यवसाय :

- प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष, हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय
- 2003 से जून, 2015 तक प्रोफ़ेसर एवं निदेशक, क. मुंशी हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ आगरा
- कुलपति, जे. एस. विश्वविद्यालय, शिकोहाबाद (उ. प्र.)
- लगभग 70 शोधार्थियों को आपके निर्देशन में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त हो चुकी है।
- हरिमोहन के साहित्य पर विभिन्न विश्वविद्यालयों में पी.एच.डी. उपाधि–हेतु चार तथा एम.फिल्. उपाधि–हेतु 11 शोधकार्य सम्पन्न हो चुके हैं।

प्रकाशन :

अब तक 39 सर्जनात्मक, समीक्षात्मक एवं पत्रकारिता और जनसंचार विषयक पुस्तकें तथा एक सौ से अधिक शोधपत्र, कहानियाँ, कविताएँ, यात्रावृत्तांत, फ़ीचर, लेख आदि प्रकाशित।

पुरस्कार :

- एक दर्जन से अधिक अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय और राज्यस्तरीय पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त।

सम्मान :

- अनेक समितियों के सम्मानित सदस्य।

मौलिक धर्म का निर्वाह न किया। तब से हर प्रवासी भारतीय भावात्मक रूप से अपने पुरखों की जन्मभूमि से कटता रहा। 1950 के बाद विदेशों में जाकर बसने वाले भारतीय भिन्न श्रेणी में आते हैं। वे सुशिक्षित, पढ़े–लिखे और जागरूक होते हुए धनोपार्जन सहित अन्य कई उद्देश्यों से प्रवासी बने थे। ये अपने साथ अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए रामायण, हनुमान चालीसा या गीता नहीं वरन् अपने मौलिक अधिकारों का ज्ञान लेकर गए थे। इसके बावजूद मनोवैज्ञानिक स्तर पर इनकी हालत भी एक–सी थी और आज भी है। हर प्रवासी को यह समझने में थोड़ा समय लगता है कि भौतिक सुख–सुविधाओं को प्राप्त करने के लिए उन्होंने क्या–क्या खोया है और किन–किन मौलिक दायित्वों का हनन हुआ है। ये भाव महेश भट्ट द्वारा निर्देशित चलचित्र '**नाम**' में आनन्द बक्शी के मार्मिक गीत के माध्यम से बड़े ही सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया गया है :

सात समुन्दर पार गया तू, हमको ज़िंदा मार गया तू
पहले जब तू खत लिखता था, कागज़ में चेहरा दिखता था
तेरी बीबी करती है सेवा, सूरत से लगती है बेवा
आजा उमर बहुत है छोटी, अपने घर में भी है रोटी...

यहीं से हम अपने इस आलेख का सूत्र पकड़ेंगे।

प्रवासी साहित्य पर तो निरंतर लिखा और विचार किया जा रहा है; किंतु प्रवासी भारतीय जीवन के अंतर्द्वंद्वों, जीवन–संघर्षों, विषमताओं और चिंताओं आदि पर ऐतिहासिक दृष्टि से प्रायः कम ही लिखा गया है। जबकि यह आवश्यक है, क्योंकि इनके बीच से ही प्रवासी साहित्य ने जन्म लिया है। प्रवासी भारतीय जीवन के लोकवृत्त (Public Sphere) को ठीक से समझे जाने की आवश्यकता ने ही इस आलेख को लिखने की प्रेरणा दी है। इसमें विशेष रूप से दक्षिण अफ़्रीका के प्रवासी भारतीय लोकवृत्त को समझने की चेष्टा है, जिसमें हिंदी भाषा, हिंदू समाज और उसकी संस्कृति, राजनीतिक दशा–दिशा आदि संबंधी सारी बहसें चिह्नित की गई हैं, जिनके द्वारा तत्समय के हमारे गण्यमान्य लोग अपने समाज का जायज़ा ले रहे थे तथा आदर्श समाज की कल्पना कर रहे थे। इसमें विभिन्न संस्थाएँ, स्कूल, आश्रम और मण्डलियाँ आदि सम्मिलित हैं, जहाँ इस समाज के लोग आपस में मिलते, विचार–विमर्श करते, भाषण देते और लोगों को एक ही समाज या जाति के सदस्य होने का एहसास दिलाते थे। इसी परिवेश ने मोहनदास करमचंद गांधी जी को 'महात्मा गांधी' बनाया था और उनके 'सत्याग्रह' को विश्व का अनूठा आंदोलन। प्रस्तुत शोध का काल 1910 से 1930 तक का है, जिसमें मुख्य रूप से दो कृतियाँ और कुछ पत्र–पत्रिकाएँ हैं। एक कृति है 'फ़िजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष' (पण्डित तोता राम सनाढ्य 1915, फ़ीरोज़ाबाद, आगरा, भारती भवन), जो हिंदी में प्रवासी साहित्य पर अब तक उपलब्ध पहला प्रकाशित कार्य है। और दूसरी कृति है ''दक्षिण अफ़्रीका के मेरे अनुभव'' (पं. भवानीदयाल जी संन्यासी, 1927, इलाहाबाद, 'चाँद' कार्यालय), जो दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीयों के जीवन का प्रामाणिक ऐतिहासिक दस्तावेज़ है। इसी दौर के 'इंडियन ओपिनियन', 'मॉडर्न रिव्यू', 'नेटाल मरक्युरी', 'नेटाल एडवर्टाइज़र', 'अफ़्रीकन क्रोनिकल', 'धर्मवीर', 'हिंदी' आदि पत्र भी महत्त्वपूर्ण हैं; जो समाज की तत्कालीन गतिविधियों के दर्पण थे।

पहले एक बानगी फ़िजी द्वीप ले जाए गए अधिकांश 'कुलियों' की दशा की :

फ़िजी द्वीप में 21 वर्षों तक कुली जीवन व्यतीत कर लौटे पं. तोताराम सनाढ्य अपनी ऐतिहासिक पुस्तक 'फ़िजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष (1915) में अपनी मार्मिक व्यथा लिखते हुए कहते हैं, 'एक दिन मैं (प्रयाग में) कोतवाली के पास चौक में आर्थिक चिंता में निमग्न था कि इतने में एक अपरिचित व्यक्ति मेरे पास आया और उसने मुझसे कहा, 'क्या तुम नौकरी करना चाहते हो?' मैंने कहा 'हाँ' तब उसने कहा 'अच्छा हम तुम्हें बहुत अच्छी नौकरी दिलवाएँगे। ऐसी नौकरी कि तुम्हारा दिल खुश हो जावे।' इसपर मैंने कहा कि नौकरी तो मैं करूँगा लेकिन 6 महीने या साल भर से अधिक दिन के लिए नौकरी नहीं कर सकता'। तब उसने कहा – 'अच्छा! आओ तो सही, जब इच्छा हो तब नौकरी छोड़ देना, कोई हर्ज नहीं। चलो पहले जगन्नाथ जी के दर्शन तो कर लेना।' मेरी बुद्धि परिपक्व तो थी नहीं, मैं बातों में आ गया। पाठकगण! हा! इसी तरह धोखे में आकर सहस्रों भारतवासी आजन्म कष्ट उठाते हैं।... क्या कभी इसी सजला सफला मातृभूमि के उन पुत्रों के विषय में आपने सुना है, जो कि डिपो वालों की दुष्टता से दूसरे देशों में भेजे जाते

हैं?... वह आरकाटी मुझे बहकाकर अपने घर ले गया। मैंने देखा एक दालान में लगभग 100 पुरुष और दूसरे में 60 स्त्रियाँ बैठी हुई हैं। .... बातचीत करने की उस आरकाटी ने बिल्कुल मनाही कर रखी थी। वहाँ से न कोई बाहर जा सकता था और न कोई भीतर आ सकता था।... आरकाटी ने उन लोगों को समझाया था 'देखो भाई जहाँ तुम नौकरी करोगे, वहाँ तुम्हें यह दुःख नहीं सहने पड़ेंगे। वहाँ तुम्हें किसी बात की तकलीफ़ नहीं होगी, खूब पेट भर गन्ने और केले खाना और चैन की वंशी बजाना।' तदनंतर तीसरे दिन वह आरकाटी हम सबको मजिस्ट्रेट के पास ले जाने की तैयारियाँ करने लगा। कुल 165 स्त्री–पुरुष थे। सब गाड़ियों में बंद किये गये और कोई आध घंटे में हम लोग कचहरी पहुँचे। उस आरकाटी ने हम लोगों से पहिले ही कह रखा था कि साहब जब तुम लोगों से कोई बात पूछे तो 'हाँ' कहना अगर तुमने नाहीं कर दी, तो बस तुम पर नालिश करा दी जावेगी और तुम्हें जेल काटनी पड़ेगी। सब लोग एक–एक करके मजिस्ट्रेट के सामने लाये गये। वह प्रत्येक से पूछता था ''कहो तुम फ़िजी जाने को राज़ी हो?'' मजिस्ट्रेट यह नहीं बतलाता था कि फ़िजी कहाँ है, वहाँ क्या काम करना पड़ेगा तथा काम न करने पर क्या दण्ड दिया जावेगा। उस मजिस्ट्रेट ने 165 आदमियों की रजिस्ट्री 20 मिनट में कर दी। यहाँ से चलकर हम रेल में लादे गये। ट्रेन स्पेशल थी। स्टेशन से सीधे हावड़े पहुँची। हावड़े स्टेशन से सब लोग बंद गाड़ी में बिठलाये गए और जाकर डिपो में पहुँचाये गये। यहाँ इमिग्रेशन अफ़सर ने हम सबको एक पंक्ति में खड़ा किया और कहा 'तुम लोग फ़िजी जाते हो, वहाँ तुम्हें 12 आना रोज़ मिलेंगे और 5 वर्ष तक खेती का काम करना होगा। अगर तुम वहाँ से पाँच वर्ष बाद लौटोगे, तो अपने पास से किराया देना होगा और अगर 10 वर्ष बाद लौटोगे, तो सरकार अपने पास से भाड़ा देगी।' उसने बहुत कुछ चिकनी चुपड़ी बातें कहीं। हम अशिक्षित लोग कुछ तो पहिले से ही बहकाये हुये थे और रहे सहे उस अफ़सर ने बहका दिये। मुझे शंका हुई। मना किया। बंगाली बाबुओं के हवाले कर दिया गया।... जब मैं किसी तरह से राज़ी नहीं हुआ, तो एक कोठरी में बंद कर दिया गया। एक दिन एक रात मैं भूखा प्यासा उसी कोठरी में रहा। अंत में लाचार होकर मुझे कहना पड़ा कि मैं फ़िजी जाने को राज़ी हूँ। जहाँ कोई कुछ बोला, खूब पीटा गया। हमें पहिरने के लिये क़ैदियों के से कुर्ते, टोपी और पायजामा दिये गये। पानी पीने के लिये टीन का लोटा, भोजन रखने के लिये टीन की थाली और सामान रखने के लिये एक छोटा–सा थैला। 500 भारतवासी (पानी के जहाज़ से) अपनी मातृभूमि छोड़कर क़ैदियों और गुलामों की तरह फ़िजी को ले जाये जा रहे थे। हां! यह किसे ज्ञात था कि वहाँ पहुँचकर हमें असंख्य कष्ट सहने पड़ेंगे। ज्यों ही हमारा जहाज़ पहुँचा त्यों ही पुलिस ने आकर उसे घेर लिया, जिससे कि हम यहाँ से भाग न जावें। हम लोगों के साथ वहाँ गुलामों से भी बुरा बर्ताव किया गया। कोठी वालों को पहले से ही एजेंट जनरल ने आज्ञा दे दी थी, आकर अपने–अपने कुली नुकलाओ डिपो से ले जाओ। कोठी वालों ने प्रत्येक मनुष्य का व्यय 210 रु. इमिग्रेशन विभाग में पहिले से ही जमा कर दिया था। छोटे कुली एजेंट ने हम सबको भिन्न–भिन्न स्टेटों में जाने के लिये विभक्त कर दिया था। फिर उस एजेंट ने हम सबको बुलाया और प्रत्येक से कहा 'तुम आज से 5 वर्ष के लिये अमुक साहब के नौकर हुये।' (सनाढ्य, 1915, पृ. 3 से 13 के अंश)

वहाँ पहुँचकर कल्पनातीत कष्ट उन्होंने सहे, कि मानवता कराह उठी।

'आरकाटी' (या 'अरकाटी') का आशय है गिरमिटिया (एग्रीमेंट पर ले जाए जाने वाले श्रमिक) कुलियों–मज़दूरों को भरती करने वाला व्यक्ति, ठेकेदार, जो विदेशों में कुलियों–मज़दूरों को भेजने का काम करता हो।

प्रायः स्वेच्छा से कम; इसी तरह धोखे, लालच और क्रूरता के साथ दुनिया के विभिन्न द्वीपों पर हज़ारों भारतीय ले जाए गए। मार्च सन् 1914 के 'मॉडर्न रिव्यू' समाचार–पत्र के संदर्भ से इस तालिका पर दृष्टिपात् करें, जो विभिन्न देशों में रह रहे भारतीय लोगों की संख्या बताती है :

प्रवासी भारतवासियों की संख्या
राजकीय उपनिवेश

नाम उपनिवेश	भारतीयों की संख्या	उपनिवेशों की कुल जनसंख्या
ब्रिटिश गयाना	129181	299044
फेडेरेट मलाया स्टेट्स	172465	1036999

फ़िजी	48614	148871
गिलबर्ट द्वीप	301	31121
हांगकांग	3049	467777
जमैका	17380	831382
मॉरीशस	257697	368791
न्यूज़ीलैण्ड	463	1000000
दक्षिणी रोडेशिया	2912	770000
स्टेट सैटिलमेंट्स	82055	714969
ट्रिनिडाड और टोबेगो	50585	333552
उगंडा	3110	2893494
जंज़ीबार	10000	198914

(संदर्भ : मॉडर्न रिव्यू, मार्च, 1914; देखें : सनाद्य, 1915, पृ. 140)

यह तो हुई राजकीय उपनिवेशों की बात, इनके अतिरिक्त और भी कितने ही उपनिवेशों में बहुत से भारतवासी उस समय तक बस चुके थे। उदाहरणार्थ :

नाम उपनिवेश		भारतीय लोगों की जनसंख्या
आस्ट्रेलिया		1944
कनेडा		4500
दक्षिण अफ्रीका		158082
(नेटाल –	133034	
ट्रांसवाल	10048	
केप कॉलोनी	15000)	
विंडवार्ड और सेंटलूसिया		2523
ग्रेनेडा		2262
सीलोन (सिंहल द्वीप)		900000
ब्रिटिश पूर्व अफ्रीका		3071
मोमवासा		5300
सचेलीज़		150
बहाबात		4
सिरालियोन		24
बरवडीज़		1
उत्तर नाइज़ीरिया		30
ब्रिटिश हांडुराज़		200

(स्रोत : सनाद्य, 1915, पृ. 141)

अंग्रेज़ शासित उपनिवेशों में 1872578 और डच उपनिवेश सूरीनाम में 27358 भारतवासी थे। उपनिवेशों में कुल 1899938 भारतवासी थे।

श्रमिकों को बहला फुसलाकर ले जानेवाले 'आरकाटी' लोग भारी संख्या में भारतीय श्रमिकों को इन देशों में भेजने में सफल हुए थे। इसका अनुमान इस आँकड़े से लगाया जा सकता है कि 1842 से 1870 तक आरकाटियों ने बहकाकर कितने भारतवासी दूसरे द्वीपों में भेजे। देखें

मॉरीशस	351401
ब्रिटिश गयाना	79691
ट्रिनिडाड	42519
जमैका	15169
वैस्ट इंडियन द्वीप समूह	7021
नैटाल	6448
फ्रैंच उपनिवेश	31346

(संदर्भ : माडर्न रिव्यू, फ़रवरी, 1912)

विभिन्न उपनिवेशों में कुलियों का जाना कब आरम्भ हुआ; इसका विवरण इस तालिका में मिलता है –

मॉरीशस और रियूनियन	19 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में
ब्रिटिश गयाना	सन् 1844
ट्रिनिडाड	सन् 1844
ग्रेनेडा	सन् 1856
सेंटलूशिया	सन् 1858
नेटाल	सन् 1860
सैंटक्रायज़ (डेनमार्क)	सन् 1863
सूरीनाम (डच)	सन् 1872
फ़िजी	सन् 1885

श्रमिकों के अतिरिक्त बहुत सारे लोग व्यापार के लिए भी इन द्वीपों पर गए। विशेष रूप से दक्षिण अफ़्रीका में। यहाँ हिंदू–मुस्लिम दोनों की अच्छी संख्या थी। गुजराती और तमिलियन लोग अच्छी खासी संख्या में थे। तमाम तरह की प्रताड़नाओं के साथ रंग–भेद से सभी पीड़ित थे और यहाँ के कानून प्रवासी भारतीय समुदाय में लम्बे समय से असंतोष का कारण बने हुए थे। हम इसी समाज, इसी सार्वजनिक क्षेत्र अथवा इसी लोकवृत्त (पब्लिक स्फ़ीयर) की बात करेंगे।

युगपुरुष महात्मा गांधी जी ने दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीय लोकवृत्त को जाग्रत और आंदोलित किया। 1906 से इसका शंखनाद गूँजा। उनके मुख्य सहयोगियों में थे मि. हेनरी एस. एल. पोलक और श्री जयराम सिंह जी (जिनके सुपुत्र पं. भवानीदयाल संन्यासी ने आगे चलकर हिंदी, हिंदू और हिंदुस्तान के लिए ऐतिहासिक कार्य किए) इत्यादि। इसी क्रम में पादरी डोक, कियान केलनबेक, बाल ब्रह्मचारिणी श्लेसिन जैसे यूरोपियन नर–नारियों का नाम आता है, जिन्होंने प्रवासी भारतीयों की सेवा और सहायता की। इन सबके बीच हिंदू समाज सुधारक परमानंद जी तथा स्वामी शंकरानन्द जी जैसी विभूतियाँ भी थीं, जिनका प्रवासी भारतीय समाज में बड़ा सम्मान था। मणिलाल डॉक्टर का योगदान भी कम नहीं था, किंतु गांधीजी के कहने पर उन्होंने मॉरीशस में रहकर अधिक कार्य किया।

1910 के समय और बाद के प्रवासी भारतीय लोकवृत्त में हिंदी, हिंदू और हिंदुस्तान को लेकर अनेक तरह की चिंताएँ व्याप्त थीं। गांधी जी का सत्याग्रह आंदोलन विश्वस्तर पर चर्चित हो चुका था। प्रवासी भारतीय अपने अधिकारों और स्वाभिमान के प्रति जागरूक हो रहे थे। किंतु समाज के अंतर्द्वंद्व भी कम नहीं थे। इन अंतर्ग्रथित अंतर्द्वंद्वों को समझने की आवश्यकता है। इन्हीं के बीच हमारे सचेत समाज सेवियों ने अथक परिश्रम किया, जो देश की स्वतंत्रता से भी जुड़ा है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इसकी बहुत आवश्यकता थी।

हिंदी का प्रश्न

पं. भवानी दयाल संन्यासी (1927, पृ. 243) लिखते हैं, 'मैं प्रवासी भारतीयों की स्थिति पर सदैव चिंतातुर रहता और सोचा करता कि किन उपायों से इनमें सच्चा जीवन पैदा किया जा सकता है। भाषा ही राष्ट्रीय जीवन की जड़ है और मुझे यह देखकर बड़ा खेद होता था कि प्रवासी भारतीयों में उसके प्रति बड़ी उपेक्षा है। मेरा यह पक्का विश्वास है कि यदि किसी जाति की अपनी भाषा लुप्त हो जाए, तो राष्ट्रीय जीवन का दीपक बुझे बिना नहीं रह सकता।' इसी क्रम में उनका कथन है कि 'मेरे विचार में व्यक्तियों के हृदय के उन भावों का नाम 'राष्ट्रीयता' है, जो स्वधर्म, स्वदेश और स्वभाषा की त्रिवेदी पर उत्थित होते हैं।' वे स्पष्ट करते हैं कि धर्म से मेरा अभिप्राय देश के सर्वमान्य सिद्धांत और सभ्यता से है। यदि 'देश' राष्ट्र का शरीर है, तो भाषा उसका हृदय और आत्मा है। (वही, पृ. 244)

उनके सामने दक्षिण अफ़्रीका में अपने आसपास की बोअर जाति का आदर्श था। बोअर जाति का भाषा–प्रेम एक दृष्टांत है। बोअरों ने ट्रांसवाल का राज्य खोया, किंतु अपनी भाषा पर आँच न आने दी। युद्ध के बाद अंग्रेज़ों से संधि करते समय उसने एक शर्त यह भी रखी थी कि डच भाषा का यश अक्षुण्ण रहे। बोअर–महिलाओं में मातृभाषा के प्रति बहुत अनुराग है। उसका एक उदाहरण यहाँ देना हिंदी भाषियों के लिए अवश्य शिक्षाप्रद होगा। उदाहरण यह है : एक बार एक बोअर ने अपनी माता के पास अंग्रेज़ी में एक पत्र लिखा था, पत्र पाकर माता ने जो उत्तर दिया, वह इस प्रकार है – 'तुम्हारा पत्र पाकर हर्ष और विषाद दोनों हुए। हर्ष तो इसलिए हुआ कि इस पत्र में तुम्हारा कुशल–समाचार मिला और विषाद इसलिए कि वह पत्र तुमने अंग्रेज़ी में लिखा। क्या तुमने अंग्रेज़ी में पत्र लिखकर मेरे दूध को कलंकित नहीं किया? क्या तुम अपनी मातृभाषा भूल गए? यदि हाँ, तब तो तुम अपनी माता को भी भूल सकते हो!' भाषा को लेकर भवानीदयाल संन्यासी जी की एक और महत्त्वपूर्ण टिप्पणी है। वे कहते हैं, ''राज–पाट छिन जाने से कोई जाति गुलाम नहीं बन जाती, क्योंकि दास्यवृत्ति का सच्चा संबंध दिल और दिमाग़ से है। खेद है कि हिंदुस्तानियों ने बहुत अंश में अपनापन खो दिया है और वे अन्य वेश, अन्य भाषा, अन्य आदर्श और अन्य सभ्यता को स्वीकर कर परवशता की बेड़ी में बँध गए हैं।'' (वही, पृ. 245)

स्व–भाषा हिंदी को लेकर दक्षिण भारतीय प्रवासी समाज बेपरवाह था; किंतु धीरे–धीरे हिंदी का प्रश्न मुखर हो उठा। देशव्यापी जागृति आई। अनेक सामाजिक और राजनीतिक कार्यकर्ताओं ने हिंदी के व्यवहार पर बल दिया और बच्चों को हिंदी पढ़ाने के लिए आश्रम जैसे स्कूल खोले। 'इंण्डियन ओपीनियन' समाचार–पत्र प्रवासी भारतीयों का स्वर था, जो महात्मा गांधी के संरक्षण में निकलता था। किंतु हिंदी भाषा की दृष्टि से खेद है कि यह मूलतः अंग्रेज़ी और गुजराती का पत्र था। यहाँ तक कि इसमें दो पृष्ठ हिंदी के छपते थे, बाद में वे भी बंद हो गए। इसका एक 'सुनहरा अंक' (Golden Number) 1916

के आसपास निकला, उसमें अंग्रेज़ी, गुजराती और तमिल अंश तो छपे, पर बेचारी हिंदी को कोई जगह नहीं दी गई थी। इसको लेकर विरोध भी हुआ। उस समय अफ़्रीका में प्रवासी भारतीयों के बीच जो समाचार–पत्र थे, निःसंदेह उनमें 'इंडियन ओपीनियन' सर्वोपरि था। देशी भाषा के भी कई पत्र निकल रहे थे। यथा –'इण्डियन न्यूज़' (अंग्रेज़ी–गुजराती में; एम.सी. अंगलिया), जो सत्याग्रह विरोधी था और मुस्लिम नीति का समर्थक था। मुस्लिम समाज दो फाड़ था। गुजराती भाषा का 'क्रेसण्ट' (दादा ओसमान) था। मद्रासी भाइयों के भी दो पत्र थे – 'अफ़्रिकन क्रोनिकल' (पी.एस. अय्यर) तथा 'विवेक भानु' (सी. वी. पिल्लै)। इसलिए एक हिंदी समाचार–पत्र की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी। काम कठिन था। फिर भी आगे चलकर सम्भव हुआ। एक आर्य समाजी व्यापारी श्री आर. भल्ला ने 26 फ़रवरी,1916 को 'धर्मवीर' नामक समाचार–पत्र अंग्रेज़ी–हिंदी में निकाला। इसी तरह 1921 में 'हिंदी'। उसी समय 'स्वराज' नाम से एक साप्ताहिक अंग्रेज़ी में भी निकला था।

दक्षिण अफ़्रीका के प्रवासी भारतीय समाज के बीच हिंदी को लेकर अनेक लोगों ने मिलकर कार्य किया; किंतु प्रेरणा–पुंज माने जाते हैं पं. भवानीदयाल जी संन्यासी। इन लोगों को दुख होता था; यह देखकर कि अनेक प्रवासी भारतीयों के घरों में हिंदी नहीं बोली जाती थी। परिवार के सदस्यों का रहन–सहन भी भारतीय नहीं था। अपने अनुभव लिपिबद्ध करते हुए श्री संन्यासी जी एक स्थल पर लिखते हैं, '16 जनवरी, सन् 1915 ई. को हिंदी प्रचारिणी सभा ने विशेष बैठक की योजना की और सभा में (हिंदी के प्रचार–प्रसार सम्बंधी) अपना विचार प्रकट किया। मुख्य सज्जनों ने मेरे विचार का समर्थन किया और यह आशा दिलाई कि वे सब प्रकार से सहायता और सहयोग करने को तैयार हैं। मेरा उत्साह बढ़ गया और मैंने नौकरी छोड़कर प्रचार कार्य करना निश्चित कर लिया। पाठशाला का भार देवीदयाल पर छोड़ दिया और स्वयं घर–घर अलख जगाने को निकल पड़ा! इस निश्चय के दूसरे ही दिन मैं सफ़ायाटोन पहुँचा। यह एक छोटी–सी बस्ती है और बहुत थोड़े हिंदुस्तानी यहाँ बसते हैं। हब्शियों की यहाँ अच्छी आबादी है। श्री. मणिशंकर महाराज के उद्योग से यहाँ सभा का प्रबंध हुआ, उसमें मैंने मातृभाषा की ओर लोगों का ध्यान खींचने की चेष्टा की। मैंने देखा कि हिंदी–भाषियों में निज भाषा के प्रति कोई अनुराग नहीं है। कमाने–खाने के सिवाय और किसी बात की चिंता नहीं है। वहाँ से 20 जनवरी को मैं प्रिटोरिया गया। नगर वर्तमान युग के अनुसार खूब साफ़–सुथरा है, लेकिन हिंदुस्तानियों की बस्ती इतनी गंदी है कि देखकर शर्म आती है। यह बस्ती शहर से अलग एक किनारे पर है और एशियाटिक बाज़ार या इण्डियन लोकेशन नाम से मशहूर है। यहाँ के प्रवासी हिंदुस्तानियों में मैंने मातृभाषा की जो दुर्गति देखी, उससे मेरा कलेजा काँप उठा। छोटे–बड़े सभी धारावाही रूप से डच–भाषा ऐसे बोलते कि मालूम पड़ता कि यह उनकी ही मातृभाषा है; किंतु हिंदी बोलने में उनको कुछ संकोच मालूम पड़ता। हिंदुस्तानी औरतें भी खूब डच–भाषा बोलतीं हैं, इसलिए घरों में भी डच भाषा की छटा छिटक रही है।' (वही, 1927, पृ. 247–248) वे निराश हुए और सोचने लगे कि ऐसे स्थान पर उनके दो–एक भाषण से क्या होगा। यहाँ ऐसे किसी सत्पुरुष की आवश्यकता है, जो स्थाई रूप से रहकर परिवर्तन लाने का प्रयास कर सके। वे विचार करने लगे कि यदि मातृभाषा की यही दुरवस्था रही, तो एक–दो पीढ़ी में यह पहचानना भी कठिन हो जाएगा कि ये लोग भी भारत की 'विस्मृत–परायण संतान' हैं और इन्हें भी हिंदुस्तानी कहलाने में लज्जा आयेगी। परिणाम यह होगा कि भारत अपनी इन संतानों से और ये लोग अपनी मातृभूमि की स्मृति से हाथ धोएँगे। उन्होंने यहाँ भी स्थानीय लोगों के बीच एक सभा की तथा निश्चय हुआ कि श्री. रामलाल मुल्लू द्वारा यहाँ एक हिंदी पाठशाला खोली जाएगी और स्वयं मुल्लू जी हिंदी पढ़ायेंगे।

इसी क्रम में संन्यासी जी रूडीपोर्ट, क्रुगर्सड्रोप, फ़्लोरिडा, न्यू–क्लियर, बेनोनी, बोक्सवर्ग, ट्रांसवाल, अपनी जन्मभूमि जोहांसबर्ग आदि स्थानों पर गये। इन स्थानों के प्रवासी भारतीयों के जीवन, संघर्ष, विषमताओं और मातृभाषा हिंदी के साथ–साथ हिंदू संस्कृति की अवस्था को निकट से देखा। वे लिखते हैं, 'ट्रांसवाल के मुख्य–मुख्य स्थानों का भ्रमण कर 9 मार्च सन् 1925 ई. को मैंने अपनी पत्नी और पुत्र के साथ जर्मिस्टन से डरबन के लिए प्रस्थान कर दिया। मैंने हिंदी–प्रचार के लिए डरबन को केंद्र बनाना उचित समझा; क्योंकि समस्त

दक्षिण अफ़्रीका में डेढ़ लाख हिंदुस्तानी हैं, जिनमें एक लाख तीस हज़ार नेटाल प्रांत में बसते हैं। यहाँ की अवस्था ट्रांसवाल से बिलकुल भिन्न थी। सिकौलेक में बाबू कुंज बिहारी सिंह एक रात्रि–पाठशाला खोलकर कुछ बच्चों को हिंदी पढ़ा रहे थे। ओवरपोर्ट की रामायण–सभा की ओर से भी एक हिंदी रात्रि–पाठशाला खुली थी। मैंनिंग प्लेस की हिंदी जिज्ञासा–सभा हिंदी–प्रचार के लिए यथेष्ट उद्योग कर रही थी। हाल ही में भारत से पढ़कर श्री दशरथ पाण्डेय आए थे और वे मेरीत्सबर्ग में हिंदी–राष्ट्रीय पाठशाला खोलने का यत्न कर रहे थे। हाबिक में भी श्री मक्खन सिंह इत्यादि के उद्योग से नागरी पाठशाला का श्रीगणेश हो चुका था।' (संन्यासी, 1927, पृ. 255–256)

यहाँ ध्यातव्य है कि हिंदी भाषा को अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करना पड़ रहा था। इसे राष्ट्रीयता और हिंदुस्तानी संस्कृति के साथ जोड़कर देखा गया और इसके प्रचार–प्रसार के प्रयत्न किए गए। हिंदी को अपना विकास डच तथा अंग्रेज़ी जैसी बहु–प्रयुक्त विदेशी भाषाओं तथा गुजराती, उर्दू, तमिल, मराठी जैसी भारतीय भाषाओं के बीच करना था। इस दृष्टि से स्वामी भवानीदयाल संन्यासी जी और उनके साथ कुछ प्रवासी भारतीयों के प्रयत्न सराहनीय हैं, जिनको महात्मा गांधी जी का आशीर्वाद एवं प्रेरणा प्राप्त थे। इसी कड़ी में उन्होंने 'धर्मवीर' (1916) और 'हिंदी' (1921) जैसे हिंदी प्रधान द्विभाषी पत्र निकाले। उस दौर में श्री प्रेम नारायण अग्रवाल ने स्वामी जी के जीवन एवं उनके कार्यों पर एक पुस्तक लिखी थी, जिसमें उनकी हिंदी–सेवा पर स्वतंत्र अध्याय है।

इस पुस्तक की संस्तुति लिखते हुए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष, डॉ. राजेंद्र प्रसाद जी ने उनकी राजनीतिक, सामाजिक सेवाओं के साथ हिंदी की प्रचार–प्रसार सेवा की सराहना की है।

प्रश्न हिंदू–संस्कृति के

दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीयों के बीच हिंदू संस्कृति का प्रश्न बहुत गम्भीर था। आर्य समाज ने इस ओर सबसे पहले ध्यान दिया और सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना जाग्रत करने का ठोस कार्य किया। दुःखद यह था कि सनातनी और आर्य समाजी लोगों के बीच कभी–कभी वितण्डावाद हो जाता था; किंतु हिंदू संस्कृति के सुधार और संरक्षण के बड़े उद्देश्यों के सामने यह छोटा–सा अंतर्द्वंद्व था। प्रवासी भारतीय समाज में मुस्लिम और ईसाई भी थे। प्रायः हिंदुओं को ही वे 'हिंदुस्तानी' कहते। यह भी एक सूक्ष्म दूरी भारतीय समाज की समरसता में कठिनाई पैदा करती थी। यह एक अलग तरह का अंतर्द्वंद्व था।

तत्समय में दक्षिण अफ़्रीकी प्रवासी भारतीय समाज में हिंदू संस्कृति का जायज़ा लेने के लिए पहले एक रोचक और चिंताजनक उद्धरण देख लें : ''सन् 1860 ई. में पहले–पहल यहाँ हिंदुओं का आगमन हुआ। वे कैसे और क्यों आए, यह कहानी बहुत लम्बी और दुःखदायी है। कलकत्ते के कुली डिपो में ही उनके धार्मिक विश्वास पर भयंकर आघात किया गया। नेटाल आने पर उनका यह विचार और भी पक्का हो गया कि टापू में धर्म बचाना असम्भव है। यद्यपि ब्राह्मणों की भर्ती जारी नहीं थी, तो भी कुछ ब्राह्मण नाम और जाति बदलकर पहुँच ही तो गए। उनमें न धर्म का तेज था और न विद्या की झलक ही। इतना पाठ अवश्य जानते थे – *बाल समै रवि भक्ष लियो तब तीनहुँ लोक भयौ अँधियारौ*। इस विद्या के प्रताप से उन्होंने हिंदुओं को यह समझाया कि यही रावण का देश है और यही रावण के वंशज हब्शी हैं। लंका जलाते समय हनुमान जी ने इनके बाल भी फूँक दिए थे, इसी से इनके बालों में ऐंठन है। यहाँ हनुमान जी के सिवाय और किसी देवता का प्रताप नहीं है। इस उपदेश का बड़ा प्रभाव पड़ा। घर–घर हनुमान जी को रोट और लाल लंगोट चढ़ने लगे। कुछ धनवान लोग सत्यनारायण की कथा भी सुनने लगे और जहाँ–तहाँ रामायण का पाठ भी प्रचलित हुआ। इससे हिंदुत्व की कुछ मर्यादा सुरक्षित तो अवश्य हो गई, किंतु उनकी अवस्था में कोई विशेष परिवर्तन न हुआ।' (संन्यासी, 1927, पृ. 61–63)

हिंदू समाज में अनेक बुराइयाँ घर करने लगी थीं। शराबखोरी बढ़ गई थी। स्त्रियों के पीछे मारपीट शुरू हो गई। कुली–शास्त्र के अनुसार हिंदुओं का धर्म–संगत विवाह नाजायज़ ठहरा दिया गया था। अब 'पुरोहित' प्रोक्टर साहब थे और उनका ऑफ़िस ही 'विवाह मण्डप' था। यहीं पर विवाहों की रजिस्ट्री हुआ करती थी। कभी–कभी तो ऐसा भी होता कि एक आदमी धर्मानुसार विवाह करता था और दूसरा उस कन्या को लेकर

प्रोक्टर साहब के पास पहुँच जाता था। बेचारा धर्म–सम्मत विवाह करने वाला हाथ मलकर रह जाता और रजिस्ट्री करा लेनेवाला 'वास्तविक पति' बन जाता! सबसे बड़ी हानि यह हुई कि हिंदू समाज होली, दीपावली, रामनवमी, कृष्ण जन्माष्टमी, दशहरा जैसे अपने तीज–त्योहारों को भूल गया। कोई–कोई परिवार व्यक्तिगत स्तर पर भले ही कुछ त्योहार मना लेता होगा; इन त्योहारों का सार्वजनिक रूप विस्मृत हो गया। चिंताजनक स्थिति यह थी कि हिंदुओं का 'सबसे बड़ा त्योहार' मुहर्रम बन गया! और भी दिलचस्प स्थिति समझने के लिए यह उद्धरण पढ़कर देखें : ''हिंदुओं के घर ताज़िए बनने लगे, उनकी स्त्रियाँ मर्सिया गाने लगीं और इमाम साहब पर शिरनी, पंजे और मलीदे चढ़ाने लगीं। मुसलमान–साँइयों की खूब बन आई और उनकी पाँचों उंगलियाँ घी में पड़ गईं। कुछ हिंदू देह में काले, पीले, नीले इत्यादि अनेक प्रकार के रंग पोतकर बाघ बन जाते और मुहर्रम के त्योहार को अधिक आकर्षक बनाने के लिए घर–घर नाचते फिरते। अंग्रेज़ों ने इनका नाम ही 'कुली क्रिसमस' और हिंदू नचनियों का 'कुली टायगर' रख दिया था।'' (संन्यासी, 1927, पृ. 64) (और अधिक जानकारी के लिए भवानीदयाल जी की लिखी पुस्तक 'नेटाली हिंदू' (1917), सरस्वती सदन, इंदौर पठनीय है।)

प्रवासी भारतीय समाज के दुर्भाग्य का और हिंदू–संस्कृति के विचलन का एक और पक्ष है - हिंदू–मुस्लिम अलगाव और धर्म–परिवर्तन। 'सत्याग्रह' आंदोलन में कुछ व्यवसायी मुसलमानों ने भाग नहीं लिया था और उनका कहना था कि वे इन सबसे अलग हैं। यहाँ तक कि गांधी जी पर प्रहार तक किया गया। मुसलमानों ने गोरों को यह समझाया कि हम हिन्दुस्तानी नहीं हैं, अरबी व्यापारी हैं। इन कुलियों से हमारा कोई नाता नहीं है। उन्होंने हब्शियों को समझाया कि हिंदू लोग ही 'मकूला' हैं (वे लोग भारतीय श्रमिकों को हेय दृष्टि से 'मकूला' ही कहते थे।) हम लोग तो 'सुलेमान' हैं। धीरे–धीरे मुसलमानों को अरब और 'सुलेमान' ही कहा जाने लगा। मुसलमान हिंदुओं को 'कोलचा' कहने लगे। परिणाम यह हुआ कि कुछ लोगों ने 'श्रेष्ठता' की चाह में धर्म–परिवर्तन का मार्ग अपनाने में संकोच नहीं किया। और भी कारण रहे होंगे। यद्यपि इनकी संख्या अधिक नहीं थी; किंतु चिंता की बात तो थी ही। कुछ नेपाली हिंदू भी थे, जो ईसाई बन गए थे। कुछ हिंदू परिवार ब्रिटिश–प्रजा के रूप में अपने आप पर गर्व करते थे; जबकि वे स्वयं रंग–भेद का शिकार थे और यहाँ के मूल वासी बोअर, जो अंग्रेज़ों से घृणा करते थे; ऐसे प्रवासी भारतीयों से घृणा करने लगे थे।

'कलर्ड कामिनी' का आकर्षण : यह भी एक पक्ष है हिंदू समाज की अधोगति का! 'कलर्ड कामिनी' का आशय है यूरोप के कुछ लोगों और हब्शी स्त्रियों के संसर्ग से उत्पन्न ऐसी जारज संतानें, जो 'कलर्ड' कही जाती थीं। इनकी सामाजिक स्थिति विचित्र थी। इन वर्ण संकर युवतियों से कोई यूरोपियन धर्मानुकूल विवाह करना पसंद नहीं करता था और स्वयं ये युवतियाँ हब्शियों से शादी नहीं करना चाहती थीं। ये कामिनियाँ भारतीय युवकों पर दृष्टि रखती थीं और कई युवक इनके आकर्षण में फँस जाते थे। कई युवक तो अपना खुशहाल परिवार तक तबाह कर बैठे थे।

राजनीतिक दृष्टि से रंग–भेद और अनेक तरह के मनमाने कानून, टैक्स, जन–विरोधी भावनाओं का तो लम्बा सिलसिला था।

ऐसी कई विषमताओं के मध्य दक्षिण भारत का प्रवासी भारतीय समाज लम्बे समय तक जीता रहा। 1905 ई. में अंधकार के बीच आशा की एक किरण का उदय हुआ। लाला मोहकमचंद जैसे कुछ उत्साही सज्जनों के प्रयत्न से डी.ए.वी. कॉलिज लाहौर के प्रोफ़ेसर परमानंद जी यहाँ पहुँचे। यद्यपि वे मात्र 4 माह तक ही रुके थे; किंतु हिंदुओं में एक नवीन जीवन और जागृति का संचार हुआ। उन्होंने समझाया कि वैदिक धर्म ही सब धर्मों की जननी है और आर्य–सभ्यता ही सब सभ्यताओं का आदि स्रोत। हिंदू युवकों को आत्म–ज्ञान का एक सूत्र मिल गया कि हमारा भी एक विशिष्ट धर्म और संस्कृति है। यह विचार–सूत्र पल्लवित हुआ, जब 1908 में स्वामी शंकरानंद जी लंदन से नेटाल आए। उनका योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने देखा कि हिंदुओं की बड़ी दुर्गति हो रही है; न उनका कोई रक्षक है और न पथ–प्रदर्शक ही। उनमें एकता भी नहीं है। अतः स्वामी जी ने हिंदू–संगठन का आंदोलन उठाया। व्याख्यान दिए। यज्ञोपवीत कराए और सैकड़ों हवन भी। ''कुछ ईसाई शुद्ध होकर वैदिक धर्म की शरण में लौट आए। मुसलमानों के लिए भी मज़हबी शिकार

खेलना मुश्किल हो गया। स्वामी जी के उपदेशों का गोरांग जनता पर भी बड़ा प्रभाव पड़ा। लोग मंत्रमुग्ध होने और मुक्त–कण्ठ से हिंदू धर्म की प्रशंसा करने लगे। अब तक जो हिंदुओं को कुली के सिवाय और कुछ नहीं समझते थे, स्वामी जी के भाषणों से उनकी आँखें खुल गईं। कितने गोरे नर–नारी स्वामी जी के पास प्राणायाम और योग–क्रियाएँ सीखने के लिए आने लगे। सारांश यह है कि गोरांगों के हृदय में हिंदू धर्म के लिए जो नीच भावनाएँ थीं, वे दूर हो गईं और हिंदुओं को वे प्रतिष्ठा की दृष्टि से देखने लगे।' (संन्यासी,1927, पृ. 68) और भी परिवर्तन हुए। ताज़िया–परस्ती के स्थान पर ठाकुर जी का रथ निकलने लगा, मृतक–समाधि के स्थान पर दाह–कर्म की व्यवस्था हुई। कालांतर में हिंदू श्मशान गृहों की व्यवस्था हुई, जो पूर्व में उपलब्ध नहीं थे। हिंदू–त्योहार मनाए जाने लगे। संध्या–हवन के प्रति लोगों का विश्वास जगा।

इस नव उर्वर भूमि पर 1910 के बाद निरंतर हिंदू संस्कृति का आशातीत पल्लवन सम्भव हुआ। धर्म–वापसी के कुछ प्रसंग देना यहाँ अनुचित न होगा। एक घटना 10 दिसम्बर, 1916 की है। स्प्रिंगफ़ील्ड में दो मुसलमान नवयुवक थे। दोनों माता–पिता विहीन। बचपन से एक हिंदू परिवार में पले–बढ़े। इसलिए जब वे सोचते कि मुसलमान हैं, तब उन्हें बड़ी ग्लानि और वेदना होती। उन्होंने किसी भी तरह से हिंदू बन जाने की इच्छा प्रकट की। लगभग 500 लोगों की उपस्थिति में उनको 'शुद्ध' किया गया अर्थात् हिंदू धर्म में लाया गया। इनका नाम बदलकर रामपाल और शिवपाल रखा गया। इससे एक माह पूर्व डरबन में लालबहादुर नान्हू को शुद्ध करके मुसलमान से हिंदू बनाया गया था। यद्यपि इसका विरोध हुआ। मुसलमान तो रुष्ट हुए ही; कुछ कट्टर हिंदू भी नाराज़ हुए। किंतु यह प्रक्रिया रुकी नहीं। सामाजिक सुधार के कार्य चलते रहे। एक उल्लेख पठनीय है: ''एक ओर तो हिंदुओं के सामाजिक नियमों में संशोधन हो रहा था, दूसरी ओर शुद्धि का काम भी जारी था। हिंदी आश्रम में ज़ान मुहम्मद की शुद्धि हुई और उसका नाम रामप्रसाद रखा गया। यह पहले हिंदू था, किंतु मुसलमानों की संगति में पड़कर अपने धर्म से अलग हो गया था। इसके बाद आर्य युवक सभा के प्रबंध से ग़रीब दुबरदास, जगनंदन, जगरूप, राजपति देवी इत्यादि कितने ही युवक–युवतियों को शुद्ध करके ईसाई से हिंदू बनाया। टोंगाट, मेरीत्सबर्ग और एस्परेंजा में भी कई मुसलमानों और ईसाइयों की शुद्धि हुई।' (संन्यासी, 1927, पृ. 342)

एक और संवेदनशील प्रसंग है, जो प्रवासी भारतीय समाज की अंतर्विरोध एवं संघर्षपूर्ण स्थिति को रेखांकित करता है। ये एक अलग तरह की प्रजाति थी। अनेक हिंदू मुसलमान और ईसाई तो बने ही थे; कुछ लोग हब्शी भी बन गए थे! रिचमौण्ड में ऐसा ही एक हिंदू था। उसकी व्यथा–कथा उसी के शब्दों में : ''मेरा नाम चेखुरी अहीर है! बाप का नाम था लक्ष्मण अहीर। मैं गाँव इमलिया, थाना वजीरगंज, ज़िला गोंडा का रहने वाला हूँ। मैं पाँच वर्ष की शर्तबंदी (गिरमिट) लिखाकर नेटाल में आया। जिस गोरे ने मुझे काम करने के लिए खरीदा, वह बड़ा निर्दयी और क्रूर था। मेरे साथ तीन और अभागे हिंदुस्तानी काम करते थे। मेरी पीठ पर नित्य ही चाबुकों की मार पड़ती थी। उससे व्याकुल हो मैंने फाँसी लगाकर मर जाने की ठान ली, लेकिन आत्महत्या के लिए जिस हिम्मत की ज़रूरत है, वह मुझमें न थी। इसलिए मैं वहाँ से भाग निकला। जंगल–जंगल घूमने लगा और पेड़ों के फल और पत्ते खा–खाकर पेट भरता रहा। जब मैं किसी हिंदू के घर पर जाता था, वह मुझे काम से भागा हुआ गिरमिटिया कहकर दुरदुरा देते (क्योंकि भगेड़ू मज़दूर को आश्रय देना भी कानून से अपराध था)। अंततः अपने भाइयों से सहायता पाने की आशा त्यागकर मैं जंगली हब्शियों में जा मिला। मैंने वस्त्र पहिनना छोड़कर मोचा (चमड़े का लंगोट) बाँधा, हब्शियों के साथ बैठकर ज्वाला (शराब) पीने लगा और बैल तथा सुअर का मांस तक खाना शुरू कर दिया। मैंने अपना नाम बदलकर हब्शी नाम 'लाठा' रख लिया और हिंदी में बातचीत करना भी छोड़ दिया, ताकि मुझे कोई हिंदुस्तानी न समझ ले। जब मैं पूर्ण रूप से हब्शी बन गया, तब एक हब्शिन से मेरी शादी भी हो गई। इस समय मेरे कई लड़के और लड़कियाँ हैं।'' (संन्यासी, 1927, पृ. 345–346)

अब उसके हृदय में हिंदू धर्म की विस्मृति जाग्रत हुई, तो उसकी आँखों से अश्रु–धारा प्रवाहित हो चली। स्वाभाविक है कि उसे शुद्ध कर हिंदू–धर्म में वापस लाया गया।

समग्रतः हिंदू–धर्म और संस्कृति का पुनरुत्थान इस कंटकाकीर्ण मार्ग से होने लगा। समाज सुधार और राजनीतिक चेतना के विकास में महिलाओं का योगदान कम नहीं है। श्रीमती

कस्तूरबा गांधी स्वयं कई बार जेल गईं और उनके साथ कई सभ्रांत महिलाएँ भी थीं। नेटाल की 'इंण्डियन वीमैंस एसोसिएशन' और डरबन की 'हिंदू वीमैंस सभा' जैसी संस्थाएँ खूब सक्रिय थीं। इसी तरह ''इंडियन ओपीनियन'' जैसे समाचार–पत्र का योगदान भी उल्लेखनीय है। इसपर स्वतंत्र रूप से लिखे जाने की आवश्यकता है। सन् 1903 में श्री वी. मदनजीत ने इसकी नींव डाली थी; किंतु जब यह कुछ दिनों में डगमगाने लगा तब महात्मा गांधी जी ने आर्थिक सहायता से इसे संभाला। यह फ़ेनिक्स में स्थित गांधी जी के आश्रम से ही मुद्रित होता था। हेनरी सोलमन लियन पोलक लम्बे समय तक इसके सम्पादक रहे, जिन्होंने प्रवासी भारतीयों का बहुत हित किया और गांधी जी के सत्याग्रह आंदोलन में सहयोगी बने। इनकी लिखी पुस्तक "The Indians of South Africa : Helot within the Empire and How they are treated" (1909) महत्त्वपूर्ण है। दक्षिण अफ्रीकी प्रवासी भारतीय समाज में व्यापक राजनीतिक चेतना का प्रसार तो हुआ ही, जिसकी ऐतिहासिक यात्रा महात्मा गांधी, गोपालकृष्ण गोखले आदि महान नेताओं के प्रयासों में संग्रथित है; सामाजिक–सांस्कृतिक और आर्थिक चेतना का भी विस्तार हुआ।

संदर्भ एवं विस्तार के लिए पठनीय ग्रंथ :

1. Agrawal, Prem Narayan, (1939), Bhawani Dayal Sannyasi : A Public Worker of South Africa, Ajitmal, Etawah (U.P.), The Indian Colonial Association
2. Polak, H.S.L. (1909), The Indians of South Africa : Helot within the Empire and How they are treated, Esplande, GA Natesan & Co.
3. Vishvambharaa.blogspot.com 12 Dec-2012
4. एक भारतीय हृदय (पं. बनारसीदास चतुर्वेदी), (1918), प्रवासी भारतवासी, इंदौर, सरस्वती सदन
5. गोयनका, कमल किशोर, (सं.) (2015), जोहांसबर्ग से आगे, दिल्ली, विदेश मंत्रालय, भारत सरकार
6. गोयनका, कमल किशोर, (सं.) (2017), हिंदी का प्रवासी साहित्य, नई दिल्ली, स्वराज प्रकाशन
7. संन्यासी, भवानी दयाल, (1916), नेटाली हिंदू, इंदौर, सरस्वती सदन
8. संन्यासी, भवानी दयाल, (1916), दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास, इंदौर, सरस्वती सदन
9. संन्यासी, भवानी दयाल, (1914), वैदिक धर्म और आर्य सभ्यता, मेरठ, भास्कर प्रैस
10. संन्यासी, भवानी दयाल, (1927), दक्षिण अफ्रीका के मेरे अनुभव, इलाहाबाद, 'चाँद' कार्यालय
11. सनाढ्य, पं. तोताराम, (संवत् 1972/1915), फ़िजी द्वीप में मेरे 21 वर्ष, फ़ीरोजाबाद (आगरा), भारती भवन

आगरा (उ.प्र.), भारत
profharimohan@gmail.com

संसार में एकता के दर्शन कर उसके विविध रूपों के बीच परस्पर पूरकता को पहचान कर, उनमें परस्परानुकूलता का विकास करना तथा उसका संस्कार करना ही संस्कृति है। प्रकृति को ध्येय की सिद्धि के अनुकूल बनाना संस्कृति तथा उसके प्रतिकूल बनाना विकृति है।

– दीनदयाल उपाध्याय

6

हिंदी बाल साहित्य और भारतीय संस्कृति

– डॉ. डी. विद्याधर

जन्म : 11.05.1965, हैदराबाद

शिक्षा :
- व्याकरणोपाध्याय : आर्ष गुरूकुल यज्ञतीर्थ, एटा, उत्तर प्रदेश
- विद्या भास्कर – गुरूकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर, हरिद्वार
- सिद्धांत शास्त्री – गुरूकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर, हरिद्वार
- एम. ए . (संस्कृत)– आगरा विश्वविद्यालय, आगरा, उत्तर प्रदेश
- एम .ए, पी एच.डी. – हिंदी : उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, तेलंगाना
- पी. जी . डिप्लोमा – (अनुवाद) : उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, तेलंगाना
- बी.एड – दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद,
- N E T उत्तीर्ण

व्यवसाय :
संप्रति, एसोसिएट प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, विवेक व धनी महाविद्यालय, हैदराबाद

प्रकाशन :
- हिंदी की दुनिया : दुनिया में हिंदी
- हिंदी साहित्य का वैश्विक स्तर पर महत्त्व
- गद्य दर्पण और कथा सिंधु तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :
तेलंगाना राज्य सरकार द्वारा सर्वोत्तम प्राध्यापक के रूप में पुरस्कृत तथा स्वर्ण पदक से सम्मानित एम. ए. हिंदी में सर्वप्रथम आने के उपलक्ष्य में उस्मानिया विश्वविद्यालय द्वारा पाँच स्वर्ण पदकों से सम्मानित

बालक परमेश्वर की सर्वोत्तम कृति है। मानव समाज की नींव में बैठा बालक सृष्टि का आधार है। अंग्रेज़ी के कवि वड्र्सवर्थ ने बालक को मानव का जनक कहा और आज भी भारतीय मनीषा ''बाल देवो भव'' कहकर उसकी महत्ता को स्वीकार करता है। जिस प्रकार एक नन्हा बीज अनुकूल भूमि, जलवायु और उष्मा पाकर वट वृक्ष बन जाता है, उसी प्रकार असीम क्षमताओं को लेकर जन्म लेने वाला बालक परिवार और समाज द्वारा समुचित वातावरण, संस्कार, शिक्षा और संवेदनशीलता पाकर एक पूर्ण मानव की कल्पनाओं को साकार करता है। भारतीय आचार्यों ने बालक की क्षमता को पूर्णत्व प्रदान करने, उसकी अंतर्निहित ऊर्जा और तेजस्विता को जगाने के लिए कहा –

शुक्रो सि भूजो सि स्वरसि ज्योतिरसि।
अधुहि श्रेसां समति समं काये।।

अर्थात् हे बालक तुम तेज व ज्ञान संपन्न हो, शत्रुओं को भून डालने वाला बनो, आनंदमय और ज्योतिर्मय हो। तुम परम कल्याण को प्राप्त हो और जीवन की दौड़ में अपने समवयस्कों में आगे बढ़ते जाओ। बालक की इसी श्रीवृद्धि कामना के साथ उसने बालक के बौद्धिक, आध्यात्मिक, मानसिक आदि सर्वांगीण विकास और उन्नयन के लिए समाज के विभिन्न अंग यथा–परिवार, विद्यालय, शासन, साहित्यकार आदि को इस ओर बढ़ने की प्रेरणा दी।

आज का बालक कल के समाज का विधाता है। उसी के कंधों पर कल का भविष्य है। सामाजिक संरचना का वही निर्माता है, इसलिए उसके मानसिक क्षितिज को प्रभा मंडित बनाना, लोकोन्मुखी चेतना को जगाना, भाव भूमि को अलंकृत करना, इस प्रकार के सत्संकल्प ही विश्वात्मा की आराधना है।

बालक प्रकृति की श्रेष्ठतम कृति है, अनमोल देन है। वह निर्दोष है, वह सहज और सरल है, उसपर न कोई छाया है, न किसी पूर्वाग्रह की कालिमा है। कोरी स्लेट की तरह वह निर्मल है, जिसपर कुछ भी लिखा जा सकता है, उसके अलिखित और अनचिह्ने भविष्य की दिशा निश्चित करना हमारा काम है। हम यह काम साहित्य के माध्यम से करते हैं। इसलिए बाल साहित्य की महत्ता अन्य साहित्य से अधिक हो जाती है, क्योंकि वह

बालकों में संस्कार की सृष्टि करता है। उन्हें वह देता है, जो बालकों के पास नहीं होता।

क्या, क्यों और कैसे की अतुल सम्पत्ति लेकर बालक धरती पर आता है और इन्हीं के सहारे वह जिज्ञासा ज्ञान को अर्जित करता है। यह ज्ञान एक ओर जहाँ उसे अनुभव से प्राप्त होता है, वही दूसरी ओर साहित्य उस क्षेत्र से अपने प्रयास से उसकी जिज्ञासा को शांत करता चलता है।

बाल साहित्य भारतीय संस्कृति के जीवन को गढ़ने वाली, संवेदनशील बालक की सुष्ठ धमनियों में शुद्ध रक्त संचार करने वाली, 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' ध्वनित करने वाली एक ऊर्जा शक्ति है। इसलिए हम ऐसे बाल साहित्य लेखन की आकांक्षा संजोये हैं, जो बाल जीवन की प्रेरक बने, उसका प्रत्येक शब्द बाल जीवन निर्माण की कसौटी पर खरा उतरे। शब्द ब्रह्म है, ब्रह्म सत्य है और सत्य जीवन का लक्ष्य, गति और प्राण है। शब्द को प्राण बनाना, सत्य से जोड़ना और बालक–जीवन में सद् संस्कार देने की दिशा में उसका उपयोग करना कलम के सिपाही साहित्यकार का दायित्व है। इसी दायित्व निर्वाह में अनादि काल से साहित्य सृजन का कार्य हो रहा है। हज़ारों सालों से हमने जो जीवन के आदर्श गढ़े हैं, उन्हें अपनी संतान तक पहुँचाने का कार्य हमारे साहित्यकारों ने किया है। वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में अनेक प्रसंग और अंतर्कथाएँ ऐसी हैं, जो बाल साहित्य के अंतर्गत आती हैं। पंचतंत्र तो बाल जीवन के सर्वांगीण निर्माण की एक ऋचा ही है। जातक कथाएँ और कथा सरित्सागर के अतिरिक्त श्रीमद् भागवत का दशम् स्कंध, उपनिषदों और हितोपदेश में आई अनेक अंतर्कथाएँ बाल साहित्य की अमर निधि हैं।

हिंदी का बाल साहित्य अधिक पुराना नहीं है। विगत डेढ़ सौ वर्ष के इतिहास में जो बाल साहित्य लिखा गया, उसमें प्रारंभिक दिनों में कहानियाँ लिखने का बाहुल्य रहा। इसका मुख्य कारण था कि कहानियाँ बच्चों को अधिक प्रिय होती हैं। इस काल में भारतीय संस्कृति के अनुरूप नीति कथाओं और लोक कथाओं का बाहुल्य था।

बालक को जिसे हम देश का भावी नागरिक कहकर उसके हाथों में देश के भविष्य की बागडोर सौंपना चाहते हैं, एक सुसंस्कारित चरित्रवान व्यक्ति बनाना है। साहित्यकार को ध्यान में रखना है कि वह कलम का गुलाम नहीं, राष्ट्र का पुरोधा और सर्जक है। वह एक मज़बूत धरातल पर खड़ा होकर उद्घोष करे 'माता भूमि पुत्रोहम् पृथिव्याः' और बालक में देश–प्रेम, मातृभूमि एवं भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा जगाये। हमारा लेखन वर्तमान वैज्ञानिक समाज के अनुरूप बालक के नवोत्कर्ष के लिए हो, जिससे भविष्य में बालक की दृष्टि केवल एक–देशीय न होकर विश्व बांधव की भावना के अनुरूप बने। हम बालक की आंतरिक क्षमताओं को सृजनोन्मुखी बनाने के पक्षधर हैं और चाहते हैं कि बालक की बहुआयामी ऊर्जा का पूर्ण उपयोग मानव–कल्याण में हो। अतः उसकी ऊर्जस्वित क्षमताओं, उसके साहस, उसके हृदय में निवास करने वाले प्रेम, करुणा, दया, सत्य, अहिंसा आदि की संवेदनाओं और उत्साह को साहित्य के माध्यम से ऐसी दिशा दे, जो हमारी संस्कृति के अनुकूल हो।

बाल साहित्यकार जब तक बच्चों के बीच प्रवेश न करेगा, उनके हाथ में हाथ डालकर नृत्य न करेगा, उसका हास बालक की हँसी न बनेगा तब तक अंतः अनुभूति से लिख पाना कठिन है। अतः साहित्यकार बालकों के बीच रहकर समरसता पैदा करें। कहानी लिखें, कविता, गीत, नाटक, एकांकी लिखें और बच्चों को सुनाकर उसका मूल्यांकन बच्चों से करायें। ऐसे साहित्य का निर्माण करें, जिससे बालकों में अपनी भारतीय संस्कृति के प्रति समर्पण का भाव पैदा कर सके।

बाल साहित्य जहाँ बच्चों की रुचि की संतुष्टि करता है, वहाँ उनमें जिज्ञासा शांत करने की क्षमता भी होनी चाहिए। सिंहासन बत्तीसी, बेताल पच्चीसी, ईसप की कहानियाँ आदि बाल साहित्य के नाम पर हमारे यहाँ बहुत पहले से उपलब्ध हैं। इन कहानियों में जीवन का शाश्वत सत्य बोलता है। इनमें स्थायी मानव मूल्यों की स्थापना और भारतीय संस्कृति के पुट हैं। परिश्रम करना, ज्ञानार्जन करना, बड़ों का आदर करना, गुरु की सेवा करना, सच बोलना आदि के संबंध में बहुत कुछ कहा एवं बताया गया है।

हिंदी में पर्याप्त बाल साहित्य का निर्माण हो रहा है। आजकल नगर में उच्चकोटि की पत्रिकाएँ भी निकल रही हैं। बाल गीतों के क्षेत्र में कुछ उत्कृष्ट रचनाएँ आयी हैं। बाल कहानी

और नाटक भी लिखे जा रहे हैं। ये शुभ लक्षण हैं, किंतु बाल साहित्य के विकास की यह दिशा समुचित नहीं लगती है। अंग्रेज़ी में शेक्सपीयर के नाटकों के बाल संस्करण प्रकाशित हुए हैं। क्या हिंदी में 'रामचरितमानस' का बाल संस्करण है? या सूर, रहीम, कबीर ऐसे कवियों के जो हमारे जन जीवन में समाये हुए हैं, कोई बाल संस्करण निकला है? इसकी जानकारी नहीं है।

हिंदी का बाल साहित्य भारतीय संस्कृति से ओतप्रोत है। बाल साहित्य शुरू से ही अपनी नटखट तुतलाहट और सोंधी महक से हमें लुभाता और रिझाता रहा है। अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', पं. श्रीधर पाठक, दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचंद, अमृतलाल नागर जैसे मनीषियों ने उसे दिशा देने का काम किया, तो पं. सोहनलाल द्विवेदी, द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी, निरंकार देव सेवक, भवानी भीरव त्रिपाठी 'दिव्य' आदि ने अपना जीवन ही बाल साहित्य को समृद्ध करने में खपा दिया है। इसके अतिरिक्त सुभद्रा कुमारी चौहान, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, श्रीनाथ सिंह, आरसी प्रसाद सिंह, कामिनी कौशल, डॉ. विद्या भूषण विश्नु, स्वर्ण सहोदर, मदन गोपाल सिंहल, विष्णुकांत पाण्डेय, शकुन्तला सिरोठिया, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, चंद्रपाल यादव मयंक, डॉ. श्री प्रसाद, रामवचन सिंह आनंद, कृष्णचंद्र तिवारी 'राष्ट्र बंधु' जैसे अनेक नामों को इतिहास बाल साहित्य की नींव रखने वालों के रूप में स्मरण रखेगा।

हिंदी के बाल साहित्य की स्थिति अभावग्रस्त है, पर निराशाजनक नहीं है। विश्वास है कि जिस गति से बाल साहित्य का निर्माण हो रहा है, यदि यह गति बनी रही, तो निश्चय ही हमारा बाल साहित्य विश्व के बाल साहित्य के समक्ष रखा जा सकता है। प्रश्न मात्र दिशा का है, नये वैज्ञानिक संदर्भ में सोचने का है।

तेलंगाना, भारत
vidyadhar2000@gmail.com

कोई भाषा कभी नहीं मरती। मरती है तो व्यक्ति की उस भाषा को सीखने और काम में लाने की क्षमता, स्वयं भाषा नहीं।

– चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

जैसे–जैसे जिस जाति के स्वभाव, आवश्यकताएँ और व्यवहार होते हैं, वैसी–वैसी उसकी भाषा और वाक्य–भंगिमा, मुहावरे होते हैं और ज्यों–ज्यों मनुष्य मात्र का परस्पर व्यापार–व्यवहार मेल–जोल बढ़ता जाएगा, त्यों–त्यों भाषा की एकता होती जाएगी।

– भगवानदास

हिंदी-शिक्षण एवं शोध

7. स्पेनी भाषियों को हिंदी व्याकरणिक लिंग अध्ययन में सरलताएँ व विषमताएँ – प्रो. विजयकुमारन सी.पी.वी.

8. आई.सी.टी. आधारित हिंदी भाषाई अधिगम और शिक्षण का परिप्रेक्ष्य – डॉ. सी. जय शंकर बाबु

9. अमेरिका में हिंदी-शिक्षण : सफलता और चुनौतियाँ – श्री अशोक ओझा

10. हिंदी-अध्यापन का विदेशी संदर्भ और दक्षिण कोरिया – श्री दिविक रमेश

11. हिंदी-शिक्षण में संप्रेषण कौशल : मॉरीशसीय संदर्भ में – डॉ. अलका धनपत

12. सरस्वती हिंदी पाठशाला में हिंदी-शिक्षण – श्री धनराज शम्भु

7

स्पेनी भाषियों को हिंदी व्याकरणिक लिंग अध्ययन में सरलताएँ व विषमताएँ

— प्रो. विजयकुमारन सी.पी.वी.

जन्म : 20.12.1955

शिक्षा :
- पी.एच.डी. (हिंदी)
- एम. फ़िल. (हिंदी)
- एम.ए.(हिंदी)
- बी.ए.
- डिप्लोमा (संस्कृत एवं स्पेनिश)

व्यवसाय :
- विज़िटिंग प्रोफ़ेसर (आई.सी.सी.आर.)
- संप्रति, अतिथि आचार्य, केंद्रीय विश्वविद्यालय, केरल, कासरगो रिसर्च गाइड, कण्णूर विश्वविद्यालय

प्रकाशन :
- 29 पुस्तकें प्रकाशित हैं ।
- 'हिंदी उपन्यासों में भारत विभाजन परवर्ती वास्तविकता' (2013)
- 'हिंदी फ़ासिल' (2010) आदि ।
- अनेक पत्र–पत्रिकाओं में आपके शोध आलेख प्रकाशित हैं ।

पुरस्कार :
- उत्तम अध्यापक पुरस्कार
- राष्ट्रीय पुरस्कार
- उत्तम शोध ग्रंथ पुरस्कार
- राष्ट्रभाषा रत्न एवं सारस्वत सम्मान ।

भाषाविज्ञान के अनुसार व्याकरणिक लिंग संज्ञा वर्गों की विभाजन प्रणाली में सर्वत्र व्याप्त है, जिसमें भाषा के अन्य पहलुओं जैसे विशेषण, उपपद, सर्वनाम और क्रिया के साथ समझौता–प्रणाली बनती है । विश्व की भाषाओं में पच्चीस प्रतिशत भाषाएँ उक्त प्रणाली का अनुसरण करती हैं, जिनमें व्याकरणिक विभाग में लिंग जैसे मूल्य का संज्ञापदों से जुड़ा रहना होता है । 'लिंग संज्ञावर्ग से जुड़े शब्दों के पारस्पर्य में झलकता है' (चार्ल्स 1958, 237–27.2) ग्रविल जी. कोरबेट ब्लूमफ़ील्ड को उद्धृत करके बताते हैं कि ब्लूमफ़ील्ड ने बताया है कि जर्मन, लैतिन और फ़्रांसीसी भाषाओं में संज्ञापदों के लिंग निर्धारण में व्यावहारिक कोई सिद्धांत नहीं अपनाया गया है, मगर मातृभाषियों का, संज्ञापदों के लिंग संबंधी बोध सहज होता है और गलतियों का होना कम होता है । इसके अलावा अन्य भाषा से स्वीकृत शब्दों के लिंग निर्णय में कुछ विधियाँ अपनाई जाती हैं, भले ही मूल भाषा में उनके लिंग पहले ही निर्धारित हों । हिंदी वैयाकरण कामता प्रसाद गुरु ने बताया है कि संज्ञा में लिंग, वचन और कारक के कारण रूपांतर होता है । बहुधा प्राणिवाचक शब्दों का लिंग अर्थ के अनुसार और अप्राणिवाचक शब्दों का लिंग रूप के अनुसार निश्चित करते हैं । अतः उन्होंने हिंदी लिंग निर्णय के दो प्रकार माने – 1. शब्द के अर्थ से और 2. शब्द के रूप से ।

व्याकरणिक लिंग विवेचन

सामान्यतया लिंग विभाजन में पुलिंग और स्त्रीलिंग; पुलिंग, स्त्रीलिंग और उभयलिंग; या प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक जैसे विभाजन निर्धारित होते हैं । कुछेक भाषाओं में शब्दों के अर्थ, जैसे जैविक, मानवीय, या पशु संबंधी जानकारी से हासिल लिंग बोध होता है । मगर स्पेनी, हिंदी जैसी भारोपीय भाषाओं में यह तत्त्व भी पूर्णतः लागू नहीं होता अर्थात् पुरुषत्व या कठिनत्व का सूचक शब्द कभी–कभी स्त्रीलिंगवाची एवं नरम प्रकृति या सरलत्ववाची शब्दों के लिंगों में पुलिंगत्व का निर्धारण भी होता है । इसलिए भाषा के अर्थपरक संबंधों से लिंग को जोड़ना भी मुश्किल होता है । संज्ञा के रूपपरक या स्वनिमिक तत्त्वों पर भी लिंग–निर्मिति बनती है । व्याकरणिक लिंग संज्ञापदों से जुड़े निर्धारक, सर्वनामी विशेषणों के रूपायन में भी समान प्रभाव डालता है, तब जाकर उन पदों का तिर्यक रूप बनता है । अतः ये मूल से विकार उत्पन्न होनेवाले लिंग सूचक पद, शब्द या रूप होते हैं । वचन और कारक में भी लिंग सूचकता बनी रहती है । भाषिक अवयव इस प्रकार लिंगपरक

समझौते से प्रभावित हैं। लिंग सूचकता का चिह्नांकन भाषा की प्रयुक्ति और संदर्भ पर भी निर्भर है। इस प्रकार स्पेनी, फ्रांसीसी, पुर्तगाली, रूसी, जर्मन जैसी यूरोपीय भाषाओं में व्याकरणिक लिंग प्रयुक्त हैं, मगर फ़ारसी में नहीं। उसी प्रकार आफ्रो–एशियाई भाषाएँ (सेमेटिक और बर्बर भाषाएँ), कुछेक द्रविड़ी भाषाएँ तथा उत्तर पूर्वी कोकैशियन तथा आद्य ऑस्ट्रेलियाई भाषाओं जैसे दिरबल, कलव लगव–य, आदि में भी यह प्रयुक्त नहीं है। ''हिंदी में लिंग के विचार से सब जड़ पदार्थों को सचेतन मानते हैं, इसलिए इसमें नपुंसक लिंग नहीं है। यह लिंग न होने के कारण हिंदी लिंग व्यवस्था संस्कृत, मराठी, गुजराती, मलयालम आदि भाषाओं की अपेक्षा कुछ सहज है, परंतु जड़ पदार्थों में पुरुषत्व या स्त्रीत्व की कल्पना के लिए कुछ शब्दों के रूपों को तथा दूसरी भाषाओं के शब्दों के मूल लिंगों को छोड़कर और कोई आधार नहीं है। शेष शब्दों का लिंग केवल व्यवहार के अनुसार माना जाता है और इसके लिए व्याकरण से पूर्ण सहायता नहीं मिल सकती।''

व्यतिरेकी विश्लेषण और व्याकरणिक नियम

विश्व के कई विश्वविद्यालयों में दूसरे भाषाई व्याकरण अध्ययन पर शोध–कार्य संपन्न होता जा रहा है। कैंब्रिज विश्वविद्यालय (DeKeyser Nov.1, 2007) के ऐसे एक शोध (रॉबर्ट एम. डेकेसर) के परिणाम से यह घोषित हुआ है कि अंतर्निहित आगमनात्मक अध्ययन में रंगीन चित्रों के साथ वाक्य जोड़कर सीखने का तरीका उत्तम है। भाषा एवं भाषा–शिक्षण नामक ग्रंथ में अइशा किदवई द्वारा चोम्स्की द्वारा परिकल्पित जन्मजात क्षमता : भाषा सीखने–सिखाने के लिए निहितार्थ' वाले अध्याय (141–152) में मार्के की बात कही गई है कि प्रथम या द्वितीय भाषा का व्याकरण के माध्यम से सिखाया जाना वास्तव में भाषा–शिक्षण है ही नहीं, क्योंकि असल में इसके तहत पूर्व निर्धारित नियमों की एक व्यवस्था सिखाई जाती है, जिसे कुछ भाषाविदों/व्याकरणविदों द्वारा भाषा की व्याख्या करने के लिए सुझाया गया है। व्यतिरेकी विश्लेषण वह प्रणाली है, जहाँ व्याघात (interference) की प्रक्रिया के कारण भाषा सीखने की कठिनाइयाँ समझाई जाती हैं। अध्येताओं के अनुसार 'व्यतिरेकी विश्लेषण एक और भाषा के व्याकरणिक नियमों को अपने सामने रखता है, जो शिक्षार्थी के लिए आदत रूप में ढल गए होते हैं – इस भाषा को वह स्रोत (source) भाषा कहता है। दूसरी ओर उस भाषा के व्याकरणिक नियमों का भी पता रखता है, जो सीखनी होती है – इसे वह लक्ष्य (target) भाषा कहता है। स्रोत और लक्ष्य भाषा की तुलना के आधार पर वह उनके बीच पाई जाने वाली समानता और असमानता के क्षेत्रों का निर्धारण करता है। इसी तुलना के आधार पर उनके बीच पाई जानेवाली असमानता ही व्याघात का कारण है।' अतः डेकेसर द्वारा बताए निगमनात्मक पद्धति या अइशा किदवई द्वारा उद्धृत चोम्स्कियी व्याकरण के बूते पर प्रस्तुत अध्ययन का रास्ता सुगम नहीं बनता। त्रुटि विश्लेषण की पद्धति में बताई तुलनात्मक प्रणाली ही वहाँ स्वीकार्य होगी। इन्हें मद्देनज़र रखते हुए यहाँ प्रस्तुत अध्ययन तुलनात्मक तरीके से किया जा रहा है, जिसमें मातृभाषाई स्पेनी व्याकरण के ज्ञाताओं को स्रोत भाषाई व्यवहार के निमित्त उनके ज्ञान में निहित निज भाषा व्याकरणिक इकाइयों से समानता रखनेवाली हिंदी व्याकरणिक कोटियों और प्रयुक्तियों से अवगत कराया जा सकता है। व्यावहारिक लाभ इसलिए भी है कि स्पेनी–हिंदी शिक्षार्थियों में नब्बे प्रतिशत वयस्क ही हुआ करते थे, जिनमें भाषाध्यापक से लेकर विविध हुनर प्राप्त स्वीकर्ता शामिल हों। उम्र की पाबंदी, भाषाध्ययन के लिए कोई बाधा नहीं बनती, यही मसाचुसेट्स जैसे अमेरिकी विश्वविद्यालयों के शोध का परिणाम है। ज़ाहिर है कि भारोपीय भाषाओं के दो उपविभागों की भाषाओं में, उर्फ़ स्पेनी और हिंदी में, लिंग संबंधी समानताएँ व विषमताएँ अवश्य पाई जाती हैं। अतः उक्त अध्ययन को सरलतम बनाने की रीति अपनाई जाती है, अतः उक्त अधिगम में सरलतम व्याकरण लिखने और पढ़ाने का प्रयास हुआ है। प्रस्तुत लेखक का मैनुअल (विजयकुमारन, सी.पी.वी. 2010) ऐसा ही एक कदम है। इसमें अतिरिक्त सरलता लाने के लिए स्वयं शिक्षक कंप्यूटरीकृत डिस्क को भी प्रस्तुत ग्रंथ के साथ सह–प्रकाशित किया गया है। हिंदी के पठन–पाठन की सरलता को सप्रमाण साबित करने के लिए एक सक्षम स्पेनी शिक्षार्थी (हेसूस अरिवास लासरो), जो प्रस्तुत अध्यापक के साथ हिंदी अध्ययन की तीन पाठ्यचर्याएँ (प्राथमिक से उच्चस्तरीय) हासिल कर अव्वल हो चुके थे, को सहलेखक का दायित्व भी दिया गया है। प्रस्तुत मैनुअल 'हिंदी फ़ासिल' (सरल

हिंदी) में पृष्ठ संख्या 69 से 91 तक हिंदी लिंग संबंधी बहुविध प्रयुक्तियाँ व्याख्यात्मक तरीके से दी गई हैं, जो मूल अध्याय संज्ञा (पृ. 64–97) के अंतर्गत शामिल हैं। व्याख्यात्मक प्रस्तुति का मतलब यह है कि पहले द्विभाषिक रीति में स्पेनी भाषा में हिंदी संज्ञाओं के विविध विकारी एवं अविकारी रूपों को स्पष्ट करना, फिर देवनागरी लिपि में सोदाहरण प्रस्तुति, उन उदाहरणों का स्पेनी लिप्यंतरण, अर्थ एवं टिप्पणी स्पेनी में प्रस्तुत करना, प्रत्येक शीर्षक (द्विभाषी), उपशीर्षक (द्विभाषी) आदि के ज़रिए आवश्यक मुद्दों को क्रमागत प्रस्तुत करना, प्रत्येक मुद्दे को लेकर अभ्यास और पाठांत में अभ्यास को स्वयं सुलझाने की कुंजी आदि हिंदी व्याकरणिक लिंग विषयक इकाई को सरलतम बनाने का प्रयास है। आगे यह विचार किया जाएगा कि कौन–कौन से ऐसे संदर्भ हैं, जहाँ स्पेनी भाषियों को समानता के मुताबिक उक्त विषय को आसान और विषमता के मुद्दों को लेकर कठिनाई महसूस होती होगी।

निम्न आरेख से समानता के संदर्भ को यों दर्शाया जा सकता है–

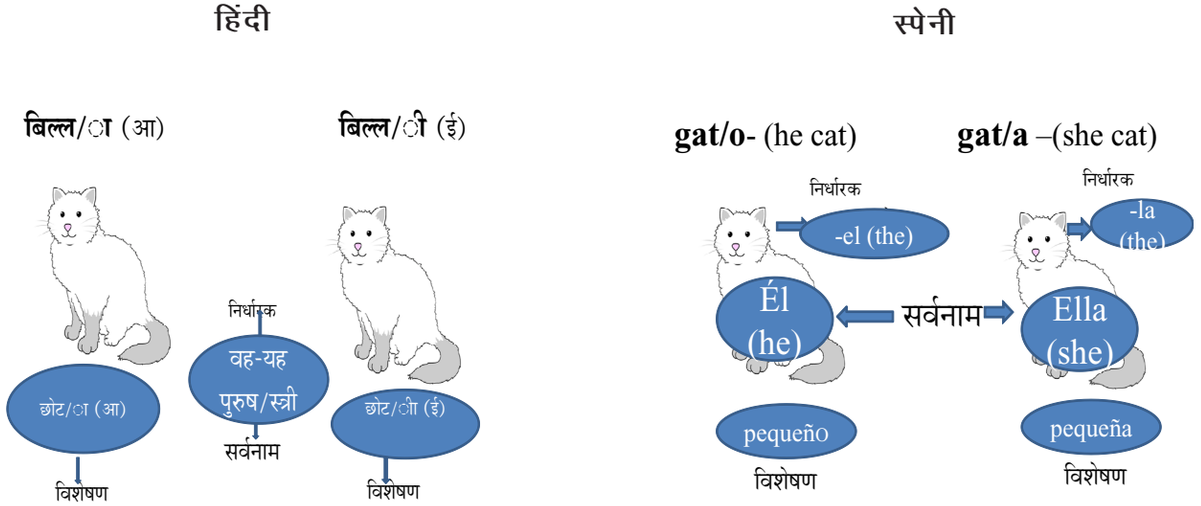

उपर्युक्त उदाहरण में एक ही जानवर के हिंदी और स्पेनी लिंग चिह्नों की पहचान होती है। समानता के दो मुद्दे हैं और निर्धारक व उपपद के प्रयोग में स्पेनी भाषाई संरचना का अंतर भी दिखाया जा सकता है। निर्धारक व उपपद की सार्वनामिक संरचना को प्रस्तुत लेखक द्वारा अन्यत्र प्रकाशित किए जाने से यहाँ स्थानाभाव से दुहराना नहीं चाहता।

पुलिंग और स्त्रीलिंग विवेचन – स्पेनी और हिंदी भाषा में

संज्ञापदों में समानार्थी विकार स्पेनी और हिंदी दोनों भाषाओं में है कि हिंदी में 'आ' कारांत संज्ञाएँ प्रायः पुलिंग और 'ई' कारांत संज्ञाएँ स्त्रीलिंग हैं। वैसे ही स्पेनी में 'ओ' कारांत संज्ञाएँ प्रायः पुलिंग और 'ई' कारांत संज्ञाएँ प्रायः स्त्रीलिंग ही हुआ करती हैं। हिंदी में 'ई' के अतिरिक्त 'इया', 'वट' और 'हट' से अंत होने वाली स्त्रीलिंगवाची संज्ञाएँ भी स्त्रीवाची हैं –

रोटी, टोपी, चाँदी, दाढ़ी, चिट्ठी, नदी, खड़िया, डिबिया, पुड़िया, सजावट, घबराहट, बनावट अपवाद रूप में जो संज्ञाएँ हैं, वे दोनों भाषाओं में पाई जाती हैं, इसलिए स्पेनी भाषी हिंदी अध्येता को उसपर जागरूकता बरतनी पड़ती है। हिंदी में अपवाद रूप में पाई जाने वाली 'ई' कारांत पुलिंग संज्ञाएँ हैं – पानी, दही, घी, जी, मोती आदि।'

स्पेनी में ऐसे समान अपवाद हैं, जो सामान्य नियम के अनुसार स्त्रीलिंग हैं, मगर उपपद 'el' से युक्त – elpanda (the panda), el dia (the day), la mamo (the hand), el cura (the priest) आदि पुलिंग संज्ञाएँ हैं। स्त्रीलिंगवाची उपपद 'la'

से निर्धारित सामान्य स्त्रीलिंगवाची संज्ञाएँ – ला माद्रे (माता), ला हेरमाना (बहन), ला मामा (माँ), ला अवुयोला (नानी या पोती), ला गाता (बिल्ली), ला कोमिदा (खाना), ला कासा (घर), ला मेसा (मेज़) आदि।

ध्यान देने योग्य बात है कि स्पेनी में संज्ञापद की प्रयुक्ति ही मानो उसके लिंगबोध कराने योग्य है, जैसे हर पुलिंगवादी एकवचन शब्द के साथ उपपद 'येल' और स्त्रीलिंगवाची एकवचन शब्द के साथ उपपद 'ला' जुड़े होते हैं। इनके समान ही बहुवचन में भी समान विकार दिखाई देता है – 'लोस' पुलिंगवाची और 'लास' स्त्रीलिंगवाची उपपद जुड़ते अवश्य हैं। इसलिए पाठक या भाषक को शब्दों का लिंगबोधक अभिज्ञान प्रथम दृष्ट्या हो जाता है। इसके स्थान पर हिंदी में उपपद के अभाव में कभी–कभी बलाघात के रूप में निर्धारकों का प्रयोग हो जाता है।

रुमानी भाषाओं के समान हिंदी में भी केवल द्विलिंगों का होना तुलना की सामान्यता एवं सरलता का एक और निदान है। कुछेक बाल्टिक भाषाओं और केल्टिक तथा आफ्रो–आसियाई भाषाओं में भी इस प्रकार की समानताएँ पाई जाती हैं। मगर भारोपीय भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा तथा द्रविड़ भाषाई मलयालम दोनों तीसरा लिंग – नपुंसक लिंग (उभयलिंग) को मानती हैं।

लिंग–समझौता

लिंग विधान में संज्ञाओं को ट्रिगर का काम निभाना पड़ता है। लिंग हमेशा वह व्याकरणिक प्रक्रिया है, जो समझौता या सहमति चाहता है। संबंधित शब्दों से मेल खाने के लिए इससे जुड़े कुछ शब्दों और रूपों को आप ही बदलना पड़ता है। वे निर्धारक, सर्वनाम, संख्या, विशेषण, संख्यावाचक विशेषण, क्रिया, क्रियाविशेषण, संबंधवाचक, दंत, उपसर्ग या प्रत्यय जैसे कुछ भी हों या इनमें से कुछेक का सम्मिलित रूप भी हो सकते हैं। यदि संज्ञा को स्पष्ट रूप से चिह्नित किया जाए, तो ट्रिगर और लक्ष्य दोनों समान बारीकियाँ दर्शाते हैं। स्पेनी भाषा में उपपद के प्रयोग से ही संज्ञा का लिंग विदित होता है, तो हिंदी में उपपद के अभाव में (हिंदी संरचना में यह उपपद निर्धारक सर्वनाम के रूप में भी लिया जा सकता है) परसर्ग या प्रत्ययों के रूप से लिंग बोध खड़ा करता है। उदाहरणार्थ स्पेनी में –

Gender	Phrase	हिंदी	हिंदी लिंग प्रत्यय
Masculine	El abuelo (येल अवुयेलो)	नाना/दादा	/आ (पुलिंग)
Feminine	La abuela (ला अवुयेला)	नानी/दादी	/ई (स्त्रीलिंग)

उसी प्रकार स्पेनी वाक्य में लिंग बोध कराने में प्रत्येक शब्द में लिंगसूचक चिह्न जुड़ जाता है, भले ही हिंदी में उसपर थोड़ा विचलन द्रष्टव्य हो

lesunbuen actor— '*He* is a good actor'

Élla esunabuenaactriz — '*She* is a good actress'

पहले वाक्य में संज्ञा शब्द actor (–or) दूसरे वाक्य में actriz (–riz) बनता है, जो हिंदी में यथाक्रम 'अभिनेता/नर्तक/नट' और 'अभिनेत्री/नर्तकी/नटी' बनता है। पहले आरेख में ही सूचित किया गया है कि पुलिंग सार्वनामिक चिह्न और स्त्रीलिंग सार्वनामिक चिह्न दोनों के एक होते हुए भी वाक्य के उद्देश्य और विधेय का पारस्पर्य बना रहता है। इसलिए स्त्रीवाची या पुरुषवाची सर्वनाम का बोध उक्त सहयोगी सांदर्भिक अर्थ से बन जाता है। हिंदी के समान रूपों में प्रस्तुत वाक्य यों हैं

वह – यह (पुरुष) है एक अच्छा अभिनेता।/वह – यह (स्त्री) है एक अच्छी अभिनेत्री।

एक स्पेनी बच्चे को इन सारे व्याकरणिक अवयवों की सहभागिता को हिंदी के लिंग चिह्नों के सहारे बताना मुश्किल होता है। क्योंकि द्वितीय भाषाई अध्ययन में कई सीमाएँ होती हैं कि उक्त अध्येता अपनी मातृभाषा के व्याकरण को बुद्धि स्तर पर हासिल करके अर्जित अभिज्ञान से ही हिंदी जैसी अन्य भाषा के व्याकरण को समझने की कोशिश करता है। मातृभाषाई संघात पर ऐसा ही शोध–निर्णय संपन्न है। अतः अध्येता को अपनी भाषाई समता एवं समानता का संदर्भ क्रियार्थक संज्ञाओं में अर्जित हिंदी में द्रष्टव्य है, अतः इसे समझाना आसान होता है –

Verb	Gender	Phrase	हिंदी (पुलिंग)
Correr	Masculine	el correr	''दौड़ना''
Bailar	Masculine	el bailar	''नाचना''

जैसे भी हो, भाववाचक क्रिया संज्ञाओं में लिंग चिह्न हमेशा स्त्रीवाची है –

Verb	Gender	Phrase	हिंदी (स्त्रीलिंग)
Derivar	Feminine	la derivación	''व्युत्पत्ति'
Discutir	Feminine	la discsión	''चर्चा''

हिंदी में अमूर्त संज्ञाएँ हमेशा स्त्रीलिंगवाची हैं। जैसे – आत्मा, दया, चिंता, महिमा, शोभा आदि।

लेकिन कुछ ऐसे भी हैं, जो बिना कारण स्त्रीवाची या पुरुषवाची होती हैं

मज़ा, मत, भय, दुख, भूख, जय।

संज्ञा की लिंगपरक संरचना

कई भाषाओं में संज्ञाओं पर लिंग का आरोप अर्थपरक आधार पर नहीं किया जा रहा है, अर्थात् संज्ञा के वास्तविक सेक्स या जैविक गुण उसपर लागू नहीं होता। स्पेनी और हिंदी में यथाक्रम ओ–कारांत व अ–कारांत संज्ञाएँ पुलिंग और स्पेनी में अ–कारांत तथा हिंदी में इ–कारांत प्रायः स्त्रीलिंग हुआ करती हैं। मगर संज्ञा शब्द की व्युत्पत्ति, साम्य से या परंपरा से भी लिंग आरोपित होता है। जैसे –

स्पेनी और हिंदी में el miembro ('सदस्य'), el presidente (''अध्यक्ष''), el jefe (''अधिपति/अधीश''), el comunista (''साम्यवादी'') आदि हमेशा पुलिंग ही हैं। अपवाद रूप में la persona ('व्यक्ति') स्पेनी में स्त्रीलिंग है सदा, मगर हिंदी में वह पुलिंग ही है, चाहे इससे स्त्री या पुरुष को संबोध्य बनाए।

कुछेक स्पेनी संज्ञाएँ लैतिन के मूल के लिंग को ही आत्मसात करती हैं। हिंदी में उसके स्थान पर अधिकांश मूल भाषा की संज्ञाएँ लक्ष्य भाषा की समानार्थी संज्ञा का लिंग अपना लेती हैं।

फ़िल्म (सिनेमा)/स्त्रीलिंग, वेहिकिल (गाड़ी)/स्त्रीलिंग। स्पेनी और हिंदी में यथाक्रम *estación del radio* और आकाशवाणी स्त्रीलिंग हैं।

दिलचस्प बात यह है कि स्पेनी ने संज्ञापदबंध में पूर्वपद को महत्त्व दिया, इसलिए समस्त पद को स्त्रीवाची माना (स्पेनी में लैतिन से उद्भूत होने के कारण परसर्ग *–ión*, को लैतीनी भाषा के समान (–O) स्त्रीलिंग प्रत्यय माना जाता है) मगर हिंदी में उत्तरपद (वाणी) को महत्त्व दिया, इसलिए वह समस्त पद स्त्रीलिंग हुआ।

स्पेनी में el problema पुलिंग है, क्योंकि इस शब्द का धातु रूप युनानी भाषा से निष्पन्न नपुंसक लिंग शब्द से है, मगर उसकी लक्ष्य भाषा हिंदी –(समस्या) हमेशा स्त्रीलिंग है।

युनानी भाषा से उद्भूत बहुत से स्पेनी शब्द हैं, जो पुलिंग की जगह स्त्रीलिंग (मूल युनानी का अनुसरण) में हैं। जैसे –

la foto – (छायाचित्र–पु.), la llave – (चाबी–स्त्री), la miel – (शहद–पु.), la mano – (हाथ–पु.), la calle – (सड़क–स्त्री), la sal – (नमक–पु.), la moto – (दुपहिया वाहन –पु.), la carne – (मांस–पु.), la pierna – (पैर–पु.), la radio – (रेडियो–पु.), la coliflor – (फूलगोबी –स्त्री), la sangre – (लहू–स्त्री.), la muerte – (मृत–पु.), la noche – (रात–स्त्री.), la madre – (माता–स्त्री.), la base – (नींव – स्त्री.), la classe – (कक्षा – स्त्री.), la gente – (जनता – स्त्री.), la tarde – (श्याम–स्त्री.), la clave – (कुंजी–स्त्री), la serpiente – (सांप पु.)

हिंदी में प्रयुक्त संस्कृत तत्सम संज्ञाएँ स्पेनी भाषा के जैसे लिंग बोध नहीं करतीं। अतः यह असमानता स्पेनी–हिंदी छात्रों के लिए हिंदी के उन तत्समों के लिंग बोध का परंपरागत रुख तोड़ने लायक हैं। कामता प्रसाद गुरु की गणना में हिंदी के तीन चौथाई शब्द संस्कृत के हैं और तत्सम और तद्भव रूपों में पाए जाते हैं। संस्कृत में पुलिंग या नपुंसक लिंग हिंदी में बहुधा पुलिंग और स्त्रीलिंग शब्द बहुधा स्त्रीलिंग ही होते हैं। उनके अनुसार निम्न आरेख में 'आत्मा' शब्द को हिंदी में उभयलिंगी तथा 'पवन' को संस्कृत में उभयलिंगी माना है –

शब्द	हिंदी – लिंग	संस्कृत – लिंग
आत्मा	उभयलिंग	पुलिंग
आयु	स्त्रीलिंग	नपुंसक लिंग
जय	स्त्रीलिंग	नपुंसक लिंग
तारा	पुलिंग	स्त्रीलिंग

अग्नि (आग)	स्त्रीलिंग	पुलिंग
देवता	पुलिंग	स्त्रीलिंग
पुस्तक	स्त्रीलिंग	नपुंसक लिंग
पवन	पुलिंग	उभय लिंग
वस्तु	स्त्रीलिंग	नपुंसक लिंग
राशि	स्त्रीलिंग	पुलिंग
शपथ	स्त्रीलिंग	पुलिंग

तद्भव शब्दों में भी ऐसा ही लिंग बोध द्रष्टव्य है –

(तत्सम) संस्कृत पुलिंग	(तद्भव) हिंदी – स्त्रीलिंग
भुक्ख	भूख
महत्व	महता
बाहु	बाँह
अक्खि (अक्षि)	आँख
बिंदु	बूंद
अग्नि	आग
प्रसव	प्रसूति
तंतु	ताँत
औषध	औषधि

संस्कृत तत्सम शब्द को हिंदी में उसी लिंग में भी गिना जा सकता है –

हिंदी – पुलिंग	संस्कृत–पुलिंग	हिंदी – पुलिंग	संस्कृत–पुलिंग
चित्र	चित्र	पालन	पालन
क्षेत्र	क्षेत्र	पोषण	पोषण
पात्र	पात्र	दमन	दमन
नेत्र	नेत्र	वचन	वचन
चरित्र	चरित्र	नयन	नयन
शस्त्र	शस्त्र	गमन	गमन
गोत्र	गोत्र	हरण	हरण
जलज	जलज	पिंडज	पिंडज
स्वेदज	स्वेदज	सरोज	सरोज

अतः प्रस्तुत प्रकरण से यह विदित होता है कि स्पेनी और हिंदी भाषाओं में परंपरा के अनुसार, व्युत्पत्ति के अनुसार, लिंग बोध कराने की प्रक्रिया है। इसलिए हिंदी में प्रयुक्त तत्सम, तद्भव और विदेशी शब्दों को जानने वाले और समझने वाले विद्यार्थी इस काबिल होंगे कि कौन–से मूल शब्द किस लिंग में प्रयुक्त थे कि लक्ष्य भाषा हिंदी में उन्हीं को अपनाया जाए। स्पेनी में भी लैतिन, युनानी आदि भाषा मूल के शब्द काफ़ी हैं, जिन्हें उक्त भाषाओं की संरचनागत लिंग विवेचना में लेना चाहिए। समानता या सरलता का यह संदर्भ स्पेनी माध्यम से हिंदी पढ़ने वाले को आसान लगता है। जैसे परंपरा के अनुसार लिंग बोध कराने वाली समूहवाचक संज्ञाएँ हिंदी में भी हैं, जिनमें समूह में प्रत्येक का लिंग बोध नगण्य है, भले ही उस दल में स्त्रीलिंग या पुलिंग का बोध कराने वाली संज्ञाएँ शामिल हों –

समूह, झुंड, परिवार, कुटुंब, दल, लोग – (पुलिंग)
भीड़, फ़ौज, सभा, प्रजा – (स्त्रीलिंग)

अंतर्भाषिकी लिंग–व्यवस्था

इसमें केवल प्राकृतिक लिंगों की पहचान ही बनती है, जैसे व्यक्तिवाचक संज्ञाओं की हो। स्पेनी और हिंदी या किन्हीं भी दो भाषाओं की तुलना में यह समानता देखने को मिलती है। अतः स्पेनी में –

'माद्रे' हिंदी में 'माता' है, 'पाद्रे' 'पिता' है।
'हेरमाना' 'बहन' है, तो 'हेरमानो' 'भाई'
'मुहेर' 'स्त्री' है, 'होंमब्रे' 'पुरुष'।

कुछेक जानवरों के नामों के साथ ही लिंग बोध दोनों भाषाओं में है। मगर कुछ ऐसे भी हैं, जिनको हिंदी में जैसे नर कौआ/मादा कौआ के समान स्पेनी में *un guepardohembra* (मादा भेड़िया)/*unacebra macho* (नर जीब्रा) आदि प्रयुक्त हैं। मगर स्पेनी में ऐसी लिंग सूचक जानकारी प्रदान कराने हेतु अतिरिक्त विशेषण शब्द को संज्ञा शब्द के पहले जोड़ना पड़ता है, इतना ही नहीं संख्यावाचक विशेषण एकवचन में भी इन समस्त पदों में जुड़ जाता है। ज़ाहिर है कि इन विशेषणों के भी लिंग भेद मौजूद है *un* (एक) एकवचन/ *una* (एक) एकवचन तथा यथाक्रम इनके बहुवचन रूपों में भी ऐसा ही लिंगसूचक

संख्यावाचक विशेषण – *unos* (एकाध– पुलिंग) बहुवचन/ *unas* (एकाध – स्त्रीलिंग) बहुवचन ही का प्रयोग होता है।

स्पेनी–हिंदी भाषाओं में समान शब्द

कुछ स्पेनी शब्दों को उसी अर्थ के हिंदी का लिंग प्राप्त है (इसे उलटा भी लिया जा सकता है, जबकि इन शब्दों के आविर्भाव की ठीक गणना की जाए)

नारंगा– (स्पेनी और हिंदी में) –स्त्रीलिंग,
कमीस – (स्पेनी और हिंदी में) –स्त्रीलिंग,
नाक – नारिस (हिंदी और स्पेनी में) – स्त्रीलिंग
मेज़ – मेसा (हिंदी और स्पेनी में) – स्त्रीलिंग
पतलून –पंतलोन (हिंदी और स्पेनी में) – स्त्रीलिंग

ऐसे अवसरों पर भी स्पेनी विद्यार्थी सरलता से काम लेते हैं, वे हिंदी के समान रूपक स्पेनी शब्दों का चयन कर तालिका बना पाते हैं। अतः यहाँ लिंग सूचकता शब्द और अर्थ दोनों में मौजूद है।

सर्वनामों की कारकीय संरचना में लिंगबोध

दोनों भाषाओं में कारकीय संरचना की समानता का प्रकरण भी उपलब्ध है। अतः ये भाषाएँ सार्वनामिक प्रयुक्ति में भी लिंग सूचकता नहीं छोड़तीं। निम्न तालिका एक में हिंदी के पुरुषवाचक सर्वनाम के तीन रूपों के समानांतर स्पेनी सर्वनाम दिया जाता है, जिसमें मूल शब्द वही हैं और उनके तिर्यक रूप बदलते दिखाई देते हैं। समानता इस बात की है कि उत्तम पुरुष सर्वनाम एकवचन का लिंग प्रत्यय नहीं होता कि दोनों भाषाएँ समानार्थक शब्द का इस्तेमाल करती हैं। मगर भिन्नता इस बात में है कि स्पेनी में इसके बहुवचन रूप में आप ही पुलिंग रूप और स्त्रीलिंग रूप मौजूद है, वह यथाक्रम 'नोसोत्रेस' और 'नोसोत्रस' है।

मध्यम पुरुष में हिंदी और स्पेनी में समान शब्द 'तू' प्रयुक्त है। मगर हिंदी में वह एकवचन है, तो स्पेनी में दोनों वचनों में प्रयुक्त है। लिंग सूचकता का चिह्न मगर स्पेनी में इसके बहुवचन रूप में दिखाई देता है, वह यथाक्रम 'वोसोत्रेस' और 'वोसोत्रस' है। मध्यम पुरुष में हिंदी में आदर सूचक बहुवचन 'आप' है। स्पेनी में इसके स्थान पर अलग ही शब्द 'उस्तेद' (एकवचन) और 'उस्तेदस' (बहुवचन) का प्रयोग होता है।

अन्य पुरुष सर्वनाम में हिंदी के समान निकटस्थ और दूरस्थ दिखाने योग्य शब्द एकवचन में या बहुवचन में नहीं है। हिंदी में इनके लिए लिंग सूचकता प्रयुक्त भी नहीं है, जैसे 'यह/वह, ये/वे'। स्पेनी में मगर इस प्रयुक्ति में भी लिंग सूचकता मौजूद है। यथा – Él, ella पुलिंग व स्त्रीलिंगवाची है। इनके बहुवचन में भी ऐसी ही लिंग सूचकता मिलती है ellos, ellas जो यथाक्रम पुलिंग और स्त्रीलिंग है।

तालिका 2 में स्पेनी एवं हिंदी सर्वनामों की कारकीय संरचना में लिंग सूचकता को दर्शाया जाता है। उसे ध्यान से पढ़ने से ही बनता है कि कहाँ लिंग सूचकता हिंदी के समान ही स्पेनी में संबंधकारकीय संरचना में प्रयुक्त है। केवल संबंधकारक और उसके समानांतर स्पेनी प्रत्ययों से उक्त प्रकरण को समझाने का प्रयास है, जो अपने आप तालिका में ही स्पष्ट किया जाता है।

उपर्युक्त दोनों तालिकाएँ स्थानाभाव से अन्यत्र परिशिष्ट 1 में दी गई हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार व्याकरणिक लिंग एक दिलचस्प अध्याय है, जो पाठक एवं वाचक को स्पेनी और हिंदी जैसी दूरस्थ भाषाओं में समानता एवं विषमता के संदर्भ को उजागर करता है। कई समानताएँ शब्द के स्तर पर ही मौजूद हैं, तो कुछेक शब्दों की प्रयुक्ति और रूप स्तर पर हैं। जेंडर के आधार पर लिंग निरूपण साधारण है, मगर व्याकरणिक लिंग में प्रायः ऐसी संज्ञाएँ अतिरिक्त बातों का ही अनुसरण करती हैं। इसलिए हिंदी में 'घर' पुलिंग है, तो स्पेनी समानार्थी 'कासा' स्त्रीलिंग है। सेक्स को नज़रंदाज़ करनेवाले तत्त्वों का आधुनिक व्याकरणविदों ने आड़े हाथों ले लिया और मानव/मानवेतर, प्राणी/प्राणीतर जैसे अन्य लिंग सूचक तत्त्वों को महत्त्व दिया, जहाँ समस्त प्रकृति की वस्तुओं को दो ही – पुरुष और स्त्री – समूहों में बाँटने का श्रम हुआ। पारंपरित व्याकरण से चोम्सकियन प्रजनित व्याकरण तक प्राकृतिक सेक्स/जेंडर समस्या को सुलझाने में देर नहीं लगाते। अध्ययन–अध्यापन में व्यतिरेकी शैली का अनुसरण करते हुए

अध्यापक इसकी कुंजी बच्चों पर छोड़ते हैं और क्लास के बच्चे अपनी पहचान धीरे–धीरे बनाने लगते हैं। वसंत गणेश गोद्रे ने हिंदी की वाक्य–संरचना को लेकर उसके प्रत्येक अवयव को स्पेनी से तुलना करते हुए अपना शोध संपन्न किया है, जो स्पेन के हिंदी अध्यापक को तिनके का सहारा साबित हो चुका है। 'हिंदी फ़ासिल' प्रस्तुत लेखक और अपने स्पेनी–हिंदी शिक्षार्थी हैसूस अरिवास लासरो का कदम इसके आगे का है, जिसे मैनुअल रूप में प्रकाशित कराते हुए स्पेन के वल्लादोलिद विश्वविद्यालय ने व्याकरणिक गुत्थियों को दोनों भाषाओं के सहारे सरल बनाने का प्रयास किया है और विश्वविद्यालय की कुलपति महोदया श्रीमती पिलार गार्सस गार्सिया ने इसकी विशद् भूमिका बांधी है। हिंदी और स्पेनी में समान शब्द और समान लिंग बोध करानेवाले शब्द–रूप प्रकरण को आगे के शोध के लिए छोड़ा जाता है कि अध्येता इस ओर दिलचस्पी दिलाए। स्थानाभाव से लिंग–व्यवस्था से जुड़ी तमाम कारकीय संरचनाओं को उद्धृत नहीं किया है। जो परिशिष्ट 1. में समाहित है, वह केवल नमूने का प्रकरण है, जिस पर भी पैनी दृष्टि डाली जा सकती है। अस्तु, कई गूगल विशेषज्ञ ऑनलाइन में भी उपलब्ध हैं, जिन्होंने व्याकरणिक लिंग को भाषा विज्ञान से जोड़कर दुनिया की कई भाषाओं में उल्लेखनीय कदम उठाया है। अध्येता उन्हें भी अपने पथ प्रदर्शक मान सकते हैं, ताकि हिंदी और स्पेनी के तुलनात्मक शोध में अपना–अपना योगदान हो।

संदर्भ ग्रंथ :

1. Corbett, Greville G. *Gender.* Cambridge University Press, 2002.
2. DeKeyser, Robert M. *Studies in Second Language Acquisition.* Cambridge: Cambridge University Press, Nov 1, 2007.
3. विजयकुमारन, सी.पी.वी., हिंदी फ़ासिल – (सरल हिंदी), वल्लादोलदि, वल्लादोलिद विश्वविद्यालय प्रकाशन सचिवालय, 2010.
4. चार्ल्स, एफ. होकट, *A Course in Modern Linguistics*: न्यूयॉर्क : मैकमिलन, 1958.
5. Vasant Ganesh Gadre, *Estrucuras Gramaticales de Hindi y Español, Monografías 11,* Madrid, Agencia Española de Cooperación Internacional,*1996.*
6. McGregor, E.S, *Outline of Hindi Grammar,* New York, OUP, third revised and enlarged edition, 1995.
7. Real Academia Española, colección Negrija y Bello, *Gramatica De La Lengua Española,* Emilio Alarcos Llora, Madrid, tercerra reimpressión, 2000.
8. Juha Janhunen: *Grammatical gender from east to west*. In: *Trends in Linguistics, Studies and Monographs 124: Gender in Grammar and Cognition*, Barbara Unterbeck & Matti Rissanen (eds.), Mouton de Gruyter, 1999
9. Corbett, Greville "Gender and gender systems". In R. Asher (ed.) *The Encyclopedia of Language and Linguistics*, Oxford: Pergamon Press, 1994, pp. 1347–1353
10. onlinelibrary.wiley.com.
11. https://doi.org/10.1017/S027226310001425X
12. https://en.wikipedia.org/wiki/Grammatical_gender

कासरगोड, केरल
vijay@gmail.com
hindi.vijay@gmail.com

परिशिष्ट–1.

तालिका 1. हिंदी और स्पेनी पुरुषवाचक सर्वनामों की तुलना (व्याकरणिक लिंग स्पेनी पदबंध–प्रत्यय द्रष्टव्य)

<table>
<tr><td colspan="2">हिंदी</td><td colspan="2">स्पेनी</td></tr>
<tr><td colspan="4">उत्तम पुरुष– एकवचन</td></tr>
<tr><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td></tr>
<tr><td colspan="2">कर्तृ कारक – मैं
(भूतकाल – सकर्मक) हम ने</td><td colspan="2">Nominative case - Yo (यो)</td></tr>
<tr><td colspan="4">उत्तम पुरुष –बहुवचन</td></tr>
<tr><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td></tr>
<tr><td colspan="2">कर्तृ कारक – हम
(भूतकाल – सकर्मक) – हम ने
(लिंग सूचकता क्रिया से जानी जाती है)</td><td>Nominative case -
Nosotros
(नोसोत्रेस)</td><td>Nominative case -
Nosotros (नोसोत्रस)</td></tr>
<tr><td colspan="4">मध्यम पुरुष –एकवचन</td></tr>
<tr><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td></tr>
<tr><td colspan="2">कर्तृ कारक – तू
(भूतकाल – सकर्मक) – तू ने
(लिंग सूचकता क्रिया/कर्म से जानी जाती है)</td><td colspan="2">Nominative case -
Tü (तू)</td></tr>
<tr><td colspan="4">मध्यम पुरुष –बहुवचन</td></tr>
<tr><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td></tr>
<tr><td colspan="2">कर्तृ कारक – तुम/ आप
(भूतकाल – सकर्मक) – तुमने / आप ने
(लिंग सूचकता क्रिया/कर्म से जानी जाती है)</td><td>Nominative case -
Vosotros
(वोसोत्रेस)</td><td>Nominative case -
Vosotras
(वोसोत्रस)</td></tr>
<tr><td colspan="4">अन्य पुरुष –एकवचन</td></tr>
<tr><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td></tr>
<tr><td colspan="2">कर्तृ कारक – वह / यह
(भूतकाल – सकर्मक) – उसने/ इसने
(लिंग सूचकता क्रिया/कर्म से जानी जाती है)</td><td>Nominative case -
Él –(एल)
Usted (उस्तेद)</td><td>Nominative case -
Ella –(येल्या)
Usted (उस्तेद)</td></tr>
<tr><td colspan="4">अन्य पुरुष –वहुवचन</td></tr>
<tr><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td><td>पुल्लिग</td><td>स्त्रीलिंग</td></tr>
<tr><td colspan="2">कर्तृ कारक – वे / ये
(भूतकाल – सकर्मक) – उन्होंने/इन्होंने
(लिंग सूचकता क्रिया/कर्म से जानी जाती है)</td><td>Nominative case -
Ellos –(येल्योस)
Ustedes (उस्तेदस)</td><td>Nominative case -
Ellas –(येल्यास)
Ustedes (उस्तेदस)</td></tr>
</table>

तालिका 2. **<u>हिंदी–स्पेनी सर्वनामों (मध्यम पुरुष एवं अन्यपुरुषों) की कारकीय संरचना</u>** *(व्याकरणिक लिंगसूचकता हिंदी एवं स्पेनी प्रत्ययों में द्रष्टव्य)*

<u>हिंदी कारक – परसर्ग</u>	<u>एकवचन लिंगसूचकता</u>	<u>बहुवचन लिंगसूचकता</u> <u>(पुल्लिग व स्त्रीलिंग)</u>		
<u>कर्तृ</u>– <u>ने</u> Nominative case	तू / तू ने वह / उसने	आप/ आप ने	ये– इन्होंने	वे– उन्होंने
	उ	Usted / es	Vosotros/ Ellos / Ellas	
<u>कर्म</u>– <u>को</u> **<u>संप्रदान</u>** – <u>को</u> <u>Accusative/ Dative case</u>	तुझको/ तुझे	आप को	इनको	उनको
	te / a ti se / a usted / para usted	se / a usted (singular) *+es (plural)* para usted/es	se /a vosotr +os (singular) *+as (plural)* para vosotr +os / +as se / a ell+os / +as para ell+os / +as	
<u>करण– से</u> **<u>संप्रदान – से</u>** <u>Ablative case</u>	तुझ से	तुम से/ आप से	इन से	उन से
	por ti / contigo de / desde ti	porusted /con usted /+ es de / desde usted /+es	porvosotr +os / +as; con vosotr+os /+as de / a ell+os / +as desdeell+os / +as	
<u>अधिकरण – में / पर</u> <u>Instructional case</u>	तुझ में/ पर	तुम में / आपमें तुम पर / आप पर	इन में/ इन पर	उन में / उन पर
	en ti@ sobre tí	en usted/+es sobreusted/+es	en vosotr +os / +as; sobre vosotr+os /+as	
<u>संबंध –</u> **<u>का / के</u>** **<u>की</u>** <u>Genitive case</u>	तेरा / रे / री	तुम्हारा/ रे/री आप का /के /की	इन का /के / की	उन का /के / की
	lo/latu+yo / + ya lo/ la usted de tu/ usted	los / lastuyas los/ lasustedes las de tuyas / ustedes /	lossuy+os /lassuy+as / los de ell+os /+as. las de ellos/as	

पूर्ण तालिका, लेखक का आलेख संदर्भ – भाषा, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली, वर्ष 50, अंक 237, ISSN 0523–1418, जनवरी–फरवरी 2011, पृ. 153–59.

8

आई.सी.टी. आधारित हिंदी भाषाई अधिगम और शिक्षण का परिप्रेक्ष्य

– डॉ. सी. जय शंकर बाबु

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (Information and Communication Technology - आई.सी.टी.) आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति की देन है। इसी आई.सी.टी. के आधार पर आज के युग को 'सूचना युग' की संज्ञा दी जाती है। आई.सी.टी. ने जीवन–जगत के लगभग हर क्षेत्र को प्रभावित किया है। नवीन आविष्कारों से मानव जीवन में परिवर्तन सामान्य बात है, मगर प्रौद्योगिकी ने इस परिवर्तन को और इसकी गति को प्रबल बना दिया है।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रांति की वजह से साकार प्रगति का लाभ उठाते हुए शासन द्वारा जन–सेवाओं को अधिकाधिक कारगर बनाने का प्रयास किया जाना संभव हो पा रहा है। सेवा की ज़िम्मेदारी वाली प्रत्येक व्यवस्था के लिए यह नई प्रौद्योगिकी एक वरदान ही है। 'संचार क्रांति' और उसके बाद विकसित 'सूचना क्रांति' – इन दोनों के बीच अभिसरण से सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी साकार होना एक वैज्ञानिक उपलब्धि है। इस प्रौद्योगिकी ने एक ओर कई पुरानी प्रणालियों का स्वचालन संभव बनाया, दूसरी ओर नए रूपों में गठन को भी संभव बनाया है। कई सेवा–कार्यों के लिए मनुष्य की जगह मशीन लेने लगी। मानव सेवाओं में मानवीयतापूर्ण अपेक्षाओं के अनुरूप सेवाएँ मशीनों द्वारा सुनिश्चित करने में पक्षपातविहीनता, पारदर्शिता, त्वरितता, स्पष्टता, शिष्टता आदि कई अपेक्षणीय गुण सुनिश्चित किए जा सकते हैं, बशर्ते कि उनसे संबद्ध प्रणालियों के निर्माण में भी यही दृष्टि और नीति सुनिश्चित हो।

शिक्षण–कार्य मानवीय विकास की दृष्टि से एक विशिष्ट सेवा–कार्य है। शिक्षा क्षेत्र में आई.सी.टी. की वजह से प्रौद्योगिकी आधारित शिक्षण–अधिगम के लिए उपयोगी कई संसाधनों का विकास हुआ है। आई.सी.टी. की बहुप्रयोजनीयता के अभिलक्षणों की वजह से दुनिया के लगभग सभी देशों में अंतरराष्ट्रीय व राष्ट्रीय शैक्षिक नीति निर्धारकों द्वारा शिक्षण में इसके प्रयोग के लिए प्रेरित किया जा रहा है। इसी क्रम में दुनिया के कई देशों में आई.सी.टी. अनुकूल नीतियाँ बन गई हैं। इसी क्रम में भारत में भी ऐसी नीतियाँ तय होकर कार्यान्वित हो रही हैं।

जन्म : 1969, गुंतकल, आंध्र प्रदेश, भारत

शिक्षा :

2002 में आपने मैसूर विश्वविद्यालय में दक्षिण भारत हिंदी पत्रकारिता के अध्ययन पर पी.एच.डी. का शोध कार्य पूरा किया

व्यवसाय :

- पांडिच्चेरी विश्वविद्यालय (केंद्रीय विश्वविद्यालय) में सहायक आचार्य
- अध्यक्ष (प्रभारी) के रूप में सेवारत हैं
- प्रधान संपादक, आंतर भारती (हिंदी मासिक)

प्रकाशन :

- पाठ्य–पुस्तकें (हिंदी)
- प्रयोजनमूलक हिंदी (2014)
- भाषा–प्रौद्योगिकी (2015)
- नई मीडिया एवं हिंदी (2015) तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :

- राष्ट्रभाषा रत्न (1997)
- साहित्य रत्नाकर (1998)
- उदीयमान संपादक (1998)
- हिंदी विद्यारत्न भारती (1999) तथा अन्य सम्मान

सेवाएँ :

- भारत सरकार की विभिन्न सेवाओं में विभिन्न पदों पर सेवारत रहे हैं।
- हिंदी साहित्यिक पत्रिका 'युगमानस' और 'कोंगु निधि' के संस्थापक संपादक

शिक्षा में आई.सी.टी. संबंधी नीतियाँ : भारत का संदर्भ

भारत में 'स्कूली शिक्षा में आई.सी.टी. संबंधी राष्ट्रीय नीति' 2012 में निर्धारित की गई। भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, संशोधित नीति 1992 ने जिस शैक्षिक प्रौद्योगिकी का फ़ायदा उठाने का संकेत दिया और राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाँचा 2005 के अंतर्गत स्कूली शिक्षा में आई.सी.टी. की भूमिका को मानने की पृष्ठभूमि में 'स्कूली शिक्षा' में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी.) की राष्ट्रीय नीति', शिक्षा के समग्र विकास के लिए आई.सी.टी. और शिक्षा की पहुँच बढ़ाने के लिए तथा गुणवत्ता बढ़ाने में आई.सी.टी. की अद्भुत संभावना को ध्यान में रखते हुए विकसित की गई है।

भारत में आई.सी.टी. के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा मिशन (National Mission on Education through Information and Communication Technology) की परिकल्पना भी आई.सी.टी. के माध्यम से शिक्षा संबंधी अनुकूल नीति के तहत ही की गई है। शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में आई.सी.टी. की क्षमता का लाभ उठाने के उद्देश्य से गठित इस मिशन का डिजिटल क्रांति से अछूते रह रहे लोगों की चेतना, क्षमता और दक्षता बढ़ाकर भारत को ज्ञान की महाशक्ति के रूप में विकसित करने की दिशा में योगदान देने का लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गठित इस राष्ट्रीय मिशन ने अपने मिशन दस्तावेज़ में जिन 19 कमियों की ओर इंगित किया है, उनमें से कुछ यहाँ इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं –

- ''अपोषित प्रतिभा की बहुलता ।
- सभी को ज्ञान संसाधनों की समय से तथा आसानी से उपलब्धता की कमी ।
- सूचना व निर्देशन तथा कठिनता से पहुँच के कारण अवसरों का समाप्त होना ।
- विभिन्न स्थानों पर अध्ययन की प्रश्नात्मक गुणवत्ता ।
- बढ़ता हुआ डिजिटल डिवाइड ।
- डिजिटल साक्षरता की बहुत कम प्रतिशतता ।
- ज्ञान–वितरण तंत्र का अप्रभावी कार्यकरण ।''

इन कमियों की पूर्ति के लिए आई.सी.टी. चेतना, क्षमता और दक्षता वाले शैक्षिक जन बल की बड़ी ज़रूरत है, इस दिशा में प्रयास निरंतर हो रहे हैं। दूसरी ओर ज्ञान के संसाधनों का विकास और उनका आसानी से मिल जाना सुनिश्चित करने के प्रयास भी शुरू हो चुके हैं।

शैक्षिक दृष्टि से आई.सी.टी. के अभिलक्षण

आई.सी.टी. के साकार व निराकार (आभासी) रूप भी हैं। साकार रूप में भौतिक साधन और उनसे संबद्ध सॉफ़्टवेयरों को भी हम मान सकते हैं। निराकार रूप में इंटरनेट की वजह से साकार विश्वव्यापी दुनिया है, जिसके कोई बड़े भौतिक साधन व व्यवस्था प्रयोक्ता के सामने मोटे तौर पर नज़र नहीं आते हैं ।

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के साकार प्रयोग के साधन हैं – कंप्यूटर व इंटरनेट। इनमें पाठ (text), चित्र (image), ध्वनि (audio), चलित दृश्य (video), क्रमादेशित जीवंत दृश्य (animation) आदि कई रूपों में प्रयोग की सुविधाएँ हैं। इन तमाम सुविधाओं का प्रयोग करते हुए शिक्षण–कार्य में आई.सी.टी. का उपयोग करने के लिए शिक्षकों के पास इससे संबंधित कौशलों की ज़रूरत होती है। इन सुविधाओं को 'मल्टीमीडिया' की संज्ञा भी दी जाती है। बहुमाध्यम (Multimedia) की सुविधाओं से कई युक्तियाँ (Devices) विकसित हुई हैं, जिनमें कंप्यूटर, लैपटॉप के अलावा कई हस्तचालित युक्तियाँ यथा टैबलेट, स्मार्ट फ़ोन आदि।

साकार एवं निराकार दोनों रूपों में प्रयुक्त आई.सी.टी. के कई अभिलक्षण हैं, जिनमें इस संदर्भ में हमारा नाता शैक्षिक दृष्टि से आई.सी.टी. के अभिलक्षणों से बनता है ।

शैक्षिक दृष्टि से आई.सी.टी. के कुछ मुख्य अभिलक्षण इस प्रकार हैं –

- अधिगम क्षमता
- अंतः क्रियात्मकता
- बहुमाध्यम क्षमता
- रचनात्मकता
- सौंदर्यबोधपरकता (कलात्मकता)
- विश्लेषणात्मक क्षमता
- समस्या समाधान की क्षमता
- स्वचालन
- संचार एवं संप्रेषण
- नेटवर्किंग
- सूचना भंडारण
- सूचना खोज एवं पुनः प्राप्ति
- गति
- विश्वसनीयता
- सुनम्यता (लचीलापन)
- क्रमादेशिता

इन अभिलक्षणों से आई.सी.टी. निश्चय ही शिक्षण–कार्य में सीखने के अपार अवसरों को प्रदान करते हुए शिक्षण में सहायक उपकरण तथा सह–शिक्षक की भूमिका निभा सकती है। क्रमादेशित अधिगम (programmed learning)में शिक्षक की भूमिका एक सीमित हद तक निभाई जा रही है। शिक्षार्थी अन्य प्रयासों से इसी प्रौद्योगिकी के माध्यम से शिक्षण संबंधी (भाषा के संदर्भ में भाषा संबंधी) अन्य समस्याओं एवं संदेहों की निवृत्ति कर सकते हैं। स्वतंत्र रूप से भाषा–शिक्षक की भूमिका निभाने की दिशा में कई दृष्टियों से आई.सी.टी. विकसित हो रही है, भविष्य में यह भूमिका साकार हो पाएगी।

आई.सी.टी. संबंधी कुशलताएँ

आई.सी.टी. संबंधी साधनों के प्रयोग की सामान्य कुशलता तथा इनके हार्डवेयर और सॉफ़्टवेयर, प्रचालन प्रणाली (Operation System), नेटवर्क, सामान्य शब्द–संसाधन, नेविगेशन, ब्राउज़िंग आदि कुशलताओं को आई.सी.टी. की आधारभूत कुशलताओं की संज्ञा दी जाती है। आई.सी.टी. के परिवेश में इसकी सुविधायुक्त युक्तियों में प्रयोग के लिए विकसित संसाधनों व सामग्रियों के प्रयोग की दक्षता भी इसमें शामिल होती है। ऐसे संसाधनों में वेब 2.0 आधारित कई प्रकार के औज़ार ऑनलाइन और ऑफ़लाइन प्रयोग के लिए उपलब्ध हैं।

आई.सी.टी. संबधी उन्नत कुशलताओं में प्रोग्रामिंग, एनिमेशन, डेटाबेस अनुप्रयोग, मल्टीमीडिया सामग्री का निर्माण, संपादन आदि शामिल होते हैं। शिक्षण–कार्य में आई.सी.टी. के प्रयोग के लिए शिक्षकों में इन कुशलताओं की अपेक्षा होती है। शिक्षार्थी भी आई.सी.टी. आधारित अपने अधिगम–कार्य में ऐसी कुशलताओं से ही सफल हो सकता है। आई.सी.टी. आधारित संसाधनों के विकास के लिए उन्नत कुशलताओं की ज़रूरत होती है। 21वीं सदी के निष्ठावान हर शिक्षक चाहेगा कि वह इन दोनों कुशलताओं की सव्यसाची बने। इस अभिलाषा की पूर्ति में व्यवस्था के सहयोग (प्रशिक्षण–कार्यों के आयोजन, मूलभूत सुविधाओं का विकास आदि रूपों में) की ज़रूरत होती है। ऐसे सहयोग के अभाव में भी आज आई.सी.टी. के किसी एक उपकरण और इंटरनेट के सहारे कोई भी स्व–प्रयासों से ऐसी कुशलताएँ हासिल कर सकता है, हाँ कुछ ज़्यादा ही श्रम और समय इन कार्यों में व्यतीत करना पड़ सकता है। मगर कंप्यूटर व वेब पर उपलब्ध ट्युटोरियल्स (अनुदेशन–सामग्री) के माध्यम से कई तरह की आई.सी.टी. की कुशलताएँ आसानी से हासिल की जा सकती हैं। आई.सी.टी. संबंधी जानकारियों व साधन–सामग्रियों और कुशलता अभ्यासों के लिए भी इंटरनेट के माध्यम से वेब एक बेहतरीन विकल्प भी है।

भाषा–शिक्षण व अधिगम की अवधारणाएँ

भाषा अभिज्ञान और अभिव्यक्ति की ज़मीन तैयार करती है। भाषा मनुष्य की विशिष्ट पहचान और उपलब्धि भी है। भाषा मनुष्य को चिंतन के कैनवास प्रदान करती है। भाषा–शिक्षण के उद्देश्यों के संबंध में भी यहाँ हमें सोचने की ज़रूरत है। इनमें मूलभूत उद्देश्य तो सभी भाषाओं के संदर्भ में लगभग समान हो सकते हैं, मगर उसके साथ समाज, काल, परिस्थितियों और आवश्यकता की दृष्टि से अन्य उद्देश्य भी जुड़ जाते हैं। भाषा–शिक्षण में शिक्षार्थी को मूलतः भाषा संबंधी चार कुशलताओं में दक्ष बनाने की चर्चा आती है, ये कुशलताएँ हैं – सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। मौखिक और लेखन–कला से संबद्ध इन कुशलताओं के अंतर्गत भाषा की समझ और भाषा का व्यवहार भी अंतर्निहित है। भाषा का विशिष्ट दृष्टि से व्यवहार्यता के लिए विशेष प्रशिक्षण या प्रयासों की ज़रूरत होती है। जहाँ तक भाषा–शिक्षण का सवाल हो या शिक्षण का सवाल हो, पहले पाठ्यक्रम केंद्रित था, बाद में वह शिक्षक केंद्रित हो गया, अब उसे शिक्षार्थी केंद्रित माना जा रहा है। भाषा सिखाने की दृष्टि इन बातों को सोचते समय भाषा सीखने वाले छात्र की दृष्टि से भी हमें सोचने की ज़रूरत है। भाषा सीखने की दृष्टि से सामान्य भाषिक कौशलों को हासिल करने पर उसे भाषिक क्षमता मानते हैं। भाषिक समुदाय के बीच व्यवहार की दृष्टि से संप्रेषण–दक्षता की भी ज़रूरत होती है।

शिक्षार्थी केंद्रित भाषा–अध्ययन के क्षेत्र में भाषा सीखने के संदर्भ में दो अवधारणाओं की चर्चा आती है – एक 'भाषा–अर्जन' की और दूसरा 'भाषा–अधिगम' की। भाषा–अर्जन करने का अवसर छात्र को समाज में प्राप्त होता है, अतः समाज के व्यावहारिक संदर्भों से भी वहाँ उसका नाता बनता है, अतः इस भाषिक समाज में भाषा व्यवहार की बेहतरीन दक्षता वह हासिल करता है। आमतौर पर मातृभाषा या परिवेश की भाषा के सीखने

के संदर्भ में भाषा–अर्जन की अवधारणा काम करने लगती है। वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षिक व अन्य कई दृष्टियों से कई संदर्भों में मातृभाषा के अलावा दूसरी भाषा सीखने की ज़रूरत पड़ती है। ऐसी भाषा सप्रयास सीखें, तो उस अवधारणा को 'भाषा–अधिगम' के रूप में हम मानते हैं।

भाषा–शिक्षण के संदर्भ में रवींद्रनाथ श्रीवास्तव का यह मानना है कि :

''भाषा–शिक्षण का व्यापार शिक्षण–तंत्र की प्रकृति एवं बुनावट से कटकर नहीं चल सकता है।''

इसको प्रभावित करने वाले कारकों के रूप में वे निम्नांकित को मानते हैं –

- *समाज की आर्थिक–सामाजिक प्रकृति*
- *सरकार की शिक्षा–नीति और भाषा–नीति*
- *स्कूल का ढांचा*
- *शिक्षक की योग्यता*

ये सब व्यावहारिक और सैद्धांतिक संदर्भ हैं। बहुभाषिक समाज में सरकार की भाषा–नीति के साथ आधुनिक संदर्भ में एक और कारक जुड़ जाता है, यह नया कारक है– मशीन की प्राकृतिक भाषाई प्रयोग की दक्षता। यह कारक भी तभी जुड़ जाता है, जब सरकार की शिक्षा–नीति आई.सी.टी. के अनुकूल हो। आई.सी.टी. की व्यवहार्यता, संभाव्यता और प्रभावकारी होने से आश्वस्त होकर ही कोई नीति बनती है। आई.सी.टी. का प्रयोग भाषा–शिक्षण में करने से संबंधित व्यावहारिक समस्याओं के संबंध में अध्ययनों की ज़रूरत पड़ती है। ऐसे अध्ययनों के परिणाम सरकारी नीतियों के अनुरूप अभिप्रेरित माहौल बनाने में भी सक्षम बन सकते हैं, बशर्ते कि परिणाम बड़ी आबादी के लिए भी प्रासंगिक हो।

भाषा–शिक्षण के उद्देश्य व लक्ष्यों को हासिल करने में प्रौद्योगिकीय भूमिका को मानते हुए आज कंप्यूटर–साधित भाषा–शिक्षण की चर्चा सामने आती है। इसमें यहाँ हमारा संबंध कंप्यूटर–साधित हिंदी–शिक्षण से पड़ता है।

भाषा–शिक्षण में कंप्यूटर की भूमिका

भाषा–शिक्षण वह प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से भाषा–अधिगम में मदद मिल जाती है। परंपरागत रूप से यह काम मानव द्वारा किया जा रहा है। आज इस कार्य में हम मशीन के प्रयोग को भी शुरू कर चुके हैं। भविष्य में एक बेहतरीन शिक्षक की भूमिका निभाने में मशीन सक्षम व सफल साबित हो सकती है। मशीन को शिक्षक के रूप में विकसित करने का यह श्रेय आई. सी.टी. को ही जाता है। भाषा सिखाने के संदर्भ में शिक्षकों द्वारा कई विधियाँ अपनाई जाती हैं। कई तकनीकों का प्रयोग भी किया जाता है। भाषा–शिक्षण कार्य को प्रभावशाली बनाने की दृष्टि से जिन साधन तंत्रों की बात की जाती है, वहीं आधुनिक समय में कंप्यूटर और इंटरनेट की बात आती है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी इन्हीं के साथ जुड़ी आधुनिक सुविधा–तंत्र है। आई. सी.टी. के सहारे भाषाई अधिगम और भाषा–शिक्षण की दृष्टि से जब हम कंप्यूटर की भूमिका के संदर्भ में सोचते हैं, तब उसके साथ कई भूमिकाएँ जुड़ सकती हैं। उनमें तीन मुख्य भूमिकाएँ हैं – एक उपकरण के रूप में, दूसरा शिक्षक के रूप में और तीसरा परिवेश के रूप में। कंप्यूटर और इंटरनेट से जुड़ी व्यवस्था में ये सब संभव होने की दिशा में प्रौद्योगिकीय विकास की प्रगति संतोषजनक है। दुनिया में अनुसंधान और विकास–कार्यों से भविष्य में अधिक प्रगति संभव है। वैसे आज शिक्षण के क्षेत्र में इसका प्रयोग 'शिक्षक के स्थान पर कंप्यूटर' की दृष्टि से तो नहीं, शिक्षण–कार्य में सहायक उपकरण के रूप में ही हो रहा है। अतः अभी कंप्यूटर का पूर्ण रूप में शिक्षक बनने को लेकर कोई बड़ा सवाल नहीं उठता, हाँ कंप्यूटर आधारित क्रमादेशी अधिगम की सुविधाएँ साकार हो गई हैं। इन सुविधाओं के विकास क्रम में इनका उपयोग करते हुए बेंजमिन ब्लूम के द्वारा प्रतिपादित संज्ञानात्मक कुशलताओं के निम्न–क्रम से उच्च–क्रम तक (ज्ञान, समझ, अनुप्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण, मूल्यांकन) हासिल करने की संभावनाओं को परखना भी आवश्यक है। भाषा–शिक्षक के रूप में कंप्यूटर स्वतंत्र भूमिका अदा करने की दिशा में भी प्राकृतिक भाषा संसाधन (Natural Language Processing) संबंधी अनुसंधान–विकास कार्य, जो संपन्न हो रहे हैं, उनसे भविष्य की संभावनाएँ सुनिश्चित हैं। इस दिशा में रोबोटिक्स प्रणालियों को जोड़कर बड़ी सफलता हासिल करने की संभावना है।

भारत के बहुभाषिक संदर्भ में कंप्यूटर की उक्त तीन भूमिकाओं के विकास–कार्य में कई चुनौतियाँ हैं। वैसे भारत

सरकार की भाषा–नीति के तहत ऐसी कई परियोजनाएँ सक्रिय हैं, जिनके तहत कंप्यूटर की भाषिक क्षमता के विकास के साथ भारतीय भाषाओं को जोड़ने के प्रयास हो रहे हैं। यह कंप्यूटरीय भाषिक प्रगति के प्रयासों की बात रही। यहाँ हमने गहराई से उस प्रगति की विभिन्न बातों की चर्चा तो नहीं की है, मगर संकेत रूप में यह बताना ज़रूरी है कि भाषा के संदर्भ में तीनों भूमिकाओं में कंप्यूटर की क्षमता और दक्षता सुनिश्चित करने के लिए विकास–कार्यों में निरंतर प्रगति है। कंप्यूटर की पहली भूमिका (उपकरण) और तीसरी भूमिका (परिवेश) की दृष्टि से विकास काफ़ी हो चुका है, दूसरी भूमिका अर्थात् 'भाषा शिक्षक' की भूमिका के लिए विकास–कार्य जारी है। कंप्यूटर के माध्यम से भाषिक विकास, कंप्यूटरीय भाषिक विकास जैसी कई अवधारणाएँ इस दिशा में विकसित हो रही हैं।

यहाँ हम यह मानकर चलेंगे कि एक न्यूनतम विकास के रूप में भाषा–शिक्षण कार्यों में प्रयोग के लिए सक्षम उपकरण के रूप में कंप्यूटर को यदि हम मानते हैं, तो हिंदी भाषा–शिक्षण की दृष्टि से उसके प्रयोग से जुड़े विभिन्न आयामों की स्थिति, गति और प्रगति की बातों पर हमारी जिज्ञासा जागृत हो जाती है। इससे संबंधित स्थिति, गति ही कंप्यूटर साधित भाषा–शिक्षण की सफलता और संभावनाओं के प्रगति–पत्रक के रूप में हमारे सामने आ सकता है। कंप्यूटर के भाषाई अनुप्रयोगों की सार्थकता उसके सफल व सार्थक प्रयोग में है। आई.सी.टी. के माध्यम से हिंदी के विकास से संबंधित हमारी परिकल्पनाओं के लिए ये सब अपेक्षणीय स्थितियाँ हैं।

भाषा–शिक्षण के लिए उपलब्ध आई.सी.टी. की सुविधाएँ

भाषा की मूलभूत चार कुशलताएँ हासिल करने के लिए अपेक्षित लगभग सभी सुविधाएँ कई रूपों में आई.सी.टी. के साधनों में उपलब्ध हैं। सुनने और बोलने के साधनों के रूप में ऑडियो, वीडियो (यह तो उच्चारण करते हुए व्यक्ति को देखने, उसके उच्चारण और भाव भंगिमा को समझने जैसे अवसर भी देता है) के अलावा पाठ से वाक् तथा वाक् से पाठ में तब्दील जैसी सुविधाओं की वजह से लिखे गए वाक्यों की शुद्धता सुनकर परखना और बोले गए वाक्यों का लेखन रूप देखना, वाक्यों के गठन का सही रूप जानना, शब्द और उनका सही उच्चारण सुन पाना, हस्तलिखित पाठ को ओ.सी.आर. की सुविधा से कंप्यूटरीय पाठ के रूप में तब्दील कर अपनी लिखावट की खामियों को पहचान पाना आदि संभव है। वैसे शब्द–संसाधकों के अंतर्गत वर्तनी जाँच, व्याकरण जाँच, शब्दकोश, वाक्यों का गठन ठीक करने की सुविधा आदि के माध्यम से सही अभिव्यक्ति सीखने का अवसर प्रयोक्ता को मिल जाता है। संवाद के लिए पाठ, वाक् और दृश्य सुविधाएँ कई रूपों में उपलब्ध हैं, जैसे ई–मेल, वॉय्स मेल, टैक्स्ट–चैट, वॉय्सचैट, वीडियोचैट, चर्चा–परिचर्चा के लिए, समूह (ग्रुप्स), ब्लॉग, सोशल नेटवर्क आदि कई सुविधाएँ हैं। किसी भी सुविधा का उपयोग बार–बार अपनी समयानुकूलता से करने की सुविधा भी है। अपनी बातों को रिकॉर्ड करके भी बार–बार सुनने की सुविधा है। आप जिस सुविधा की माँग या परिकल्पना करें, वैसी सुविधाएँ आई.सी.टी. के साधनों में विकसित हो रही हैं। कई पोर्टलों में अंतःक्रियात्मक औज़ार उपलब्ध हैं, जिनके माध्यम से शिक्षार्थी भाषा संबंधी कौशलों का सभी रूपों में प्रयोग कर पाते हैं। अधिगम कार्यों में नियंत्रित या पर्यवेक्षित अधिगम, क्रमादेशित अधिगम आदि की सुविधाओं के कई सॉफ़्टवेयर औज़ार हैं। मूडल, एडमोडो, आई–व्यू जैसे कई सॉफ़्टवेयर औज़ार आज लोकप्रिय बनते जा रहे हैं। उन सब औज़ारों से वेब पर भाषा सीखने के अपार अवसर उपलब्ध हैं। वास्तव में, इन सब औज़ारों के माध्यम से शिक्षण की प्रभावशाली विधियाँ तैयार करके सीखना तथा क्रिया द्वारा सीखना सुनिश्चित होकर शिक्षार्थी लाभान्वित हो सकता है। इन्हीं संभावनाओं के बीच आज ई–शिक्षण, मोबाइल–शिक्षण आदि विकसित हुए हैं। ई–सामग्री के विकास में भी तेज़ी है। मगर सच्चाई यह है कि अधिकांश सामग्री अंग्रेज़ी में ही मिल रही है। इस स्थिति को बदलने की आवश्यकता है। हिंदी व अन्य भाषाओं में ई–सामग्री के विकास को बढ़ावा देने की ज़रूरत है।

भाषा प्रयोगशालाओं के लिए कई सॉफ़्टवेयर अंग्रेज़ी सीखने हेतु काफ़ी समय पहले ही विकसित किए गए हैं। हिंदी के लिए ऐसे सॉफ़्टवेयर विकसित होना अभी शेष रह गया है। आज डिजिटल युग में डिजिटल नागरिकों की चेतना की परिकल्पना की जा रही है। भविष्य की स्थितियों को देखते हुए कंप्यूटरीय परिवेश को समझने की चेतना विकसित करने के लिए सबको कंप्यूटरीय कुशलताएँ हासिल करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

इस दृष्टि से भाषा–नीति और आई.सी.टी. नीति के

आलोक में हिंदी भाषा–शिक्षण और अधिगम में संदर्भ में संभाव्यता और व्यवहार्यता और प्रभावी होने संबंधी अध्ययनों की भी बड़ी प्रासंगिकता है। ऐसे अध्ययन डिजिटल परिवेश में शिक्षण–कार्यों में बहुआयामी प्रगति और गुणवत्ता की स्थिति का जायज़ा लेने और भविष्य की कार्य–योजनाएँ बनाने के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। इंटरनेट के माध्यम से वेब आज एक अथाह ज्ञान–सिंधु के रूप में विकसित हुआ है। भारत जैसे बहु–भाषाई राष्ट्र में ज्ञान की आपूर्ति किसी एक भाषा (जैसे अधिकांश ज्ञान अंग्रेज़ी में विकसित किया जा रहा है) के माध्यम से ही होना, पुनः विषमता की ओर ही प्रस्थान का संकेत देता है। वैसे इंटरनेट के सहारे वेब पर अंग्रेज़ी में ज्ञान को विकसित करनेवाली बहुत बड़ी दुनिया है, हम भी केवल अंग्रेज़ी में ही सामग्री का विकास कर बैठें तो ''...आगे कवन हवाल...'' की स्थिति रह जाती है। इस दृष्टि से हिंदी में डिजिटल चेतना का विकास और ई–संसाधनों के विकास के लिए आवश्यक ज्ञान–तंत्र, जन बल को विकसित करने की ज़रूरत है।

कंप्यूटर–साधित हिंदी भाषा–शिक्षण का परिप्रेक्ष्य

शिक्षण व अधिगम के कार्यों में कंप्यूटर के सहारे शिक्षण यंत्रों की परिकल्पना कई दृष्टियों से की गई है – जैसे कंप्यूटर की सहायता से अधिगम, कंप्यूटर आधारित शिक्षण, कंप्यूटर प्रबंधित शिक्षण आदि।

कंप्यूटर–साधित भाषा–शिक्षण की सफलता सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की कुशलताएँ रखने वाले शिक्षकों तथा छात्रों से ही संभव है।

'सबके लिए शिक्षा' और 'शिक्षा की गुणवत्ता' – ये दोनों शिक्षा क्षेत्र के दो महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं। दूसरी तरफ़ भारत की बहुभाषिकता भी एक बड़ा मुद्दा है। बहुभाषाई देश भारत में एक संपर्क भाषा के महत्त्व की जब भी चर्चा शुरू होती है, उस चर्चा में हिंदी केंद्र में रहती है। इसी परिप्रेक्ष्य में हिंदीतर भाषियों के लिए हिंदी–शिक्षण का मुद्दा सामने आता है। हिंदीतर प्रदेश में हिंदी भाषा–शिक्षण की कई समस्याएँ हैं, ऐसी समस्याओं की चर्चा कई अनुसंधाताओं ने कई प्रतियों, प्रपत्रों के माध्यम से की है। ऐसी प्रतियों में उच्चारण, शब्दार्थ, व्याकरणिक भेद, सांस्कृतिक भिन्नता, अभ्यास, माहौल की समस्या, मानक स्वरूप का अभाव जैसी कई समस्याओं की चर्चा सामने आती है। ऐसी समस्याओं से संबंधित कई ऐसे आयाम हैं, जिनपर चर्चा की बड़ी प्रासंगिकता है। वैसे इस प्रकार की तमाम समस्याओं को सुलझाने की दिशा में एक वरदान के रूप में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के कई औज़ार व प्रणालियाँ उपलब्ध हैं। हिंदीतर भाषियों के लिए हिंदी भाषा–शिक्षण के दो संदर्भ महत्त्वपूर्ण हैं –

1. अन्य भाषा–शिक्षण का संदर्भ
2. विदेशी भाषा–शिक्षण का संदर्भ

पहला संदर्भ तो हिंदीतर भाषा–भाषी भारतवासियों के संदर्भ में है। दूसरा संदर्भ हिंदीतर भाषा–भाषी विदेशियों से संबद्ध है।

हिंदी भाषा एवं साहित्य–शिक्षण में कंप्यूटर व संचार प्रणालियों से विकसित सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (आई. सी.टी) के प्रयोग की संभावनाओं के विविध आयामों पर विश्लेषणात्मक अध्ययन की दृष्टि से भारत के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा प्रदत्त बृहद् अनुसंधान परियोजना सुसंपन्न करने के बाद, जो निष्कर्ष सामने आए हैं; वे हिंदी–शिक्षण में आई.सी.टी. के प्रयोग की अनुकूल संभावनाओं और स्थितियों को दर्शाते हैं।

इस दिशा में अपेक्षित कई प्रयासों के सूक्ष्म रूप के नमूने के रूप में एक बृहद् अनुसंधान परियोजना सुसंपन्न हुई है। इसके अंतर्गत शिक्षा जगत् में हिंदी भाषा–शिक्षण के लिए आई.सी.टी. प्रयोग की चेतना विकसित करने तथा डिजिटल परिवेश में हिंदी का प्रयोग करने में सक्षम जन बल के विकास में योग देने के प्रयास भी किए गए हैं। इस दृष्टि से एक कार्रवाई अनुसंधान (Action Research) के रूप में ही परियोजना कार्यान्वित हुई है, जिसके तहत बड़ी संख्या में शिक्षकों तथा छात्रों को हिंदी–शिक्षण में आई.सी.टी. प्रयोग का प्रशिक्षण दिया गया है।

भूमंडलीकरण व वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में आज दुनिया की बड़ी आबादी को हिंदी भाषा–शिक्षण में एक कारगर समाधान के रूप में आई.सी.टी. भी एक विकल्प है। अतः आई.सी.टी. संबंधी अध्ययनों की आज बड़ी प्रासंगिकता है। हिंदी–शिक्षण में आई.सी.टी. के प्रयोग की अनुकूलता के आलोक में हिंदी–शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए आई.सी.टी. आधारित शिक्षण सामग्री तैयार करने हेतु आवश्यक प्रेरणा, हिंदी शिक्षकों को प्रशिक्षण

देने के लिए आवश्यक सभी कदम सभी स्तरों पर उठाने की भी आवश्यकता है। हिंदी को विश्व भाषा के रूप में विकसित करने में यह पहल अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

वैसे शिक्षण में आधुनिक तकनीकों एवं साधनों के प्रयोग की लंबी परंपरा रही है। आई.सी.टी. के प्रयोग से शिक्षण में गुणवत्ता, ऑनलाइन व मोबाइल शिक्षण के माध्यम से पहुँच, समता आदि कई गुणों और सुविधाओं की वजह से निश्चय ही शिक्षा के क्षेत्र में नवाचारों की क्रांति के लिए छात्रों और अध्यापकों की आई. सी.टी. अनुकूल धारणाएँ उपयोगी हो सकती हैं। ई–ज्ञानकोश, एन.पी.टी.ई.एल., ई–पीजी पाठशाला, स्वयंप्रभा आदि ऑनलाइन ई–सामग्री के स्रोत भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय के अनुदान से विकसित हुए हैं। इनके सदुपयोग के लिए आई. सी.टी. संबंधी चेतना एवं प्रशिक्षण की बड़ी ज़रूरत होती है। इस अनुसंधान सर्वेक्षण के परिणाम यही स्पष्ट कर रहे हैं। उच्च स्तर पर शिक्षण का माध्यम अंग्रेज़ी होने की वजह से इन पोर्टलों में अधिकांश सामग्री अंग्रेज़ी में ही है। मुक्त व ऑनलाइन शिक्षा के लिए संकल्पित बड़े पैमाने पर मुक्त ऑनलाइन पाठ्यक्रम (MOOC) सभी विषयों में हिंदी में भी विकसित करने की ज़रूरत है, जिससे देश की बड़ी आबादी को लाभ मिल सकता है। अन्य प्रचलित भारतीय भाषाओं में इनके विकसित करने से सभी तक ज्ञान की पहुँच सुनिश्चित होकर ज्ञान समाज के विकास की हमारी संकल्पना पूरी हो सकती है। इसके लिए सभी भाषाओं के शिक्षकों को आई.सी.टी., बहुभाषाई कंप्यूटिंग और ई–सामग्री विकास के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक प्रशिक्षण के कार्यक्रम शुरू करने की ज़रूरत है। शिक्षकों के प्रशिक्षण के बाद तमाम छात्र वर्ग का प्रशिक्षण शिक्षकों द्वारा अपने आप सुनिश्चित होकर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम में भारतीय भाषाई शिक्षण का बेहतरीन माहौल विकसित हो पाएगा।

संदर्भ ग्रंथ :

1. स्कूली शिक्षा में आई.सी.टी. संबंधी राष्ट्रीय नीति, 2012
2. भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1992
3. राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढाँचा, 2005

पुदुच्चेरी, भारत
yugmanas@gmail.com
professorbabuji@gmail.com

भाषा में प्रयुक्त एक–एक शब्द, एक–एक स्वराघात कुछ सूचना देते हैं। व्यक्तियों के नाम, कुलों या खानदानों के नाम, पुराने गाँवों के नाम जीवन्त इतिहास के साक्षी हैं। हमारे रीति–रस्म, पहनावे, मेले, गान, नाच, पर्व, त्यौहार, उत्सव हमारे पुराने इतिहास की कथा सुना जाते हैं।

– हज़ारीप्रसाद द्विवेदी

भाषा बड़ी रहस्यमयी देवी है। यह नई सृष्टि करती है। इतिहास विधाता के किए कराए पर वह ऐसा पर्दा डाल देती है कि कभी–कभी दुनिया ही बदल जाती है।

– हज़ारीप्रसाद द्विवेदी

9

अमेरिका में हिंदी-शिक्षण : सफलता और चुनौतियाँ

— श्री अशोक ओझा

जन्म : 1950, नोखा, बिहार

शिक्षा :
न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय (1997–2000) में अंतरराष्ट्रीय मामलों का अध्ययन

व्यवसाय :
- अध्यक्ष और निदेशक, युवा हिंदी संस्थान और हिंदी संगम फ़ाउंडेशन
- पत्रकार
- शिक्षक
- संस्थापक/अध्यक्ष : युवा हिंदी संस्थान

प्रकाशन :
- सन् 2014 में विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस द्वारा आयोजित अंतरराष्ट्रीय (क्षेत्रीय) हिंदी सम्मेलन की स्मारिका में शोध–पत्र प्रकाशित।
- बार्न्स एंड नोबल डॉट कॉम प्रकाशन समूह में पुस्तक ग्राहक सेवा/समीक्षा संपादक (2000–2009)
- तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :
भारत और अमेरिका के अनेक विश्वविद्यालयों, संस्थानों द्वारा सम्मानित

लगभग आठ वर्षों से हिंदी–शिक्षण के लिए सुनियोजित योजना के तहत कार्य करने के बाद यह महसूस हो रहा है कि हिंदी प्रसार की दिशा में अनेक उपलब्धियाँ हासिल हुई हैं। इन दिनों सोशल मीडिया, ख़ासतौर पर फ़ेसबुक पर न्यू जर्सी के कुछ कार विक्रेताओं ने अपना प्रचार हिंदी में करना प्रारम्भ किया है। न्यू जर्सी में होंडा, टोयोटा, निसान जैसे मध्यम वर्ग के लोकप्रिय वाहनों के विक्रेताओं ने भारतीय मूल के वासियों को आकर्षित करने के लिए अपना प्रचार अभियान क़रीब छह माह पूर्व दबे पाँव शुरू किया, शायद बाज़ार की प्रतिक्रिया जानने के लिए। आज बी.एम.डब्ल्यू. के शो रूम से हिंदी में प्रचार वीडियो देख–सुनकर ऐसा प्रतीत होता है कि निश्चय ही विक्रेता यह समझ गए हैं कि भारतीय मूल के संपन्न समाज में अंग्रेज़ी का नहीं, हिंदी का बोलबाला है। इस तथ्य का मापदंड तो हमारे पास नहीं है, लेकिन जिस तरह से भारतीय माता–पिता अपने बच्चों को निस्संकोच हिंदी कार्यक्रमों में पढ़ने के लिए भेज रहे हैं, उससे हिंदी की लोकप्रियता की एक झलक प्राप्त होती है। एक दशक पूर्व जब अमेरिका, विशेष तौर पर भारतीय मूल के निवासियों की सर्वाधिक आबादी वाले न्यूयॉर्क, न्यू जर्सी, टेक्सास, कैलिफ़ोर्निया आदि प्रदेशों में, हिन्दी के पठन–पाठन को इक्कीसवीं सदी की ज़रूरतों के अनुरूप ढालने की बात चल रही थी तब हमने यह आशा नहीं की थी कि अमेरिका में व्यापार के क्षेत्र में हिंदी का प्रवेश हो सकेगा।

युवा हिंदी संस्थान की स्थापना

सन् 2009 में अमेरिकी सरकार की एक शिक्षा सम्बन्धी योजना, जिसे स्टारटॉक के नाम से जाना जाता है, तीन साल पुरानी हो चुकी थी। फ़िलाडेल्फ़िया के आई.वी. लीग विश्वविद्यालय–यूनिवर्सिटी ऑफ़ पेन्सिलवानिया में दक्षिण एशिया केंद्र में हिंदी प्राध्यापक दम्पति डॉ. विजय और सुरेन्द्र गंभीर के नेतृत्व में दो सप्ताह का हिंदी शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किया गया, जिसमें न सिर्फ़ अवैतनिक तौर पर हिंदी पढ़ाने वाले समाज सेवियों को भागीदार बनाया गया, बल्कि ऐसे हिंदी प्रेमियों को भी आवेदन की सुविधा प्रदान की गयी, जो हिंदी शिक्षक बनने को उत्सुक थे। पत्रकारिता पेशे से लम्बे समय से जुड़ने के बाद मेरा झुकाव हिंदी पढ़ाने की तरफ़ था, लेकिन न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय मामलों में शिक्षा प्राप्त करने के बाद मैं समाज–शास्त्र का सरकारी मान्यता प्राप्त शिक्षक बन सका। विजय और सुरेन्द्र गंभीर तब छत्तीस वर्षों तक यूनिवर्सिटी ऑफ़ पेन्सिलवानिया में हिंदी भाषाविज्ञान पढ़ा चुके थे और दोनों

ही विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्ति की योजना बना रहे थे। उनके निर्देशन में सन् 2009 के स्टारटॉक शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूरा कर हमें महसूस हुआ कि स्टारटॉक पद्धति के तहत हिंदी और उसकी जैसी अनेक विरासत (हेरिटेज) की भाषाओं को स्कूली विद्यार्थियों के लिए आकर्षक बनाया जा सकता है। स्टारटॉक के हिंदी शिक्षण कार्यक्रमों को लागू करने का समय आ चुका था। यूनिवर्सिटी ऑफ़ पेन्सिलवानिया परिसर में प्राध्यापक सुरेन्द्र गंभीर के सभापतित्व में युवा हिंदी संस्थान की स्थापना हुई, जिसमें मेरे साथ आधे दर्जन साथी उत्साह के साथ शामिल हुए। न्यू जर्सी में संस्थान की स्थापना के बाद उसका प्रमुख लक्ष्य था स्टारटॉक हिंदी पाठ्यक्रम को भारतीय समाज में लोकप्रिय बनाना। संस्था की अध्यक्षता मेरे कंधों पर आयी और हम हिंदी कार्यक्रम की रूपरेखा की मंज़ूरी की प्रतीक्षा करने लगे। 2010 में युवा हिंदी संस्थान का प्रथम स्टारटॉक कार्यक्रम डॉ. सुरेन्द्र गंभीर के निर्देशन में अटलांटा शहर में सफलतापूर्वक संपन्न हुआ, जहाँ अनुभवी शिक्षकों ने दिन–रात मेहनत कर औपचारिक हिंदी–शिक्षण की नींव मज़बूत की।

युवा हिंदी संस्थान को आगामी एक वर्ष के दौरान गैर–लाभ संगठन बनाने की औपचारिक कार्रवाई पूरी कर ली गयी और न्यू जर्सी के हिंदी और गैर हिंदी भाषियों के बीच हिंदी–शिक्षण का प्रचार कार्य आगे बढ़ने लगा। डॉ. गंभीर हिंदी स्टारटॉक को पूरे अमेरिका में विस्तारित करना चाहते थे, लेकिन संसाधनों के अभाव में हमने व्यावहारिक निर्णय लिया कि प्रतिवर्ष चलने वाला यह कार्यक्रम किसी एक स्थान पर निरंतर चलना चाहिए। इसके लिए स्थानीय स्कूल प्रबंधन, जिसे यहाँ, स्कूल डिस्ट्रिक्ट कहते हैं, के साथ सहयोग और संयोजन आवश्यक था। न्यू जर्सी के विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी के औपचारिक कार्यक्रम प्रारम्भ हो चुके थे। मेरे प्रयासों से 'कीन' विश्वविद्यालय में कॉलिज के विद्यार्थियों के लिए स्टारटॉक कार्यक्रम सन् 2010 और 2011 में सफलतापूर्वक संपन्न हुए। इन दोनों कार्यक्रमों का संयोजन, संकलन और निर्देशन मैंने किया, जिसके लिए विश्वविद्यालय के प्रेज़िडेंट डॉफ़राही के प्रति आभार प्रगट करने का शिष्टाचार निभाना चाहूँगा। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि सुरेंद्र और विजय जी के शैक्षणिक मार्गदर्शन के फलस्वरूप उन कॉलिज–विद्यार्थियों को हिंदी पढ़ाने का कार्य किया जा सका, जो गैर भारतीय यानी नॉन–हेरिटेज की परिभाषा में आते हैं। इन दो वर्षों में स्टारटॉक भाषा कार्यक्रमों के सफल संचालन के बाद हम इस नतीजे पर पहुँचे कि युवा हिंदी संस्थान का मुख्य कार्य ऐसी जगह स्थापित हो, जहाँ हिंदी के पौधे को सींचने का उचित वातावरण उपलब्ध हो। पेन्सिलवानिया प्रदेश हमारे पड़ोस में था, जहाँ बेनसेलम शहर के स्कूल डिस्ट्रिक्ट में स्थानीय सामाजिक कार्यकर्ताओं के सहयोग से सन् 2012 का स्टारटॉक कार्यक्रम मेरे निर्देशन में संपन्न हुआ, जिसमें उन परिवारों के बच्चे भी शामिल हुए, जिनके घरों में हिंदी के अलावा अन्य भारतीय भाषाएँ बोली जाती हैं। 2012 के कार्यक्रम से मेरे सामाजिक अनुभव में विस्तार हुआ। मैंने महसूस किया कि अमेरिका में हिंदी समस्त भारतीय समुदाय को जोड़ने वाली भाषा के रूप में प्रसारित होनी चाहिए; सभी भारतीयों की पहचान की भाषा के रूप में!

फ़िलाडेल्फ़िया महानगर से करीब 30 मील दूर स्थित लैंसडेल नामक शहर के आसपास के इलाकों में भारतीय मूल के निवासी बड़ी संख्या में रहते हैं। अधिकांश परिवार गैर हिंदी भाषी हैं, जिनसे संपर्क साधने के बाद उनके भारत–प्रेम और हिंदी–प्रेम की जानकारी मिली। अनेक माता– पिता चाहते थे कि उनके बच्चों को स्टारटॉक जैसे कार्यक्रमों के तहत औपचारिक हिंदी सिखायी जाए। इसी बीच नार्थपेन स्कूल डिस्ट्रिक्ट, जो इस इलाके में प्राथमिक से लेकर उच्च विद्यालय शिक्षा संचालित करता है, युवा हिंदी के साथ वार्षिक अनुबंध के लिए तैयार हो गया, जिसके अंतर्गत हमें गर्मी की छुट्टियों में तीन सप्ताह के सघन स्टारटॉक हिंदी कार्यक्रम चलाने की सुविधा प्राप्त हो गयी। सन् 2013 से लैंसडेल में अनवरत चलने वाले इस कार्यक्रम में अब पहली श्रेणी से लेकर उच्च विद्यालय के विद्यार्थी शामिल होते हैं, जो अपने घरों और समाज में हिंदी बोलने में शर्म महसूस नहीं करते। अनेक भारतीय माता–पिता अपने घरों में, जहाँ पहले सामान्य बोलचाल में हिंदी के बजाय किसी अन्य भारतीय भाषा (उनकी मातृभाषा, मराठी, गुजराती, तेलुगू आदि) का प्रयोग करते थे, इन्हीं बच्चों के कारण हिंदी भाषा का प्रयोग करने लगे हैं। युवा हिंदी संस्थान पेन्सिलवानिया प्रदेश के भारतीय बहुल क्षेत्र, जिसमें बक्स और मोंटगोमरी ज़िले (काउंटी)

प्रमुख हैं, औपचारिक हिंदी–शिक्षण के लिए प्रतिष्ठित है। बड़ी सावधानी से, लेकिन अपनी उत्कृष्ट भाषा–शिक्षण प्रयासों के बल पर, युवा हिंदी संस्थान यह साबित करने में सफल हुआ है कि हिंदी भारतीय संस्कृति की संवाहिका है, यह समस्त भारतीय प्रवासी संसार की भाषा है और इसकी शिक्षा आधुनिक शिक्षा पद्धति के ढांचे में समाहित है। यहाँ यह बताना प्रासंगिक है कि हिंदी–शिक्षण के प्रसार में हिंदी भाषा और साहित्यकारों के योग. दान और कॉलिज–विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षा को स्कूल स्तरीय हिंदी शिक्षा के साथ जोड़ने का एक समांतर प्रयास सन् 2014 में प्रारम्भ हुआ, जिसकी परिणति हिंदी संगम फ़ाउंडेशन, न्यू जर्सी और भारत में स्थापना के साथ आगे बढ़ी।

न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय की जानी मानी हिंदी प्राध्यापिका प्रोफ़ेसर गाब्रिएला इलिएवा, जो स्टारटॉक की अकादमिक टास्क फ़ोर्स में हिंदी–उर्दू के विकास और विस्तार के लिए वर्षों से सक्रिय रही हैं, अमेरिका ही नहीं, पूरे विश्व में अनौपचारिक हिंदी–शिक्षण को एक नियमबद्ध ढांचे में समाहित करने की पक्षधर रही हैं। वे न्यूयॉर्क और कोलंबिया विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यशालाओं का नियमित आयोजन करती रही हैं। उनके विचारों को सकारात्मक रूप देने के लिए सन् 2014 में प्रथम अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन का आयोजन न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय के परिसर में किया गया, जिसमें तत्कालीन प्रधान कौंसुल ज्ञानेश्वर मुले, जो कि एक प्रबल हिंदी समर्थक हैं, के प्रयत्नों से भारत सरकार ने हिंदी साहित्यकारों का एक प्रतिनिधिमंडल भेजा। इस सम्मेलन में गैब्रिएला जी के प्रयासों से अमेरिका के प्रमुख विश्वविद्यालयों के हिंदी प्राध्यापकों के आलावा स्टारटॉक के प्रतिनिधि भी शामिल हुए। इस सफल आयोजन की उपलब्धि यह रही कि हिंदी से जुड़े विभिन्न क्षेत्रों के कर्मी एक मंच पर आये। शोध–पत्रों को एक वेबसाइट पर संयोजित किया गया। भाषा–शिक्षण और साहित्य–रचना की दूरी कम की गयी। सम्मेलन के माध्यम से यह सन्देश प्रसारित किया गया कि प्रवासी संसार में हिंदी के प्रचार–प्रसार का कार्य सुनियोजित ढंग से किया जाना चाहिए, साथ ही भारत में तैयार होने वाली भाषा सामग्री जैसे, हिंदी विज्ञापन, टेलीविजन और फ़िल्म मनोरंजन कार्यक्रम, हिंदी वेबसाइट स्तरीय होने चाहिए ताकि उनका प्रयोग प्रवासी संसार में शिक्षा के लिए किया जा सके। क्योंकि इक्कीसवीं सदी में भाषा–शिक्षण आज के शिक्षार्थियों की ज़रूरतों के मुताबिक उन्हें विश्व नागरिक बनाने के लिए किया जाना चाहिए ताकि वे सामयिक जीवन की समस्याओं, जैसे, पर्यावरण–संरक्षण, गरीबी, भ्रष्टाचार जैसे मुद्दों के समाधान में योगदान कर सकें।

सन् 2015 में जब द्वितीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित करने की बात चली तब श्री मुले ने अपने न्यूयॉर्क स्थित कार्यालय में दर्जनों हिंदी कर्मियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि हिंदी प्रचार–प्रसार का कार्य सम्मेलनों और सेमिनार के ज़रिए करना अच्छी बात है, लेकिन इसका स्वरूप वार्षिक होना चाहिए और इसे एक विधि सम्मत संगठन के अंतर्गत करना चाहिए। इस नयी संस्था के गठन और नामकरण की प्रक्रिया पूरी करने की ज़िम्मेदारी भी मुझे सौंपी गयी। जनवरी 2015 में हिंदी संगम फ़ाउंडेशन की स्थापना हुई, जिसके न्यासी मंडल में अनेक प्रमुख हिंदी प्रेमी शामिल हुए और मैं प्रबंधक की भूमिका निभाते हुए द्वितीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन के आयोजन में न्यू जर्सी के प्रसिद्ध रटगर्स विश्वविद्यालय के साथ कार्य में जुट गया। यह सम्मेलन भी पहले की तरह सफल रहा, जिसमें सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित किया गया कि भारत सरकार की मदद से 'हिंदी केंद्र' स्थापित होना चाहिए, ताकि अमेरिका में समस्त हिंदी कार्यक्रमों और प्रयासों को एक केंद्रीय स्थान से संयोजित किया जा सके। इस प्रस्ताव पर अभी तक अमल तो न हो सका है, लेकिन हिंदी संगम फ़ाउंडेशन की प्रगति दिन–प्रतिदिन होती रही। सन् 2016 में तीसरा अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन न्यूयॉर्क के भारतीय कोंसुलावास में आयोजित किया गया और 2017 में आचार्य लक्ष्मीप्रसाद यार्लगड्डा के प्रयत्नों से गीतम विश्वविद्यालय, विशाखापट्नम में चौथे सम्मेलन को सफलता–पूर्वक संपन्न किया गया। हिंदी संगम शिक्षा के अतिरिक्त कूटनीति, वाणिज्य–व्यापार, स्वास्थ्य सेवाओं में हिंदी के प्रयोग के लिए कार्यरत है और आज न्यू जर्सी के कार–विक्रेताओं की हिंदी प्रचार सामग्री को देख–सुनकर उनके प्रति आभार व्यक्त करने का समय आ गया है। उनके द्वारा प्रारम्भ इस अभियान को अन्य व्यापारिक और खरीद–बिक्री के लिए प्रयुक्त किया जाना चाहिए, क्योंकि अब हिंदी भाषी समुदाय आर्थिक सम्पन्नता के परिसर

में प्रवेश कर चुका है और विज्ञापन जगत बाज़ार के नियमों को भली–भाँति पहचानता है।

हिंदी संगम फ़ाउंडेशन न्यू जर्सी के अलावा भारत में भी सक्रिय है। श्री ज्ञानेश्वर मुले के संरक्षण में अनेक कार्यक्रमों को भारत और भारतीय प्रवासी संसार में आयोजित करने की योजनाओं पर कार्य चल रहा है। फ़ाउंडेशन द्वारा सन् 2016 से न्यू जर्सी के फ़्रेक्लिन नगर शिक्षा बोर्ड के सहयोग से नया स्टारटॉक कार्यक्रम को अंजाम दिया गया है, जिसका प्रमुख विषय 'कहानी सुनना–सुनाना' रहा है।

युवा हिंदी संस्थान और हिंदी संगम फ़ाउंडेशन एक–दूसरे की पूरक संस्था के रूप में हिंदी के प्रसार और हिंदी–शिक्षण को औपचारिक ढाँचे में बाँधने के लिए क्रियाशील हैं। ये प्रयास हिंदी को प्रवासी संसार में भाषा और संस्कृति के नए अध्याय में ले जा रहे हैं, जहाँ जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी के प्रयोग में संकोच या शर्म नहीं होगा।

अमेरिका के ग्राहक केंद्रित समाज में अनेक किस्म की गतिविधियाँ देखने को मिल रही हैं, जिनके आधार पर यह कहना चाहता हूँ कि हिंदी के बदलते तेवर को पहचानने का समय आ गया है। साथ ही, हिंदी शिक्षकों, शोधार्थियों और आधुनिक टेक्नोलॉजिकल साधन निर्माताओं के लिए अपने कार्यों को आगे बढ़ाना चाहिए, न कि इस बहस में समय गंवाना चाहिए कि हिंदी अंग्रेज़ी की बराबरी करने योग्य है या नहीं?

न्यू जर्सी, यू.एस.ए.
aojha 2008@gmail.com

आपसी व्यवहार में जैसे मौन भी बोलता है, वैसे ही भाषा में शब्द का अभाव भी बोलता है। दो या तीन नुक़्ते डालकर जाने हम कितना नहीं कह जाते।

– जैनेन्द्र कुमार

जब कोई विजित जाति अपनी भाषा के शब्दों को ठुकराये और विजेता की भाषा के व्यवहार पर गर्व करे, तो इसे गुलामी का चिह्न मानना चाहिए।

– रामविलास शर्मा

मैं मानती हूँ कि हिंदी प्रचार से राष्ट्र का ऐक्य जितना बढ़ सकता है, वैसा बहुत कम चीज़ों से बढ़ सकेगा।

– लीलावती मुंशी

10

हिंदी-अध्यापन का विदेशी संदर्भ और दक्षिण कोरिया

– श्री दिविक रमेश

सबसे पहले मैं अपने बंगाल की भूमि को नमन करता हूँ जिसने हमें ही नहीं बल्कि कोरिया सहित पूरे विश्व को साहित्य, संस्कृति और विचार के क्षेत्र में, गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर के रूप में, एक सदाबहार महत्त्व का नायाब प्रेरणादायी उपहार दिया है। इस कथन को मैं कोरिया के संदर्भ में विशेष रूप से रेखांकित करना चाहता हूँ।

वस्तुतः कोरिया में भारत की विशिष्ट पहचान प्रायः बुद्ध, गांधी और टैगोर के देश के रूप में होती आई है। बौद्ध धर्म तो एक समय में कोरिया का राजधर्म भी रहा है। 1929 में, अर्थात् जापान के पराधीन कोरिया के समय में टैगोर द्वारा लिखित कुछ कवितानुमा पंक्तियाँ 'पूर्व का दीप' कोरिया के बच्चे–बच्चे की ज़बान पर है, जिन्हें उन्होंने जापान में रह रहे अपने देश के लिए स्वतंत्रता के इच्छुक युवा कोरियाई के अनुरोध पर अपने हस्ताक्षर के साथ लिखा था। नोबल पुरस्कार को एशिया के कोरियाई लोगों ने एशिया के पहले साहित्यकार को मिले पुरस्कार के रूप में अपनाया था। खैर, ये पंक्तियाँ मूलतः अंग्रेज़ी में लिखी गई थीं, जिनका लगभग 62 वर्ष बाद पहली बार मुझे ही, अपने दक्षिण कोरिया–प्रवास के समय, हिन्दी–अनुवाद करने का मौका मिला। यह अनुवाद, टैगोर सोसायटी ऑफ़ कोरिया की संस्थापक–सदस्या पद्मश्री सम्मान से विभूषित पहली और अब तक अकेली कोरियाई तथा साहित्य अकादमी का फैलो के रूप में सर्वोच्च सम्मान भी प्राप्त करने वाली वरिष्ठ कवयित्री किम यांग शिक के आग्रह पर किया गया था, जिसे वे अपने द्वारा संपादित पत्रिका 'कोरियन इंडियन कल्चर' के पिछले पृष्ठ पर कोरियाई अनुवाद और अंग्रेज़ी मूल के साथ प्रकाशित करती हैं। अनुवाद में पंक्तियाँ हैं:

एशिया के स्वर्णिम युग में
रहा कोरिया एक दीप वाहकों में
और कर रहा फिर प्रतीक्षा
वही दीप होने को ज्योतित
करने को फिर से आलोकित
पूरब का प्रांगण यह सारा

जन्म : 28.08.1946

शिक्षा :
- एम.ए. (हिंदी),
- पी.एच.डी. (हिंदी)

व्यवसाय :
सदस्य, परीक्षा तुल्यता समिति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

प्रकाशनः
- कविता : 'रास्ते के बीच', 1977 और 2003
- 'खुली आंखों में आकाश', 1983, 1987, 1989, 2017, यश पब्लिकेशंस, दिल्ली
- 'हल्दी–चावल और अन्य कविताएं', 1992
- 'छोटा–सा हस्तक्षेप', 2000 तथा अन्य प्रकाशन

पुरस्कार :
- दिल्ली हिंदी अकादमी का साहित्यिक पुरस्कार, 1983
- सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार, 1984
- गिरिजाकुमार माथुर स्मृति पुरस्कार, 1997
- एन.सी.ई.आर.टी. का राष्ट्रीय बाल–साहित्य पुरस्कार तथा अन्य पुरस्कार

जानकर अचरज नहीं होना चाहिए कि इन पंक्तियों ने उस समय तो कोरिया को एक नया उत्साह और ऊर्जा दी ही थी लेकिन 1945 में स्वतंत्र होने के बाद भी इनका महत्त्व नहीं घटा। इनका कोरियाई अनुवाद स्कूल स्तर पर पाठ्यक्रम में लगाकर टैगोर (जिसका उच्चारण वे ठागोर करते हैं) और भारत को

सम्मान दिया। सच तो यह है कि टैगोर के लेखन और विचारों ने कोरिया के अनेक साहित्यकारों को प्रभावित किया है, जिनमें सर्वोपरि नाम हान योंग उन का है, जो मानहे के नाम से प्रसिद्ध हैं। इस संदर्भ में विस्तार से अंग्रेज़ी में लिखे मेरे एक लेख 'टैगोरः ए सोंग ऑफ़ होप इन डिस्पेयर' (Tagore : A Song of Hope in Despair) जो साहित्य अकादमी, नई दिल्ली की अंग्रेज़ी पत्रिका 'इंडियन लिटरेचर' के मई–जून, 2012 अंक में प्रकाशित हुआ था, को पढ़ा जा सकता है।

मूल विषय पर आने से पहले, कोरिया और भारत को मज़बूती से जोड़ने वाले प्रमुख सूत्रों में दो और का ज़िक्र संक्षेप में करना चाहता हूँ। एक है बौद्ध धर्म और दूसरा है अयोध्या की राजकुमारी का कोरियाई राजा से विवाह। सब जानते हैं कि बौद्ध धर्म चीन से कोरिया होते हुए जापान गया था। बौद्ध धर्म की वैचारिकी ने कोरियाई साहित्य को भी प्रभावित किया है।

पहली शताब्दी के 48वें साल में अयोध्या की राजकुमारी हो (हॉ) हवांग ओक और (किमहे) गाया राज्य के राजा किमसूरो (जिनका जन्म अंडे से माना जाता है) के विवाह की कथा (समगुक यूसा, 1986, पृ. 158) में आती है। इस कथा को किंवदन्ती अथवा मिथक भी मान लिया जाए, तो भी कोरियाई लोगों की भारत के साथ अपने सांस्कृतिक संबंध जोड़ने की ललक की पुष्टि तो यह कथा भी कर ही देती है।

अतः भारत और कोरिया में एक–दूसरे के प्रति भारतीय और कोरियाई लोगों की बढ़ती हुई दिलचस्पी के उपर्युक्त ये सांस्कृतिक, पारम्परिक एवं महत्त्वपूर्ण कारण तो हैं ही, इधर पिछले कुछ वर्षों में कोरियाई कम्पनियों की भारत में होती गई प्रभावशाली उपस्थिति ने व्यावहारिक ज़रूरत के तौर पर भी भारत और हिंदी को कोरियाई लोगों के करीब ला दिया है। विशेष रूप से कोरिया की नई पीढ़ी में भारत और हिंदी का महत्त्व सहज ही बढ़ रहा है। मीडिया ने इस कार्य को सुगमता भी प्रदान की है।

उत्सुकता हो सकती है कि कोरियाई नई पीढ़ी में हिंदी सीखने के लिए दिलचस्पी बढ़ने के मुख्य कारण जाने जाएँ। बातचीत के आधार पर ही कह सकता हूँ कि सर्वप्रमुख कारण तो भारत की संस्कृति, जीवन और दर्शन की गहरी जानकारी लेना है। वस्तुतः आज भारत के अनेक पक्षों को उजागर करनेवाली सामग्री कोरियाई भाषा में उपलब्ध है। उनकी जानकारी ने कोरियाई नई पीढ़ी को भारत के सम्बन्ध में विस्तार और गहराई से जानने का इच्छुक बना दिया। और इस तरह वे हिंदी के अध्ययन की ओर झुके। कोरियाई अपनी भाषा को बहुत महत्त्व देते हैं। अतः भारत की भाषा हिंदी के प्रति, भारत को जानने की दृष्टि से, उनका झुकाव स्वाभाविक ही माना जाएगा। यह भ्रम भी काफ़ी हद तक टूटा है कि भारत को अंग्रेज़ी के माध्यम से पूरी तरह जाना जा सकता है और यह भी कि अंग्रेज़ी जानकर भारत में पूरी तरह काम चलाया जा सकता है। व्यवसायियों ने तो इस तथ्य को और अच्छे ढंग से समझ लिया है। वे अपने प्रबंधकों को भारत भेजने से पहले कामचलाऊ हिंदी सीखने की सलाह देते हैं।

भारतीय अर्थव्यवस्था में जो बदलाव आए हैं और जिस प्रकार वह विश्व के लिए खुलती गई है, उस कारण से भी कोरियाई नई पीढ़ी भारत और भारत की कोरिया में उपलब्ध भाषा हिंदी की ओर उत्सुक हुई है।

एक और दिलचस्प कारण की जानकारी चौंका सकती है। कोरिया में एक विशेष धर्म के लोग हैं। वे अपने धर्म को 'यो हो वा ज्युन इन' कहते हैं। वे इसका प्रचार कोरिया के बाहर भारत में भी करना चाहते हैं। अतः हिंदी सीखने वाले कुछ ऐसे कोरियाई विद्यार्थी भी हैं, जो अपने धर्म के सार्थक एवं व्यापक प्रचार के लिए हिंदी सीखते हैं। इसका प्रभाव यूँ अभी कम ही देखने को मिल रहा है।

हिंदी सीखने वाले विद्यार्थियों को तीन समूहों में बाँटा जा सकता है। एक वर्ग है, जो कोरिया में औपचारिक रूप से हिंदी सीखता है, उपाधि प्राप्त करता है। दूसरा समूह ऐसा है, जो अपने आप हिंदी सीखता है और तीसरा वह है, जो भारत जाकर हिंदी सीखता है।

हाँ कोरियाई भाषा के सीखने–सिखाने के अवसरों और साहित्य आदि की उपस्थिति भारत में भी बढ़ी है। दिल्ली, हैदराबाद, नालंदा आदि स्थानों पर तो विशेष रूप से विश्वविद्यालयी स्तर पर पढ़ाई जा रही है।

जहाँ तक हिंदी का विशिष्ट कोरियाई संदर्भ है, बखूबी एवं विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि वह अपने वर्तमान रूप

में तो उत्साहवर्धक है ही, साथ ही प्रभावशाली संभावनाओं से भी लहलहा रहा है। और यह बात मैं अपने 1994 से 1997 तक आई. सी.सी.आर. की ओर से दक्षिण कोरिया में अपने अध्यापन से जुड़े प्रवास के अनुभव, बाद में, देश में रहते मिलती रही जानकारी और अप्रैल 2007 में, अपनी दस दिवसीय दक्षिण कोरिया की राजधानी सोल की यात्रा से उपजे अनुभव के आधार पर पूरे आत्मविश्वास से दोहरा सकता हूँ। कोरिया में हिंदी की स्थिति को लेकर मेरा एक लेख 'कोरिया और भारतः संदर्भ संस्कृति और भाषा' (भाषा, जुलाई–अगस्त, 1998) और दक्षिण कोरिया के हांकुक विश्वविद्यालय, सोल में हिंदी विभाग के वरिष्ठ आचार्य और सुविख्यात भाषाविद् 'डॉ. ली. जंग हो' से मेरी भेंटवार्ता (गगनांचल, जन–मार्च, 1996) को भी देखा जा सकता है।

दक्षिण कोरिया में सोल स्थित हांकुक विश्वविद्यालय और बूसान स्थित पूसान विश्वविद्यालय भारत और हिंदी के पठन–पाठन के गढ़ हैं। हांकुक विश्विद्यालय के एक कैम्पस इमुन में हिंदी विभाग सन् 1972 में खुल गया था। दूसरे कैम्पस योंगिन में 1984 में खुला। इस विभाग के अन्तर्गत हिंदी भाषा सीखने के साथ–साथ, व्याकरण, हिंदी साहित्य, भारतीय संस्कृति, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, भूगोल (क्षेत्रीय), मल्टीमीडिया, भारतीय व्यापार आदि का भी अध्ययन किया जा सकता है। बातचीत और संरचना पर भी ज़ोर दिया जाता है, जिसका दायित्व प्रायः भारतीय प्रोफ़ेसर पर होता है। आजकल तो उर्दू भी सीख सकते हैं। विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति भी मिलती है। कोरिया में 12वीं कक्षा के परिणाम के आधार पर विश्वविद्यालय और विषय दिया जाता है। आज हिंदी विषय लेने वालों में खुशी से हिंदी लेने वालों का प्रतिशत 50 से ऊपर पहुँच गया है। बहुत अच्छे अंक प्राप्त करने वाले कोरियाई छात्र भी अपनी रुचि से हिंदी पढ़ना चाहते हैं। पहले हांकुक विश्वविद्यालय में लगभग 250 विद्यार्थियों के लिए 4 कोरियाई और एक भारतीय प्रोफ़ेसर का प्रबन्ध था। आज तो वहाँ 5 कोरियाई और 4 भारतीय प्रोफ़ेसर हो गए हैं।

पूसान (बूसान) विश्वविद्यालय में भी लगभग 120–130 विद्यार्थी हिंदी पढ़ रहे हैं। बूसान युनिवर्सिटी में हिंदी विभाग 1983 में खोला गया था। कोरिया में हिंदी की प्रबल संभावनाओं और वहाँ की युवा पीढ़ी में 'हिंदी' का अध्ययन करने और भारत के प्रति उनकी बढ़ती हुई जिज्ञासा का एक सबल प्रमाण यह भी है कि वहाँ के एक अत्यंत प्रतिष्ठित सरकारी विश्वविद्यालय – सोल नेशनल विश्वविद्यालय में भी सिमेस्टर के आधार पर हिंदी पढ़ाने का प्रबन्ध करना पड़ा।

बूसान विश्वविद्यालय में आजकल (नवम्बर, 2017) हिंदी पढ़ा रहे युवा भारतीय प्रोफ़ेसर धीरज मिश्र के अनुसार विश्वविद्यालय गुणवत्ता आदि की दृष्टि से पहले से काफ़ी बेहतर हो गया है। इस समय वहाँ पहले ग्रेड में 55 और दूसरे ग्रेड में 20 विद्यार्थी हैं। चौथे ग्रेड के 14 विद्यार्थी जे.एन.यू. में प्रवेश–पाठ्यक्रम में संलग्न हैं और तीसरे ग्रेड के कुछ विद्यार्थी भी भारत के कोलकोता तथा अन्य स्थानों पर शोध संबंधी परियोजनाओं से जुड़े हैं। अर्थात् भारत आकर अध्ययन करना भी वहाँ के हिंदी के विद्यार्थियों की एक विशेषता है। कोरिया में हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थियों के समूह हर वर्ष दिल्ली विश्वविद्यालय में आकर 21 दिनों तक हिंदी सीखने के एक विशेष कार्यक्रम में हिस्सेदारी करते रहे हैं। अब अलग–अलग समूह में 4–4 महीने के लिए वर्ष भर आते हैं। पूरा खर्चा स्वयं वहन करते हैं। यही नहीं पूसान विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय के मोतीलाल नेहरू महाविद्यालय के बीच भी आदान–प्रदान का एक करार हुआ था, जिसके तहत वहाँ के विद्यार्थी यहाँ आकर एक महीने के लिए हिंदी का विशेष अभ्यास और अध्ययन कर सके। और ये विद्यार्थी हिंदी के न होकर मैनेजमेंट के थे। हांकुक विश्वविद्यालय में भी व्यवस्थागत नया परिवर्तन हो चुका है। अपनी पिछली यात्रा में मुझे हिंदी के विद्यार्थियों ने बताया कि फ़िलहाल इटेलियन, चीनी, सुहाली, स्पैनिश और जापानी भाषाओं के कुछ विद्यार्थी हिंदी भी सीख रहे हैं। खैर_प्रोफ़ेसर धीरज मेजर हिंदी, धर्म और भारतीय संस्कृति तो पढ़ाते ही हैं, साथ ही बिज़नस हिंदी भी पढ़ाते हैं, जिसके अंतर्गत जैसी ज़रूरत हो वैसी हिंदी, साहित्य और इतिहास की पढ़ाई की जाती है। विशेष बात यह भी है कि पढ़ाते समय भाषावैज्ञानिक औज़ारों का भी इस्तेमाल करना होता है। कहानी पढ़ाते हुए वाक्य, संरचना आदि की दृष्टि से भी पढ़ाया जाता है। ज़रूरत और सुविधा होने पर अंग्रेज़ी का भी सहारा ले लिया जाता है, यद्यपि कोरियाई विद्यार्थी अंग्रेज़ी में बहुत पारंगत नहीं होते। पहले ग्रेड के बाद के विद्यार्थी हिंदी का भी प्रयोग करने

लगते हैं। एक अन्य भारतीय अध्यापक जो कोरियाई भी जानते हैं, विद्यार्थियों को बुनियादी व्याकरण और हिंदी बोलना सिखाते हैं। विभाग में चार कोरियाई वरिष्ठ अध्यापक और हैं।

यूँ तो कोरियाई विश्वविद्यालयों में हिंदी में बी.ए. की उपाधि के लिए ही सामान्यतः विद्यार्थी प्रवेश पाते हैं लेकिन व्यवस्था एम.ए. और पी.एच.डी. करने की भी है। हांकुक विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी ने पी.एच.डी. के लिए संस्कृत–हिंदी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन भी किया है। हिंदी साहित्य में एम.ए. के लिए भी कुछ विद्यार्थी हैं। दिलचस्प यह जानना भी होगा कि प्रायः हर विद्यार्थी अपना हिंदी नाम भी रख लेता है। मसलन ओ मिन सॅक ने आकाश, शिन स्योल र्योन ने सरला, ची योंग मिन ने सीता और किम ह्यन जिन ने जीवन नाम रखा है। वैसे यह चलन चीनी विद्यार्थियों में भी देखा जा सकता है। शायद अन्य देशों के विद्यार्थियों में भी।

हिंदी फ़िल्मों का पहले भी प्रभाव था, लेकिन वह अब और अधिक बढ़ा है। यहाँ तक कि हिंदी के प्रति या हिंदी–अध्ययन को अधिक रोचक एवं दिलचस्प बनाने के लिए हिंदी फ़िल्मों का सहारा लिया जाता है। हांकुक विश्वविद्यालय के योंगिन कैम्पस के हिंदी के प्रोफ़ेसर डॉ. ई उंग गू ने मल्टीमीडिया हिंदी–1 नामक पुस्तक तैयार की है, जिसमें उन्होंने एक लम्बी भूमिका तो लिखी ही है, हिंदी फ़िल्मों और उनके गानों के सम्बन्ध में जानकारी भी दी गई है, साथ ही राष्ट्रगान के अतिरिक्त 37 पुराने–नए फ़िल्मी गानों का एक चयन भी प्रस्तुत किया है। वे इन गानों को विद्यार्थियों को सुनाते–सुनवाते हैं, गवाते हैं और फिर उनके विश्लेषण, उनपर बातचीत के आधार पर हिंदी में बोलने और लिखने का अभ्यास भी कराते हैं। प्रो. ई उंग गू ने भारत में ही डॉ. रामदरश मिश्र के निर्देशन में 'प्रेमचन्द एवं योम सेंग सोप के उपन्यासों में यथार्थ चेतना : तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी। भारतीय संस्कृति में उनकी गहरी दिलचस्पी है और उसके ज्ञाता भी हैं। उन्होंने कोरियाई भाषा में भारतीय संस्कृति संबंधी एक पुस्तक भी लिखी है।

हिंदी के ही (अब सेवानिवृत्त) वरिष्ठ प्राचार्य प्रो. ली. जंग हो ने स्वातंत्र्योत्तर हिंदी और कोरियाई कहानी विषय पर पी.एच.डी. की उपाधि भी प्राप्त की है। यह ग्रंथ पराग (अभिरुचि प्रकाशन, दिल्ली) से प्रकाशित भी हुआ था। ये हिंदी की सेवा निरन्तर कर रहे हैं। इन्होंने ही अपने संपादन में पहला हिंदी–कोरियाई शब्दकोश भी मेरे कोरिया में रहते (1995 में) तैयार किया और उसे प्रकाशित भी कराया। यह कोश 67000 शब्दों से सम्पन्न है। हिंदी शब्द के साथ कोष्ठकों में अंग्रेज़ी में हिंदी उच्चारण दे दिया गया है। ज़रूरत पड़ने पर शब्द के साथ जुड़ सकने वाले अन्य शब्द/शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं , जैसे अंतिम और अंतिम–चेतावनी। इस कोश की भूमिका तत्कालीन भारतीय राजदूत श्री शशांक ने लिखी है। प्रोफ़ेसर ली (ई) जंग हो की ही एक अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य उनके द्वारा रचित और हांकुक विश्वविद्यालय (वेदे) से प्रकाशित ग्रंथ 'हिंदी व्याकरण' (हिंदी मून बाप) है। यह 381 पृष्ठों का एक विशाल ग्रंथ है। हांकुक विश्वविद्यालय (वेदे) की ही प्रो. किम ऊ जो ने अपनी देख–रेख में पहला कोरियाई–हिंदी शब्दकोश तैयार करके प्रकाशित कराया है। यह कार्य 1994 में प्रारम्भ हुआ था, लेकिन संपन्न 2000–08 में ही हो सका। इस 700 पृष्ठों के कोश में 50000 मुख्य और 20000 उपमुख्य प्रविष्टियाँ हैं। प्रोफ़ेसर किम ऊ जो की एक पुस्तक बेसिक हिंदी भी हांकुक विश्वविद्यालय से प्रकाशित है। इसी प्रकार भारत में अतिथि आचार्य रह चुके हांकुक विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर सहे जंग ने भी मानक हिंदी उच्चारण शिक्षण शीर्षक से एक पुस्तक की रचना की है। भाषा शास्त्री प्रोफ़ेसर छै भी बहुत सक्रियता से हिंदी के कोरियाई सरोकारों को निरन्तर आगे बढ़ा रहे हैं। भारत के केन्द्रीय हिंदी संस्थान ने हिंदी–कोरियाई वार्तालाप (conversational) निर्देशिका (guide) तैयार की है। इसके दो भाग हैं। पहले भाग में विभिन्न विषयों जैसे भाषा, अभिनन्दन, पर्यटन आदि पर हिंदी–वाक्य हैं; दूसरे भाग में अकार आदि क्रम से रोज़मर्रा प्रयोग में आने वाले शब्दों को संजोया गया है। इस 153 पृष्ठीय पुस्तक की कीमत 335 रुपए हैं और विद्यार्थियों के साथ–साथ इसकी उपयोगिता पर्यटकों के लिए भी है। भारत की ही हांकुक विश्वविद्यालय में रह चुकी हिंदी की अतिथि आचार्य (वर्तमान में मैसूर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्रोफ़ेसर और अध्यक्ष हैं) ने प्राथमिक कोरियाई विद्यार्थियों के लिए हिंदी वार्तालाप शीर्षक से एक पुस्तक प्रकाशित की है। साथ ही सीडी भी तैयार की है।

कोरिया के मशहूर बाज़ार इटेवान में जाइए और बंगलादेशी द्वारा खोली गई दुकान का नज़ारा देखिए। कौन–सा मसाला है, कौन–सी दाल है या चाय है, जो वहाँ नहीं मिलती। यहाँ तक कि बनी बनायी रोटियाँ और परांठे भी वहाँ उपलब्ध हैं। और मैगी भी। आटा भी। इन भोजनालयों और दुकानों ने कितने ही हिंदी शब्द प्रचलित कर दिए हैं। समोसा, तंदूर, दाल आदि कितने ही शब्द आज नई पीढ़ी की जानकारी में हैं।

न्यूयॉर्क में आयोजित विश्व हिंदी सम्मेलन (जुलाई, 2007) में संयुक्त राष्ट्रसंघ के तत्कालीन महासचिव, महामहिम बान की मून ने, जो कोरियाई हैं, अपने भाषण में हिंदी का उपयोग और हिंदी की महत्ता को रेखांकित करके दक्षिण कोरिया में हिंदी एवं भारत–प्रेम की ही स्थापना की थी।

अनुवाद द्वारा प्रदत्त आदान–प्रदान की दिशा में बढ़ती कुछ अधिक सजगता एवं सक्रियता भी हिंदी जानने के महत्त्व को बढ़ा रही हैं।

जहाँ तक अनुवाद के परिदृश्य की बात है, तो वह फिलहाल बहुत मज़बूत नहीं है। निःसंदेह गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर का तो भरपूर अनुवाद हुआ है, लेकिन हिंदी से कोरियाई में और कोरियाई से हिंदी में जो अनुवाद हुए हैं, वे अंगुलियों पर गिने जा सकते हैं।

पिछले वर्षों में कोरिया की कुछ साहित्यिक सामग्री हिंदी में उपलब्ध हुई है। साहित्य अकादमी, नेशनल बुक ट्रस्ट, पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी, राजकमल प्रकाशन, राजपाल एंड संस आदि ने महत्त्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित की हैं। सौभाग्य से अनुवाद की अधिकांश पुस्तकों के सृजन का अवसर इस लेख के लेखक (दिविक रमेश) को ही मिला है। दिविक रमेश के द्वारा अनूदित पुस्तकें हैं : कोरियाई कविता यात्रा, (अपने ढंग की पहली पुस्तक जिसमें अविभाजित कोरिया पहली कविता से लेकर आधुनिक समय तक के प्रमुख कवियों की कविताओं के अनुवाद हैं, साहित्य अकादमी), कोरियाई बाल कविताएँ (नेशनल बुक ट्रस्ट), कोरियाई लोक कथाएँ (पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी) जादुई बांसुरी और अन्य कोरियाई कथाएँ (नेशनल बुक ट्रस्ट) तथा 2015 में राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. द्वारा प्रकाशित 'खलनायक' (यी मून यॉल के कोरियाई उपन्यास का हिंदी अनुवाद)। इसके दो स्तर हैं : एक सीधा–सीधा और दूसरा सांकेतिक। सीधे–सीधे अर्थ के अनुसार यह कक्षा के एक ऐसे बिगड़ैल मॉनीटर की कहानी है, जो अपनी ताकत और अपने साम्राज्य का झंडा बनाए रखने के लिए कितने ही तरह के हथकण्डे अपनाता है। सांकेतिक अर्थ के अनुसार यह मनुष्य के भीतर की एक ऐसी अधिनायकवादी प्रवृत्ति को सामने लाता है, जो ताकतवर बनने की भरपूर कोशिश करती है। इसके लिए मनुष्य कुछ भी करता है। खुद को ताकतवर कहलाने का मनुष्य में एक अदमनीय नशा होता है। यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में है, जिसका 'खलनायक' 'ओम सोक दे' है।

यहाँ वरिष्ठ कवयित्री किम यंग शिक का नाम फिर एक बार लेना चाहूँगा जिन्होंने भारत सम्बंधी अनेक कविताएँ लिखी हैं, जिनका हिंदी–अनुवाद इस लेख के लेखक ने ही किया है। कविताएँ पुस्तक रूप में 'द डे ब्रेक्स : ओ इंडिया' शीर्षक से अजंता, दिल्ली द्वारा प्रकाशित हैं। सुखद समाचार यह है कि उन्होंने भारतीय वाद्य यंत्रों आदि के प्रदर्शन के लिए गैलरी बनाई है। इस संबंध में उनसे चर्चा करते हुए लगभग निश्चय हुआ कि गैलरी का नाम ओइम शांति गैलरी रखा जाए।

इसके अतिरिक्त इसी लेखक के कितने ही कोरिया संबंधी लेख (हिंदी और अंग्रेज़ी में) भी उपलब्ध हैं जो 'यादें महकी जब' (किताब वाले, नई दिल्ली) तथा ईस्ट एशियन लिटरेचर (East Asian Literatures, Northern Book Centre, New Delhi,) सहित विभिन्न पुस्तकों में भी प्रकाशित हैं तथा अनुवाद कार्य में निरंतर संलग्न हैं। अनेक पत्र–पत्रिकाओं में उनके अनुवाद प्रकाशित हैं। विशेष रूप से दो प्रमुख महिला कवियों – मून चुंग ही (नया ज्ञानोदय, जुलाई. 2014) और रा हीदुक (आधारशिला, मई–जून, 2013) के अनुवाद उल्लेखनीय हैं।

कोरिया संबधी दो अन्य उल्लेखनीय पुस्तकों में रामदरश मिश्र की 'भोर का सपना' (यात्रावृत्त) और पद्मा सचदेव की कोरियाई 'सीजो' (एक कविता–रूप) कविताओं के अनुवादों की पुस्तक 'शिशिर रात्रि का अनुराग' कही जा सकती हैं। एक पुस्तक 'पहाड़ में फूल' नाम से राजकमल प्रकाशन ने भी प्रकाशित की है, जिसमें मेरी निगाह में अनुवाद और बेहतर हो सकते थे। कोरिया की प्रख्यात लेखिका शिन ग्योंग सूक के सुविख्यात उपन्यास का नीलाभ कृत अनुवाद 'माँ का ध्यान रखना' शीर्षक

से राजपाल एण्ड संस द्वारा प्रकाशित है। इस उपन्यास में कोरियन माँ के माध्यम से रोज़मर्रा की ज़िंदगी में परिवार के लिए खटती और समर्पित लेकिन प्रायः महत्त्वहीन और उपेक्षित समझी जाने वाली 'माँ' के महत्त्व को स्थापित किया गया है। राजपाल के द्वारा ही चर्चित लेखिका सुन मी ह्वांग का प्रगति सक्सेना द्वारा अनूदित उपन्यास 'कुत्ता जिसने सपने देखने की हिम्मत की' प्रकाशित है, जिसमें एक काल्पनिक कहानी के माध्यम से इंसानी रिश्तों की बनावट और संवदेनाओं को दिखाने की कोशिश की गई है। एक समझ भी दी गई है कि जीवन की सारी चीज़ें वैसी ही नहीं होती जैसी हम चाहते हैं। विपरीत स्थितियों का सामना करते हुए भी प्यार और अपनेपन से जीवन का आनंद लिया जा सकता है। आठवीं शताब्दी में एक कोरियन भिक्षुक हे चो ने चीन से भारत की कठिन यात्रा की थी। इस यात्रा का वृत्तांत उसने डायरी के रूप में लिखा। इसके माध्यम से उस समय के भारत की जानकारी के पूर्ण दर्शन किए जा सकते हैं। इस पुस्तक का जगदीश चंद्रिकेश द्वारा किया हिंदी में अनुवाद ' हे–चो का यात्रावृत्तांत' शीर्षक से नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित (प्र. संस्करणः 2011) है।

अब थोड़ा अवलोकन हिंदी से कोरियाई भाषा में अनुवाद का भी कर लिया जाए। हिंदी के (अब सेवानिवृत्त) वरिष्ठ प्राचार्य प्रो. ली. जंग हो ने भीष्म साहनी के उपन्यास 'तमस' का पहले पहल अनुवाद किया था। इनके अनुसार भारतीय इतिहास, लोकजीवन, धार्मिक संबंधों को समझने के लिए यह उपन्यास बहुत ज़रूरी है। इन्होंने हिमांशु जोशी, भीष्म साहनी, राजेन्द्र यादव, अज्ञेय, काशीनाथ आदि की कहानियों के साथ–साथ लोक–कथाओं और जयप्रकाश भारती की रचनाओं के भी अनुवाद किए हैं। एक जानकारी के अनुसार प्रो. किम ऊ जो ने कबीर, घनानन्द, निराला, रघुवीर सहाय, धूमिल आदि की कविताओं तथा प्रेमचन्द, यशपाल, मोहन राकेश, मन्नू भंडारी, ज्ञानरंजन आदि की कहानियों के अनुवाद किए हैं, पर वे प्रकाशित रूप में उपलब्ध नहीं हैं। प्रो. ई (ली) उंग गू ने प्रेमचन्द के निर्मला उपन्यास का अनुवाद किया है। वरिष्ठ कवयित्री किम यांग शिक ने दिविक रमेश की कविताओं का न केवल अनुवाद किया है, बल्कि अपने ही द्वारा प्रारम्भ शांति प्रकाशन से प्रकाशित भी किया है। पुस्तक का नाम है – 'से दल उई ग्योल हन' अर्थात् 'चिड़िया का ब्याह'। किसी भी हिंदी कवि की कविताओं के कोरियाई अनुवाद की यह सर्वप्रथम पुस्तक है। किम छंग योंग द्वारा हिमांशु जोशी की कहानियों की पुस्तक सु–राज के अनुवाद की एक पुस्तक भी शांति प्रकाशन ने प्रकाशित की है। इसी प्रकार अयोध्या की राजकुमारी और कोरिया के राजा पर केंद्रित अंग्रेज़ी में लिखे गए, कोरिया में रहे भारत के भूतपूर्व राजदूत श्री एन. पार्थसारथी के उपन्यास का अनुवाद भी किम यांग शिक ने किया है। अन्य भारतीय भाषाओं से शरतचन्द्र, करतार सिंह दुग्गल, मंटो आदि की भी रचनाओं के अनुवाद हुए हैं। इसके अलावा वेद, उपनिषद् आदि धार्मिक ग्रंथ भी जैसे–तैसे अनूदित हुए हैं। बाद में सीधे संस्कृत से कोरियाई भाषा में अनुवाद की स्थितियाँ खोजी गईं। दक्षिण कोरिया के प्रसिद्ध बौद्ध मंदिर 'हे इन सा' में आज भी कोरियन त्रिपिटका अर्थात् बौद्ध ग्रंथ त्रिपिटक का कोरियाई अनुवाद सुरक्षित रखा हुआ है। कोरियन त्रिपिटका का उत्कीर्ण कोरियो राज (918–1392) में दो बार हुआ था। पहली बार उत्कीर्ण का कार्य 1087 में पूरा हुआ। लेकिन दुर्भाग्य से 1232 में, मंगोलों के आक्रमण में त्रिपिटका जल गई। इसके बाद 1236 में पुनः कार्य शुरू हुआ – तत्कालीन राजा गो जोंग के हुक्म से। लगभग 16 वर्षों के बाद 1251 में वर्तमान त्रिपिटका का कार्य सिद्ध हो सका। पहले इसे सोल शहर के पश्चिम में कांगहवा दो नामक द्वीप में रखा गया और बाद में 1398 में हे इन सा में लाया गया। कहना न होगा कि अनुवाद के आदान–प्रदान की इस दिशा में अभी बहुत सम्भावना है।

आज कोरिया में हिंदी की ओर नई पीढ़ी का इस हद तक रूझान हुआ है, तो इसे भारत की ओर बढ़े रूझान के संदर्भ में ही समझा जा सकता था। जिस तरह कोरिया का भारत में – खासकर भारत के बाज़ार में – धमाकेदार प्रवेश हुआ है, उसी प्रकार कोरिया में भारत की उपस्थिति बहुत दृढ़ता से देखी जा सकती है। और इसी संदर्भ से कहा जा सकता है कि कोरिया में हिंदी की उपस्थिति भी उतनी ही दृढ़ता से अपना एहसास करा रही है। निश्चित रूप से, यदि हम भारतीयों, हमारी सरकार की ओर से भी हिंदी की केन्द्रीय भूमिका को और अच्छी तरह से निभाने की ओर उचित ध्यान दिया गया, तो कोरिया में उसकी

बढ़ती हुई प्रगति को कोई नहीं रोक सकेगा। बखूबी कहा जा सकता है कि आज कोरिया विश्व के उन गिने देशों में से एक है जहाँ हिंदी का प्रभुत्व अग्रगामी है।

अंत में, इतना और कहने की अनुमति चाहता हूँ कि हिंदी के समाचार एवं अन्य कार्यक्रम दिखाने वाले टी.वी. चैनेल उपलब्ध होने से भी भारत के संबंध में जानकारी उपलब्ध होती रहती है और भारत के बारे में और अधिक जानने की स्वाभाविक रुचि कोरियाई लोगों में बढ़ती जाती है। लेकिन एक कोरियाई विद्यार्थी, जिसका भारतीय नाम 'समीर' है, ने यह चिन्ता भी व्यक्त की कि हिंदी को भारत की राज एवं राष्ट्र भाषा जिस रूप में बना लिया जाना चाहिए था, उसमें भारतीय चूके हैं। उस ओर ध्यान दिया जाना चाहिए।

नोएडा, भारत
divikramesh34@gmail.com

प्रान्तीय ईर्ष्या–द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिंदी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज़ से नहीं मिल सकती।

– सुभाषचंद्र बोस

जब हम अपना जीवन, जननी हिंदी, मातृभाषा हिंदी के लिए समर्पण कर दें, तब हम किसी के प्रेमी कहे जा सकते हैं।

– सेठ गोविंददास

भाषा के उत्थान में एक भाषा का होना आवश्यक है। इसलिये हिंदी सबकी साझा भाषा है।

– पं. कृ. रंगनाथपिल्लयार

11

हिंदी-शिक्षण में संप्रेषण कौशल : मॉरीशसीय संदर्भ में

— डॉ. अलका धनपत

'यदि सृष्टि में शब्द की ज्योति विकीर्ण नहीं होती तो यह त्रिभुवन घोर अंधकार में विलीन हो जाता।'

'इदमंधतमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम् ।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरा संसारं न दीप्यते ।।

(दंडी, काव्यादर्श)

'शब्द' ध्वनि से बना है तथा 'शब्द' ही मनुष्य की भाषा के विकास का आधार बना। नियति की ओर से मनुष्य को बोलने का जो वरदान मिला है, उसकी नींव 'शब्द' ही है। आज भाषा के कारण ही मानव समाज की प्रगति तथा समस्त ज्ञान–विज्ञान ग्राह्य हो सका। जानवर पहले भी अपनी जातिगत ध्वनियों से सुख–दुख व्यक्त करते थे। आज भी वे वहीं के वहीं हैं। वे जैसा तब खाते थे, आज भी वैसा ही खाते हैं, लेकिन मनुष्य जाति के विकास का कारण उसकी भाषा, उसका संप्रेषण–कौशल है। इसी भाषा तथा संप्रेषण–कौशल के कारण एक पीढ़ी ने जहाँ तक विकास किया, अगली पीढ़ी ने उन प्रयोगों का लाभ उठाते हुए, अगला कदम बढ़ाया। आज हमारे शब्द–कोशों में नए–नए शब्दों का स्वीकार किया जाना भी एक आम बात हो गई है। जो शब्द पूरी दुनिया में अधिक प्रयुक्त होने लगते हैं या जिनका सिक्का चल जाता है; वे ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी हो या हिंदी के कोश उसमें सहज ही आने लग जाते हैं। जैसे 'समोसे', 'जलेबी', 'संन्यासी', 'रांदेवू' (फ्रेंच) शब्द अब ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी में आ चुके हैं। इसी प्रकार 'पासपोर्ट', 'रेल', 'स्टूल', 'कमीज़', 'ज़मीन' जैसे शब्द हिंदी शब्दकोश का अंग बन चुके हैं। किसी भी भाषा को सीखने के लिए चार प्रमुख कौशलों में निपुण होना आवश्यक है और तब 'हायर ऑर्डर स्किल्स' (Higher Order Skills) उच्च अधिगम कौशल की प्राप्ति की जाती है। ये चार प्रमुख कौशल हैं : सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखना। 'हायर ऑर्डर स्किल्स' के अंतर्गत सृजनात्मक लेखन आता है, जिसमें स्वतंत्र चिंतन तथा मौलिक अभिव्यक्ति की अपेक्षा होती है ।

जन्म : 1961

शिक्षा :
- पी.एच.डी. (छायावादोत्तर हिंदी काव्य–लेखन और आधुनिकता)
- एम.फ़िल. (संशय की एक रात, परंपरा और आधुनिकता)
- एम.ए., बी.एड, बी.ए. (हिंदी)

व्यवसाय :
- (संप्रति) अध्यक्षा, सृजनात्मक लेखन एवं प्रकाशन विभाग, महात्मा गांधी संस्थान
- वरिष्ठ प्राध्यापिका, हिंदी विभाग, महात्मा गांधी संस्थान
- पूर्व हिंदी विभागाध्यक्षा, महात्मा गांधी संस्थान

प्रकाशन :
- 'संशय की एक रात', 'परंपरा तथा आधुनिकता' (पुस्तक)
- 'दर्द अपना–अपना' (कहानी)
- अनेक लेख व शोध–पत्र 'गवेषणा', 'राजभाषा मंजूषा' (शोध पत्रिका) 'गगनांचल', 'वसंत', 'रिमझिम', 'सुमन' आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित

पुरस्कार :
- प्रवासी शिक्षक सम्मान, भारत
- हिंदी सेवी सम्मान
- 'डॉ. जॉर्ज ग्रियर्सन पुरस्कार'

मॉरीशस टापू पर सन् 1834 से भारत से शर्तबंद मज़दूर लाए गए। ये मज़दूर अपने साथ अपने धार्मिक विश्वास, आस्थाएँ, रीति–रिवाज़ तथा भाषा या बोली भी लेकर यहाँ पहुँचे। यद्यपि सन् 1834 से गुलामी प्रथा समाप्त हो चुकी थी। शासकों के अत्याचार की कठिन परिस्थितियों में भी इन मज़दूरों ने अपनी भाषा तथा संस्कृति को बचाए रखा। संध्या समय बैठकाओं में अपनी भाषा में, अपनी बोली में सत्संग तथा पठन–पाठन होता रहा। सन्

1907 में गांधी जी की प्रेरणा से मणिलाल डॉक्टर मॉरीशस के भारतीय गिरमिटिया मज़दूरों की सेवा हेतु आए। उन्होंने मॉरीशस में पहला सार्वजनिक भाषण हिंदी भाषा में दिया। उन्होंने मॉरीशस में पहला हिंदी पत्र 'हिन्दुस्तानी' 1911 में निकाला। मणिलाल जी ने 1910 में मॉरीशस में औपचारिक रूप से आर्य समाज की स्थापना की। आर्य समाज ने मॉरीशस में हिंदी के प्रचार–प्रसार में स्वर्णिम योगदान दिया। सीमित साधनों के होते हुए भी लगातार कार्य करता रहा। भारतीय भाषाओं के प्रचार–प्रसार हेतु अनेक संस्थाएँ भी आगे आईं तथा अनवरत हिंदी का प्रचार–प्रसार करती रहीं ।

भारतीय भाषाओं के शिक्षण को सशक्त बनाने में स्वतंत्र मॉरीशस (1968) के प्रथम प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम का भी काफ़ी सहयोग रहा। आज मॉरीशस में हिंदी का एक भी समाचार–पत्र नहीं है। परंतु हिंदी में अनेक पत्रिकाएँ छपती हैं। हिंदी के प्रचार–प्रसार में मीडिया के प्रभाव को अनदेखा नहीं किया जा सकता। हिंदी गीतों, हिंदी फ़िल्मों तथा हिंदी धारावाहिकों ने हिंदी का एक बड़ा श्रोता वर्ग तैयार किया है ।

मॉरीशस में आए शर्तबंद मज़दूरों की भाषा भोजपुरी बोली ने भी हिंदी की ज़मीन को मज़बूत किया। आज मॉरीशस का छात्र हिंदी, उर्दू, तमिल, तेलुगु, मराठी, मन्दारिन, अरबी, भोजपुरी तथा क्रियोल भाषाओं में से किसी भी भाषा को पढ़ने के लिए स्वतंत्र चुनाव कर सकता है। आज देश में शिक्षा को लेकर नए–नए प्रयोग किए जा रहे हैं। पिछले साल 2017 से नवीन राष्ट्रीय शिक्षण अधिगम योजना के अंतर्गत नौ वर्षीय पाठ्यक्रम तैयार किया गया। सभी विषयों के लिए नवीन पाठ्य–पुस्तकों का प्रावधान किया गया है। देश में प्राइमेरी की पढ़ाई छह वर्ष तक होती है। छात्र छह वर्ष तक हिंदी भाषा को पढ़ता है तथा सीखता है। पर कॉलिज या ग्रेड 7 में जब वह पहुँचता है, तब वह प्रवाह के साथ हिंदी नहीं बोल पाता। यह समस्या सभी सांस्कृतिक भाषाओं की है, अर्थात् अभिव्यक्ति पक्ष कमज़ोर है। अंतः मौखिक अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने के लिए पाठ्यक्रम तथा पाठ्य–पुस्तकों में भी संप्रेषण कौशल को विशेष स्थान दिया गया है। छात्रों के मौखिक संवाद के कौशल को बढ़ाने के लिए संप्रेषण–कौशल को परीक्षा के साथ भी जोड़ा गया। यद्यपि अभी संप्रेषण–कौशल के लिए अंकों का प्रावधान नहीं है, पर छात्र की अंक–सूची में ग्रेड ज़रूर जुड़ता है। संप्रेषण–कौशल के अंतर्गत जब वाचन परीक्षण किया जाता है, तब उसका आधार श्रवण परीक्षण, भाषण परीक्षण तथा वाचन परीक्षण है। श्रवण परीक्षण के अंतर्गत श्रवण क्षमता का परीक्षण, ध्वनि बोध परीक्षण, अनुतान परीक्षण, बलाघात एवं स्वराघात परीक्षण तथा श्रवण बोध क्षमता परीक्षण आदि समाहित होते हैं । इसके दूसरे भाग – भाषण परीक्षण में उच्चारण क्षमता परीक्षण, ध्वनि उच्चारण परीक्षण, अनुतान परीक्षण तथा आघात परीक्षण आदि होते हैं। जैसे 'रोको मत! जाने दो।' एक अन्य रूप में 'रोको! मत जाने दो।' मौखिक अभिव्यक्ति तथा लिखित अभिव्यक्ति में दोनों पंक्तियाँ एक होते हुए भी अर्थ में पूर्णतः विरोधी हैं ।

वाचन परीक्षण के अन्तर्गत वाचन बोध परीक्षण, पाठ्य पुस्तकेतर वाचन परीक्षण, शब्दावली बोध परीक्षण, अनुच्छेद वाचन परीक्षण तथा वाचनगति परीक्षण आदि आते हैं। इन्हीं सबका समाहार सस्वर पठन, एकालाप तथा संवाद/वार्तालाप का प्रावधान प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के संप्रेषण–कौशल के लिए किया गया है। सस्वर पठन के अन्तर्गत छात्र को एक अनुच्छेद पढ़ने के लिए कहा जाता है। छात्र से एकालाप में दिए गए विषय पर बोलने की अपेक्षा की जाती है तथा संवाद में वह वार्तालाप को एक अन्य विद्यार्थी के साथ आगे बढ़ा सके, इसकी अपेक्षा की जाती है। उसके ग्रेड का आधार चार्ट में दिए गए बेसिक, इंटरमीडिएट तथा प्रोफ़िशिएंट कॉलम को भरकर किया जाता है ।

इसे जब परीक्षा का अंग बना दिया है तब अध्यापक तथा माता–पिता कुछ अधिक सजगता से इसपर कार्य कर रहे हैं। इस कार्य का उद्देश्य यही है कि भाषा शिक्षण–अधिगम के कार्यकाल में छात्र लक्षित भाषा में संप्रेषण भी कर सके। वह अध्येय भाषा की ध्वनि को सुनकर पहचानने, स्मरण रखने तथा उनसे निर्मित शब्दों, वाक्यांशों तथा वाक्यों के अर्थ को ग्रहण करने संबंधी कुशलता को विकसित कर सके। सस्वर पठन में उसे ध्वनि का अंतर पहचानना होता है। जैसे दाल देगची में डाल दो। द, ड ध्वनि में अंतर समझकर उच्चरित कर पाना।

अनुतान परीक्षण के अंतर्गत वह अभिव्यक्ति द्वारा अर्थ को समझ पाता है। जैसे 'तुम बाज़ार जाओगे।' तथा 'तुम बाज़ार

जाओगे?' वाक्य के अर्थ में अंतर है। संवाद परीक्षण के अंतर्गत यह देखा जाता है कि अध्येय भाषा की वाक्य–संरचना तथा व्याकरणिक रूपों को पहचानने तथा समझने में वह कितना समर्थ है। संप्रेषण–कौशल में भाषा–ग्रहण, भाव–प्रकाशन तथा सृजन का समावेश होता है। संप्रेषण–कौशल का आधार ग्राह्यात्मक उद्देश्य (Receptiveaim) तथा अभिव्यंजनात्मक उद्देश्य (Productive/ Expressionaim) होता है। इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु छात्र को अभ्यास करवाना ज़रूरी है। अर्थात् भाषा को सुनकर समझना, विचारों की सरल तथा शुद्ध रूप में अभिव्यक्ति कर पाना तथा भाषा के व्याकरण को ठीक से समझकर, ध्येय भाषा में कुशलता पूर्व अभिव्यक्ति कर पाना। आनन्द प्रकाश व्यास लिखते हैं :

'भाषा अधिगम के चारों कौशलों से संबंधित क्षमताओं की संप्राप्ति विद्यालयी शिक्षा के प्रारंभिक स्तर (ग्रेड 8) तक पूरी हो जाती है और आगे की कक्षाओं में इन कौशलों के शिक्षण–अधिगम के लिए कोई व्यवस्था करने की आवश्यकता नहीं है। इसीलिए माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं में भाषा–शिक्षण का केंद्र बिंदु साहित्य का शिक्षण हो जाता है। माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक कक्षाओं के भाषा पाठ्यक्रम इसी दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करते हैं।'

(पृ. 24, भाषा एवं साहित्य–शिक्षण के विविध आयाम)

भाषा के चारों मूलभूत कौशल अध्येता की बोधन तथा अभिव्यक्ति को सशक्त बनाते हैं। सुनना और पढ़ना बोधन व्यवहार तथा बोलना और लिखना अभिव्यक्ति व्यवहार से संबंधित हैं। बोधन और अभिव्यक्ति का संबंध अन्योन्याश्रित है। प्रत्येक वार्तालाप में हम श्रोता तथा वक्ता दोनों होते हैं। प्रत्येक पठन के बाद लेखन या उसकी मौखिक चर्चा भी उससे जुड़ी होती है।

अनुमानतः द्वितीय भाषा–शिक्षण में एक छात्र छह सालों में लगभग दो हज़ार शब्दों को सीख लेता है। वह इन शब्दों का प्रयोग संप्रेषण–कौशल में भी करता है। साधारणतः मनुष्य भाषा सीखने में जो समय व्यतीत करता है, उसमें 45 प्रतिशत सुनने, 30 प्रतिशत बोलने तथा शेष 25 प्रतिशत संयुक्त रूप से पठन एवं लेखन में लगाता है। श्रवण केवल शारीरिक प्रक्रिया नहीं है, वरन् इसके साथ–साथ श्रोता विषयवस्तु में निहित विचार तथा भाव पर चिंतन–मनन कर अभिव्यक्ति भी करता है।

'शिक्षण–अधिगम की दृष्टि से 'श्रवण–कौशल' का अर्थ बालक में ऐसी क्षमता का विकास करना है, जिससे वह किसी कथन को ध्यान से सुन सके, उसमें निहित अर्थ को समझ सके, सुनी हुई बात का विश्लेषण करते हुए , चिंतन–मनन कर सके और उसपर उचित अनुक्रिया कर सके।'

(पृ. 26, भाषा एवं साहित्य–शिक्षण के विविध आयाम)

संप्रेषण–कौशल की जाँच हेतु एक 'ऑब्ज़र्वेशन–रिकॉर्ड' छात्रों के लिए तैयार किया गया। इस रिकॉर्ड का आधार था सस्वर पठन, एकालाप तथा संवाद। सस्वर पठन के लिए जिन तत्त्वों को जाँच का आधार बनाया गया वे थे – पठन की स्पष्टता एवं समझकर पढ़ना, शब्दों का उच्चारण सही ढंग से करना, सही गति तथा अनुतान, उचित स्वराघात, बलाघात, आरोह–अवरोह के साथ भावनाओं का संप्रेषण करना। एकालाप के अंतर्गत भी आवश्यक होता है कि छात्र अपने विचारों की अभिव्यक्ति स्पष्टता से कर सके, उसके शब्द–भंडार तथा वाक्य–रचना विषयानुकूल हो तथा आत्मविश्वास के साथ वह स्पष्ट एवं सहज अभिव्यक्ति कर सके।

संवाद के अंतर्गत ज़रूरी है कि छात्र एक लघु वार्तालाप कर सकें, वार्तालाप को आगे बढ़ाने हेतु उचित शब्दावली का प्रयोग तथा वाक्य–रचना ठीक ढंग से बना सके और वह बोलचाल की भाषा में प्रयुक्त संबोधनों का उचित प्रयोग कर सकें।

उपयुक्त तीनों आधारों पर ही छात्रों में ग्रेड अथवा स्तरों की जाँच का निर्णय तथा परीक्षण किया जाता है। वास्तव में, विद्यार्थी को सस्वर पठन हेतु एक अनुच्छेद दिया जाता है। यह अनुच्छेद सूचनात्मक या फिर वर्णनात्मक भी हो सकता है। छात्र विराम चिह्न आदि के प्रयोग को समझते हुए गति, अनुतान, बलाघात आदि का ध्यान रखते हुए पठन करता है। एकालाप में कभी कोई विषय दिया जाता है, तो कभी चित्र प्रस्तुति के आधार पर भी छात्र अभिव्यक्ति कर सकता है। छात्र की अनुभव सीमा में दिया गया शीर्षक होना चाहिए। जैसे 'हवाई जहाज़ की यात्रा' शीर्षक एक विवादास्पद विषय है, क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि प्रत्येक छात्र को इस यात्रा का अनुभव प्राप्त हुआ हो। ऐसे ही रेगिस्तान में रहनेवाले बच्चे को आप समुद्र–तट या समुद्री तूफ़ान पर बोलने के लिए नहीं कह पाएँगे।

संवाद के लिए दो छात्र भी हो सकते हैं, जो 'रोल मॉडल' बनकर दिए गए विषय पर प्रस्तुति कर सकते हैं। समूह संवाद भी किसी चयनित विषय पर संभव है। कार्यक्रम आयोजन को लेकर वार्तालाप हो सकता है, इसके अतिरिक्त जिज्ञासा पर आधारित संवाद भी करवाए जा सकते हैं। जैसे विद्यालय में आयोजित मेला या भ्रमण आदि।

छात्रों में संप्रेषण–कौशल के स्तर को बढ़ाने के लिए कक्षा में अभ्यास की काफ़ी आवश्यकता है। मॉरीशस में हिंदी द्वितीय भाषा–शिक्षण के अंतर्गत आती है। इसलिए संप्रेषण–कौशल के परीक्षण हेतु उनके स्तर तथा अनुभव क्षेत्र का ध्यान रखना अति आवश्यक है। यह ध्यान रखा जाता है कि पूछे गए प्रश्न या विषय स्पष्ट तथा सरल हों, छात्रों की आवश्यकता तथा उनकी भाषा संबंधी ज़रूरत से जुड़े हों, भाषा का स्तर छात्र की आयु तथा वर्ग अनुसार हो और जो भी विषय दिए जाएँ, वे कक्षा में मिश्रित योग्यता वाले छात्रों के अनुकूल हो।

भाषा के चारों कौशलों के विकास का उद्देश्य छात्र को जीवन में 'सामाजिक दक्षता' (जॉन हिवी) प्राप्त करवाना है। यह क्षमता भावों एवं विचारों की मौखिक अभिव्यक्ति पर ही निर्भर है। विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में भाषा के इसी संप्रेषण–कौशल को माँजने के लिए अनेक प्रकार की गतिविधियों का आयोजन किया जाता है। राष्ट्रीय स्तर पर हर वर्ष मॉरीशस में दस भाषाओं में नाटक प्रतियोगिताएँ होती हैं। वे भाषाएँ हैं – हिंदी, तमिल, तेलुगु, मराठी, उर्दू, क्रियोल, अंग्रेज़ी, फ्रेंच, भोजपुरी तथा मन्दारिन। सबसे अधिक नाटक (लगभग 20–25 तक) हिंदी भाषा में ही मंचित होते हैं। इन नाटकों के माध्यम से भी संप्रेषण–कौशल मज़बूत होता है। संस्थाएँ जैसे आर्य सभा, हिंदी प्रचारिणी सभा, हिंदी स्पीकिंग यूनियन आदि हिंदी में वाचन–प्रतियोगिताओं का आयोजन करके देश के बच्चों में संप्रेषण–कौशल को मज़बूत करने में पूरा सहयोग देती हैं। विद्यालयों में अब अध्यापक नवीन शिक्षण–पद्धति के अनुसार संप्रेषण–कौशल पर अभ्यास–कार्य करवा रहे हैं ।

कक्षा 4, 5, 6 के पाठों के अंत में संप्रेषण–कौशल के प्रश्न अभ्यास हेतु दिए गए हैं। अध्यापकों के लिए, एक अध्यापक–निर्देशिका भी संप्रेषण–कौशल हेतु बनाई गई है। मॉरीशस के प्राइमेरी टीचर्स यूनियन ने भी एक पुस्तिका संप्रेषण–कौशल पर तैयार कर अध्यापकों को दी है।

माध्यमिक स्तर पर छात्रों द्वारा कुछ प्रतियोगिताओं में भाग लिया जाता है। वहाँ कक्षा के अतिरिक्त इन द्वितीय भाषाओं में संप्रेषण–कौशल के लिए कोई प्रावधान नहीं है। महाविद्यालयी स्तर पर महात्मा गांधी संस्थान में हिंदी सप्ताह के दौरान हुई गतिविधियाँ छात्रों का हिंदी में संप्रेषण–कौशल मज़बूत करती हैं। इन गतिविधियों में कविता, आशुवाक्, नुक्कड़ नाटक तथा अंत्याक्षरी जैसी प्रतियोगिताएँ छात्रों के हिंदी भाषा में बोलने के अभ्यास का कारण बन जाती हैं। इस सप्ताह वातावरण भी हिंदीमय प्रतीत होता है। अन्यथा छात्र अपनी मातृभाषा क्रियोल का ही अधिक प्रयोग करते हैं ।

मॉरीशस में मीडिया पर आने वाले हिंदी के कार्यक्रम, हिंदी में प्रस्तुतियाँ, हिंदी फ़िल्मों के गीत, फ़िल्म, धारावाहिक आदि संप्रेषण–कौशल को प्रोत्साहित करते हैं। श्रवण और भाषण संप्रेषण के आधारभूत कौशल हैं ।

'सुनने की प्रक्रिया में श्रोता वक्ता द्वारा व्यक्त विचारों तथा भावों को ध्वनि–प्रतीकों के माध्यम से ग्रहण करता है। इसी प्रकार बोलने की प्रक्रिया में वक्ता विचारों तथा भावों को ध्वनि–प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है।' (पृ. 186, भाषा, शिक्षण : सिद्धांत और प्रविधि)

मॉरीशसीय संदर्भ में संप्रेषण के दौरान कुछ अलग अभिव्यक्तियों का भी उदाहरण देना चाहूँगी। रेडियो या टेलीविजन पर हिन्दुस्तानी समाचार के बाद, ''आपके ध्यान के लिए धन्यवाद'' बोला जाता है। छात्र भी कक्षा में जब मौखिक अभिव्यक्ति करता है, तब वह भी अन्त में 'आपके ध्यान के लिए धन्यवाद' वाक्य का प्रयोग करता है। शिक्षण–संस्थानों या संस्थाओं में हिंदी अध्यापकों तथा अध्यापिकाओं के लिए संबोधन क्रमशः गुरुजी तथा बहनजी आज भी प्रयुक्त होते हैं। प्राथमिक कक्षाओं में संप्रेषण–कौशल का बीजवपन कुछ वाक्यों का उच्चारण करवाते हुए लगभग वर्ष भर मौखिक रूप से कक्षा के प्रारंभ में करवाया जाता है। जैसे –

अध्यापक : 'आप कैसे हैं बच्चो?'

छात्र गण : 'हम स्वस्थ हैं बहनजी।'
अध्यापक : 'आज मौसम कैसा है?'
छात्र गण : 'आज मौसम सुहाना/खराब है।'
अध्यापक : 'अच्छा आप बैठिए।'
छात्राएँ : 'मैं बैठती हूँ। धन्यवाद बहन जी/गुरुजी।'
छात्र : 'मैं बैठता हूँ। धन्यवाद बहनजी/गुरुजी।'

इस प्रकार के कुछ वाक्य पूरे देश की प्राथमिक कक्षाओं में प्रत्येक अध्यापक लगभग हर कक्षा में संवाद रूप में बच्चों से पूछता है।

श्रवण तथा वाचन कौशल जितना मज़बूत होगा, उतना ही पठन तथा लेखन भी कुशलता से पूर्ण हो पाएँगे। भाषा के चारों कौशल आपस में एक सुन्दर बुनावट हैं, एक यदि कहीं छूट जाएगा, तो भाषा की बुनावट का डिज़ाइन टूटने लगेगा। भाषा के उच्चरित रूप की जानकारी ही उसके लिखित रूप को कुशलता प्रदान करता है।

श्रवण कौशल में जहाँ स्वनिमों वर्णों, वाक्यांशों तथा शब्दों की पहचान का समावेश है, वहीं वाचन में कथ्य को समझकर संप्रेषित करना, कथ्य का उचित चयन तथा प्रयोग करना (साँचा) शब्दों का चयन और उनके रूपों का संयोजन करना तथा शुद्ध वाक्य–रचना की अभिव्यक्ति करना समाहित हैं।

श्रवण कौशल की विशेषताएँ ही भाषा के बाकी तीनों कौशलों का आधार बनती हैं। श्रवण कौशल के अंतर्गत भाषा की उच्चरित ध्वनियों को सुनना, समझना तथा स्मरण रखना होता है। द्वितीय भाषा–शिक्षण में अन्य भाषा के उच्चरित रूप को समझने की योग्यता इस बात पर निर्भर होती है कि भाषा विशेष की व्यवस्था के अनुरूप ध्वनियों की भिन्नता को स्पष्ट रूप से समझा जा सके।

मॉरीशसीय छात्र बहुत बार अल्पप्राण, महाप्राण तथा घोष–अघोष ध्वनियों के अंतर को नहीं समझ पाते। अक्सर उनकी मौखिक अभिव्यक्ति में 'भात' को 'बात', 'डरा' को 'दरा', 'भला' को 'बला', 'पेड़' को 'पेर', 'प्राणियों' को 'प्रानियों', 'खबर' को 'कबर', 'बैठक' को 'बैतक' उच्चारण सुनने को मिलता है। मॉरीशसीय छात्र के पास अंग्रेज़ी तथा फ्रेंच भाषा का ज्ञान है। क्रियोल उसकी मातृभाषा है। अन्य भाषाएँ उसकी सांस्कृतिक भाषाएँ हैं। जब वह द्वितीय भाषा–शिक्षण प्रारम्भ करता है, तब इन भाषाओं का प्रभाव उसके उच्चारण पर पड़ता है।

अध्यापक उच्चारण की शुद्धता, अनुतान तथा विवृत्ति संबंधी कुशलताओं को बढ़ाने के लिए प्रयासरत रहते हैं। अब तो टीचर–ट्रेनिंग कोर्स में भी एक मोड्यूल मौखिक अभिव्यक्ति पर (60%) अंकों पर आधारित है, ताकि भविष्य में अच्छे अध्यापकों द्वारा छात्रों के संप्रेषण–कौशल को अधिक उचित रूप प्रदान किया जा सके। यही कारण है कि आज इस देश में जब पर्यटक आते हैं, तब अंग्रेज़ी, फ्रेंच तथा हिंदी में संवाद करने में उन्हें कोई परेशानी नहीं होती है। एयरपोर्ट के कर्मचारी से लेकर, टैक्सी ड्राईवर, होटल–वेटर, दुकानदार, मॉरीशसीय निवासी किसी भी स्थान पर सहजता से संप्रेषण कर पाते हैं। सन् 2018 का विश्व हिंदी सम्मेलन इस बात का साक्षी था कि मॉरीशसीय जनता हिंदी समझती है तथा बोलने में भी हिचकिचाती नहीं है। यह उसकी सांस्कृतिक भाषा है। उसकी अस्मिता की भाषा है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

- भाषा शिक्षण सिद्धांत और प्रविधि, मनोरमा गुप्त, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, 1985
- हिंदी शिक्षण, डॉ. शिखा चतुर्वेदी, 2000
- हिंदी भाषा, भोलानाथ तिवारी, किताब घर, इलाहाबाद
- हिंदी शिक्षण, सावित्री सिंह, मेरठ, भारत
- हिंदी शिक्षण : भाषा एवं साहित्य शिक्षण, डॉ. शिखा चतुर्वेदी, 2007
- भाषा एवं साहित्य शिक्षण के विविध आयाम, सं. नीरा नारंग, दिल्ली, 2002
- MGI – पुस्तकालय
- MIE – पुस्तकालय
- MIE &http://mie-ac-mu

महात्मा गांधी संस्थान, मोका, मॉरीशस
alkadunputh@yahoo.co.in

12

सरस्वती हिंदी पाठशाला में हिंदी-शिक्षण

— श्री धनराज शम्भु

जन्म : 14.11.1956

शिक्षा :
- एस.सी.
- जी.सी.ई.
- साहित्य–रत्न
- संस्कृत–कोविद
- विद्या–वाचस्पति, डिप्लोमा
- डिप्लोमा इन मैनेजमेंट
- टीचर्ज़ सर्टिफ़िकेट
- तथा अन्य विषयों की पढ़ाई

व्यवसाय :
- संप्रति : उप मुख्य हिन्दी शिक्षक पद पर कार्यरत हैं।
- 1977 में सरकारी हिंदी अध्यापक बने तथा शिक्षण में अब तक लगे हैं।
- सामाजिक कार्य करने में सदा व्यस्त रहते हैं।
- सचिव, सरकारी शिक्षक संघ
- महामंत्री, हिंदी प्रचारिणी सभा
- सहसंचालक, सरस्वती हिंदी पाठशाला
- रेडियो–टीवी पर कार्यक्रम का प्रस्तुतीकरण

प्रकाशन :
- 1976 में तरंगिनी कविता संग्रह
- 1979 में –एहसास कविता –ग़ज़ल
- 1998 में प्रतीक्षा एक नयी सुबह की– एकांकी संग्रह
- तथा अन्य प्रकाशन

पुरस्कार :
- ज़िला परिषद् द्वारा–श्रेष्ठ नागरिकता
- भारतीय उचायोग एवं कला–संस्कृति मंत्रालय द्वारा – श्रेष्ठ लेखक, युवा साहित्य चेतना–भारत द्वारा–वगेश्वरी सम्मान शब्द साधक–भारत द्वारा–काव्य श्री–सम्मान तथा अन्य सम्मान

मॉरीशस ज्वालामुखी के विस्फ़ोट से निर्मित सात सौ बीस वर्ग मील का हिंदमहासागर में मोती तथा सितारे की तरह उभरा हुआ स्वर्ग–सहोदर एक छोटा–सा द्वीप है। इस टापू में विश्व के चार मुख्य धर्मों के अनुयायी – हिंदू, मुस्लिम, बौद्ध और ईसाई, भाईचारे तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना समेटे जीवन बसर कर रहे हैं। यह एक बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहुधर्मी देश है। इस द्वीप को नौ ज़िलों में विभाजित किया गया है। इसकी थोड़ी दूरी पर एक नन्हा–सा टापू रोड्रिग्स नाम से जाना जाता है और वह दसवाँ ज़िला माना जाता है। इन दस ज़िलों में लगभग तेरह लाख की आबादी है। इन्हीं ज़िलों में से मोका एक है, जो मॉरीशस के मध्य में स्थित है, जिसे देश की नाभि भी मानते हैं। इसी मोका ज़िले में एक छोटा–सा गाँव है, जो काँतोरेल नाम से प्रसिद्ध है। यह गाँव हिंदू ग्राम से जाना जाता है। इसी गाँव में एक स्वैच्छिक बैठका 'सरस्वती पाठशाला' नाम से सम्मेलन सभा में स्थापित हुई, बाद में छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई और जगह के अभाव के कारण यह पाठशाला सरस्वती हिन्दू संगठन के तत्त्वावधान में कार्चिये–मिलितेर ग्राम में स्थित हो गई। शुरू में पाँच दिन सायंकालिक रूप में प्राथमिक और बाद में पूरा दिन रविवार को प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर हिंदी, संस्कृत और धर्म का शिक्षण होने लगा। यह कार्य पचपन सालों से निःस्वार्थ कर्मठ शिक्षकों व हिंदी प्रेमियों द्वारा आज तक चल रहा है।

सरस्वती हिंदी पाठशाला की स्थापना 1960 के सालों में हिंदी प्रचारिणी सभा द्वारा हिंदी सप्ताह का आयोजन, प्रो. बासुदेव विष्णुदयाल के प्रभावपूर्ण एवं क्रांतिकारी विचारधारा से ओतप्रोत भाषण ,धर्म, संस्कृति एवं हिंदू एकता के प्रवचन, पूर्वीय भाषाओं को पढ़ाने के लिए सरकारी पाठशालाओं में अध्यापकों की नियुक्ति की मांग, बैठकाओं में हिंदी पठन–पाठन में जागृति आदि देखकर तीन दूरदर्शी महानुभावों ने मोका ज़िले के काँतोरेल गाँव में एक छोटी बैठका की स्थापना अगौरे के छाजन के भवन में की। वे प्रेरित व्यक्ति उस समय के अल्प ज्ञानी साधारण मज़दूर थे। सरस्वती पाठशाला की नींव रखकर उन्होंने एक बृहद कार्य कर डाला। वे तीनों दूरदर्शी–श्री सुभाषचंद्र दुखन, श्री देवननन

हेमराज और श्री जयनरायण सूकन काँतोरेल निवासी थे। इस बैठका में पाँच दिनों की सायंकालिक और सप्ताहांत की पढ़ाई होने लगी। पढ़ाई उत्तम और अनुशासित ढंग से होने के कारण छात्रों की संख्या में बाढ़–सी आ गई। इस छोटी–सी बैठका में जगह के अभाव के कारण और गाँव के बाहर के छात्रों की बढ़ती संख्या को देखते हुए स्कूल को फ़रवरी 1963 में तीनों महानुभावों के भगीरथ प्रयत्न से मोका ज़िले में स्थित कार्चिये–मिलितेर के किंग्स कॉलिज में स्थानांतरित किया गया। यहाँ आने के पश्चात् श्री देवननन हेमराज और जयनरायण सूकन ने अपना इरादा बदल दिया। लेकिन श्री सुभाषचंद्र दुखन अपने संकल्प और उद्देश्य से अडिग रहे और सरस्वती पाठशाला की मशाल धारण किए उन्होंने हिंदी भाषा और भारतीय संस्कृति के प्रचार–प्रसार और शिक्षण को अपना लक्ष्य बना लिया। इस क्षेत्र में वे इतने मशरूफ़ हो गए कि अपनी गृहस्थी बसाने में भी देर कर दी। सभी ओर की ज़ोर ज़बरदस्ती के पश्चात् डॉ. उदयनारायण गंगू की बहन प्रेमावती से विवाह किया। या यों कहें कि हिंदी भाषा–प्रचार में उन्हें एक और कंधा मिल गया। कहा जा सकता है कि किंग्स कॉलिज में इस स्कूल की औपचारिक स्थापना हुइ.ं। उद्देश्य–पूर्ति के लिए दुखन जी ने अपने साथ सर्वश्री नरेंद्र, सांतिलाल और चिमनलाल घूरा भाइयों, राजू बालकिसुन, सजीवन, सांदुराम, बलदेव दयाराम, भगवान, महादू परिवार, कन्हाई परिवार आदि का सहयोग लिया। आपसी सहयोग ने पाठशाला में एक नई जागृति पैदा की। उस समय यहाँ प्राथमिक, माध्यमिक, धार्मिक, संस्कृत, तमिल, तेलुगु और मराठी भाषाओं की पढ़ाई के लिए लगभग पाँच सौ छात्र अध्ययनरत थे। पाठशाला को 'हिंदी प्रचारिणी सभा' नाम से पंजीकृत कराया गया और इसे 109 संख्या नं. प्राप्त हुआ। फिर आर्यसभा मॉरीशस और ब्राह्मण महासभा से भी सम्बन्ध जोड़ा गया और छात्रों के सर्वांगीण विकास का द्वार खोला गया।

दुर्भाग्यवश किंग्स कॉलिज भी छात्रों की संख्या वहन न कर सका। एक ज़बरदस्त तूफ़ान ने कॉलिज को भी चौपट कर दिया। जब तक कॉलिज की मरम्मत होती गाँव वालों के सहयोग से श्री गोबर्धन जी की एक इमारत में शिक्षण जारी रखा गया। जगह की तंगी के कारण हाथ–पैर चलाना ही पड़ा। सर्वश्री दुखन, घूरा, बालकिसुन राजू , डाविद भगवान आदि की सहायता और दूरदर्शिता से तथा इलाकाई मंत्री माननीय महेश तिलक की सहायता से सरकारी स्कूल (रेवेरेंड एडवर्ड वालटर) कार्चिये–मिलितेर ही में बैठका के कार्यों को जारी रखने का रास्ता खुल गया और प्रति रविवार को लगभग पंद्रह गाँवों से पाँच सौ तक छात्र शिक्षा ग्रहण करने लगे।

शिक्षक व शिक्षिकाएँ

इस रविवारीय पाठशाला में प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर तमिल, तेलुगु, मराठी, संस्कृत, धार्मिक तथा रूपांतर कक्षाओं की पढ़ाई होने लगी। इसी कारण इतने शिक्षकों की आवश्यकता भी पड़ी, जो निःस्वार्थ रूप में अवैतनिक कार्य कर सकें। सौभाग्य से उस समय के लोग लालच से परे और धर्म–भाषा–संस्कृति से प्यार करने वाले लोग थे और उद्देश्य की पूर्ति में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं हुई। तमिल भाषा के लिए सेंजुलिएँ गाँव के श्री ताम्बी, मराठी के लिए दागोचियेर के श्री धरम पांडिया, तेलुगु के लिए सेंपियेर के श्री नरसीमुलू, हिंदी, संस्कृत और धार्मिक के लिए क्रमशः सर्वश्री देवननन हेमराज, जयनारायण सूकन, सुभाषचंद्र दुखन, प्लेन दे रोश के ओमदत्त शिवशंकर, जो अभी अस्सी साल के होने के बावजूद भी अध्यापनरत हैं, रघुनाथ दयाल, रामसहाय, रामचंदर, धनराज शम्भु, राजश्री और रीति सानदूराम, विद्यान प्रभु, बिद्वंती शम्भु, शोभानन झरी, जो अभी सरकारी कॉलिज में रेक्टर हैं, करुणा लच्छू, प्रणव दुखन, जो आजकल सरकारी हेलिकॉप्टर के पायलॉट हैं, जयपाल किसुन अवकाश प्राप्त उपमुख्य अध्यापक, सुभाषचंद्र दुखन जी की पत्नी प्रेमावती दुखन, नेमानंद सिंह किसुन, धनेश्वरी मंग्रा, चेष्टा रामजुमन, हितैषना रामजुमन, पूनम सिराज, कविना बिहारी, हविषा रामनोथ, चेतना ओचाराज़, देवी गायजान, सर्वेश कुंजा, निवेदिता–पुष्पा किसुन आदि अपने अनुभव द्वारा मार्गदर्शन कर अपने रविवार को हिंदी भाषा–संस्कृति के लिए समर्पित कर रहे हैं। दुर्भाग्य से सर्वश्री देवननन हेमराज और सबसे कर्मठ अच्छे हिंदी प्रेमी सर्वश्री सुभाषचंद्र दुखन, जो खेतीहर होते हुए भी सारी ज़िंदगी हिंदी को समर्पित रहे, इसी साल (2018) के अगस्त महीने में एक साल तक अलज़ायमर से पीड़ित होने के पश्चात् स्वर्ग

सिधार गए। शायद ऐसे लोगों को कम लोग जानते होंगे, जो मेरी दृष्टि में सच्चे हिंदी सेवक थे। ऐसे लोगों का निधन एक अपूरणीय क्षति है। उनके प्रति आज भी हम भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं।

इतनी लम्बी यात्रा में सरस्वती पाठशाला के दो मैनेजर भी हुए, जिन्होंने अपना भरपूर सहयोग दिया। प्रथम श्री स्वर्गीय बलदेव दयाराम और द्वितीय अस्सी साल के होते हुए भी हिंदी भाषा–धर्म–संस्कृति के लिए मर–मिटने वाले श्री नरेंद्र घूरा जी, जो अभी तक कार्यरत हैं। घूरा जी अध्यापक से लेकर उप डायरेक्टर बने और अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् डी.ए.वी. कॉलिज आर्य सभा के मैनेजर भी रह चुके हैं। वे पाठशाला के अच्छे संचालक होने के साथ–साथ अनुभवों का सागर हैं। श्री धनराज शम्भु और श्रीमती बिद्वन्ती शम्भु भी सरस्वती पाठशाला में सुचारु रूप से हिंदी–शिक्षण कार्य में संलग्न रहे हैं।

शिक्षण का क्षेत्र

सरस्वती पाठशाला में कई क्षेत्रों व स्तरों में अध्यापन का कार्य होता है :

1. हिंदी साहित्य के क्षेत्र में पूर्व प्राथमिक से उत्तमा साहित्य रत्न तक
2. संस्कृत में बालबोध से कोविद तक
3. धार्मिक क्षेत्र में सिद्धांत प्रवेश से सिद्धांत वाचस्पति तक
4. एस.सी ,एच.एस.सी. की भी पढ़ाई सुचारू रूप से चलती है।

इसके अलावा यहाँ के छात्र कई राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में भाग लेते रहते हैं और पुरस्कृत भी होते रहते हैं। जैसे नाटक, प्रश्नोत्तरी, निबन्ध–लेखन, चित्रकारिता, कविता वाचन आदि। पठन के क्षेत्र में भी हमारे छात्र साहित्य सम्मेलन ही नहीं एस.सी., एच.एस.सी. संस्कृत और धार्मिक परीक्षाओं में प्रथम या दस प्रथम में अपनी जगह बनाते रहे हैं। आज हमारे छात्र शिक्षक, शिक्षा अधिकारी, वकील, डॉक्टर, रेक्टर, पी .एच. डी. प्राप्त, पायलॉट, साहित्यकार एवं ख्याति प्राप्त व्यक्ति हो चुके हैं। आज भी उनके हृदय में हिंदी के प्रति अगाध प्रेम और श्रद्धा है।

संस्था की गतिविधियाँ

किसी भी संस्था में यदि गतिविधियाँ न हो, तो वह संस्था अधूरी व सुस्त–सी लगती है। अतः सरस्वती पाठशाला कोई–न–कोई आयोजन करती रहती है , वह चाहे लघु या व्यापक ही क्यों न हो। कभी अकेली तो कभी अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर कार्यक्रमों का आयोजन करती है। इन आयोजनों में सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था ने अपने 35वें स्थापना दिवस के अवसर पर 16,17,18 अगस्त 1998 को त्रिदिवसीय अंतरराष्ट्रीय आयोजन किया, जो भव्य रूप से मनाया गया था। शोभा यात्रा के साथ 'तीसरी शताब्दी में हिंदी की चुनौतियाँ' विषय पर संगोष्ठी तथा भोजन आदि के साथ सफल आयोजन हुआ, जिसकी अनुशंसाओं पर आज भी कई संस्थाएँ कार्य कर रही हैं। जिन मुख्य संस्थाओं ने भाग लिया था वे इस प्रकार हैं – हिंदी प्रचारिणी सभा, आर्य सभा, महात्मा गांधी संस्थान, मानव सेवा निधि, धार्मिक टेम्पल फ़ेडेरेशन, एम.बी.सी., शिक्षा मंत्रालय, कला एवं संस्कृति मंत्रालय, प्रधानमंत्री कार्यालय, रामायण सेंटर, हिंदी संगठन, हिंदी अध्यापक संघ एवं ब्राह्मण महासभा। इन संस्थाओं के वक्ताओं के साथ विदेशी वक्ता भी थे। इस सम्मेलन का समापन एम.जी. आई. में कवि गोष्ठी से हुआ था। दूसरा महत्त्वपूर्ण आयोजन 2013 में पाठशाला ने अपनी स्वर्ण जयंती के अवसर पर एक पूर्ण दिवसीय आयोजन से सभी लोगों को अचम्भित कर दिया था। इस कार्यक्रम में शोभा–यात्रा, नाटक, कविता–पाठ, सम्मान व पुरस्कार वितरण आदि के अलावा मुख्य रूप से 'हिंदी भाषा को संयुक्त राष्ट्रसंघ का आधिकारिक भाषा कैसे बनाएँ' विषय पर एक विस्तृत एवं सारगर्भित संगोष्ठी का आयोजन मार्के की बात रही, जिसमें स्थानीय एवं विदेशी विद्वानों ने भाग लिया और भारी सफलता भी मिली। इस अवसर पर श्री धनराज शम्भु के सम्पादन में एक स्मारिका का प्रकाशन भी किया गया था, जिसमें प्रधानमंत्री के साथ कई संस्थानों के अध्यक्षों के संदेश भी शामिल किए गए थे। यह हर एक प्रतिभागी को निःशुल्क प्रदान किया गया था। इनके अलावा साल में एक या दो बार सृजनात्मक कार्यशालाओं का आयोजन भी किया जाता है, ताकि हमारे देश में साहित्यकारों और कलाकारों का निर्माण हो सके।

संस्था द्वारा सम्मान

सरस्वती संगठन व पाठशाला ने समय–समय पर अनेक हिंदी प्रेमियों को सम्मानित भी किया है। इसके उद्देश्यों में से यह भी एक है कि हिंदी भाषा व संस्कृति और धर्म के प्रचार–प्रसार में जिन लोगों ने निःस्वार्थ सेवा की है, उनको कृतज्ञता प्रकट किया जाए। जिन लोगों को सम्मानित किया गया वे हैं – सर्वश्री सुभाषचंद्र दुखन, सत्यदेव टेंगर, रामनाथ जीता, अजामिल माताबदल, होमदत्त शिवशंकर, नरेंद्र घूरा, देवननन हेमराज, जयनरायण सूकन, मीमांसक, कुशवाहा, हरगुलाल गुप्त, अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर, राज हिरामन, गुलशन और श्रीमती रत्ना सुखलाल, राजेंद्र अरुण, विनय गुदारी, केसन बधु, डॉ. चिंतामणी, उमेश सिंह, डॉ. रामगुलाम, प्रवीण जगन्नाथ, कमल किशोर गोयनका आदि। पाठशाला और संघ ने निःस्वार्थ भाव से सम्मान प्रदान किया। उनकी प्रेरणा से हमारे छात्रों को सही दिशा प्राप्त हुई। आज वे गायक, नर्तक, चित्रकार, प्रचारक, डॉक्टर, वकील एवं साहित्यकार हैं।

पाठशाला का पुस्तकालय

सरस्वती पाठशाला का अपना एक लघु पुस्तकालय भी है। 1973 में हिंदी प्रचारिणी सभा के महासचिव गुरुवर मंगर भगत की प्रेरणा से एक पुस्तकालय खोला गया। उन्होंने सभा की ओर से 500 पुस्तकों का दान किया। इसी तरह अन्य संस्थाओं की ओर से भी पुस्तकें मिलीं और अब तक मिलती रही हैं। इसके पीछे उद्देश्य यही है कि छात्रों में पाठ्य–पुस्तक के अलावा अन्य पुस्तकें पढ़ने की आदत पैदा हो। हिंदी पत्रिकाएँ खरीदने की आदत भी डाली जाती है, ताकि भविष्य में भी वे पत्रिकाएँ खरीदकर पढ़ सकें। हमने देखा है कि छात्र पाठ्यक्रम की पुस्तकों के अलावा पचहत्तर प्रतिशत अन्य पाठ्य–सामग्री पढ़ते ही नहीं। इस विषय पर हमें विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। हम अपनी सीमा में बँधकर आधुनिकता से जुड़ने का प्रयास करते हैं। विश्व हिंदी सचिवालय के सहयोग से छात्रों को संचार और प्रौद्योगिकी से परिचित कराने के लिए कार्यशाला का आयोजन कर संगणक उपयोग और देवनागरी लिपि में टंकण की सीख और प्रेरणा भी देते हैं।

पाठशाला का सम्पर्क

आज सरस्वती पाठशाला का सम्बंध देश और विदेश से भी जुड़ गया है। मॉरीशस की लगभग सभी संस्थाओं से मिलकर यह पाठशाला काम करने में विश्वास रखती है। विचार व आयोजन के क्षेत्र में उनसे मार्गदर्शन होता रहता है। आधुनिकतम स्थिति से परिचित होने के लिए इस पाठशाला ने सभी के लिए अपना द्वार खोल दिया है। हिंदी संगठन, हिंदी प्रचारिणी सभा, महात्मा गांधी संस्थान, विश्व हिंदी सचिवालय, भारतीय उच्चायोग तथा अन्य संस्थाओं से मिलकर सरस्वती पाठशाला समस्याओं के हल के लिए प्रयासरत है।

निष्कर्ष

यह आशा की जाती है कि सरस्वती पाठशाला उन बुलंदियों को छूने का प्रयत्न करेगी, जहाँ तक हमारे पूर्वजों को पहुँचने की इच्छा थी। भविष्य में भी पाठशाला और संगठन चलते रहें, छात्र शिक्षित होते रहें और हमारे देश–समाज, परिवार साथ में विश्व–कल्याण की सोच को अपने हृदय में बसाकर चलते रहें। ऐसे ही पुनीत कार्य करें, ताकि लुप्त आत्माओं को शांति मिल सके और चरित्र–निर्माण और जन–कल्याण की भावना हमारे हर सदस्य व विद्यार्थी में कूट–कूटकर भर जाए।

काँ तोरेल, मॉरीशस
dhunrazsembhoo@gmail.com

हिंदी : सूचना-संचार एवं प्रौद्योगिकी

13. फ़िजी में हिंदी पत्रकारिता के 103 वर्ष - डॉ. जवाहर कर्नावट

14. हिंदी पत्रकारिता के शिल्प में जनभाषा का प्रभाव - श्री शैलेंद्र दुबे

15. हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट का प्रदेय - डॉ. सहदेव वर्षाराणी निवृत्तीराव

16. राजभाषा हिंदी प्रचार-प्रसार में एण्ड्रॉइड मोबाइल की भूमिका - श्री विजय प्रभाकर नगरकर

17. हिंदी फ़िल्मों के संवादों में विश्व हिंदी - श्री सुरेश कुमार श्रीचंदानी

13

फ़िजी में हिंदी पत्रकारिता के 103 वर्ष

– डॉ. जवाहर कर्नावट

जन्म : 12 अगस्त 1959

शिक्षा :

- पीएच.डी (हिंदी पत्रकारिता)
- एम.ए. (हिंदी)
- एम.कॉम
- पत्रकारिता एवं अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
- शैक्षणिक योग्यता
- डिप्लोमा इन कम्प्यूटराइज्ड बैंकिंग

व्यवसाय :

- कार्य दायित्व : महाप्रबंधक (राजभाषा एवं शिक्षण संसाधन केंद्र) बैंक ऑफ़ बड़ौदा, कॉर्पोरेट कार्यालय, मुंबई

प्रकाशन :

- महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा में ''स्वातंत्र्योत्तर प्रमुख हिंदी दैनिक समाचार–पत्र एक अनुशीलन'' विषय पर प्रस्तुत शोध ग्रंथ पर पीएच.डी. की उपाधि
- स्थानीय से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक के समाचार–पत्रों में निरंतर लेख, साक्षात्कार, रिपोर्ट तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :

राजभाषा के श्रेष्ठ कार्यान्वयन एवं पत्रिकाओं के संपादन हेतु तत्कालीन उपप्रधानमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी, उत्तरप्रदेश के राज्यपाल श्री विष्णुकान्त शास्त्री, मध्यप्रदेश के पूर्व राज्यपाल मो. शफ़ी कुरेशी, डॉ. भाई महावीर एवं अनेक वरिष्ठ साहित्यकारों द्वारा पुरस्कृत एवं सम्मानित तथा अन्य सम्मान प्राप्त

फ़िजी एक बहुजातीय देश है, जहाँ भारतवंशियों के अतिरिक्त वहाँ के मूल निवासी काईबीती (फ़िजियन) रहते हैं। ऑस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैंड के लोग भी पर्याप्त संख्या में फ़िजी में हैं। सबकी भाषा एवं धर्म अलग–अलग हैं, किंतु हिंदी भाषा, जाति तथा धर्म के बंधन से ऊपर उठकर सभी भारतीयों के लिए ही नहीं, फ़िजी के समस्त निवासियों के बीच संपर्क की भाषा बनी हुई है। इस देश में हिंदी पत्रकारिता के गौरवशाली 103 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं।

अपनी फ़िजी द्वीप की यात्रा के दौरान हिंदी पत्रकारिता के 100 से अधिक वर्षों के इतिहास को खंगालना किसी रोचक दास्तान से कम नहीं है। 1913 में बैरिस्टर मणिलाल डॉक्टर ने भारतीयों को संगठित करने के लिए 'द सेटलर' पत्र का प्रकाशन अंग्रेज़ी में प्रारंभ किया था। किंतु उन्हें शीघ्र ही यह अनुभव हो गया कि देश के कोने–कोने में बसे हुए भारतीयों तक संदेश पहुँचाने के लिए अंग्रेज़ी उतनी कारगर नहीं हो सकती, जितनी कि उनकी अपनी भाषा हिंदी। इसीलिए उन्होंने 'द सेटलर' के अंग्रेज़ी संस्करण के साथ ही, उसे हिंदी में भी साइक्लोस्टाइल रूप में निकालना प्रारंभ कर दिया। 'द सेटलर' पत्र का यह हिंदी संस्करण फ़िजी में हिंदी पत्रकारिता का शुरुआती कदम था। धीरे–धीरे इस पत्र की लोकप्रियता बढ़ने लगी और वह समस्त भारतीयों को समाचार के माध्यम से संगठित करने लगा। पं. शिवराम शर्मा ने इस पत्र के हिंदी संस्करण के संपादन का दायित्व संभाला। हिंदी के प्रति बढ़ती हुई रुचि तथा हिंदी में समाचार जानने और पढ़ने की लालसा ने कई भारतीयों को हिंदी पत्र निकालने के लिए प्रेरित किया।

दूसरे दशक में फ़िजी में कई हिंदी पत्रों के प्रकाशन की शुरूआत हुई। इन पत्रों में 'फ़िजी समाचार', 'भारतपुत्र', 'वृद्धि' तथा 'वृद्धिवाणी' लोकप्रिय हुए, किंतु 'फ़िजी समाचार' के अतिरिक्त कोई अन्य पत्र अधिक समय तक नहीं चल सका। 'फ़िजी समाचार' का प्रकाशन इंडियन प्रिंटिंग तथा पब्लिशिंग कम्पनी द्वारा 1923 में शुरू हुआ और इसके प्रथम संपादक थे – बाबू राम सिंह। यह पत्र 1957 तक प्रकाशित हुआ और इसके अंतिम संपादक थे नौसोरी प्रांत के पं. चंद्रदेव सिंह। पं. चंद्रदेव की रुचि सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा सामाजिक कार्यों में थी। उन्हें हिंदी, काईबीती तथा अंग्रेज़ी भाषा का अच्छा ज्ञान था। वे फ़िजी रेडियो के लिए कहानी तथा प्रहसन आदि भी लिखा

करते थे। 'फ़िजी समाचार' ने उनके संपादन काल में पर्याप्त लोकप्रियता प्राप्त की तथा वह हर वर्ग के भारवंशियों के बीच बड़े चाव से पढ़ा जाता था।

फ़िजी में 1930 से 1940 के मध्य तीन हिंदी समाचार–पत्र प्रकाशित हुए। पहला पत्र हिंदी मासिक 'वैदिक संदेश' था, जिसका प्रकाशन आर्य समाज के कार्यकर्ता पं. श्री कृष्ण शर्मा करते थे। दूसरे मासिक पत्र 'सनातन धर्म' का प्रकाशन 1927 में सनातन धर्म महासभा द्वारा किया गया। किंतु आपसी विरोध तथा द्वेष के कारण दोनों पत्र शीघ्र ही बंद हो गए। दिनांक 11 मई 1935 को 'शांतिदूत' साप्ताहिक समाचार–पत्र का प्रकाशन 'फ़िजी टाइम्स एण्ड हेरल्ड' नामक ब्रिटिश प्रकाशन संस्था द्वारा प्रारंभ किया गया। यह समाचार–पत्र विगत 80 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रहा है। विदेश की हिंदी पत्रकारिता में जो स्थान फ़िजी से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक समाचार–पत्र 'शांतिदूत' ने स्थापित किया है, वह विदेश का कोई भी हिंदी पत्र प्राप्त नहीं कर सका है। इस साप्ताहिक पत्र के संपादन का दायित्व पं. गुरुदयाल शर्मा को सौंपा गया। पं. शर्मा को इस पत्र का दायित्व संभालने से पहले 'वृद्धि','वृद्धिवाणी' तथा 'पैसिफ़िक प्रेस' नामक हिंदी पत्रों के संपादन का अनुभव था ही। पत्रिका को चलाने तथा उसे लोकप्रिय बनाने के लिए संपादक को जिन कठिनाइयों के बीच से गुज़रना पड़ता है, इसका भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। 'शांतिदूत' के प्रवेशांक में पं. शर्मा ने 'हमारा अभिप्राय' शीर्षक से एक प्रभावपूर्ण संपादकीय लिखा, जिसमें उन्होंने 'शांतिदूत' के उद्देश्य एवं कार्यप्रणाली का संक्षिप्त परिचय दिया, जो इस प्रकार है : ***''शांतिदूत' का यह प्रथम अंक हम आपकी सेवा में उपस्थित करते हुए हर्ष मना रहे हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस पत्र के द्वारा फ़िजी प्रवासी भारतीयों को समस्त संसार की वह खबर मिलती रहेगी, जिससे हिंदी भाषा–भाषी जनता अनभिज्ञ रहती थी। इस पत्र के स्वामी भारत, इंग्लैंड, चीन, जर्मनी, जापान इत्यादि भूमंडल का समाचार बेतार के तार द्वारा अर्थात् केबल के ज़रिये से मंगा रहे हैं। जैसा कि आज तक हिंदी पत्रकार नहीं कर सका है। अतएव हम अपने पाठक, ग्राहक एवं अनुग्राहकों को यह विश्वास दिला सकते हैं कि आप इस पत्र से संतुष्ट रहेंगे।***

'शांतिदूत' पार्टी बंदियों से दूर रहेगा। इस द्वीप की भलाई व लोकप्रियता का पाठ लोगों को पढ़ाएगा और सभी बंधुओं की सेवा के लिए इसके कॉलम बिना किसी भेद–भाव के खुले रहेंगे। इसके अतिरिक्त इसका मुख्य उद्देश्य समाज–सुधार और सर्वजन–सेवा है। हर शनिवार को यह निकला करेगा। हमारा दृढ़ विश्वास है कि प्रवासी बंधु इस पत्र को अपनाकर हमारे उत्साह को अवश्य बढ़ाएँगे और 'शांतिदूत' को अवसर प्रदान करेंगे कि यह जनता की सेवा के यश का भागी बन सके।''

'शांतिदूत' के इस अंक की 300 प्रतियाँ प्रकाशित हुई थीं, जो फ़िजी की राजधानी सुवा तथा आस–पास के क्षेत्रों में तुरंत बिक गईं। पत्र को प्रारम्भ करने से अधिक चुनौती उसे जीवित रखने की थी। सम्पादक पं. गुरुदयाल शर्मा लगातार इस प्रयास में थे कि पत्र के ग्राहक कैसे बढ़ाए जाएँ? रोचक सामग्री कैसे जुटाई जाए? पत्र का कलेवर आकर्षक कैसे बने? पत्र की छपाई उत्तम कैसे हो? और पत्र को प्रत्येक सप्ताह समय पर भी कैसे निकाल पाए?

'शांतिदूत' की बढ़ती लोकप्रियता तथा प्रतिष्ठा के कारण कुछ भारतीय पाठकों ने ईर्ष्यावश 'शांतिदूत' के विरुद्ध गंभीर आंदोलन प्रारम्भ कर दिया। स्थिति यहाँ तक पहुँच गई कि 'शांतिदूत' का प्रकाशन संकट में पड़ गया, किंतु भारत से आए सनातन धर्मोपदेशक पं. रामचंद्र शर्मा के हस्तक्षेप से यह विरोध खत्म हो गया। 'शांतिदूत' ने स्थानीय समाचारों को पत्र में अधिक स्थान दिया। रामायण मंडलियों की गतिविधियों को भी प्रधानता दी तथा शिक्षा के विस्तार के लिए भी प्रयास किया। हर त्योहार पर सुंदर विशेषांक प्रकाशित कर सभी धर्मों के प्रति सत्भाव तथा पारस्परिक समझ का वातावरण बनाया। 1939 में छिड़े विश्वयुद्ध में भारतीय जनता को सचित्र समाचार देनेवाला 'शांतिदूत' अकेला हिंदी पत्र था। इस कारण पत्र की प्रसार संख्या बढ़कर सोलह हज़ार तक पहुँच गई। पच्चीस वर्ष पूरे होते–होते 'शांतिदूत' फ़िजी का सबसे सम्मानित पत्र बन गया। 'शांतिदूत' ने 1960 में अपनी रजत जयंती बड़े धूमधाम से मनाई।

'शांतिदूत' के संपादन का दायित्व 1935 से 1979 तक पं.

गुरुदयाल शर्मा ने बड़ी निष्ठा तथा परिश्रम से सम्भाले रखा। 9 अगस्त 1979 को उन्होंने संपादन का कार्यभार श्री जयनारायण शर्मा को सौंप दिया। श्री जयनारायण 30 अप्रैल 1981 तक संपादक के रूप में कार्य करते रहे। उनके कार्यमुक्त होने पर 23 जुलाई 1981 तक श्रीमती निर्मला पथिक स्थानापन्न संपादिका के रूप में कार्य करती रहीं। उनके त्याग–पत्र देने पर पं. गुरुदयाल शर्मा ने पुनः 6 मई 1982 तक पत्र का संपादन कार्य किया। पं. गुरुदयाल के सेवानिवृत्त होने पर श्री महेशचंद्र शर्मा 'विनोद' 'शांतिदूत' के नए संपादक बने तथा श्रीमती विश्वकीर्ति शर्मा को सहायक संपादिका का स्थान दिया गया। विनोद जी हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे तथा उनके पास पत्रकारिता का व्यापक अनुभव भी था। श्री विनोद के संपादन में शांतिदूत को नए आयाम प्राप्त हुए। उन्होंने नए लेखक मंडल का निर्माण किया। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं पर निर्भीक होकर प्रभावपूर्ण संपादकीय लिखे। श्री विनोद ने सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य यह भी किया कि फ़िजी में विकसित नई विदेशी भाषिक शैली फ़िजी हिंदी के महत्त्व को समझा तथा स्थानीय लेखकों को उस भाषा में लिखने के लिए प्रेरित किया और स्वयं भी 'थोरा हमरो भी तो सुनो' स्तम्भ प्रति सप्ताह लिखा।

1987 में फ़िजी में हुई राजनीतिक उथल–पुथल से भारतवंशियों की प्रतिष्ठा को गहरा आघात पहुँचा। जिस देश को उन्होंने अपनी निष्ठा और समर्पण से विश्व के एक प्रतिष्ठित देश के रूप में ला खड़ा किया था, उसी देश में उन्हें जीवन और सम्मान खंडित होता दिखाई देने लगा। अनेक भारतीय फ़िजी छोड़कर अन्य देशों में जा बसने लगे। 'शांतिदूत' के लोकप्रिय संपादक श्री विनोद जी भी त्यागपत्र देकर न्यूज़ीलैंड चले गए। श्री विनोदजी के बाद श्री अशोक कुमार द्विवेदी ने 'शांतिदूत' के संपादक का कार्यभार सम्भाला। उनके संपादन काल में भी अनेक नए लेखक 'शांतिदूत' से जुड़े। श्री द्विवेदी के बाद श्री हेमंत विमल शर्मा 'शांतिदूत' के संपादक बने। 'शांतिदूत' के प्रकाशन को 80 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं, किंतु फ़िजी में इसकी लोकप्रियता आज भी पहले की तरह बनी हुई है। वर्तमान में श्रीमती नीलम कुमार इस साप्ताहिक समाचार–पत्र के संपादकीय दायित्व का निर्वाह बखूबी कर रही हैं। 'शांतिदूत' का दीपावली विशेषांक प्रत्येक वर्ष अत्यंत समृद्ध एवं विशिष्ट होता है। इस विशेषांक में ऑस्ट्रेलिया तथा न्यूज़ीलैंड के लेखकों की रचनाओं का भी समावेश होता है।

'शांतिदूत' समाचार–पत्र की शुरूआत के पश्चात् चौथे दशक में फ़िजी में अनेक मासिक तथा साप्ताहिक पत्रों का प्रकाशन हुआ। अखिल फ़िजी कृषक महासंघ ने 'दीनबंधु', श्री ज्ञानीदास ने 'ज्ञान', पं. बी.डी. लक्ष्मण ने 'किसान', आर्य पुस्तकालय ने 'पुस्तकालय', श्री काशीराम कुमुद ने 'प्रवासिनी' तथा श्री रामखेलावन ने 'प्रकाश' पत्र का प्रकाशन किया। इसी दौरान 'जंजाल', 'सनातन प्रकाश' तथा 'मज़दूर' आदि पत्र भी प्रकाशित हुए। किंतु वे बहुत अल्प समय में ही बंद हो गए। 1945 में सुवा से 'द इंडियन टाइम्स' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस 24 पृष्ठीय समाचार–पत्र का पंजीयन सुवा के डाकघर में भी कराया गया था। इस पत्र के संपादक श्री राम सिंह थे। इसकी भाषा अंग्रेज़ी और हिंदी दोनों ही थी। इसमें फ़िजी के अलावा भारत तथा अन्य देशों के समाचार भी प्रकाशित होते थे। फ़िजी में चौथे और पाँचवे दशक में अनेक पत्र–पत्रिकाओं के प्रकाशन के संदर्भ मिलते हैं। फ़िजी में हिंदी के प्रचार–प्रसार के सशक्त हस्ताक्षर, श्री काशीराम कुमुद ने 'प्रवासिनी' पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। उसमें स्थानीय कवियों की रचनाओं को स्थान देकर कुमुद जी ने अनेक लेखकों को प्रोत्साहित किया था। 'प्रवासिनी' पत्रिका अपने समय की लोकप्रिय पत्रिका थी।

पाँचवे दशक में 'जागृति' पत्र का प्रकाशन भी एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। 'फ़िजी' के पश्चिमी ज़िलों के किसानों के मध्य यह पत्र अत्यंत लोकप्रिय हुआ। किंतु 1975 में बंद हो गया। 1953 में 'आवाज़' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन भी अल्पावधि के लिए हुआ। 'झंकार' पत्र का प्रकाशन श्री ज्ञानीदास के संपादन में हुआ। इस पत्र में संक्षिप्त समाचार, फ़िल्मी गाने, कविताएँ आदि होती थीं। आर्थिक साधनों की कमी के कारण यह पत्र 1958 में बंद हो गया। इसके पूर्व श्री ज्ञानीदास ने 'तारा' मासिक पत्र का प्रकाशन भी किया था, जो उनकी ही प्रेस में छपा करता था।

फ़िजी के प्रतिभाशाली कवि एवं विद्वान लेखक, श्री कमलाप्रसाद मिश्र के संपादन में 1956 में 'जय फ़िजी' हिंदी साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। आपके ही संपादन में

'जागृति' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रथम अंक 1958 में प्रकाशित हुआ। संपादक के रूप में उन्होंने देश के समस्त उदीयमान लेखकों को अपने पत्र में लिखने के लिए प्रेरित भी किया। 'जागृति' के माध्यम से संपादक के रूप में मिश्र जी ने पर्याप्त प्रतिष्ठा अर्जित की। उन्होंने अपने पत्र में सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक विषयों पर अनेक प्रतियोगिताएँ आयोजित कर फ़िजी के भारतीयों को विविध विषयों पर सोचने तथा समझने के लिए प्रेरित भी किया था। इस पत्र का गिरमिट शताब्दी अंक 11 मई 1979 को प्रकाशित किया गया था। श्री मिश्र लगभग 35 वर्ष तक फ़िजी की हिंदी पत्रकारिता में सक्रिय रहे।

फ़िजी में हिंदी पत्र–पत्रिकाओं के प्रारम्भ एवं बंद होने का सिलसिला लगातार चलता रहा। पं. नंदकिशोर ने 1959 में हिंदी साहित्य प्रचारिणी सभा की स्थापना करने के साथ ही 'किसान मित्र' साप्ताहिक पत्र का संपादकीय दायित्व भी सम्भाला। वे किसानों, मज़दूरों, लेखकों तथा कवियों के मध्य बहुत लोकप्रिय हुए। इसी बीच श्री वी.एम. मोरिस ने 'फ़िजी–संदेश' पत्र भी निकाला। उनके संपादकीय राष्ट्रीय समस्याओं पर विश्लेषणात्मक एवं रचनात्मक होते थे।

1974 में सनातन धर्म महासभा के मुख पत्र के रूप में 'सनातन संदेश' नामक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस महासभा के महासचिव एवं फ़िजी हिंदी महापरिषद् के प्रधान पं. विवेकानन्द शर्मा 'सनातन संदेश' के संपादक थे। आप फ़िजी सरकार में मंत्री भी रह चुके थे। फ़िजी में हिंदी के प्रचार–प्रसार में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान है। 'सनातन संदेश' एक मासिक पत्र था तथा इसका उद्देश्य सनातन धर्म के संदेश को जन–जन तक पहुँचाना था। किंतु यह पत्र कुछ अंक निकलने के बाद बंद हो गया।

फ़िजी सरकार की ओर से भी कुछ पत्र–पत्रिकाएँ हिंदी में प्रकाशित की गईं। 1926 में 'राजदूत' तथा द्वितीय विश्वयुद्ध के समय 'विजय' के अंक भी प्रकाशित हुए। फ़िजी सरकार के सूचना मंत्रालय ने 'फ़िजी वृत्तांत' तथा 'शंख' पत्रों का प्रकाशन किया। इनके अतिरिक्त भी फ़िजी सरकार समय–समय पर हिंदी पाठकों के लिए प्रपत्र तथा सूचना आदि हिंदी में प्रकाशित किया करती है। जनवरी 1986 में फ़िजी हिंदी साहित्य समिति द्वारा 'साहित्यकार' पत्रिका का प्रकाशन किया गया। इस पत्रिका के प्रथम अंक के मुख पृष्ठ पर भारत के प्रख्यात लेखक प्रेमचंद का चित्र प्रकाशित कर निम्नलिखित उद्धरण प्रकाशित हुआ :

'साहित्यकार मानवता, दिव्यता और भद्रता का बाना बांधे होता है। जो दलित है, पीड़ित है, वंचित है – चाहे वह व्यक्ति हो या समूह, उसकी हिमायत करना और वकालत करना उसका फ़र्ज़ है। उसकी अदालत समाज है, इसी अदालत के सामने वह अपना इस्तगासा पेश करता है।'

इस पत्रिका के संपादक मण्डल में वी. सुधाकर, रामनारायण गोविंद, एम. सी. विनोद शर्मा एवं सलीम बख्श का नाम प्रकाशित था। यह पत्रिका कितनी अवधि तक प्रकाशित हुई, इसके प्रमाण उपलब्ध नहीं हो सके।

फ़िजी से एक और हिंदी साप्ताहिक का प्रकाशन सन्1988 में 'सरताज' नाम से हुआ। इसमें फ़िजी, भारत तथा अन्य देशों के समाचार भी छपते रहे। श्री एस.एस. दास के संपादन में प्रकाशित इस पत्र को 'वॉय्स ऑफ़ पीपल' के नाम से जाना जाता था।

फ़िजी में 21वीं शताब्दी की शुरुआत में ही 'संस्कृति' त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन डॉ. विवेकानंद शर्मा के संपादन में प्रारम्भ हुआ। इस पत्रिका में अध्यात्म, ज्योतिष, पौराणिक कथा, लोककथा, फ़िल्म संसार, बच्चों की दुनिया जैसे स्तम्भों के अलावा कहानी–कविताएँ आदि भी प्रकाशित होती थीं।

इस प्रकार फ़िजी में हिंदी पत्रकारिता का दीर्घकालीन गौरवशाली इतिहास है। पिछले 100 वर्षों में प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं ने एक ओर दीर्घकाल तक प्रवासी भारतीयों को फ़िजी, भारत तथा विदेश के समाचारों से अवगत कराया है। समय–समय पर उनका मार्गदर्शन किया है, वहीं दूसरी ओर फ़िजी के भारतवंशियों को संगठित भी किया है। अपने देश, अपनी भाषा तथा अपनी संस्कृति के प्रति उनके मन में सम्मान जगाया है और परोक्ष रूप से हिंदी के प्रचार–प्रसार में बहुत बड़ा योगदान भी दिया है। 'शांतिदूत' साप्ताहिक समाचार–पत्र ने अपने प्रकाशन के 80 वर्ष पूर्ण कर विदेश की हिंदी पत्रकारिता में एक नया इतिहास बनाया है। फ़िजी सरकार द्वारा प्रकाशित पत्र 'फ़िजीफ़ोकस' भी द्विभाषिक रूप में नियमित प्रकाशित हो रहा है।

मुंबई, भारत
jkarnavat@gmail.com

14

हिंदी पत्रकारिता के शिल्प में जनभाषा का प्रभाव

– श्री शैलेंद्र दुबे

प्रस्तावना :

पत्रकारिता साहित्य का अभिन्न अंग है। जनमानस के प्रति उसकी जवाबदेही का क्षेत्र भी काफ़ी विस्तृत एवं गंभीर है, इसलिए किस बात को किस ढंग से पाठकों के समक्ष रखा जाए, इसे लेकर पत्रकारिता जगत में काफ़ी मंथन होता है, ताकि उसका विपर्यास न हो। इस मंथन के दौरान समाज से ही संकलित या प्राप्त सूचना को दोबारा समाज को ही देते समय बड़ी सतर्कता बरतनी पड़ती है। यही सतर्कता तय करती है खबरों का शिल्प, उनकी भाषा एवं संरचना। हिंदी साहित्य में बृहत् रूप से गद्य एवं पद्य रचनाओं के शिल्प पर बहुत कुछ लिखा गया है, लेकिन पत्रकारिता के दृष्टिकोण से उतने व्यापक तौर पर शिल्प को तय नहीं किया गया है, किंतु साहित्य का अंग होने के कारण अप्रत्यक्ष रूप से हिंदी पत्रकारिता पर भी शिल्प की बाध्यता है। उस स्थिति में हमारे लिए सबसे पहले साहित्य के अनुरूप शिल्प के अर्थ और तात्पर्य को समझना बेहद ज़रूरी है। शिल्प और शैली में बिल्कुल महीन–सा फ़र्क देखा जाता है। विशेषतः साहित्य के रूप में इन शब्दों के अंतर्गत अंतर को समझना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। साहित्य में विषयवस्तु की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का प्रयोग माध्यम के रूप में होता है। भाषा के तीन रूप होते हैं – गद्य, पद्य और चम्पू। पद्य का प्रयोग कविता में होता है। कविता के अतिरिक्त जो दूसरे साहित्य–प्रकार हैं, उनमें गद्य प्रयुक्त होता है। गद्य और पद्य के मिश्रण को चम्पू कहा जाता है। शैली का संबंध गद्य की भाषा से होता है। हर लेखक की अपनी शैली होती है। उसके कारण ही वह पहचाना जाता है। हम अलग–अलग लेखकों की रचनाओं को उनकी विशिष्ट शैली के रूप में पहचानते हैं। यही भाषा–शैली है। शिल्प की चर्चा इसके बाद आती है। हमारे पास वस्तु है, भाषा भी है, पर अब उसे कैसे प्रस्तुत किया जाए? 'शिल्प' की बात यहाँ से शुरू होती है।

जन्म : 22/03/1978

शिक्षा :
- पी.एच.डी.
- एम. एस. सी.
- एम.ए.
- बी.एड.

व्यवसाय :
वरिष्ठ उपसम्पादक, लोकमत समाचार, अकोला संस्करण, महाराष्ट्र (भारत)

प्रकाशन :
भारत की कई पत्रिकाओं में शोधपत्र प्रकाशित

पुरस्कार :
- लोकमत एचीवर्स अवार्ड
- 'शिव संग्राम' पुरस्कार
- लोकमत समाचार प्रोत्साहन पुरस्कार

शिल्प का अर्थ और तात्पर्य :

वस्तुतः देखा जाए, तो 'शिल्प' शब्द 'स्थापत्य' से संबंधित है। किसी मूर्ति को कैसे गढ़ा जाए या किसी इमारत को कैसा बनाया जाए, उसमें किस प्रकार की कला–कारीगरी होगी, कैसा नक्काशी काम होगा, ये सारी चीज़ें शिल्प–स्थापत्य से संबंध रखती हैं। साहित्यिक कृति या पत्रकारिता में भी ऐसा ही होता है। साहित्य के अलग–अलग रूपों में शिल्प–विधि भिन्नता लिए रहती है। ठीक इसी तरह पत्रकारिता में भी विषय और पत्रकार के अनुरूप खबरों का शिल्प भिन्नता लिए होता है, हिंदी के कुछ विद्वानों ने भी शिल्प पर विचार व्यक्त किए हैं।

डॉ. सत्यपाल चुध के अनुसार–

''विषय वस्तु को कला–रूप में ढालने वाली जो प्रक्रिया है,
वही शिल्प विधि है।''[1]

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के अनुसार–

''किसी भाव को एक निश्चित रूप देने के लिए जो विधान प्रस्तुत किए जाते हैं, वही उस कला की शिल्प–विधि है।''[2]

डॉ. त्रिभुवनसिंह शिल्प–विधि को परिभाषित करते हुए लिखते हैं–

''प्रकृति द्वारा प्राप्त सामग्री को जिस प्रकार कला सजाकर प्रस्तुत करती है, उसी प्रकार ग्रहीत विषय, घटनाओं और प्रसंगों को शिल्प के द्वारा सजाया जाता है।''[3]

'बृहद हिंदी कोश' में शिल्प के संदर्भ में बताया गया है कि – ''शिल्प–विधि का शाब्दिक अर्थ है किसी चीज़ के बनाने या सजाने का ढंग अथवा तरीका। किसी वस्तु के रचने की जो–जो विधियाँ अथवा प्रक्रियाएँ होती हैं, उसके समुच्चय को शिल्प विधि के नाम से पुकारा जाता है। सरल भाषा में कहा जाए तो साहित्य या पत्रकारिता में शिल्प–विधि से अभिप्राय किसी 'विषयवस्तु' की संरचना और उसे गढ़ने या संवारने की प्रक्रिया है। स्पष्ट तौर पर कहा जाए, तो रचनाकार का दृष्टिकोण किसी भी रचना के शिल्प को निर्धारित करता है। यही बात पत्रकारिता में भी लागू है। किसी घटना या विषय की प्रस्तुति का शिल्प, संबंधित पत्रकार के दृष्टिकोण पर ही निर्भर करता है। आखिरकार वह घटना के माध्यम से क्या दिखाना चाहता है? यह सोच शिल्प को सबसे ज़्यादा प्रभावित करती है। लेखक या पत्रकार के पास कोई 'विषयवस्तु' है। उसे वह कथा या खबर के रूप में ढालना चाहता है। अपने उस कथा रूप या खबर को और भी अधिक कलात्मक एवं प्रभावी बनाने के लिए वह नाना प्रकार की प्रयुक्तियों का प्रयोग करता है। इन प्रयुक्तियों और कथानक के ढांचे को ही शिल्प–विधि कहते हैं। साहित्य में शिल्प–विधि के जो प्रमुख प्रकार माने जाते हैं, उनमें वर्णनात्मक या ऐतिहासिक शिल्प–विधि, आत्मकथात्मक शिल्प–विधि, डायरीयुक्त शिल्प–विधान या पूर्व दीप्ति (फ़्लैश–बैक) शिल्प विधान का समावेश होता है। हिंदी पत्रकारिता में सर्वाधिक वर्णनात्मक शिल्प विधान का प्रयोग होता है, लेकिन उसमें भी पत्रकारों के अलग–अलग दृष्टिकोण के चलते भिन्नता पाई जाती है। आलेखों या संस्मरणों के तहत डायरीयुक्त शिल्प–विधान का प्रयोग भी किया जाता है। अपराध या राजनीति से जुड़ीं खबरों में घटना या मुख्य विषय की पार्श्व भूमि समझाने के लिए कई बार पूर्व दीप्ति शिल्प विधान का प्रयोग भी किया जाता है।

हिंदी पत्रकारिता के दृष्टिकोण से यदि हम भाषा के शिल्प को समझने की कोशिश करें, तो सामान्य रूप में यही कहा जा सकता है कि किसी भी घटना या विषय को प्रस्तुत करने से पूर्व उसका जो स्वरूप तय किया जाता है, वह शिल्प है। इस स्वरूप को तय करने के कुछ मानक हो सकते हैं। पहला मानक पत्रकार या संपादक की दृष्टि है कि उसने किस रूप में उस विषय या घटना को ग्रहण किया है। दूसरा मानक है समाज में विषय का महत्त्व। तीसरा मानक है पाठकों की रुचि एवं सहज ग्राह्यता को ध्यान में रखना। चौथा मानक है प्रभावी एवं रोचक ढंग से प्रस्तुतीकरण की संभावना। इन मानकों पर ग़ौर कर किसी भी खबर या आलेख का स्वरूप तय किया जाता है, ताकि वह व्यापक तौर पर प्रभावी हो। साहित्य 'स्वांतः सुखाय' हो सकता है, लेकिन पत्रकारिता नहीं, क्योंकि वह सीधे जनसमुदाय से जुड़ी होती है। पत्रकारिता समाज के प्रति जवाबदेह है। समाचार–पत्रों में प्रकाशित हर खबर का जुड़ाव किसी–न–किसी रूप में जनता से होता है, इसलिए खबर का शिल्प निर्धारित करते समय कई बातों को ध्यान में रखना पड़ता है।

हिंदी पत्रकारिता और जनभाषा

हिंदी पत्रकारिता ने आज तकनीकी विकास के साथ–साथ भाषाई विकास भी कर लिया है। भाषा को आम–ख़ास के लिहाज़ से परोसा जा रहा है। जहाँ प्रिंट मीडिया व निजी सेटेलाइट चैनलों की भाषा अलग है, वहीं सरकारी मीडिया, रेडियो और दूरदर्शन की बिलकुल ही अलग है। हालांकि इसमें सबसे अहम् बात यह है कि रेडियो, दूरदर्शन, सेटेलाइट चैनल और सोशल मीडिया पर हिंदी को तरजीह मिल रही है। हिंदी का वर्चस्व बढ़ा है, जो पूरे प्रभाव में है। जहाँ धीरे–धीरे बदलाव के क्रम में पत्रकारिता से साहित्य और साहित्यकार दूर होते गए, वहीं भाषा में भी बदलाव

आता गया। पत्रकारिता की साहित्यिक भाषा के स्थान पर सहज व सरल हिंदी भाषा ने जो बोलचाल की भाषा रही है, पाँव जमा लिए, पैमाना बना कि पत्रकारिता की अच्छी भाषा वही है, जिससे सूचना, खबर, जानकारी को साफ़, सरल तथा सहज तरीके से लोगों तक पहुँचाया जा सके। पत्रकार और पत्रकारिता के उद्देश्य का वास्ता देकर कहा जाने लगा कि लाखों लोगों तक सूचना, खबर, जानकारी पहुँचे ताकि सहजता से आम जनता उसे समझ सके। हिंदी पत्रकारिता में भाषा को आम चलन के तौर पर प्रयोग होते देखा गया।

वरिष्ठ पत्रकार संजय श्रीवास्तव के शब्दों में –

''भाषा, भावों को निरूपित करने का माध्यम है। अपने भावों को समझकर ग्रहण करें, वह रुचिकर लगे, इसके लिए ज़रूरी है कि भाषा का प्रवाह सहज, सरल, बोधगम्य और यथेष्ट प्रभावी भी हो।''[4]

ठीक इसी दृष्टिकोण से हिंदी पत्रकारिता में जनभाषा को तरजीह दी गई, ताकि पाठकों तक किसी भी खबर, सूचना या जानकारी को उनकी ही भाषा में प्रभावी ढंग से पहुँचाया जा सके। जनभाषा से तात्पर्य है – क्षेत्र विशेष में लोगों द्वारा बोली जानेवाली भाषा। इस भाषा में अपने विचारों और भावों को जानकर ही कई हिंदी अखबारों ने क्षेत्र विशेष में प्रचलित जनभाषा के शब्दों को हिंदी पत्रकारिता में स्थान दिया, ताकि पाठकों तक सीधे तौर पर पहुँचा जा सके। हिंदी पत्रकारिता के शिल्प में जनभाषा के प्रभाव का ही नतीजा है कि हर क्षेत्र में वहाँ के हिंदी अखबारों द्वारा प्रचलित स्थानीय शब्दों को स्थान दिया, गया। भाषा के स्तर पर हिंदी पत्रकारिता में स्थानीयता का महत्त्व बढ़ा। भोजपुरी, अवधी, बुंदेली, ब्रज, राजस्थानी, मारवाड़ी, पहाड़ी, मालवी, मगही, मैथिली, हरियाणवी, कौरवी जैसी उपभाषाओं के शब्दों और मुहावरों से हिंदी भाषा का अनवरत विकास हुआ। वह व्यावहारिक हुई, उसमें संस्कृति की प्रक्रियाओं का प्रवेश हुआ और इसी अनुपात में वह जनता की बोली–बानी के अधिक निकट हुई। किसी भी हिंदी शब्दकोश को हम गंभीरता से देखें तो जनभाषा के अनेक शब्द दिखाई देंगे। शब्दकोश में जनभाषा के शब्दों का समावेश करने का उद्देश्य ही हिंदी को समृद्ध बनाना है। हिंदी पत्रकारिता ने भी हिंदी और अहिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रचलित जनभाषा के शब्दों को स्वीकार कर हिंदी को समृद्ध किया है। वर्तमान दौर में जहाँ हिंदी के कई अखबार धड़ल्ले से अंग्रेज़ी शब्दों का उपयोग कर रहे हैं, खबरों के शीर्षक आधे हिंदी और आधे अंग्रेज़ी शब्दों को मिलाकर लिखे जा रहे हैं, ऐसी स्थिति में किसी क्षेत्र की जनभाषा के प्रचलित शब्दों का हिंदी पत्रकारिता में उपयोग करना ज़्यादा श्रेयस्कर है। यह पहल हिंदी पत्रकारिता के शिल्प को नया रूप एवं मज़बूती प्रदान करती है। मानक हिंदी के साथ ऐसे शब्द भी बोलचाल की भाषा में प्रचलित हो जाते हैं। इन शब्दों के प्रयोग से भाषा में स्थानीयता आती है। लोगों से जुड़ाव होता है। अमूमन अखबार में प्रकाशित खबर या लेख की भाषा बेहतर होने पर ज़ोर दिया जाता है, लेकिन बेहतर भाषा से तात्पर्य जटिल भाषा से नहीं है। भाषा ऐसी होनी चाहिए, जिसे सहज रूप से पाठक ग्रहण कर सके। वरिष्ठ पत्रकार आलोक मेहता के शब्दों में –

''बेहतर भाषा का अर्थ यह कतई नहीं कि संवाददाता या डेस्क पर बैठे मुख्य उपसंपादक को हिंदी का पंडित होना चाहिए। उसे सरल भाषा का उपयोग करना आना चाहिए। उसके शब्दों का भंडार केवल 'सूत्र', 'ज्ञातव्य', 'उल्लेखनीय' है, न ही उसे संस्कृतनिष्ठ होना चाहिए। हमारे कुछ संवाददाता तो इंट्रो के बाद शुरू होने वाले दूसरे पैराग्राफ़ में ही उल्लेखनीय का प्रयोग करते हैं। इससे ऐसा लगता है कि खबर तो पहले ही पैराग्राफ़ में समाप्त हो गई। भाषा में गुणात्मक बदलाव ज़रूरी है। मसलन जटिल शब्दों की बजाय सरल किंतु प्रभावी शब्दों का उपयोग किया जाना चाहिए।''[5]

भाषा को सरल एवं बोधगम्य बनाने की दृष्टि से ही जनभाषा के प्रचलित शब्दों के उपयोग पर ज़ोर दिया जा रहा है। क्षेत्र के अनुसार ये शब्द भले ही अलग हों, लेकिन प्रचलित और पाठकों के लिए परिचित अवश्य होते हैं। इन शब्दों के प्रयोग से पाठक अखबार से अपना जुड़ाव महसूस करता है।

हिंदी पत्रकारिता के शिल्प की प्रमुख विशेषताएँ

पत्रकारिता ऐसा साहित्य है, जिसकी रचना हर दिन होती है। उसका उद्देश्य केवल सूचना प्रदान करना नहीं होता, बल्कि जनहित की रक्षा करना भी होता है। पत्रकारिता समाज

के नवनिर्माण का संकल्प लेकर चलती है। ऐसा समाज जो राष्ट्रीयता के प्रति समर्पित हो और वैचारिक धरातल पर परिपक्व हो, किंतु जहाँ बात समाज की आती है, तो उसमें अलग–अलग वर्गों का समावेश होता है। हर वर्ग में भिन्न बौद्धिक क्षमता वाले लोगों एवं भिन्न विचारधाराओं के लोगों का समावेश होता है। इन सभी को एक सूत्र में बाँधकर रखने की कोशिश पत्रकारिता के ज़रिए की जाती है, इसलिए हिंदी पत्रकारिता के शिल्प को इस तरह गढ़ने की कोशिश की जाती है कि वह हर किसी की कसौटी पर खरा उतर सके। हम पहले भी कह चुके हैं कि शिल्प का समावेश कला–पक्ष के तहत होता है। पत्रकारिता के शिल्प की विशेषताओं में वाक्य–रचना, शब्द–चयन, शीर्षक की सार्थकता, पठनीयता, समसामयिकता, भाषा की सहजता और सरलता एवं अन्य कई तत्त्वों का समावेश होता है, जो पत्रकारिता के शिल्प को रोचकता, कुतूहल, साफ़गोई, सरलता और स्पष्टता प्रदान करते हैं। हर तत्त्व अपनी जगह बेहद महत्त्वपूर्ण है। कहीं भी किसी तत्त्व को अनदेखा नहीं किया जा सकता। खबर, संपादकीय और आलेखों में भी इन तत्त्वों को साथ लेकर चलना अनिवार्य है, तभी संवाददाता, संपादक या लेखक घटना या किसी विषय को बेहद प्रभावपूर्ण ढंग से पाठकों के अंतःकरण तक ले जा पाने में कामयाब हो पाता है। पत्रकारिता के शिल्प की विशेषता के रूप में पहचाने जानेवाले इन तत्त्वों के माध्यम से ही पत्रकारिता को भाव–पक्ष एवं कला–पक्ष की कसौटी पर मज़बूती से पेश किया जा सकता है। पत्रकारिता के शिल्प को बारीकी से समझने के लिए ज़रूरी है कि उसकी निम्नलिखित हर विशेषता को एक–एक कर विस्तृत रूप से समझा जाए।

वाक्य–रचना

पत्रकारिता में वाक्य–रचना को लेकर एक सर्वमान्य नियम का पालन करना पड़ता है और वह नियम है सरलता का। वाक्यों में सरलता तब आती है जब वाक्य छोटे होते हैं। वाक्य छोटे होने के कारण पाठक से कही गई बात शीघ्र और सही ढंग से समझ में आती है। वाक्य छोटे और सरल होने की स्थिति में पाठक जिस गति से पढ़ता जाता है, उसी गति से अर्थ भी समझता चलता है। किसी भी खबर या आलेख में सरल या संयुक्त वाक्यों का ही अधिकतम प्रयोग किया जाता है, ताकि भाषा का प्रवाह सरल और गतिशील हो। आवश्यकतानुसार कई जगह मिश्रित वाक्य का भी इस्तेमाल होता है। वाक्य का रूप खबर या आलेख के विषय पर भी निर्भर करता है। हम सरल वाक्य का उदाहरण देख सकते हैं–

''कश्मीर के अधिकतर इलाकों में ज़बरदस्त ठंड पड़ रही है। रात का तापमान शून्य से नीचे पहुँच गया है। लद्दाख के कारगिल शहर में सबसे ठंडी रात दर्ज की गई।''[6]

शब्द–चयन

किसी भी खबर को सीधे पाठक के मन तक पहुँचाने का ज़रिया भाषा है। भाषा को प्रभावी बनाना है, तो ज़रूरी है कि वाक्यों की गढ़न में अधिकतम सरल किंतु प्रभावी शब्दों का इस्तेमाल किया जाए। हिंदी स्वयं में बेहद असरदार भाषा है। पत्रकार अच्छे शब्दों का चयन कर अपनी खबर को और असरदार बनाने के लिए सदा प्रयासरत रहते हैं। ज़रूरी नहीं कि हर पत्रकार भाषा का पंडित हो, लेकिन उसे भाषा का औसत से अधिक ज्ञान होना आवश्यक है, क्योंकि पाठक अखबार में लिखे हर शब्द को प्रमाण मानते हैं। पाठकों की इस भावना को देखते हुए, उन तक किसी भी बात को सहज किंतु श्रेष्ठ ढंग से पहुँचाने के लिए खबर या उसके शीर्षक में सटीक शब्दों का चयन किया जाता है। भाषा का लच्छेदार होने की बजाय प्रवाहपूर्ण होना ज़रूरी है। समाचार–पत्रों की भाषा में शब्दों का चयन कई बार व्यापारिक दृष्टि से ठीक नहीं होते हुए भी संप्रेषणीयता की दृष्टि से बहुत ही सार्थक होता है, उदाहरण –

''स्मृति बोलीं, लूट चुके लोग नहीं चलने दे रहे संसद''[7]

''नोटबंदी के निर्णय से 4 असुरों पर हमला''[8]

शीर्षक की सार्थकता

पत्रकारिता की दुनिया में शब्दों की जादूगरी पाठकों पर अपना ज़बरदस्त असर छोड़ जाती है। किसी भी खबर का सबसे पहला हिस्सा या आमुख होता है उस खबर का शीर्षक। शीर्षक जितना दमदार होगा, खबर के प्रति उतनी ही जिज्ञासा पाठक के मन में उत्पन्न होगी। खबर का शीर्षक पाठकों को यह सोचने

को विवश कर देता है कि आखिर माजरा क्या है? शीर्षक पढ़ने के बाद ही पूरी खबर पढ़नी है या नहीं? इस संदर्भ में पाठक निर्णय लेता है। वर्तमान में शीर्षक को प्रभावी बनाने के लिए अधिकांश हिंदी अखबार अंग्रेज़ी शब्दों का धड़ल्ले से उपयोग कर रहे हैं। अंग्रेज़ी के कई शब्द ऐसे हैं, जो हमारी बोलचाल के दौरान प्रचलन में आ गए हैं। समाचार–पत्र इन शब्दों को अब बोलचाल से खबरों तक ले आए हैं। खास तौर पर खबरों के शीर्षक में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग काफ़ी बढ़ गया है जैसे –

''ड्राइविंग टेस्ट में कार नहीं, सड़क चलेगी''[9]

जिज्ञासा और प्रश्नात्मकता

हम किसी भी चीज़ के बारे में तभी सोचते हैं, जब हमारे मन में उसके प्रति जिज्ञासा जागती है। जिज्ञासा के कारण ही उस विषय विशेष के प्रति हमारे मन में भाँति–भाँति के प्रश्न आते हैं। इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए या अपनी शंका का समाधान खोजने के लिए हम उस विषय के बारे में और विस्तार से जानने की कोशिश करते हैं। यह मानव मन का प्राकृतिक गुण है, स्वभाव है। पत्रकारिता इंसान की इसी प्राकृतिक विशेषता को बल देती है। पत्रकारिता का मूल गुणधर्म ही है; पाठकों के मन में जिज्ञासा और प्रश्न जगाना और फिर उनके उत्तर भी देना। जिज्ञासा और प्रश्नात्मकता को बढ़ावा देने का मूल सिद्धांत ही समाचार–पत्रों को पाठकों से जोड़ता है। किसी भी विषय को इस ढंग से पेश किया जाना चाहिए कि पाठक उसके बारे में और विस्तार से जानने के लिए व्याकुल हो जाए, पाठक के मन में खबर के प्रति जिज्ञासा जगाने की पहली सीढ़ी खबर का शीर्षक है। शीर्षक जितना दमदार और रोचक होगा, पाठक के मन में खबर पढ़ने की जिज्ञासा भी उतनी ही प्रबल होगी, जैसे

'''डोरीमॉन' जैसी सरकार, 'मोगली' जैसा विपक्ष''[10]

इसके अलावा भी पत्रकारिता के शिल्प की विशेषताओं में सामयिकता, भाषा की सहजता और सरलता, स्थानीयता और मानक स्वरूप, बिम्बात्मकता, व्यंग्यात्मकता, वर्णनात्मकता आदि मुद्दों का समावेश होता है।

सार

पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य सहजता से अपनी बात पाठकों तक पहुँचाना है। इस लक्ष्य को पाने के लिए भाषा का सरल होना पहली अनिवार्यता है। आम जनों में प्रचलित भाषा या भाषा विशेष के शब्द पाठकों को सहज आकर्षित करते हैं। कठिन शब्दों का प्रयोग लेखन के भाव को समझने में बाधक होता है। अतएव लेखन में सरल किंतु सजीव शब्दों का चुनाव करना पड़ता है, ताकि पाठक लेखन के भाव को आसानी से समझ सके। सरल भाषा, आकर्षक शब्दावली और छोटे–छोटे वाक्य समाचार–लेखन को स्पष्ट और बोधगम्य बनाते हैं। भाषा जितनी सरल और सहज होगी, भावों की अभिव्यक्ति उतनी ही प्रभावी होगी। यदि हिंदी का जानकार होने या पांडित्य ज़ाहिर करने की कोशिश की गई, तो पत्रकार लेखन–लक्ष्य हासिल करने से चूक सकता है, इसलिए वर्तमान हिंदी पत्रकारिता के शिल्प में आम जनों में प्रचलित भाषा या शब्दों के प्रयोग पर अधिक ज़ोर दिया जा रहा है।

संदर्भ :

1. उपेन्द्रनाथ अश्क की पुस्तक : शिल्प एवं भाषिक संरचना, पृष्ठ संख्या 311
2. वही, पृष्ठ संख्या 312
3. वही, पृष्ठ संख्या 312
4. फ़ीचर–लेखन, संजय श्रीवास्तव, पृष्ठ संख्या 15
5. भारत में पत्रकारिता, आलोक मेहता, पृष्ठ संख्या 90
6. दैनिक भास्कर, अकोला संस्करण–शनिवार 19 नवंबर 2016
7. दैनिक लोकमत समाचार, अकोला संस्करण–रविवार 20 नवंबर 2016
8. वही
9. दैनिक भास्कर, अकोला संस्करण–मंगलवार 22 नवंबर 2016
10. नवभारत टाइम्स, मुंबई संस्करण–सोमवार 5 दिसंबर 2016

अकोला, महाराष्ट्र

shailendra.dubey674@gmail.com

15

हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट का प्रदेय

— डॉ. सहदेव वर्षाराणी निवृत्तीराव

जन्म : 19.08.1981, लखनऊ

शिक्षा :
- ❖ एम.ए. हिंदी
- ❖ सेट
- ❖ नेट
- ❖ पीएच.डी.

व्यवसायः
(संप्रति) श्री विजयसिंह महाविद्यालय, पेठवड गाँव, कोल्हापुर, महाराष्ट्र (भारत) में सहायक प्रोफ़ेसर के पद पर कार्यरत।

प्रकाशन :
विभिन्न राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में 15 शोध आलेख प्रकाशित

किसी भी भाषा के विकास में जनसंचार माध्यमों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। इस दृष्टि से हिंदी भाषा के विकास में आधुनिक जनसंचार के माध्यम, जैसे रेडियो, टी.वी., मोबाइल, दैनिक पत्र, समाचार–पत्र, पत्रिकाएँ, सिनेमा, टेलीफ़ोन, टेलीफ़ैक्स, कंप्यूटर और इंटरनेट आदि ने भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस विकसित होते हुए युग में इ–जर्नलिज़्म, इ–लाइफ़, इ–ट्रेनिंग, इ–एज्युकेशन, इ–गवर्नेंस आदि के कारण इ–युग का प्रारम्भ हो चुका है। ऐसी स्थिति में हिंदी को विकसित कर विश्वभाषा बनाने के लिए इंटरनेट महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इंटरनेट के कारण ही विश्व सिमटकर एक गाँव बन चुका है, अब दूरी किसी कार्य में बाधक नहीं रह गई है।

किसी भी भाषा के विकास की अवस्थाओं का अध्ययन करने से पता चलता है कि भाषा का विकास बोली, विभाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा तथा विश्वभाषा जैसी दिशाओं में होता है। इस दृष्टि से हिंदी अब संपर्क की प्रमुख भाषा बन चुकी है। उसे अब विश्वभाषा का दर्जा प्राप्त करना है। जब वह यू.एन.ओ. की औपचारिक भाषाओं में अपनी उपस्थिति दर्ज करा पायेगी तब हम सही अर्थ में उसे 'विश्वभाषा' कह सकेंगे। हिंदी को विश्वभाषा बनाने में यद्यपि अनेक माध्यम सहायक सिद्ध हो रहे हैं, तथापि इंटरनेट का योगदान सबसे महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा। प्रस्तुत आलेख में हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट का प्रदेय कितना रहा और आगे कितना उपयुक्त हो सकता है, इन्हीं बातों की विवेचना की गयी है।

21वीं सदी सायबर युग है, जिसमें सभी माध्यम कंप्यूटर के साथ जुड़ चुके हैं। कंप्यूटर, लैपटॉप, इलेक्ट्रॉनिक डायरी, कोई भी साधन इंटरनेट के बिना अधूरा लगता है और यही इंटरनेट विश्वभर में घर–घर पहुँच चुका है। ऐसे में हिंदी अगर तकनीक की भाषा बन जाए, तो उसे विश्वभाषा बनने में देर नहीं लगेगी। इस दृष्टि से प्रयास हो रहे हैं, लेकिन क्या वे पर्याप्त हैं अथवा नहीं, इसपर विचार करने की पहल प्रस्तुत आलेख का प्रधान उद्देश्य है।

इंटरनेट पर हिंदी का प्रयोग वैसे अपेक्षा से कम है, लेकिन दिन–ब–दिन इसके प्रयोक्ताओं की संख्या बढ़ रही है, यही हर्ष की बात है। वर्तमान समय में हिंदी को वैश्विक संदर्भ प्रदान करने में उसके बोलने वालों की संख्या, हिंदी फ़िल्में, पत्र–पत्रिकाएँ, विभिन्न हिंदी चैनल, विज्ञापन एजेंसियाँ, उसका विश्वस्तरीय साहित्य तथा साहित्यकार, सभी का विशेष प्रदेय है। इसके अतिरिक्त हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट की भूमिका भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हिंदी अपने आप में परिपूर्ण है। विन्यास की दृष्टि से, ग्राह्यता की दृष्टि से, प्रयोजन की दृष्टि से तथा प्रयोग की दृष्टि से भी हिंदी हर रूप में सक्षम है। इस सुबोध सरल, सशक्त, भाषा को आवश्यकता है, तंत्र–ज्ञान की भाषा के रूप में नई आवश्यकताओं के अनुरूप तकनीकी क्षेत्र में इसके प्रयोग को बढ़ावा देने की। इस संबंध में डॉ. अर्जुन चौहान जी का कथन द्रष्टव्य है –

''आज हमें हिंदी को आई.टी. की भाषा बनाने की चुनौती स्वीकारनी होगी। सूचना एवं प्रौद्योगिकी तथा विज्ञान विषयक सामग्री को हिंदी में देना होगा। पढ़ेगा कौन इसकी चिन्ता किए बिना।''[1]

इंटरनेट का प्रयोग लगभग चार दशकों से हो रहा है। सर्वप्रथम अमेरिका के कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय में इसे प्रारंभ किया गया। अमेरिका की रक्षा अनुसंधान परियोजना एजेंसी ने आपसी सूचनाओं का आदान–प्रदान करने के लिए यह क्रांतिकारी विकास किया। इससे प्रेरित होकर विश्व के कई प्रख्यात कंप्यूटर कंपनियों ने इस दिशा में पहल की और संपूर्ण विश्व की संचार–व्यवस्था को आपस में जोड़ा। वैसे कंप्यूटर की अपनी कोई एक ही भाषा नहीं होती। फिर भी कंप्यूटर पर हिंदी स्वीकृत हो चुकी है, क्योंकि देवनागरी लिपि ध्वनियों पर आधारित लिपि है। अर्थात् जैसे वह लिखी जाती है, वैसे ही बोली भी जाती है। वैज्ञानिक ढंग से विकसित एवं वर्गीकृत होने के कारण इसके सभी वर्णों का उच्चारण सुनिश्चित है। 'क' का उच्चारण 'क' ही होता है। तथा 'क' की ध्वनि को बतलाने वाला भी एक वर्ण है 'क'। कंप्यूटर पर यूनिकोड ने प्रत्येक अक्षर के लिए एक विशेष नंबर प्रदान किया है। किसी भाषा से इसमें कोई अंतर नहीं आता। इसे सभी कंप्यूटर कंपनियों ने अपनाया है, इसलिए हिंदी अब कंप्यूटर के माध्यम से कहीं पर भी विश्व में पढ़ी जा सकती है। वर्णमाला के स्वरों, मात्राओं, व्यंजनों के लिए स्वतंत्र कुंजियाँ बनाई गई हैं। बावजूद इसके कुछ कमियाँ आज भी हैं। हिंदी में फ़ॉण्ट और कीबोर्ड ले–आऊट के मानकीकरण का आधारभूत काम होना चाहिए। इस संबंध में आर. अनुराधा जी का मत युक्ति संगत लगता है –

''अब भी कई महत्त्वपूर्ण सॉफ़्टवेयर हैं, जिनपर यूनिकोड आधारित फ़ॉण्ट काम नहीं करते। क्वार्क ऐडोबी के बनाए पेजमेकर आदि आज भी यूनीकोड आधारित मंगल जैसे फ़ॉण्ट के लिए उपयुक्त नहीं हैं। इनमें 'क्रुतिदेव', 'चाणक्य', जैसे फ़ॉण्ट से ही काम चलाना पड़ता है। ऐसे मौकों के लिए फ़ॉण्ट कनवर्टर भले ही विकसित कर लिये गये हों, पर उनमें भी आपसी कंपैटिबिलिटी की समस्या फ़ॉण्ट परिवर्तित टेक्स्ट के बीच–बीच में अंक यानी अपठनीय चिन्हों के रूप में नज़र आती है। जापान जैसे कम आबादी वाले और चीन जैसे विकसित होते देश भी माइक्रोसॉफ़्ट को अपनी भाषा में ब्राउज़र और ओएस बनाने पर मजबूर कर पाये, तो हमें भी अपने संख्या–बल से इसे बखूबी कर सकना चाहिए। लेकिन इसके लिए जो इच्छाशक्ति होनी चाहिए वह हमारे पास नदारद है।''[2]

हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट इसलिए भी लाभप्रद है कि, हिंदी भाषी भारतीय और भारतीय मूल के लोग कई देशों में बसे हुए हैं, जो अपने देश से जुड़े रहना चाहते हैं। हिंदी केवल भारत की राजभाषा और संपर्क भाषा नहीं है, बल्कि कई देशों, जैसे फ़िजी व नेपाल की राजभाषा, पाकिस्तान की संपर्क भाषा तथा मॉरीशस, बाली, सुमात्रा, जावा, सूरीनाम आदि देशों में बोली और समझी जाने वाली भाषा है। इसके अतिरिक्त जो हिंदी भाषा उच्चशिक्षा, व्यापार एवं रोज़गार के निमित्त विदेशों में हैं, उनके साथ भी हिंदी विश्व में फैल रही है। आज हिंदी भाषा का प्रयोग भारत में ही नहीं, बल्कि विश्व के अनेक देशों में हो रहा है। विदेशों में भी हिंदी अध्ययन–अध्यापन का कार्य बल पकड़ रहा है। 1935 में बेल्जियम के नागरिक, डॉ. कामिल बुल्के ने इसाई धर्म–प्रचार के लिए हिंदी को अभिव्यक्ति के लिए अपनाया। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से 'रामकथा : उद्‌भव और विकास' विषय पर डी.फ़िल. की उपाधि प्राप्त की। जॉर्ज फ़ास्टर जैसे विद्वान ने भी हिंदी सीखकर 'अभिज्ञान–शाकुंतलम्' का हिंदी से अंग्रेज़ी में अनुवाद किया। इस तरह विदेशियों को भी हिंदी काफ़ी समय से आकर्षित करती रही है।

विश्व स्तर पर आज हिंदी ने अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बनाया है। विश्व के 44 से अधिक देशों में करोड़ों लोगों द्वारा बोली और समझी जानेवाली यह भाषा है। विश्व के 150 विश्वविद्यालयों में हिंदी के पठन–पाठन और अनुसंधान की व्यवस्था है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के परिसर में संपन्न हुआ आठवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन इस तथ्य को भी रेखांकित करता है कि आनेवाले दिनों में हिंदी अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में उभरेगी। इंटरनेट के कारण ही वह केवल भारत की सीमाओं में कैद नहीं रही, बल्कि वह बड़े स्तर पर संवाद और संपर्क की कड़ी बनी। लेकिन हिंदी भाषा के इंटरनेट में प्रयोग के लिए सबसे बड़ी बाधा हिंदी के मानकीकृत सॉफ़्टवेयर की अनुपलब्धता है। इस संबंध में डॉ. अर्जुन चौहान

जी का सुझाव द्रष्टव्य है –

''एक ऐसा सॉफ़्टवेयर बनाया जाए, जो 'सॉफ़्टवेयर का सॉफ़्टवेयर' हो। इसमें अब तक के बनाये गए सभी सॉफ़्टवेयर पैकेज वालों की सुविधा होगी तथा संगणक के हिंदीकरण में वृद्धि होगी, इसमें संदेह नहीं।''[3]

भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति, प्रतिभा देवी सिंह पाटिल का कथन द्रष्टव्य है –

''संचार और प्रौद्योगिकी के इस युग में कार्यालयों, विभागों और मंत्रालयों में विविध हिंदी सॉफ़्टवेयर प्रयोग में लाए जा रहे हैं। हमें मानक सॉफ़्टवेयर बाज़ार में लाना चाहिए, ताकि कार्य में एकरूपता आए। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र के हमारे युवा विशेषज्ञ निश्चित यह काम कर सकते हैं। हिंदी को आगे लाकर कंप्यूटर जगत में एक नई क्रांति लानी चाहिए ताकि हिंदी को एक मज़बूत तकनीकी आधार मिल सके। इसी प्रकार प्रत्येक राज्य में भिन्न–भिन्न तकनीकी और प्रशासनिक शब्दावली प्रयोग में लाई जाती है। इसमें भी एकरूपता लानी चाहिए।''[4]

अभी हाल ही में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा द्वारा हिंदी माध्यम में एम.बी.ए. का पाठ्यक्रम आरंभ किया गया। इसी तरह 'इकोनॉमिक टाइम्स' तथा 'बिज़नेस स्टैंडर्ड' जैसे अख़बार हिंदी में प्रकाशित होकर उसमें निहित संभावनाओं का उद्घोष कर रहे हैं। पिछले कई वर्षों में यह भी देखने में आया कि 'स्टार न्यूज़' जैसे चैनल, जो अंग्रेज़ी में आरंभ हुए, वे विशुद्ध बाज़ारीय दबाव के चलते पूर्णतः हिंदी चैनल में रूपांतरित हो गये हैं। साथ ही, 'ई.एस.पी.एन' तथा 'स्टार स्पोर्ट्स' जैसे खेल चैनल भी हिंदी में कमेंटरी देने लगे हैं। यह हिंदी का परम सौभाग्य है कि वह उपग्रह द्वारा प्रसारित चैनलों के ज़रिये अंतरिक्ष मार्ग से बेरोक–टोक विश्व के किसी भी देश में पहुँच रही है। इस तरह हिंदी को वैश्विक संदर्भ देने में उपग्रह चैनलों, विज्ञापन एजेंसियों, बहुराष्ट्रीय निगमों तथा यांत्रिक सुविधाओं का विशेष योगदान है। आज हिंदी वैश्विक मीडिया की चहेती भाषाओं में से एक है। इस प्रकार भारत का नाम विश्व स्तर पर ले जाने में हिंदी प्रमुख रही।

वीणा विजउदित का मत है –

''विदेशों में हिंदी को बचाने के लिए अन्तरजाल का आकर्षण काम कर गया है। हर कवि व लेखक एक प्लेटफ़ॉर्म पर आना चाहता है और यह प्लेटफ़ॉर्म दिया है अन्तरजाल ने। लगता है कि अपने देश में नहीं, अपितु अन्तरजाल पर ही हिंदी का फूलने–फलने का भविष्य निर्भर है।''

मीडिया विशेषज्ञ मार्शल मैक्लुहान कहते हैं –

''वर्तमान शती में इंटरनेट की भावी गति तूफ़ानी है। आज सभी विश्वविद्यालयों में भाषा विद्यापीठ या अनुवाद प्रौद्योगिकी यत्नशील है कि समय की माँग के अनुसार कंप्यूटर विज्ञान एवं संचार प्रविधि के स्तर पर हिंदी भाषा की वैज्ञानिकता की सार्थकता बताए। आज सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार के साथ हिंदी इंटरनेट पर भी स्थान पा चुकी है। अनेक हिंदी समाचार–पत्रों के इंटरनेट संस्करण उपलब्ध हैं।''

1998 में हाईटैक सिटी हैदराबाद के उद्घाटन के अवसर पर भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री ने कहा था – भारत में इंफ़ॉर्मेशन टेक्नोलॉजी टॉस्क फ़ोर्स' की स्थापना पर बल दिया गया था, जिसका लक्ष्य भारत से 100 मिलियन डॉलर तक के सॉफ़्टवेयर का निर्यात करना था। इसीलिए भारत ने विश्व व्यापार संगठन के साथ 'टेलीकॉम एग्रीमेण्ट और द इंफ़ॉर्मेशन टेक्नोलॉजी एग्रीमेण्ट' पर हस्ताक्षर किए थे।'' इस कथन से हम समझ सकते हैं कि आज हिंदी विश्वभर में फैल रही है। इंटरनेट पर आज हिंदी की 100 से भी अधिक ऑनलाइन पत्रिकाएँ उपलब्ध हैं, जिनमें 'तद्भव', 'हंस', 'अनुभूति', 'अभिव्यक्ति', 'सृजनगाथा', 'हिंदी नेस्ट', 'रचनाकार', 'प्रतिलिपि', 'सबद', 'गर्भनाल', 'ई–कविता', 'साहित्य कुंज' जैसी इ–पत्रिकाएँ नियमित रूप से अपडेट हो रही हैं तथा उनकी पाठक–संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

हम जानते हैं कि तकनीक की भाषा अंग्रेज़ी है, बावजूद इसके अन्य भाषाओं की तुलना में हिंदी की प्रयोजनमूलक स्थिति बेहतर है। आज वैश्वीकरण और बाज़ारवाद के परिणामस्वरूप किसी भी देश की सांस्कृतिक परंपराओं, वैज्ञानिक अनुसंधानों, वाणिज्य और व्यापारिक गतिविधियों, साहित्यिक मान्यताओं आदि से परिचित कराने में अनुवाद अनिवार्य है। हिंदी की लिपि इसके लिए उपयुक्त होने के कारण विश्वस्तर पर उसे फैलने में सरलता हुई है। इसके अतिरिक्त, अनुवाद से

संबंधित वेबसाइट्स, अंग्रेज़ी–हिंदी शब्दावलियाँ, अंग्रेज़ी–हिंदी शब्दकोश, प्रयोजनमूलक हिंदी से संबंधित वेबसाइट्स तथा हिंदी सीखनेवालों के लिए उपयोगी वेबसाइट्स, आज इंटरनेट पर उपलब्ध हैं। इनके प्रयोग से विश्व के किसी भी देश में बैठकर बड़ी सहजता से हिंदी संबंधी जानकारी ली जा सकती है। विदेशों में हिंदी फ़िल्में भी बड़ी रुचि से देखी जाती हैं। देश–काल की सीमा से बाहर निकलकर ये फ़िल्में भारत की भाषा को विश्वस्तर पर प्रतिष्ठित करा रही हैं। निस्संदेह इस दिशा में इंटरनेट अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

विश्व बाज़ार के दबाव के कारण विज्ञान, वाणिज्य, व्यापार, खेल, साहित्य आदि की सूचनाएँ हिंदी में देने का दबाव बढ़ रहा है। हिंदी का प्रयोग एस.एम.एस., इ.मेल, इ.कॉमर्स, इ.बुक, इंटरनेट और वेब जगत् में बड़ी ही सहजता से किया जा रहा है। कई मल्टीनेशनल कंपनियाँ, जैसे माइक्रोसॉफ़्ट, गूगल, आइ.बी.एम. ओरेकल आदि व्यापक बाज़ार और भारी लाभ को देखते हुए हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं। स्पष्ट है, इंटरनेट विश्व के कोने–कोने में पहुँच गया है। इंटरनेट हिंदी भाषा और साहित्य को विश्वस्तर पर प्रस्तुत कर रहा है। एक मत उल्लेखनीय है –

''विश्व स्तर पर हिंदी के विस्तार में हिंदी साहित्य की उल्लेखनीय भूमिका है और अभी भी हिंदी साहित्य अपनी भूमिका बखूबी निभा रहा है। समय के संग भूमिका के तरीके में बदलाव आते जा रहे हैं। हिंदी साहित्य अब तकनीक से जुड़ रहा है। कंप्यूटर की विभिन्न विधाओं में अपनी उपस्थिति को दर्ज़ कराते हुए हिंदी बढ़ रही है। हिंदी गद्य विधा में अपनी अभिव्यक्ति 'गर्भनाल' और 'ई–कविता' जैसी वेब पत्रिकाओं में कर रही है और ब्लॉग हिंदी के रूप में अपने महत्त्व को दर्शाते हुए प्रभावशाली ढंग से प्रचार–प्रसार में लगी है।''[5]

आज इंटरनेट पर हिंदी पत्रकारिता के वेब अखबार की शुरूआत हुई है। हिंदी के सभी प्रमुख समाचार–प्रकाशनों के ऑनलाइन संस्करण उपलब्ध हैं, जिनमें 'टाइम्स ऑफ़ इंडिया', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'इंडियन एक्सप्रेस', 'हिंदी मिलाप', 'लोकमत टाइम्स', 'गुजरात समाचार', 'नवभारत', 'बिज़नेस लाइन', 'द हिन्दू', 'टेलीग्राफ़', 'फ़ेमिना फ़िल्मफ़ेयर', 'द वीक', 'गुजरात बिज़नेस' इत्यादि। कुछ ऐसे समाचार–पत्र भी हैं, जो केवल इंटरनेट पर पढ़े जा सकते हैं, जिनमें 'रेडिफ़ ऑन द नेट', 'इण्डिया वर्ल्ड', 'इण्डियन एक्सप्रेस', 'साईबर इण्डिया', 'ऑनलाइन इण्डिया', 'ऑन द नेट' आदि प्रमुख हैं।

अखबार और पत्रिकाओं के अलावा आकाशवाणी, दूरदर्शन और फ़िल्मों के वेब भी उपलब्ध हैं। यह निर्विवाद सत्य है कि हिंदी इंटरनेट के कारण ही विश्वव्यापी बन रही है। उसे इ–मेल, इ–कॉमर्स, इ–बुक, एस.एम.एस., इंटरनेट एवं वेब जगत में बड़ी सहजता से पाया जा सकता है। वर्तमान समय में जो भाषा इस दृष्टि से आगे बढ़ेगी, उसी का अस्तित्व रहेगा। इस संबंध में डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय का कथन प्रासंगिक है –

''जो भाषाएँ बहुभाषिक कंप्यूटर, इंटरनेट एवं सूचना प्रौद्योगिकी की एकदम नवीनतम आविष्कृतियों में अपने संपूर्ण शब्दकोश, विश्वकोश, व्याकरण, साहित्य तथा ज्ञान–विज्ञान के विविध क्षेत्रों की तमाम उपलब्धियों के साथ दर्ज़ होंगी और कंप्यूटर लायब्रेरी तथा इ–बुक की दुनिया में अपनी उपस्थिति का गहरा अहसास कराएँगी, उनकी प्रगति निर्विवाद है। हिंदी इस दिशा में अपेक्षित गति और आंतरिक ऊर्जा के साथ सक्रिय है। वस्तुस्थिति यह है कि आज भारतीय उपमहाद्वीप ही नहीं, बल्कि दक्षिण पूर्व एशिया, मॉरीशस, मध्य एशिया, खाड़ी देशों, अफ़्रीका, यूरोप, कनाडा तथा अमेरिका तक में हिंदी कार्यक्रम उपग्रह चैनलों के ज़रिए प्रसारित होते हैं और हिंदी कार्यक्रमों के श्रोता और दर्शक सबसे ज़्यादा हैं। आज मॉरीशस में हिंदी सात चैनलों के माध्यम से धूम मचा रही है। विगत कुछ वर्षों में एफ़.एम. रेडियो के विकास से हिंदी कार्यक्रमों का नया श्रोता वर्ग पैदा हो गया है। हिंदी अब नई प्रौद्योगिकी के रथ पर आरूढ़ हो रही है। इंटरनेट जैसे वैश्विक माध्यम के कारण हिंदी के अखबार एवं पत्रिकाएँ दूसरे देशों में भी विविध साइट्स पर उपलब्ध हैं।''[6]

हिंदी विश्वभाषा के सिहांसन पर ज़रूर बैठेगी, क्योंकि इस वैश्वीकरण के युग में पूंजी वैश्विक बन चुकी है। इस होड़ में केवल अमेरिका ही नहीं, बल्कि पूरा विश्व है। देश की सीमाएँ टूट रही हैं। पूरे विश्व में पूंजी के स्रोत खुल गए हैं। संपूर्ण अर्थशास्त्र मार्केट बन चुका है। ऐसे में संपूर्ण दुनिया की नज़रें भारत पर हैं। भारत देश विश्व का सबसे बड़ा बाज़ार बन गया है, अतः अपनी वस्तुओं की खपत के लिए हिंदी भाषा आवश्यक बन चुकी है,

इसलिए वैश्वीकरण की भाषा हिंदी ही बनेगी और इस वैश्वीकरण का औज़ार इंटरनेट है, जिससे हिंदी विश्वव्यापी बन रही है।

अब हिंदी भी उद्यम (Industry) क्षेत्र का साधन है। इस वैश्वीकरण और बाज़ारीकरण की दिशा में भारत एक अच्छा बाज़ार दिखाई दे रहा है। इसीलिए हिंदी को विपणन के स्तर पर उद्यम क्षेत्र का महत्त्वपूर्ण साधन समझना अनुचित न होगा। ''हिंदी को सूचना प्रौद्योगिकी के स्तर पर रोज़गारपरक भाषा समझना अनिवार्य हो गया है, क्योंकि भाषा प्रयोग की प्रचलित पद्धतियाँ जनसंचारीय और व्यवसायपरक प्रशिक्षण के रूप में देखी जा सकती है और आज की अपेक्षाओं के अनुरूप भाषा के प्रयोजनमूलक स्तर पर आवश्यकतानुसार उपभोक्ता या बाज़ार की अपेक्षाओं के अनुरूप हिंदी भाषा का विकास, व्यवहार और शिक्षण–प्रशिक्षण अनिवार्य हो गया है, क्योंकि व्यावसायिक स्तर पर भाषा का प्रयोजन भी बदल जाता है। इसके अतिरिक्त हिंदी में जो ई–मेल की सुविधाएँ उपलब्ध हैं, वे इस प्रकार हैं –

www.gmail.com
www.rediffmail.com
www.quillpad.in
www.activism.com
www.policyholder.gov.in

लाखों वेबसाइट्स आज इंटरनेट पर उपलब्ध हैं, जिनसे हिंदी को विश्व भाषा बनाने में सहायता मिल रही है।

विश्वभाषा हिंदी का विस्तार आज इंटरनेट के द्वारा व्यापकता से हो रहा है तथा इंटरनेट के माध्यम से ही हिंदी को एक नई दिशा मिली है। इंटरनेट से ही हिंदी का प्रचार–प्रसार विश्व स्तर पर दिन–दुगुना और रात–चौगुना हुआ है। आज कंप्यूटर के माध्यम से इंटरनेट हमारे जीवन का अपरिहार्य हिस्सा बन गया है। इसी के द्वारा हम सारी दुनिया से जुड़ सकते हैं। हिंदी भाषा के विकास में इंटरनेट प्रभावशाली माध्यम हो गया है। ''कंप्यूटर से जुड़े रहने से इंटरनेट की दुनिया में हिंदी के फैलते साम्राज्य की नवीनतम जानकारियाँ मिलती रहती हैं। प्रसिद्ध सर्च इंजन, गूगल के प्रमुख, एरिक एन्डरसन स्मिथ का मानना है कि अगले पाँच से दस सालों में हिंदी इंटरनेट पर छा जाएगी और अंग्रेज़ी और चीनी के साथ हिंदी इंटरनेट की दुनिया की प्रमुख भाषा होगी।''[7]

इंटरनेट पर हिंदी अख़बारों, पत्रिकाओं तथा पुस्तकों के विविध साईटों पर उपलब्ध होने के कारण, उन्हें विश्वभर में फैलाया जा सकता है। आज विश्व के अनेक देशों में हिंदी की पत्रिकाएँ निकल रही हैं तथा हिंदी के नव साहित्यकार उभरकर सामने आ रहे हैं। विश्व के सभी महत्त्वपूर्ण देशों में हिंदी में अध्ययन–अध्यापन किया जा रहा है। इंटरनेट के कारण हम विदेश के हिंदीभाषियों से घर बैठे संवाद कर सकते हैं। 1996 में नेटस्केप के आई.पी.ओ. ने दुनिया के सामने एक बहुत बड़ा आविष्कार इंटरनेट लाया, जिसे आज बीस वर्ष हो रहे हैं। इंटरनेट की इस युवावस्था को जब हम देखते हैं, तो ध्यान में आयेगा कि भारत में आज भी वह जीवन का अंग नहीं बना, बस भारतीयों की ज़िंदगी को छू रहा है। ऐसे में हिंदी का विकास इंटरनेट के माध्यम से करना है, तो इसके लिए सार्थक प्रयासों की आवश्यकता है। हिंदी विषयक कंप्यूटर वेबसाइट व सॉफ़्टवेयर, आधुनिक एवं नव आविष्कृत उपलब्ध कराये जाने चाहिए। साथ ही, उनके प्रयोग विषयक प्रचार–प्रसार को युद्ध स्तर पर प्रसारित किया जाना चाहिए। आज इंटरनेट, ई–मेल की सुविधा सेलफ़ोन पर भी उपलब्ध हैं, जिससे विश्व का कोई भी व्यक्ति समूचे विश्व के संपर्क में सदैव बना रह सकता है। चूँकि स्मार्टफ़ोन वैश्वीकरण के दौर में सबसे महत्त्वपूर्ण संपर्क–साधन बन चुका है, तो हिंदी की उपलब्धता देवनागरी में हो। यद्यपि इंटरनेट के प्रयोग में हिंदी को काफ़ी चुनौतियाँ मिल रही हैं, तथापि वही भाषा और लिपि इंटरनेट पर चलेगी, जो पूर्णतः वैज्ञानिक होगी। इस दृष्टि से हिंदी पूर्णतः सक्षम है।

इस संबंध में बालेन्दु दाधीच का मत द्रष्टव्य है –

''दुर्योग से, हिंदी के भाषाई मानकीकरण और सरलीकरण के लिए चलनेवाली प्रक्रियाओं का हिंदी के तकनीकी विकास के साथ कोई तालमेल नहीं है। दोनों धाराएँ अलग–अलग चलती हैं। केंद्र सरकार के स्तर पर भाषाई परिमार्जन और परिवर्धन के प्रयास जहाँ मानव संसाधन विकास मंत्रालय की ओर से चलाए जाते हैं, वहीं तकनीकी विकास से जुड़े मामले सूचना प्रौद्योगिकी विभाग देखता है। इसी तरह निजी, अकादमिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में होनेवाले शोध, मीमांसा, मूल्यांकन, समीक्षा तथा अन्य

भाषाई घटनाक्रम का तकनीकी क्षेत्र के साथ सीधा संबंध नहीं होता। यह आवश्यकता है कि भाषाई तकनीक की सीमाओं तथा विशेषताओं से परिचित हो, जबकि तकनीकी विशेषज्ञ तथा विकासकर्ता भाषा की ज़रूरतों तथा बदलावों को समझ सकें। जब तक इस तरह का तालमेल सुनिश्चित नहीं होता, तकनीक और भाषा अपनी–अपनी दिशा में चलती रहेगी। उसके साथ ही तकनीकी मानकीकरण की स्थिति असंतोषजनक बनी रहेगी।''[8]

इस तरह इंटरनेट पर आप्रवासी भारतीय हिंदी के पोर्टल से लाभान्वित हो रहे हैं और आशा भरी दृष्टि से भविष्य की उन्नत संभावनाओं की ओर निहार रहे हैं। इसलिए हिंदी को विश्वभाषा बनाने के लिए इंटरनेट एक उच्चतम माध्यम है। हिंदी को सही में विश्वभाषा के रूप में विकसित करना है, तो उसके ई–स्वरूप का विकास अनिवार्य है। इसी कारण मुद्रित साहित्य के ई–संस्करण भी प्रकाशित किए जा रहे हैं। आज की तारीख में यह बात गौण हो रही है कि भाषा की कितनी वेबसाइट्स हैं, बल्कि यह बात महत्त्वपूर्ण हो रही है कि उसके उपभोक्ता, पाठक, प्रतिक्रिया लेखक, प्रायोजक कितने हैं।

इंटरनेट पर आज हिंदी की 100 से भी अधिक ऑनलाईन हिंदी पत्रिकाएँ उपलब्ध हैं, जिन्हें विश्वभर से कोई भी बड़ी सहजता से पढ़, समझ या ग्रहण कर सकता है। इंटरनेट पर हिंदी के सभी प्रमुख समाचार प्रकाशनों के ऑनलाइन संस्करण उपलब्ध हैं। कुछ ऐसे समाचार–पत्र भी हैं, जो केवल इंटरनेट पर पढ़े जा सकते हैं। आज इंटरनेट पर अनुवाद से संबंधित वेबसाइट, अंग्रेज़ी–हिंदी शब्दावलियाँ, अंग्रेज़ी–हिंदी शब्दकोश, प्रयोजनमूलक हिंदी से संबंधित वेबसाइट, हिंदी सीखनेवालों के लिए उपयोगी वेबसाइटस् उपलब्ध हैं, जिनमें हिंदी संपूर्ण विश्व में बड़ी तेज़ी से फल–फूल रही है। अख़बार तथा पत्रिकाओं के अलावा आज इंटरनेट पर आकाशवाणी, दूरदर्शन और फ़िल्मों के वेब भी उपलब्ध हैं, जिनसे मनोरंजन के कारण भी हिंदी विश्वभर में फैल रही है।

निष्कर्ष

हिंदी की कठिनाई का रोना कितना भी रोया जाए, लेकिन इंटरनेट के माध्यम से तमाम सोशल साइट्स पर विश्वभर के लोगों की आवाजाही हिंदी में हो रही है। सच्चाई यह है कि अभी भी दो प्रतिशत जनता भी इंटरनेट से जुड़ नहीं पाई है। तथापि इसके प्रभाव से हिंदी का परिदृश्य अछूता नहीं है। इंटरनेट पर वैश्विक उपस्थिति से हिंदी का रंग–रूप बदल रहा है। इंटरनेट एक महत् उपयोगी साधन सिद्ध हो सकता है, लेकिन तकनीकी क्षेत्र में हिंदी प्रयोग योग्य बनाई जाए। जब तक यह प्रयास नहीं होता तब तक अनेक मुसीबतों का हिंदी को और हिंदी प्रेमियों को सामना करना पड़ेगा, यह अटल है। हिंदी को तकनीकी क्षेत्र में अपनाया जाए। जब तक मानक नागरी का कीबोर्ड नहीं बनता तब तक इसका सामना करना पड़ेगा। हम पूरी तरह आश्वस्त नहीं हैं, क्योंकि अब तक के इंटरनेट का इतिहास यह बता रहा है कि, हमारी भाषा स्रोत भाषा बने।

इस प्रकार हिंदी को विश्वभाषा बनाने में इंटरनेट का प्रदेय निश्चित रूप से बहुत अधिक है, क्योंकि मुद्रित माध्यमों में प्रकाशित साहित्य का पठन–पाठन, अध्ययन, अनुसंधान, अनुवाद, आलोचना आदि कार्य एक सीमित दायरे में होता है, जबकि इंटरनेट पर प्रकाशित साहित्य की कोई सीमा नहीं। इंटरनेट के कारण ही साहित्य क्षणभर में फैल जाता है। राष्ट्र, देश, भाषा, संस्कृति के सरहदों से दूर यह साहित्य ज्ञान प्रसार की लक्ष–लक्ष संभावनाएँ दृष्टिगत कराता है, पल भर में सभी को प्राप्त होता है। यही कारण है कि 1999 में प्रकाशित 'वेब दुनिया' पहली वेबसाइट थी, तो आज लगभग 17 सालों में हिंदी भाषा और साहित्य की 1000 वेबसाइट्स सक्रिय हैं। उनमें से लगभग 100 वेबसाइट्स पर नियमित रूप से स्तरीय हिंदी सा. हित्य प्रकाशित होता रहा है।

सॉफ़्टवेयर की दुनिया में भी उसकी उपस्थिति देखी जा सकती है। 'बहुभाषिक ऑनलाइन वार्ता इस सुपरटेक सॉफ़्टवेयर के निर्माण होने से हिंदी पत्रकारिता में कम समय में अनुवाद जैसे कठिन कार्य भी सहज संभव हो रहे हैं। तकनीक के कारण ही यह संभव हो सका। अमेज़न के माध्यम से दुनिया भर में इंटरनेट के ज़रिये सबसे अधिक किताबें बिक रही हैं। निस्संदेह हिंदी को विश्वभाषा बनाने के लिए इंटरनेट एक उच्चतम माध्यम है। इंटरनेट पर हिंदी प्रयोग की अपार संभावनाएँ हैं, बस आवश्यकता है दृढ़ इच्छाशक्ति तथा समन्वित प्रयासों की। हिंदी शब्दों का

विशाल भण्डार 'हिंदी वर्ड नेट' पर उपलब्ध है। इससे हिंदी भाषा को विश्व की प्रमुख भाषाओं के साथ जोड़ा जाएगा। अगर यह सारे प्रयास सफ़ल रहे, तो निश्चित रूप से हिंदी भाषा विश्व स्तर पर स्थापित होगी। ये सुविधाएँ प्राप्त होने से इन साधनों को अपनाने में जनसामान्य की भागीदारी बढ़ेगी। इसके माध्यम से जनता में साहित्य के प्रति रुझान बढ़ेगा और पर्यायी रूप से हिंदी का भविष्य उज्ज्वल होगा और हिंदी केवल राजभाषा या राष्ट्रभाषा तक सीमित न रहकर एक विश्वभाषा भी बनेगी।

संदर्भ :

1. मीडिया कालीन हिंदी–स्वरूप एवं सम्भावनाएँ – डॉ. अर्जुन चौहान पृ. क्र. 57
2. साहित्य, समाज और मीडिया – डॉ. शीतला प्रसाद दुबे पृ. क्र. 247
3. मीडिया कालीन हिंदी : स्वरूप एवं सम्भावनाएँ – डॉ. अर्जुन चौहान पृ. क्र. 201
4. हिंदी भाषा विकास में आधुनिक जनसंचार माध्यमों की भूमिका – डॉ. शंकर बुंदेले पृ. क्र.136
5. अनभै (जुलाई – सितंबर, 2007) संपादक रतन कुमार पाण्डेय पृ. क्र. 32
6. हिंदी का विश्व संदर्भ – डॉ. करुणा शंकर उपाध्याय पृ. क्र. 16
7. अनभै (जुलाई – सितंबर, 2007) संपादक रतन कुमार पाण्डेय पृ. क्र. 34
8. नया ज्ञानोदय – सितंबर 2015 पृ. क्र. 54

कोल्हापुर, भारत
varsha.sahadev@gmail.com

भाषा विचार का परिधान है।

– डॉ. जानसन

हिंदी भाषा के गौरव का वर्णन अकल्पनीय है। जिस प्रकार महासागर में अनेक नदियाँ मिलती हैं और उसमें समाहित हो जाती हैं उसी प्रकार हिंदी भाषा ने अनेक भाषाओं को अपने में आत्मसात कर लिया, साथ ही उन्हें संरक्षण भी प्रदान किया। इस भाषा ने विश्व को श्रेष्ठतम व्यक्तित्व दिए।

– राजगोपाल सिंह बघेल

16

राजभाषा हिंदी प्रचार-प्रसार में एण्ड्रॉइड मोबाइल की भूमिका

— श्री विजय प्रभाकर नगरकर

आधुनिक तकनीकी विकास के साथ भाषा का विस्तार भी धीरे–धीरे बढ़ रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी ने भौगोलिक दूरी कम कर दी है। हमारे विचार, कल्पना और जनसंपर्क में अविश्वसनीय परिवर्तन हुआ है। सामाजिक माध्यम में अर्थात् सोशल मीडिया में तीव्र गति से विकास हो रहा है। मोबाइल उत्क्रांति ने सोशल मीडिया का नक्शा बदल दिया है। एण्ड्रॉइड मोबाइल के लिए लाखों मोबाइल एप्प निर्माण हुए और निरंतर नए एप्प गुगल प्ले स्टोर में उपलब्ध हो रहे हैं। एण्ड्रॉइड में अनेक उपयोगी एप्स बनाए गए हैं, जो मुफ़्त भी हैं और कई सशुल्क उपलब्ध हैं। गुगल प्ले में सर्च करते समय हिंदी के लिए अनेक एप्स सामने आते हैं। हिंदी पुस्तकों की सूची में धार्मिक, शिक्षा, कला, साहित्य, सामान्य ज्ञान और इतिहास से लेकर अनेक विषयों का भंडार उपलब्ध है। फ़िल्म की श्रेणी में अनेक पुरानी और नयी भारतीय फ़िल्मों के संग्रह उपलब्ध हैं। समाचार की श्रेणी के अंतर्गत अनेक सुप्रसिद्ध समाचार–पत्र जैसे नव भारत टाइम्स, दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, दैनिक अमर उजाला आदि समाचार–पत्रों की शृंखला है। सर्वाधिक लोकप्रिय एप्स श्रेणी में अनेक हिंदी व्याकरण, इंडिक की–बोर्ड, शब्दकोश, हिंदी कैलेण्डर, लर्न हिंदी, मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ, शायरी, कविता, हिंदी चुटकुले, आयुर्वेद, सामान्य ज्ञान, धार्मिक साहित्य, बी.बी.सी. हिंदी, भविष्य आदि अनेक बहु उपयोगी एप्स का संग्रह आपके सामने हाज़िर है।

राजभाषा हिंदी में काम करने के लिए केंद्र सरकारी कार्यालयों में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों हेतु एण्ड्रॉइड आधारित कुछ महत्त्वपूर्ण मोबाइल एप्प की जानकारी एवं लिंक निम्नानुसार है।

राजभाषा विभाग द्वारा विकसित राजभाषा लीला एप्प

सरकारी कार्यालयों में राजभाषा प्रचार–प्रसार हेतु राजभाषा विभाग ने लीला नामक मोबाइल एप्प विकसित किया है। अब राजभाषा हिंदी आपकी मातृभाषा या अंग्रेज़ी के माध्यम से सीखी जा सकती है। केंद्र सरकारी कर्मचारियों को हिंदी–शिक्षण योजना के तहत प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ, पारंगत, हिंदी टंकण तथा हिंदी आशुलिपि सीखना अनिवार्य किया गया है। लीला मोबाइल एप्प में यह कोर्स आप पढ़कर परीक्षा दे सकते हैं। परीक्षा उत्तीर्ण होने पर नियमानुसार एक मुश्त पुरस्कार और एक वर्ष के लिए विशेष वेतनवृद्धि प्रदान की जाती है। लीला–राजभाषा (कृत्रिम बुद्धि के माध्यम से भारतीय भाषाओं को जानें) हिंदी सीखने के लिए एक बहु–मीडिया आधारित बुद्धिमान स्वयं शिक्षक उपकरण है। लीला का उपयोग करके, अपने मोबाइल पर हिंदी भाषा सीखना वास्तव में आनंददायक और आसान है। हिंदी प्रबोध,

जन्म : 16.02.1960, महाराष्ट्र

शिक्षा :
- एम.ए (हिंदी)
- अनुवाद प्रमाणपत्र प्रशिक्षण

व्यवसाय :
- बी.एस.एन.एल.हिंदी फ़ॉर्म, मुफ़्त हिंदी सॉफ़्टवेयरों का संकलन,
- राजभाषा विभाग के आदेशों का संकलन, आई.टी. संबंधित लेख आदि संपादन,
- इस सी.डी. के बारे में आर.टी.टी.सी.जबलपुर, पुणे, NATFM हैदराबाद
- भारत संचार निगम लि. मुख्यालय, नई दिल्ली से प्रशंसा–पत्र प्राप्त।

प्रकाशन :
- '1857 का संग्राम' नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली
- अनेक अनुवादित कविताएँ, कहानियाँ,
- लेख आदि पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित
- साहित्य अकादमी, नई दिल्ली की पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' में अनूदित कविताएँ प्रकाशित
- अहनदनगर दूरसंचार हेतु राजभाषा कार्यालय सहायिका का संपादन

प्रवीण और प्राज्ञ आदि पाठ्यक्रम अंग्रेज़ी, असमिया, बांग्ला, बोडो, गुजराती, कन्नड़, तेलुगु, कश्मीरी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, ओड़िया, पंजाबी और तमिल माध्यम से सीखने के लिए 'लीला' उपयोगी, अनुकूल और प्रभावी उपकरण है। हिंदी प्रबोध, हिंदी प्रवीण और प्राज्ञ पाठ्यक्रम प्रशिक्षक वर्ग में पढ़ाने और दूरस्थ प्रशिक्षण योजना पर आधारित हैं, जो पहले से ही केंद्रीय हिंदी प्रशिक्षण संस्थान 'सी.एच.टी.आई., राजभाषा विभाग' 'डी. ओ.एल., गृह मंत्रालय', सरकार द्वारा आयोजित किए जा रहे हैं। यह एक पूर्णकालिक 3–स्तरीय पाठ्यक्रम है, जिसे विशेष रूप से सरकार, कॉर्पोरेट, सार्वजनिक क्षेत्र और बैंक कर्मचारियों को राजभाषा हिंदी का ज्ञान प्रदान करने के लिए बनाया गया है। यह प्रशिक्षण अनेक भारतीय भाषाओं (मूल भाषा) में डिज़ाइन किया गया है। शुरुआती चरण से हिंदी सीखने की इच्छा रखने वाले सभी लोगों के लिए यह भी उपयोगी है।

(https://play.google.com/store/apps/details?id=lila.sample1)

सी.एस.टी.टी. ग्लोसरी नामक मोबाइल एप्प

तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार ने सी.एस.टी.टी. ग्लोसरी नामक मोबाइल एप्प बनाया है। सभी भारतीय भाषाओं के लिए शब्दावली विकसित करने के उद्देश्य से भारत सरकार ने 1 अक्टूबर 1961 को एक समिति की सिफ़ारिश पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 344 के अनुच्छेद 4 के तहत वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली 'सी.एस.टी.टी.' के स्थायी आयोग की स्थापना की। इस शब्दावली आयोग का मुख्य कार्य मानक शब्दावली विकसित करना तथा प्रचार–प्रसार और वितरण करना है। राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों और क्षेत्रीय पाठ्य पुस्तक बोर्ड/ग्रंथ अकादमियों के सहयोग से हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में संदर्भ सामग्री सहित वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली का विकास किया जा रहा है। वर्तमान में सी.एस.टी.टी. उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के मुख्यालय के साथ नई दिल्ली में बीस राज्य गठबंधन अकादमियों/राज्य पाठ्य–पुस्तक बोर्ड/विश्वविद्यालय कक्ष इत्यादि के साथ काम कर रहा है, टर्मिनोलॉजी कमीशन से भी जुड़ा हुआ है। सी.एस.टी.टी. द्वारा विकसित मानक शब्दावली के उपयोग के साथ हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में यूनिवर्सिटी लेवल टेक्स्ट बुक्स/संदर्भ सामग्री को प्रकाशित करना उनका मुख्य उद्देश्य है। आज तक सी.एस.टी.टी. ने विभिन्न विषयों और विभिन्न भाषाओं में लगभग आठ लाख तकनीकी शब्दों की शब्दावली को मानकीकृत किया है। सी.एस.टी.टी. ने प्रशासनिक और विभिन्न विभागीय शब्दावलियों का भी खयाल रखा है, जिनका व्यापक रूप से विभिन्न सरकारी विभागों, संस्थानों, अनुसंधान प्रयोगशालाओं, स्वायत्त संगठनों, पी.एस.यू. आदि द्वारा उपयोग किया जाता है।

(https://play.google.com/store/apps/details?id=matrixdev.com.csttglossary)

श्री अखिल कुमार द्वारा विकसित राजभाषा हिंदी एप्प

भारत सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन में भारत सरकार के सभी सरकारी विभाग एवं संस्थान कार्यरत हैं। हिंदी भाषा सशक्त एवं जीवंत तभी होगी जब जन सामान्य द्वारा इसका प्रयोग अपने दैनिक जीवन में किया जाएगा। भारत सरकार के कार्यालयों में राजभाषा के प्रयोग को सरल एवं सुविधाजनक बनाने के लिए अपने छोटे प्रयास के रूप मे इस एप्प को विकसित किया गया है। इस एप्प में कार्यालयों में सामान्यतः प्रयोग किए जाने वाले वाक्यांशों, वाक्यों, पदनामों, पर्यायवाची शब्दों, विभागों आदि के नामों एवं राजभाषा के संबंध में महापुरुषों के विचारों को संकलित किया गया है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार की राजभाषा नीति, राजभाषा अधिनियम (1963), संवैधानिक प्रावधान, राष्ट्रपति के आदेश, 1960, राजभाषा संकल्प, 1968, राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 को भी दिया गया है।

(https://play.google.com/store/apps/details?id=com.devnagrisoft.ramsaranyadav.hindiphrases)

मोबाइल पर गूगल अनुवाद एप्प

गूगल प्ले स्टोर से गूगल ट्रांसलेट एप्प द्वारा अब आप टाइप करके 103 भाषाओं के बीच अनुवाद कर सकते हैं।

गूगल ने भारतीय भाषाओं के लिए नए प्रोडक्ट और फ़ीचर्स की घोषणा की है। गूगल ट्रांसलेट गूगल की नई न्यूरल मशीन ट्रांसलेशन तकनीक का इस्तेमाल करेगा। इसके तहत गूगल अंग्रेज़ी और भारत की 9 भाषाओं के बीच ट्रांसलेशन की सुविधा मुहैया कराएगा। गूगल अंग्रेज़ी और भारतीय भाषाओं जैसे हिंदी, बंगाली, मराठी, तमिल, तेलुगु, गुजराती, पंजाबी, मलयालम और कन्नड़ के बीच ट्रांसलेशन की सुविधा प्रदान कर रहा है। न्यूरल ट्रांसलेशन तकनीक पुरानी तकनीक से कहीं बेहतर काम करेगी। गूगल ने यह भी घोषणा की है कि वह न्यूरल मशीन ट्रांसलेशन तकनीक को गूगल क्रोम ब्राउज़र में पहले से आने वाले ऑटो ट्रांसलेट फ़ंक्शन में भी मुहैया कराएगा। इसके चलते भारतीय इंटरनेट पर मौजूद किसी भी पेज को भारत की कुल 9 भाषाओं में देख सकेंगे। ये नई ट्रांसलेशन सुविधा सभी यूज़र्स के लिए गूगल सर्च और मैप में भी उपलब्ध होगी। ये ट्रांसलेशन सुविधा डेस्कटॉप और मोबाइल दोनों पर मिलेगी। यह घोषणा इंडियन लैंग्वेजज़–डिफ़ाइनिंग इंडियाज़ इंटरनेट शीर्षक के साथ गूगल और के.पी.एम.जी. की साझा रिपोर्ट के ज़रिए की गई है। गूगल अब 9 भारतीय भाषाओं में उपलब्ध है। इन भाषाओं में आप गूगल पर कंटेंट देख सकते हैं। इतना ही नहीं गूगल आपके लिए इन भाषाओं से अनुवाद भी करेगा। वह भी पूरे वाक्य, न कि टुकड़ों में। ये भाषाएँ हैं हिंदी, बंगाली, मराठी, तमिल, तेलुगु, गुजराती, पंजाबी, मलयालम और कन्नड़। गूगल सर्च और गूगल मैप पर भी अनुवाद की ये सुविधाएँ मिलेंगी। मोबाइल और डेस्कटॉप दोनों की फ़ॉर्मेट में अनुवाद की ये सुविधाएँ हैं। गूगल के मुताबिक इस वक्त अंग्रेज़ी के मुकाबले लोकल भाषाओं में ज़्यादा भारतीय इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं। अगले 4 साल में भारतीय भाषाओं में इंटरनेट का इस्तेमाल करने वाले भारतीयों की तादाद 30 करोड़ होने की उम्मीद है। के.पी.एम.जी. के साथ गूगल ने एक रिपोर्ट की है, जिसके मुताबिक सबसे ज़्यादा तमिल, हिंदी, कन्नड़, बंगाली और मराठी जानने वाले लोग ऑनलाइन सेवाओं का इस्तेमाल करते हैं।

अनुवाद करने के लिए टैप करें : किसी एप्प में टेक्स्ट कॉपी करें और आपका अनुवाद पॉप अप हो जाता है

- ऑफ़लाइन : जब आपके पास इंटरनेट नहीं है तो 59 भाषाओं का अनुवाद करें।
- त्वरित कैमरा अनुवाद : 38 भाषाओं में तुरंत पाठ का अनुवाद करने के लिए अपने कैमरे का उपयोग करें।
- कैमरा मोड : 37 भाषाओं में उच्च गुणवत्ता वाले अनुवादों के लिए टेक्स्ट की तस्वीरें लें।
- वार्तालाप मोड : 32 भाषाओं में दो–तरफ़ा तत्काल भाषण अनुवाद
- हस्तलेखन : 93 भाषाओं में कीबोर्ड का उपयोग करने के बजाय स्क्रिन पर हाथ से लिखें ।

६ वाक्यांश पुस्तिका : किसी भी भाषा में भविष्य के संदर्भ के लिए अनुवाद करें और अनुवाद सहेजें।

निम्नलिखित भाषाओं के बीच अनुवाद किया जा सकता है :

अफ़्रीकी, अल्बानियाई, अम्हारिक, अरबी, अर्मेनियाई, अज़रबैजानी, बास्क, बेलारूसी, बंगाली, बोस्नियाई, बल्गेरियाई, कैटलन, सेबूआ, चिचेवा, चीनी (सरलीकृत), चीनी (पारंपरिक), कोर्सीकन, क्रोएशियाई, चेक, डेनिश, डच, अंग्रेज़ी, एस्पेरांतो, एस्टोनियाई, फ़िलिपिनो, फ़िनिश, फ़्रेंच, फ़्रिसियाई, गैलिशियन, जॉर्जियाई, जर्मन, ग्रीक, गुजराती, हैतीयन क्रिओल, होसा, हवाईयन, हिब्रू, हिंदी, ह्मोंग, हंगरी, आइसलैंडिक, इग्बो, इंडोनेशियाई, आयरिश, इतालवी, जापानी, जावानी, कन्नड़, कज़ाख, खमेर, कोरियाई, कुर्द (कुरमानजी), किर्गिज़, लाओ, लैटिन, लातवियाई, लिथुआनियाई, लक्ज़मबर्ग, मैसेडोनियन, मलागासी, मलय, मलयालम, माल्टीज़, माओरी, मराठी, मंगोलियाई, म्यांमार (बर्मीज़), नेपाली, नॉर्वेजियन, पश्तो, फ़ारसी, पोलिश, पुर्तगाली, पंजाबी, रोमानियाई, रूसी, सामोन, स्कॉट्स गेलिक, सर्बियाई, सेसोथो, शोना, सिंधी, सिंहली, स्लोवाक, स्लोवेनियाई, सोमाली, स्पेनिश, सुंडानी, स्वाहिली, स्वीडिश, ताजिक, तमिल, तेलुगु, थाई, तुर्की, यूक्रेनी, उर्दू, उज़्बेक, वियतनामी, वेल्श, झोसा, येहुदी, योरूबा, जुलू।

अनुमति नोटिस

गूगल अनुवाद निम्नलिखित सुविधाओं तक पहुँचने के लिए अनुमति मांग सकता है :

- भाषण अनुवाद के लिए माइक्रोफ़ोन
- कैमरे के माध्यम से पाठ का अनुवाद करने के लिए कैमरा
- पाठ संदेशों का अनुवाद करने के लिए एस.एम.एस.
- ऑफ़लाइन अनुवाद डेटा डाउनलोड करने के लिए बाहरी संग्रहण (एक्सटर्नल मेमरी)
- डिवाइस पर साइन–इन और समन्वयन के लिए खाते की अनुमति और प्रमाण–पत्र

(https://play.google.com/store/apps/details?id=com.google.android.apps.translate)

संदेश पाठक

भारत सरकार ने राष्ट्रीय मोबाइल प्रशासन योजना के तहत अनेक मोबाइल एप्प प्रदान किए हैं। इस योजना के अंतर्गत एस.एम.एस. पढ़नेवाला संदेश पाठक एप्प गूगल प्ले स्टोर पर उपलब्ध है। संदेश पाठक एक भारतीय भाषा एस.एम.एस. रीडर है। यह आने वाले एस.एम.एस. को कैप्चर करता है और इसे उच्च स्वर में पढ़ता है। वर्तमान में यह आठ भारतीय भाषाओं (जैसे हिंदी, मराठी, बंगाली, गुजराती, तमिल, तेलुगु, मलयालम और कन्नड़) और भारतीय अंग्रेज़ी (अंग्रेज़ी–हिंदी, अंग्रेज़ी–तमिल और अंग्रेज़ी–तेलुगु) के तीन स्तर पर उपलब्ध है। भाषा का चयन करने के लिए विकल्प हैं और आवाज़ की गति (सामान्य, धीमी, अधिक धीमी, तेज़, अधिक तेज़) का चयन करें। उपयुक्तता के अनुसार उपयोगकर्ता आवाज़ की गति समायोजित कर सकता है।

(https://apps.mgov.gov.in/descp.do?appid=527&action=0)

राष्ट्रीय मोबाइल गवर्नेंस सेवा पहल

मोबाइल गवर्नेंस (एम. गवर्नेंस) : मोबाइल सेवा देश में मोबाइल गवर्नेंस (एम. गवर्नेंस) को मुख्यधारा शामिल करने के उद्देश्य से भारत सरकार की एक अभिनव पहल है। इसका उद्देश्य वायरलेस और नई मीडिया प्रौद्योगिकी प्लेटफ़ॉर्मों व मोबाइल उपकरणों के माध्यम से सभी नागरिकों और व्यवसायों के लिए सार्वजनिक सूचना और सेवाओं को उपलब्ध कराने के लिए है। इसका उद्देश्य देश में मोबाइल फ़ोन के उपयोग के माध्यम से विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, देश के सभी नागरिकों के लिए लोक सेवाओं की पहुँच को व्यापक बनाना है। यह सार्वजनिक सेवाएँ प्रदान करने में मोबाइल अनुप्रयोगों की अभिनव क्षमता भी प्रदान करता है। इसकी समग्र रणनीति भारत को मोबाइल शासन की क्षमता का दोहन समावेशी विकास के लिए करने में एक विश्व नेता बनाने की है। यह पहल इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा तैयार की गई है। प्रगत संगणन विकास केंद्र (सी–डैक), एक इलेक्ट्रॉनिक्स विभाग और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग संगठन, इस परियोजना के लिए तकनीकी कार्यान्वयन एजेंसी है।

मोबाइल सेवा एस.एम.एस., यू.एस.एस.डी., आई.वी.आर.एस., सी.बी.एस., एल.बी.एस. और मोबाइल अनुप्रयोगों द्वारा देश के नागरिकों और व्यवसायों के लिए सार्वजनिक सेवाओं के वितरण के लिए सरकारी विभागों और एजेंसियों को एक एकीकृत मंच प्रदान करता है। इस योजना के अंतर्गत विस्तृत मोबाइल एप्प की शृंखला एप्प स्टोर में उपलब्ध है। इसमें अनेक एप्प हिंदी के माध्यम से तैयार किए गए हैं, जो आम जनता के प्रयोग के लिए अत्यंत उपयोगी है।

(https://apps.mgov.gov.in/index.jsp)

महाराष्ट्र
vpnagarkar@gmail.com

17

हिंदी फ़िल्मों के संवादों में विश्व हिंदी

– श्री सुरेश कुमार श्रीचंदानी

किसी भी उत्तम फ़िल्म में उत्तम गुणवत्ता वाली कहानी, अभिनय, गीत, नृत्य और उच्चस्तरीय श्रव्य और दृश्य माध्यमों के उपयोग आदि के साथ–साथ कथोपकथन, अर्थात् संवादों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। कई संवाद ही कई फ़िल्मों की जान बन जाते हैं। संवाद अदायगी भी लोकप्रिय हो जाती है। संवादों से कई उद्देश्य पूरे होते हैं। तत्त्वज्ञान अर्जित करने की जिज्ञासा रखने वाले जिज्ञासु दर्शकों की जिज्ञासा कई मार्मिक संवादों से शांत होती है। भारतीय हिंदी फ़िल्मों के कई संवाद कालजयी हैं। कई फ़िल्मों के कई संवाद इतने लोकप्रिय हैं कि सामान्य से सामान्य लोग भी उसे अपने दैनिक जीवन में संक्षिप्त प्रयुक्ति (brief language usage) के रूप में काम में लेते हैं। फ़िल्म की स्वीकार्यता बढ़ाने के लिए अन्य कई कदम उठाने के साथ ही उसे सार्वभौमिक बनाने की दिशा में निर्माता तथा निर्देशक को अग्रसर होना पड़ता है। संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश की विकास–यात्रा में आगे निकल आई हिंदी भाषा की मौजूदा समृद्धि तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी और संकर शब्दों के विशाल भंडार से हुई है। विदेशी भाषाओं के शब्दों और संकर शब्दों के कारण हिंदी का विश्व के कोने–कोने में अपने पाँव पसारना आसान हुआ है। अब उन शब्दों के बिना हिंदी के वैश्विक स्वरूप की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। बॉलीवुड की हिंदी फ़िल्मों की भाषा में शुद्ध हिंदी, हिन्दुस्तानी, हिंग्लिश और वैश्विक हिंदी के दर्शन होते हैं। फ़िल्मों के संवादों में भी यही स्थिति दिखलाई देना स्वाभाविक है। यद्यपि कुछ संवाद पूरे के पूरे अंग्रेज़ी भाषा में भी हैं। हिंदी फ़िल्मों के संवादों में पुर्तगाली, यूनानी, फ्रेंच, डच और अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग बहुतायत रूप में हुआ है। कहीं–कहीं इटालियन, स्पेनिश, पश्तो, रूसी, चीनी और जापानी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। इन भाषाओं के कई शब्द इतने लोकप्रिय हैं कि उन्हें जाने–अनजाने हिंदी के शब्द मान लिए जाते हैं। 'भाषा बहता नीर' उक्ति की दृष्टि से हिंदी भाषा के लचीलेपन का गुण भी हिंदी की वैश्विक लोकप्रियता का मूल रहा है।

जन्म : 06.11.1962

शिक्षा :
- ❖ एम.बी.ए.
- ❖ एल.एल.एम.
- ❖ एम.एड.
- ❖ एम.सी.जे.
- ❖ तथा अन्य शिक्षाएँ

व्यवसाय :
हिंदी अनुवादक, सरकारी क्षेत्र की साधारण बीमा कम्पनी दी ओरिएंटल इंश्योरेंस

प्रकाशन :
- ❖ भीतरी व्यक्तित्व के विकास संबंधी अनेक पुस्तकों की रचना में प्रवृत्त
- ❖ 2011 – प्राण संबंधी अभ्यासों पर 'आओ प्राण से न्याय करने के लिए आगे बढ़ें'
- ❖ 2006 – भारत, भारतीयता, भारती नायक

हिंदी फ़िल्मों के संवादों की पड़ताल करने पर ऐसे बहुत से संवाद तेज़ी से इसलिए ध्यान आकर्षित करने में सफल होते हैं कि उनमें वैश्विक हिंदी जैसी विशिष्ट शब्दावली प्रयुक्त की जाती है। 'खून भरी मांग' फ़िल्म में संवाद लेखक, कादर ख़ान का संवाद है कि ''ह्विस्की में सोडा या पानी मिलाने से उसका स्वाद खराब हो जाता है, ह्विस्की में ह्विस्की मिला के पीना चाहिए।'' इस संवाद में प्रयुक्त सोडा शब्द इटालियन भाषा का है। 'फ़िल्म दिल वाले दुल्हनिया ले जाएँगे' में नायक शाहरुख खान कहता है 'सेनोरिटा, बड़े–बड़े शहरों में छोटी–छोटी बातें होती रहती हैं''। 'सेनोरिटा' शब्द स्पेनिश भाषा का है, जिसका अर्थ है मिस। फ़िल्म 'सन ऑफ़ सरदार' का संवाद है – ''सरदार और पठान की जोड़ी बाकी सब लिल लिल गोड़ी''। इस संवाद में आया 'पठान' शब्द अफ़गानिस्तान की पश्तो भाषा का है। 'मुझसे फ्रेंडशिप करोगे' फ़िल्म में संवाद है '' 'वोदका' समाज का दुश्मन है, आओ इसे मिलकर खत्म करें।'' यहाँ आया 'वोदका' शब्द

रूसी भाषा का है। 'वेलकम' फ़िल्म का संवाद है ''अगर ये आँसू न रुके, तो इस शहर में सुनामी आ जाएगा।'' यह 'सुनामी' शब्द जापानी भाषा का है। फ़िल्म 'हिम्मतवाला' का संवाद है 'दुनिया वालो मुझे ना दिखाओ आईना, नहीं तो मैं बोलूँगा 'मेड इन चाइना' '' चाइना शब्द चीनी भाषा के चीन का अंग्रेज़ी रूपांतरण है। 'आतिश' फ़िल्म में कादर ख़ान लिखित संवाद है। ज़िन्दगी में तूफ़ान आए, क़यामत आए, मगर कभी दोस्ती में दरार न आने पाए। ''इस संवाद का 'तूफ़ान' शब्द चीनी भाषा का और 'दोस्ती' शब्द फ़्रासीसी भाषा का है। 'कॉंटे' फ़िल्म के नायक संजय दत्त कहते हैं, ''अगर तेरे सर पर बम लगा दूँ, तो पहले कौन फटेगा तू या तेरा सर।'' इस संवाद में 'बम' शब्द डच भाषा से है। 'फूक्रे' फ़िल्म का संवाद है 'भोली पंजाबिन चिड़िया नहीं, चील है, कोफ़ीन में आखरी कील है।'' इसमें प्रयुक्त 'चिड़िया' शब्द भी डच भाषा का है। 'रासकल्स' फ़िल्म से संवाद है 'खामोश क्यों है ज़मीन आसमान, क्या 'कर्फ़्यू' लग गया है मेरी जान'। इस संवाद का कर्फ़्यू शब्द फ्रेंच भाषा का है। 'हम' फ़िल्म का संवाद है, ''मुहब्बत को समझना है प्यारे तो खुद मुहब्बत कर, किनारे से कभी अंदाज़े–ए–तूफ़ान नहीं होता।'' इसमें 'तूफ़ान' शब्द चीनी भाषा का है। 'चार दिन की चाँदनी' फ़िल्म का संवाद है कि 'ये लड़की नहीं है, बारह बोर का कारतूस है, जिसने मुझे डिशुम कर दिया है।'' इस संवाद का 'कारतूस' शब्द फ्रेंच भाषा से आया है। 'डॉन' फ़िल्म में अभिनेता इफ़्तेखार कहते हैं कि 'पुलिस ने तुम्हें चारों तरफ़ से घेर लिया है, अपने आप को कानून के हवाले कर दो।'' इस संवाद में प्रयुक्त शब्द 'पुलिस' फ्रेंच भाषा से और 'कानून' शब्द यूनानी भाषा के मूल का है। 'अमर अकबर एंथोनी' फ़िल्म का संवाद है, ''आदमी लाइफ़ में दो हीच टाइम भागता है। ओलिम्पिक का रेस हो या पुलिस का केस हो – तुम काहे को भागता है।'' इस संवाद में प्रयुक्त शब्द 'ओलिम्पिक' यूनानी भाषा से है। फ़िल्म 'मुक़द्दर का सिकंदर' में संवाद है कि ''और वैसे ही मैं इसको यहाँ नहीं मारूँगा वरना लोग कहेंगे सिकंदर ने उसे अपने इलाक़े में मारा''। यहाँ प्रयुक्त 'सिकंदर' शब्द यूनानी भाषा का है। 'अग्निपथ' फ़िल्म में सुपरस्टार अमिताभ बच्चन कहते हैं कि ये टेलीफ़ोन भी अजीब चीज़ है, आदमी सोचता कुछ है, बोलता कुछ है और करता कुछ है। इस संवाद में 'टेलीफ़ोन' शब्द भी यूनानी भाषा से है।

'ए.बी.सी.डी.' फ़िल्म का संवाद है, ''अए, बिस्कुट और एक बार चपरी बोला ना, चाय में डुबो दूँगी, इधर हीच ढीला होके टपक जाएगा''। यहाँ 'बिस्कुट' शब्द पुर्तगाली भाषा से है। 'संजू' फ़िल्म का संवाद है, ''असली है असली, पच्चास तोला, पच्चास तोला। कितना पच्चास तोला।'' इस संवाद में 'तोला' शब्द पुर्तगाली भाषा से है। 'हँप्टी शर्मा की दुल्हनिया' फ़िल्म में संवाद है कि 'तू बोतल सूँघता रह जाएगा और मेरी खत्म भी हो जाएगी।'' यहाँ प्रयुक्त शब्द 'बोतल' पुर्तगाली का है। 'कमांडो' फ़िल्म में यह संवाद प्रयुक्त हुआ है कि ''लोगों के तो कपड़े इस्त्री किए होते हैं, तुम्हारा तो चेहरा ही इस्त्री किया हुआ है।'' यह 'इस्त्री' शब्द पुर्तगाली है। फ़िल्म 'नमक हलाल' में बोला गया संवाद है कि ''कमरे तक छोड़ने वाले कभी–कभी कमरे के अंदर आ जाते हैं।'' इस संवाद का 'कमरे' शब्द पुर्तगाली है। 'गब्बर इज़ बैक' फ़िल्म का संवाद है, ''सीधी तरह से पैसा दे वरना चाबी वाला ताला नहीं, सील वाला ताला लगाऊँगा।'' इसमें 'चाबी' शब्द पुर्तगाली है। 'अग्निपथ' फ़िल्म से लोकप्रिय हुआ संवाद है, ''पगार बढ़ाओ, पंद्रह सौ रुपये में घर नहीं चलता, ईमान क्या चलेगा।'' यहाँ प्रयुक्त 'पगार' शब्द पुर्तगाली है। 'चुपके–चुपके' फ़िल्म का संवाद है कि ''जिस तरह गोभी का फूल फूल होकर भी फूल नहीं होता, उसी तरह गेंदे का फूल भी फूल नहीं होता।'' इसमें 'गोभी' शब्द भी पुर्तगाली है।

हिंदी फ़िल्मों में ऐसे संवाद भी प्रयुक्त हुए हैं जो पूरे अंग्रेज़ी में हैं जैसे कि 'मेजर साहब' फ़िल्म का संवाद ''डोंट, मेस विथ दी आर्मी'', 'सलाम नमस्ते' फ़िल्म का संवाद है ''इफ़ वाइफ़ इस वर्किंग, देन हज़बैंड इज़ जर्किंग।'' 'आल दी बेस्ट' फ़िल्म का संवाद है ''मसकुलर, पोपुलर, स्पेक्टेकुलर एंड बेचलर।'' अंग्रेज़ी के पूरे संवाद और हिंग्लिश का प्रयोग वैश्वीकरण और खुली अर्थ–व्यवस्था के दौर में बढ़ता जा रहा है, जिससे यह संदेश साफ़ तौर पर मिलता है कि जिस प्रकार अंग्रेज़ी रोज़गार की भाषा होने के कारण कई क्षेत्रों में तेज़ी से आगे बढ़ जाती है, वैसे ही हिंदी को विश्व में हर तरफ़ आगे बढ़ते रहने के लिए रोज़गार की भाषा बनाना होगा।

अजमेर, भारत
sureshkumar.1598@rediffmail.com

हिंदी : विविध आयाम

18. उपनिवेशों में हिंदी - श्री भवानीदयाल संन्यासी

19. भूमण्डलीकरण और हिंदी भाषा - डॉ. पद्माकर पाण्डुरंग घोरपड़े

20. असम में हिंदी - श्रीमती अनुजा बेगम

21. हिंदी भवन भोपाल में हिंदी - श्री गोवर्धन यादव

22. भाषा की इच्छा मृत्यु - डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री

18

उपनिवेशों में हिंदी

– श्री भवानीदयाल संन्यासी

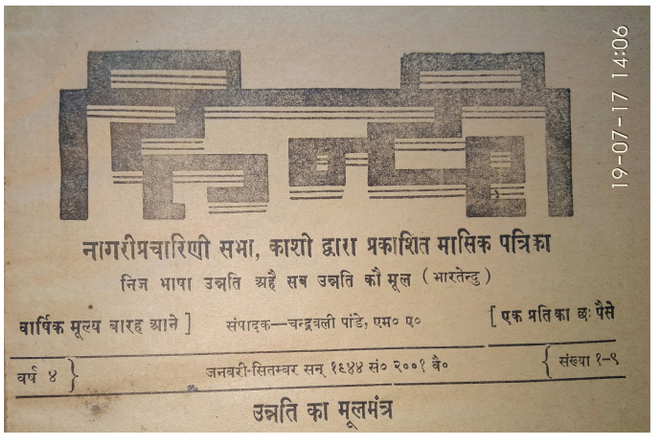

प्रस्तुत आलेख द्वारा उन प्रवासी भारतीयों की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ, जो एक अच्छी संख्या में भ. ारत से बिछुड़कर समुद्र पार उपनिवेशों और विदेशों में जा बसे हैं और जो आपकी सहानुभूति और सहायता के सर्वथा सुपात्र हैं। आपके वे पच्चीस–तीस लाख प्रवासी भाई अपने ढंग से नवीन बृहत्तर भारत बनाने में व्यस्त हैं। बृहत्तर भारत को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं – प्राचीन और अर्वाचीन। प्राचीन बृहत्तर भारत का निर्माण हुआ था – देश के धुरन्धर धर्माचार्यों, दिव्यद्रष्टा दार्शनिकों, विज्ञविधान–वेत्ताओं, रणधीर राजनीतिज्ञों, सक्षम शिल्पियों और वाणिज्य कुशल व्यवसायियों द्वारा और उसके अन्तर्गत मैक्सिको, मिस्र, अबिसिनिया, कौंच, शंख, कुश, सिंहल, श्याम, सुमात्रा, जावा, बाली, ब्रह्मा बोर्नियो, मलय, कम्बोज (कम्बोडिया), लम्बक और लंकाप्रभृति प्रदेशों की परिगणना होती थी। आज भी उन देशों और द्वीपों में पुरातन काल के ऐसे प्रासादों के भग्नावशेष विद्यमान हैं, जो आर्य संस्कृति और शिल्पकारी की साक्षी दे रहे हैं।

पर वर्तमान बृहत्तर भारत का निर्माण भिन्न प्रकार से हुआ है। इसके सिरजनहार हैं – आपके देश के साधारण श्रमजीवी, कंगाल किसान और वित्त–विहीन व्यवसायी। सन् 1833 में इंगलैंड में दासत्व–प्रथा का अंत हो गया, किन्तु गीता की वाणी वृथा कैसे जाती! अतएव अगले ही साल सन् 1834 में भारत की कोख से उसका पुनर्जन्म हुआ – शर्तबन्दी मज़दूरी के रूप में। विधि की कैसी विडम्बना है! असभ्य हब्शी तो दासता के बन्धन से मुक्त हुए, किन्तु भारत की सभ्य सन्तान, राम और कृष्ण के वंशज, अकबर और शेरशाह की औलाद पराधीनता रूपी पाप का फल भोगने के लिए उनकी जगह गुलाम के रूप में विदेशों के बाज़ार में बेचे गये। परतन्त्रता का ऐसा कटु फल कदाचित् ही किसी अन्य राष्ट्र को चखना पड़ा हो। सभी मुख्य–मुख्य नगरों में ईस्ट इंडिया कम्पनी की ओर से गुलाम भर्ती करने के अड्डे बने, भोले–भाले भाइयों और बहनों को फँसाने के लिए अगरकाटी नियुक्त किये गये और कलकत्ते से इन अभागे नर नारियों को पशुवत लादकर जहाज़ पर जहाज़ खुलने लगे। गुलामी के इस व्यापार से संसार का बड़ा अपमान और उपहास हुआ।

लगभग नब्बे वर्षों तक भारत में गुलामी का व्यवसाय चलता रहा और इस बीच में मॉरीशस में ढाई लाख, डमरारा, ट्रिनीडाड और नेटाल में डेढ़ लाख, फ़िजी में एक लाख, सूरीनाम में चालीस हज़ार, जमैका में बीस हज़ार तथा ग्रनेडे में पाँच हज़ार भारतीय अर्द्ध गुलामी का पट्टा लिखाकर पहुँच गए। इस गुलामी का नाम प्रवासी भाइयों की बोली में 'गिरमिट' है और गुलामों का 'गिरमिटिया'। इन गिरमिटिया भारतीयों की धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक अधोगति की कथा इतनी करुणाजनक, मर्मस्पर्शी और विस्तृत है कि यदि पृथ्वी को पत्र और समुद्र को स्याही बनाकर लिखने बैठें, तो भी पार पाना कठिन है। उनकी स्थिति का यथावत वर्णन करने के लिए वाल्मीकि जैसे महान काव्यकारों की आवश्यकता है, मैं तो केवल उनकी भाषा संबंधी समस्या की थोड़ी चर्चा करके ही संतोष करूँगा।

गिरमिट की गाँठ में बंधे थे केवल हिंदी भाषी और मद्रासी। इनके पीछे–पीछे विशेषतः गुजराती और साधारणतः अन्य कुछ प्रांतवासी स्वतंत्र रूप से व्यवसाय करने के विचार से वहाँ जा पहुँचे। इस प्रकार हिंदुस्तान के भिन्न–भिन्न प्रांतों के मनुष्यों का वहाँ जमावड़ा हो गया। उनमें कोई हिंदी बोलता था, तो कोई

गुजराती, किसी की बोली तमिल थी, तो किसी की तेलुगु, कुछ मलयालम थे, तो कुछ कन्नड़ी। एक दूसरे की बोली नहीं समझ पाते थे, इससे बड़ा कष्ट होने लगा और उनके सामने विचार–विनिमय का विकट प्रश्न उपस्थित हुआ। कब तक पड़ोसी के सामने मौन व्रत धारण किए रहते, कहाँ तक संकेत से काम चलाते। उन्होंने बड़ी सुगमता से इस प्रश्न को हल कर लिया। उनका यही निर्णय हुआ कि मातृभाषा के होते हुए भी पारस्परिक व्यवहार के लिए भारतीयों को एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है, जिसे सभी प्रांत के लोग सहज ही बोल और समझ सकें और वह भाषा होनी चाहिए भारत के भाल की बिंदी हिंदी। न कहीं सभा–सम्मेलन का आयोजन हुआ, न किसी ने हिंदी की उपयोगिता पर वक्तृताएँ दीं और न तो इस विषय पर सार्वजनिक चर्चा ही हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक भारतीय ने इस तथ्य को स्वीकार कर लिया और इसे कार्यान्वित करने में अपना कल्याण समझा। वास्तव में हिंदी अपनी माधुरी और सरलता के प्रताप से प्रवासी भारतीयों की राष्ट्रभाषा बन गई। नेटाल में तो मद्रासियों की संख्या अधिक है और हिंदी भाषियों की उनसे बहुत कम; पर वहाँ भी प्रत्येक मद्रासी को हिंदी सीखना अनिवार्य हो गया। कोई तो अच्छी हिंदी बोल लेते हैं और कोई टूटी–फूटी बोली से काम चलाते हैं, पर बोलते हैं सभी हिंदी। यह ध्यान रखना चाहिए कि जिन–जिन उपनिवेशों में हमारे देशवासी गिरमिट लिखाकर गये, वे एक–दूसरे से हज़ारों कोस दूर हैं, कोई प्रशान्त महासागर के तट पर है, तो कोई हिन्द महासागर के किनारे; कोई अमेरिका के निकट है, तो कोई अफ़्रीका के निकट है, तो कोई अफ़्रीका के दक्षिणीय भाग में, किंतु सर्वत्र ही प्रवासी भारतीयों ने हिंदी को पारस्परिक व्यवहार के लिए अपनाया।

पौराणिक कथा के अनुसार समुद्र–मंथन से जहाँ विष निकला था, वहाँ अमृत भी निकल आया। उसी प्रकार गिरमिट की गुलामी से जहाँ हमारी गहरी गिरावट हुई, वहाँ उससे अनेक उलझनें भी सुलझ गईं। जिस प्रकार अपढ़–कुपढ़ प्रवासी भाइयों ने जात–पांत का प्रपंच हटाया, छुआ–छूत का भूत भगाया, बाल–विवाह का कलंक मिटाया, देवियों को परदे से स्वतन्त्र बनाया और हिंदू, मुसलमान, ईसाई, पारसी सभी को रंग चढ़ाया, उसी प्रकार उन्होंने राष्ट्रभाषा का प्रश्न भी हल कर लिया। यह उस समय की बात है जब कि भारत में राष्ट्रभाषा की चर्चा भी नहीं चली थी; न तो ऋषि दयानन्द ने आर्यभाषा की आवाज़ उठाई थी और न महात्मा गांधी ने राष्ट्रभाषा की पुकार मचाई थी।

पर खेद की बात है कि बृहत्तर भारत में यह स्थिति स्थायी नहीं हो सकी। अगली पीढ़ी के प्रवासियों की मनोवृत्ति बदलने लगी। उनमें से जिनको पादरियों की पाठशालाओं में पढ़ने का अवसर मिला; उन्होंने अंग्रेज़ी को अपनाना आरम्भ किया। आपस में अंग्रेज़ी आलाप करना अहोभाग्य समझा जाने लगा और हिंदी में वार्तालाप करना अशिक्षित होने का लक्षण। फिर भी स्त्रियों और अपढ़ भाइयों से व्यवहार करने के लिए उनको भी झख मारकर हिंदी सीखनी ही पड़ती थी। पर दूसरी पीढ़ी में जो कोर–कसर रह गई थी वह तीसरी और अब चौथी पीढ़ी में बिल्कुल पूरी हो गई। अंग्रेज़ी बोलनेवालों की संख्या जितनी बढ़ती गई, हिंदी की आवश्यकता उतनी ही घटती गई। अब तो यहाँ तक नौबत पहुँच गई है कि भाई–बहन में, पति–पत्नी में और पिता–पुत्र में भी अंग्रेज़ी छँटने लगी है। यह मानसिक–दासता का दारुण दृश्य है, किंतु हम इसके लिए प्रवासियों पर कहाँ तक दोषारोपण कर सकते हैं, जब कि स्वयं भारत दास्य मनोवृत्ति से मुक्त नहीं हो पाया है। यहाँ के बड़े–बड़े विद्वान अंग्रेज़ी में बोलते हैं, लोकप्रिय लेखक अंग्रेज़ी में मिलते हैं, अच्छे से अच्छे अखबार अंग्रेज़ी में निकलते हैं और उच्च शिक्षा का माध्यम भी अंग्रेज़ी है। क्या दुनिया में दासता का ऐसा दृष्टान्त और कहीं मिल सकता है!

दक्षिण अफ़्रीका के मुट्ठी भर बोअरों ने अपनी भाषा की रक्षा और उन्नति के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया है। अनेक प्रयत्न करने पर भी वे अंग्रेज़ी के मोहजाल में नहीं फँसे। उन्होंने वहाँ एक नवीन राष्ट्र–निर्माण का अनुष्ठान आरम्भ किया है, उसका नाम रखा है – 'अफ़्रिकान'। वे भली–भाँति जानते हैं कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का निर्माण कहाँ! अतएव डच भाषा में कुछ फेर बदल कर उन्होंने इस नवीन राष्ट्र के लिए एक नवीन भाषा की सृष्टि की है, जो 'अफ़्रिकान' के नाम से प्रसिद्ध है। दक्षिण अफ़्रीका में प्रत्येक सरकारी सेवक के लिए चाहे वह अंग्रेज़ी हो अथवा और कोई अफ़्रिकान भाषा जानना अनिवार्य है। वहाँ की यूनियन पार्लियामेंट में सभी राष्ट्रवादी सदस्य अफ़्रिकान में भाषण करते हैं। इस भाषा को जाने बिना पार्लियामेंट की कार्यवाही समझना कठिन है। वे तो यहाँ तक अंग्रेज़ी को उपदेश देते हैं कि यदि अंग्रेज़ अफ़्रीका में आबाद रहना चाहते हैं, तो उन्हें इंगलैंड और इंग्लिश की मोहमाया छोड़ देनी चाहिए – उनसे नेह नाता तोड़ लेना चाहिए और अब 'अफ़्रिकान' कहलाना चाहिए

तथा अफ्रिकान भाषा को अपनाना चाहिए। मातृभाषा पर उनका कितना अटल अनुराग है, इसका एक उदाहरण दिए बिना मैं नहीं रह सकता। 19वीं सदी के अन्तिम वर्ष में बोअर–अंग्रेज़ युद्ध के समय कुछ बोअर बन्दी बनकर हिंदुस्तान में आये थे।

एक बन्दी बोअर ने अपनी माता को एक पत्र लिखा और यहाँ के बन्दीघर के विधान के अनुसार उसे अंग्रेज़ी में पत्र लिखना पड़ा। बोअर माता ने अपने पुत्र को जो उत्तर दिया था वह प्रत्येक भारतीय के लिए मनन और हृदयंगम करने योग्य है। वह यह है –''पुत्र! तुम्हारा पत्र पाकर जहाँ हर्ष हुआ, वहाँ विषाद भी। हर्ष तो इसलिए कि तुम अच्छे हो और विषाद का कारण यह है कि आज तुम अपनी मातृभाषा को भूल गये, तो कल अपनी माता को भी भूले बिना नहीं रहोगे। छिः छिः तुमने क्या किया! पत्रांकन के प्रलोभन में पड़कर माता की कोख लजाई। मातृभूमि की मर्यादा मिट्टी में मिलाई और बोअर वंश की बदनामी कराई।"

इन बोअरों के आत्म–सम्मान और स्वदेशाभिमान का मुझ पर प्रचुर प्रभाव पड़ा। इनसे ही मुझे उपनिवेशों में हिंदी प्रचार करने की प्रेरणा मिली और मैं अपनी भाषा की थोड़ी–बहुत सेवा कर सका। एक बार तो मैंने यहाँ तक संकल्प कर लिया था कि स्वदेश में सबसे हिंदी में संलाप करूँगा, सभाओं में हिंदी में संभाषण करूँगा; प्रवासियों की परिस्थिति पर हिंदी में पुस्तकें रचूँगा और अखबारों के लिए हिंदी में लेख लिखूँगा। इस संकल्प को मैंने 12 वर्षों तक निभाया भी, पर भारत की सामयिक स्थिति ने मुझे अंग्रेज़ी का आश्रय लेने के लिए बाध्य कर दिया। मैंने देखा कि मेरी नीति और प्रवृत्ति से प्रवासी बन्धुओं के हित की हानि हो रही है; मेरी पुकार एक संकुचित सीमा की दीवार से टकराकर रह जाती है, मेरा आन्दोलन देशव्यापी नहीं होने पाता और इसलिए मुझे विवश होकर अंग्रेज़ी की शरण लेनी पड़ी।

मैंने प्रवासी भाइयों में हिंदी प्रचार का आन्दोलन आरंभ किया था। ट्रांसवाल और नेटाल प्रदेश के प्रायः सभी छोटे बड़े नगरों और गाँवों में हिंदी प्रचारिणी सभाओं और हिंदी पाठशालाओं की स्थापना की थी। दक्षिण अफ्रीका हिंदी साहित्य सम्मेलन का सूत्रपात किया था, जिसके दो वार्षिकाधिवेशन बड़े समारोह से संपन्न हुए थे। जनता में जीवन ज्योति जगाने के लिए ''हिंदी'' नामक साप्ताहिक अखबार भी निकाला और बहुत बड़ी आर्थिक हानि उठाते हुए भी उसे अनेक वर्षों तक चलाया। हिंदी में छोटी बड़ी कई पुस्तकें भी लिखीं, जो भारत में प्रकाशित होकर उपनिवेशों में प्रचारित हुईं। इसके बाद दुर्भाग्यवश मैं राजनीति के दलदल में जा फँसा, गंगा को छोड़कर गड़ही में जा गिरा। यद्यपि हिंदी मेरी आँखों से कभी ओझल नहीं हुई, तथापि चाहिए उतना समय फिर मैं नहीं दे सका। मेरा सारा समय नेटाल इंडियन क्राँग्रेस की सेवा में बीतने लगा, मेरी सारी शक्ति राजनीतिक खटपट में खर्च होने लगी।

फिर भी मैंने जो हिंदी प्रचार का आंदोलन उठाया था, वह दक्षिण अफ्रीका की सीमा लाँघकर अन्य उपनिवेशों में भी पहुँच गया। पोर्ट लुईस से 'मॉरीशस इंडियन टाइम्स' हिंदी और अंग्रेज़ी में साप्ताहिक रूप से निकला। उसमें मेरी 'हिंदी' के प्रायः सभी लेख उद्धृत होते। कुछ काल प्रवासियों में प्रकाश फैलाकर वह अन्तर्हित हो गया। जब 'आर्य पत्रिका' और 'आर्यवीर' हिंदी के अखाड़े में उतरे तब 'सनातन धर्मांक' भी खम टोककर उनसे भिड़ पड़ा, किन्तु यह द्वंद्व युद्ध टिकाऊ नहीं हो सका। 'सनातन धर्मांक' तो सुरधाम गया; 'आर्य पत्रिका' को आर्यत्व से अरुचि हो गई, अतएव उसने जनता को जगाने के लिए 'जागृति' का जामा पहन लिया। 'आर्यवीर' किसी प्रकार अभी तक आत्म–रक्षा कर रहा है। यहाँ की सभी आर्य–शिक्षण संस्थाओं में हिंदी पढ़ाई जाती है। वहाँ अनेक लेखक और कवि हैं, उनके कुछ ग्रंथ छपे भी हैं। मोंताई लोंग की हिंदी प्रचारिणी सभा विशेष रूप से हिंदी का प्रचार कर रही है और हर्ष की बात है कि मॉरीशस में हिंदी साहित्य सम्मेलन भी स्थापित हो गया है, जिसकी ओर से 'हिंदी परिचय परीक्षा' की भी व्यवस्था हुई है।

फ़िजी में पहले पहल 'इंडियन सेटलर्स' नामक पत्र निकला था; उसका हिंदी अंक लिथो में छपता, पर वह जीवित नहीं रह सका, बाल्यकाल में ही काल का कलेवा बन गया। उसके बाद अनेक अखबार रंगमंच पर आये और अपना–अपना अभिनय दिखाकर लोप हो गये। 'स्कूल जर्नल' और 'भारतपुत्र' हिंदी में विद्यार्थियों को बोध देकर चल बसे। 'वैदिक संदेश' धर्म की धवल ध्वजा फहराकर 'वृद्धि' बुद्धि विवेक बढ़ाकर और 'राजदूत' राजभक्ति का रहस्य बताकर प्रवासियों से विदा हो गये। केवल 'फ़िजी समाचार' ही दीर्घजीवी हो सका। वह अनेक वर्षों से फ़िजी प्रवासी भाइयों की सेवा में सन्नद्ध है और साप्ताहिक रूप से नियम पूर्वक निकल रहा है। कुछ दिनों से 'शान्ति दूत' भी हिंदी की सेवा कर रहा है और कदाचित किसानों का भी कोई अखबार निकला है, जिसकी चर्चा सुनी है, पर दर्शन से अभी तक वंचित हूँ। फ़िजी के

लटोका स्थान में आर्य समाज का एक गुरुकुल है और सुवा आदि प्रमुख नगरों में आर्य पाठशालाएँ भी; उनके उद्योग से वहाँ हिंदी का अच्छा प्रचार हुआ और हो रहा है। अब तो सरकारी स्कूलों में भी हिंदी पढ़ना अनिवार्य हो गया है।

नेटाल में महात्मा गांधी के 'इंडियन ओपिनियन' में कुछ काल हिंदी को आश्रय मिला था, पर पीछे से ग्राहकों की कमी कहकर उसे निकाल दिया गया। 'धर्मवीर' नामक साप्ताहिक चार साल चलकर बंद हो गया था। उसने हिंदी प्रचार में यथेष्ट योग दिया था। 'इंडियन ओपिनियन' के हिंदी विभाग और धर्मवीर के संपादन का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। इसके बाद मैंने अपनी साप्ताहिक 'हिंदी' निकाली। कई वर्षों तक उसका संचालन और संपादन किया। उसका दक्षिण अफ़्रीका के अतिरिक्त अन्य सभी उपनिवेशों और भारत में भी पर्याप्त प्रचार था, किंतु वह प्रवासी भारतीय के दुख दावानल से दग्ध हो गई। अब नेटाल से एक छोटी–सी मासिक पत्रिका हिंदी में निकलती है, जिसका नाम 'राइसिंग सन' है, किंतु यह ऐसी रद्दी और भद्दी पत्रिका है कि सार्वजनिक जीवन में इसका कोई स्थान ही नहीं है। कई सभाएँ हिंदी प्रचार का अच्छा काम कर रही हैं। सन् 1928 में जब भारतीय शिक्षा कमीशन नेटाल में बैठा था तब मैंने यह प्रबल प्रयत्न किया था कि सरकारी पाठशालाओं में हिंदी जारी हो जाए। इसमें सफलता की सर्वथा संभावना थी, किंतु वहाँ के तत्कालीन राजदूत माननीय श्रीनिवास शास्त्री बाधक बन गये और उनके विकट विरोध से मेरा सारा परिश्रम निष्फल गया। शास्त्री जी को यही धुन सवार थी कि प्रवासी भारतीयों को पश्चिमीय रहन–सहन आचार–विचार और व्यवहार तथा अंग्रेज़ी भाषा का अनुगामी बनाना चाहिए, पर यह सोचना भूल गये कि पश्चिमी संस्कृति और शिक्षा के अन्ध–सुगन्ध शुन्य; शरीर रहेगा आत्मा विहीन। भाषा बिना राष्ट्र कहाँ? नीर बिना नदी कैसी; मूल बिना शाखा कहाँ? यदि मेरी योजना कार्यान्वित हो जाती, तो नेटाल में हिंदी की जड़ जम जाती। चंदे पर चलने वाली संस्थाओं का भविष्य संदिग्ध ही रहता है। मैं अपनी असफलता पर हृदय मसोस कर रह गया। अब तो हिंदी प्रेमियों के उत्साह और उद्योग से जो कुछ काम हो रहा है, उसी पर सन्तोष करना पड़ता है।

मॉरीशस, फ़िजी और नेटाल से डमरेरा, ट्रिनीडाड, सूरीनाम और जमैका की अवस्था नितांत भिन्न है। सूरीनाम में हिंदी का थोड़ा बहुत व्यवहार होता भी है, किंतु ट्रिनीडाड, जमैका और डमरेरा के शिक्षित भारतीयों ने हिंदी को उसी प्रकार त्याग दिया है, जिस प्रकार चीनियों ने चोटी को। डमरेरा से ''इंडियन ओपिनियन'' और ट्रिनीडाड से ''ईस्ट इंडिया पेट्रियट'' आदि अखबार अंग्रेज़ी में ही निकलते हैं; पाठशालाओं में केवल अंग्रेज़ी की शिक्षा मिलती है। सभा समितियों की कार्यवाहियाँ अंग्रेज़ी में होती हैं और यहाँ तक कि घर में परिवार से भी अंग्रेज़ी में बातचीत चलती है। हिंदी वहाँ के अपढ़–कुपढ़ों के व्यवहार में आती है, किंतु शिक्षितों का उससे कोई संबंध नहीं रहा। वहाँ के शिक्षित भाई अपने चमड़े का रंग नहीं बदल सके; अन्यथा वे 'इंडियन' कहलाना भी पसंद नहीं करते। 'इंडियन' होते हुए भी, उनमें भारतीयता का कोई चिह्न दृष्टिगोचर नहीं होता। इसमें अपराध हमारा ही है; भारत ने उनको भुला दिया था, उन्होंने भारत को भुला दिया। अब भी अधिक देर नहीं है। यदि वहाँ हिंदी प्रचार की समुचित व्यवस्था की जाए, तो उनकी अवस्था सुधर सकती है। यदि हमारी उपेक्षा–वृत्ति बनी रही, तो वे भारतीयता से सदा के लिए अलग हो जाएँगे!

मैंने आपके समक्ष अब तक केवल उन्हीं उपनिवेशों की चर्चा की है, जहाँ हमारे देशवासी पाँच साल का पट्टा लिखाकर कुली–कवाड़ी के रूप में गये थे। इनमें हिंदी–भाषी और मद्रासी भाइयों के सिवा भारत के अन्य प्रांतवासियों की संख्या नगण्य ही है। इसके अतिरिक्त और भी अनेक ऐसे उपनिवेश हैं, जहाँ लाखों भारतीय स्वतंत्र रूप से जा बसे हैं और अपनी व्यवसाय बुद्धि एवं क्रियाशीलता से अत्यंत समृद्धिशाली बन गये हैं''। बृहत्तर भारत के उन सपूतों ने अपने व्यवहार से मातृभूमि का बड़ा उपकार किया है। केनिया, युगांडा, ज़ंज़िबार, टंगेनिक्या, मोज़म्बिक, रोडेसिया, ट्रांसवाल, केप, रियूनियन, मेडागास्कर आदि ऐसे उपनिवेश हैं, जहाँ प्रवासी भारतीयों का स्थायी बसेरा और अनेक प्रकार के कारोबार हैं। इनमें अधिकांश गुजराती हैं और शेष हैं पंजाबी और सिंधी। इनकी ओर से गुजराती और अंग्रेज़ी में अनेक अखबार निकलते हैं, जिनमें मोम्बासा का ''केनियाडेली मेल'', ज़ंज़िबार के ''ज़ंज़िबारवाइस'' और ''समाचार'', दारस्सलाम के ''टेगेनिक्या ओपिनियन'', ''टेगेनिक्या हेरल्ड'' और ''अफ़्रीका सेंटिनल'', डरबन का ''इंडियन न्यूज़'' तथा फ़ेनिक्स नेटाल का 'इंडियन ओपिनियन' विशेष रूप से विख्यात हैं। जोहान्सबर्ग के गांधी विद्यालय और पाटीदार पाठशाला, सेलिस्बेंरी का हिन्दू स्कूल, लारेन्सीमार्क्विसका वेद मंदिर विद्यालय, दारस्सलाम,

ज़ंज़िबार और नैरोबी की आर्य पाठशालाएँ आदि ऐसी अनेक संस्थाएँ हैं, जिनपर प्रत्येक भारतीय गौरव से मस्तक ऊँचा कर सकता है। इनमें विशेषतः गुजराती में शिक्षा दी जाती है, पर साधारणतः विद्यार्थियों को हिंदी का बोध भी कराया जाता है। आर्य समाज की शिक्षा संस्थाओं में तो आर्य भाषा अनिवार्य ही है, किंतु अन्य पाठशालाएँ भी हिंदी की ओर से उदासीन नहीं है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इन भाइयों का मातृभूमि से ममत्व बना हुआ है। जहाँ हिंदी–भाषियों और मद्रासियों ने स्वदेश से संबंध ही नहीं रखा, उनकी संतानों के लिए हिंदुस्तान आज अपना नहीं है। सहस्त्रों प्रवासियों को अपने बाप–दादे के ज़िले और गाँव तक का पता नहीं हैं और वे अपने पूर्वजों की इस नीति की निंदा और प्रवृत्ति पर पश्चाताप कर रहे हैं, वहाँ गुजरातियों ने भारत को पल भर के लिए भी नहीं बिसारा। वे बराबर यहाँ आते–जाते रहे और अपने परिवार एवं पुरजन से प्रीति बढ़ाते रहे। इस पुण्य प्रसंग पर प्रवासियों से मेरी तो यही प्रार्थना है – ''कहीं रहो, भारत के रहना, भूल न जाना अपना देश। कुछ भी करना छोड़ न देना प्रिय मित्रो! निज भाषा, वेष?

और आपसे मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करूँगा कि आपके पच्चीस लाख प्रवासी भाई लावारिस की तरह इधर–उधर पड़े हैं, कोई उनकी खोज खबर लेनेवाला नहीं है। इसलिए वे अपनी भाषा को छोड़ रहे हैं, भारतीयता से नाता तोड़ रहे हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि ये प्रवासी भारतीय विदेशों में भारत के प्रतिनिधि–स्वरूप हैं। उनके आचार–विचार और व्यवहार को देखकर संसार के लोग भारतवर्ष के विषय में अपनी धारणा बनाते हैं – अपनी सम्मति स्थिर करते हैं। आपको ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि आपके प्रवासी भाई इस महान देश के योग्य प्रतिनिधि सिद्ध हों। वे आप पर कलंक नहीं लगावें, आपकी सुकीर्ति बढ़ावें। उनकी सभी व्याधियों का एक ही उपचार है और वह है उनमें हिंदी का प्रचार। इससे उनमें भारत के लिए भक्ति उत्पन्न होगी और आर्य संस्कृति के लिए श्रद्धा। इसी से उनको अपने इतिहास का ज्ञान होगा और पूर्वजों के प्रति सम्मान बढ़ेगा। इससे उनकी भारतीयता बच सकेगी। इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है। आशा है कि आप विदेशों में हिंदी प्रचार के लिए कोई योजना बनावेंगे और उसे कार्यान्वित कर दिखावेंगे।

साभार : नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा
प्रकाशित मासिक पत्रिका 'हिन्दी',
जनवरी–सितम्बर सन् 1944 सं. 2001 वै.

नई भाषा अधिकार में आने से पहले एक पहेली होती है, परन्तु बाद में अपनी हस्तगत एक शक्ति।

– क्लिफ़ोर्ड

संस्कृति उस प्रक्रिया का नाम है, जिसके द्वारा विभिन्न चेतना–केन्द्रों से सम्बन्धित सृजनात्मक जीवन के अर्थपूर्ण क्षण, जो अतीत और वर्तमान में फैले हुए हैं, प्रत्यक्ष एवं आत्मसात किए जाते हैं। संस्कृति उस क्रिया–समूह का नाम है, जिसके द्वारा विभिन्न व्यक्ति मानवजाति के सृजनात्मक जीवन में भाग लेते और उसे समृद्ध करते हैं।

– देवराज

19

भूमण्डलीकरण और हिंदी भाषा

– श्री पद्माकर पाण्डुरंग घोरपड़े

जन्म : 02.07.1977

शिक्षा :

- पी.एच.डी. – कार्यरत सृजनधर्मी रंगनाथ तिवारी
- एम.फ़िल. – कमलेश्वर कृत 'कितने पाकिस्तान': एक अध्ययन
- एम.ए. हिंदी
- बी.एड. – हिंदी इतिहास
- बी.ए. हिंदी

व्यवसाय :

हिंदी विभाग प्रमुख, स्नातकोत्तर हिंदी अध्यापक, जवाहर नवोदय विद्यालय, गुजरात

प्रकाशन :

- कमलेश्वर : व्यक्तित्व एवं कृतित्व (प्रकाशनाधीन)
- मराठवाड़ी संतों की हिंदी वाणी एवं आधुनिक मराठवाड़ी काव्य–परंपरा
- हिंदी का रूप एवं रोज़गार
- भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्य–सिद्धांत
- हिंदी भाषा–विज्ञान
- हिंदी आलोचना
- हिंदी–मराठी अनमोल सुविचार दीप

यह भूमण्डलीकरण का ज़माना है। यह दावा किया जा रहा है कि इस भूमण्डलीकरण के तूफ़ान के बढ़ते कदम राष्ट्रीय सरहद को मिटा देंगे। दुनिया के एकीकृत बाज़ार में परिवर्तन क्षेत्रीय, राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय परंपराओं, रीति–रिवाज़ों और मिथकों का निष्प्राण कर देंगे। ऐसा होने पर फिर किसी क्षेत्र, देश, राज्य का अपना कोई अलग–थलग पहचान–चिह्न नहीं रहेगा। उस क्षेत्र–विशेष या राष्ट्र का साहित्य, विधाएँ और शैलियाँ गंभीर रूप से प्रभावित होंगी।

दुनिया के पहले साम्राज्य – चीन, रोम, ईरान और विश्व प्रसार की आकांक्षा रखनेवाले पहले धर्म – बौद्ध, इसाई, इस्लाम। प्रथमतः वैश्विक भाषाएँ – फ्रेंच, स्पेनिश, अंग्रेज़ी और प्रथमतः वैश्विक विश्वकला – फ़िल्म, वैचारिक ललित–स्वरूप, रूपरेखा। प्रथमतः अभिजात साहित्य – संस्कृत, यूनानी, अरबी, चीनी, लैटिन, फ़ारसी। प्रथमतः वैश्विक आन्दोलन – आधुनिक विज्ञान, तंत्रज्ञान, आधुनिक सार्वजनीन शिक्षा, मज़दूर आन्दोलन। वैश्विक विश्व प्रसार के प्रथमतः माध्यम – मुद्रण, डाक, तार, विविध बेतार साधन, ये सब भूमण्डलीकरण के ही पदचिह्न हैं। इन्हें सही दृष्टि से समझे बिना भूमण्डलीकरण के रूप में गहरी सत्यता, उपलब्ध होनेवाले अनुकूल अवसर तथा सुरक्षा के खतरों से हम न बच सकते हैं और नाही उनका आकलन कर सकते हैं।

यद्यपि भूमण्डलीकरण की शुरुआत व्यापार और उद्यम क्षेत्र से हुई, फिर भी आहिस्ते–आहिस्ते यह क्रिया जीवन संसार के अन्य क्षेत्रों को भी घेर रही है, अपने में समेट रही है। भाषा भी इसका अपवाद नहीं है।

'फ़िल्म', 'बैंक', 'रेल', 'रेस्टॉरेंट', 'सत्याग्रह', 'पेन', 'रिसेप्शन', आदि शब्द जितने भूमण्डलीय बने, उतने ही 'नौकरशाही', 'आविष्कार', 'स्वातंत्र्य', 'वैश्वीकरण', 'विश्व' – इन शब्दों का उद्गम भी भूमण्डलीय (वैश्विक) है। जैसे शब्द वैश्विक बनते हैं, वैसे ही भाषा वैश्विक बनती है। स्पेनिश, फ्रेंच, अंग्रेज़ी आदि प्रथम भूमण्डलीय भाषाएँ थीं। इसके बाद इस सूची में चीनी और रशियन विराजमान हुईं। भूमण्डलीकरण का तकाज़ा है कि यथावकाश अरबी, फ़ारसी, हिंदी, जापानी भी उनमें अपना अस्ि. तत्व दर्ज कराकर विराजमान होंगी। भूमण्डलीकरण की भाषा आर्थिक या तांत्रिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं रही, उसे राजकीय, सामाजिक, सांस्कृतिक पहलू भी प्राप्त हुए हैं।

भूमण्डलीकरण से सांस्कृतिक बदलाव सर्वाधिक मात्रा में हो रहा है। इससे संस्कृति के भाव, भाषा, वेशभूषा, भोजन जैसे प्रमुख घटक प्रभावित हो रहे हैं। भूमण्डलीकरण की शक्ति इन्हें ग्लोबल रूप प्रदान कर रही है। इसी कारण उसका क्षेत्रीय व राष्ट्रीय अस्मिता या स्वायत्तता से कुछ भी संबंध नहीं है।

भूमण्डलीकरण का पहिया दुनिया को रौंद रहा है। भूमण्डलीकरण ने ऐसा भूचाल ला दिया है कि अब इसे पीछे धकेला नहीं जा सकता। अतः हमें ही उसके अनुरूप बनना होगा।

भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में दो परस्पर विरोधी प्रेरणाएँ कार्य करती हैं। एक केंद्रीकरण और दूसरी विकेंद्रीकरण। इन दो प्रेरणाओं का कल्याणकारी रीति से मेल होना ज़रूरी है, अन्यथा किसी एक प्रेरणा के बलवती होने पर वह हानिकारक सिद्ध हो सकती है।

भाषा के भूमण्डलीकरण या वैश्वीकरण में भी इन दो प्रेरणाओं का विचार हो सकता है। केंद्रीकरण की माँग यह है कि सभी लोग कम–से–कम ज़रूरत के मुताबिक भाषा सीखें, तो विकेंद्रीकरण की माँग यह है कि भूमण्डलीकरण के स्तर पर उपयोग में लाई जानेवाली भाषा ज़रूरत और स्थानानुसार लचीली हो, किन्तु वह इतनी लचीली न हो कि भिन्न देशी, प्रदेशी लोगों को समझ में ही न आए। भाषा के संज्ञापन की ओर से भूमण्डलीकरण का वैश्वीकरण होते समय केंद्रीकरण सर्वाधिक महत्त्व पाता है। इसलिए संपर्क भाषा का कार्य चलता है, परन्तु भाषा का ज्ञान जब माध्यम के तौर पर वैश्वीकृत होता है, तब विकेंद्रीकरण सर्वाधिक महत्त्व पाता है। स्वभाषा में अभिव्यक्ति कर अनुवाद द्वारा भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया में इन दो प्रेरणाओं का समुचित तालमेल बिठाना ही सभी के लिए हितकारक होगा। किसी एक सिरे को छूने से किसी का भला नहीं होगा। होगी तो उलटा हानि ही।

भूमण्डलीकरण के पक्षधरों का कहना है कि आज दुनिया में ऐसी कोई अलग जगह नहीं रही है, जो 'गार्सिया माटर्नेस के माकोंडो' के अनुकूल हो। अब सांगरिका की बात पूर्णतः निरर्थक है। अभी प्रासंगिक प्रश्न है – 'मैं कौन हूँ?' न कि मर्केस का 'हम कौन हैं?' नव उदारवादी भूमण्डलीकरण का यही तकाज़ा है।

इस भूमण्डलीकरण के दौर में सूचना प्रौद्योगिकी की प्रगति के कारण, तकनीकी क्रांति के परिणामस्वरूप दुनिया इस क्रांति को केंद्रीय उपभोक्ता बनाने हेतु अपने गतिशील दृष्टि का परिचय दे रही है। विश्वग्राम, वैश्वीकरण, विश्व–बाज़ार आदि संकल्पनाएँ अब वास्तविक रूप ले चुकी हैं।

तकनीकी क्रांति के परिणामस्वरूप सभी भाषाओं के मूल स्वरूप में बदलाव आया है। इसके कारण भविष्य में कौन–से वैज्ञानिक तथा अन्य बदलाव आएँगे, इसका अनुमान लगाना या बताना कठिन है। इस दृष्टि से इंटरनेट, संचार, उपग्रह, चैनल, संगणक आदि के कारण प्रभावित भाषाओं का स्वरूप कैसा होगा, यह बताना जटिल है। एक विद्वानानुसार –

''भविष्य के आनेवाले पच्चास वर्षों में विश्व में बोली जानेवाली तेरह सौ भाषाओं में से सिर्फ़ आठ सौ भाषाएँ ही भूमण्डलीकरण के आघातों को झेल पाएँगी या उसके आगे टिक पाएँगी। भूमण्डलीकरण के दौर में हम भाषा की बात ज़रूर करें, किंतु उसका व्याकरण हमें हिम्मत से, दृढ़तापूर्वक बनाए रखकर बदलना होगा। कई लोगों ने तो 'जादुई यथार्थवाद' जैसे नई साहित्य लेखन–शैली को भूमण्डलीकरण से होनेवाली तबाही की तस्वीर के रूप में देखा है।''

इस भूमण्डलीकरण के युग में उसी भाषा का अस्तित्व दिखाई देगा, जो संगणक, इंटरनेट, ई–मेल और वेबसाइट द्वारा दुनिया में अपनी सूक्ष्म गहन प्रभावी पहचान दिखाएगी। जो भाषाएँ नई–नई उपलब्धियों को अपने में समायोजित करेंगी, उन्हीं का भविष्य उज्ज्वल रहेगा। यह बात असंदिग्ध है कि जो भाषाएँ उत्तरोत्तर तकनीक के आधार पर अपना रूप नहीं बनाएँगी, उनका भविष्य अंधकारमय है। इसके विपरीत जो भाषाएँ बदलावों को स्वीकार कर साहित्य, ज्ञान–विज्ञान, व्याकरण–कोश आदि में अग्रगण्य रहेंगी, उनकी ही प्रगति निर्विवाद होगी। यह निश्चित है!

अगर भूमण्डलीकरण को हितकारक बनाना है, तो विचारों की स्पर्धा में किसी भी समाज को पीछे नहीं रहना पड़ेगा। समाज विचारकों को व्यष्टि विचार करने का कार्य करना ही चाहिए। साथ ही उन विचारों को समष्टि तक पहुँचाने का भरसक प्रयास भी करना चाहिए। इसके लिए उनके लिए आवश्यक भाषिक कौशल अर्जित या प्राप्त करना ज़रूरी हो जाता है।

भाषा केवल अपने विचार, भावना, इच्छा और मत को एक–दूसरे को विदित कराने के व्यावहारिक स्तर का संज्ञापन नहीं, वह केवल अपनी छोटी–बड़ी अस्मिता जताने का सामाजिक प्रतीक भी नहीं, बल्कि भाषा तो इनसे बढ़कर और अधिक कुछ है। मानव की काव्यात्मक, आध्यात्मिक, वैचारिक सर्जनशीलता के खिलने का माध्यम भी है। भाषा की वैश्वीकरण–प्रक्रिया में यह महत्त्वपूर्ण बोध भूलना नहीं चाहिए।

आइए, अब हम इस भूमण्डलीकरण के दौर में भाषा के संदर्भ

में हिंदी की बात करते हैं।

विश्व में सर्वाधिक बोली जानेवाली भाषाओं में हिंदी प्रथम स्थान पर है। इसका कारण उसकी विशाल महत्ता, विशाल कलेवर और विपुल साहित्य है। उसकी लोकप्रियता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि 73 विदेशी राष्ट्रों के 600 विश्वविद्यालयों एवं पाठशालाओं में हिंदी पढ़ाई जाती है। अमेरिका, यूरोप, इटली, चीन, रोम, यूनान, पॉलैंड, दक्षिण कोरिया, जापान, यू.के., जर्मनी इत्यादि देशों में स्नातकोत्तर स्तर पर तथा 100 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई होती है। फ़िजी, मंगोलिया, श्रीलंका, थाईलैंड, मॉरीशस, ताजिकिस्तान, सिंगापुर, उज़्बेकिस्तान, इंडोनेशिया, मलेशिया, म्यांमार, सूरीनाम इत्यादि में विश्वविद्यालयीय स्तर पर हिंदी का अध्ययन–अध्यापन हो रहा है। भारत सरकार के विदेश मंत्रालय द्वारा अब तक 11 विश्व हिंदी सम्मेलन तथा अनेक क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलनों (ऑस्ट्रेलिया, आबुधाबी, टोक्यो, सऊदी अरब, सिडनी, आदि) का आयोजन भी हुआ है। आज भूमण्डलीकरण के दौर में इस तरह के सम्मेलन महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं।

भूमण्डलीकरण के दौर में हिंदी भाषा के लिए यह शुभ चिह्न या लक्षण है कि विदेशी विद्वान हिंदी का सृजन कर हिंदी में शोध–कार्य कर रहे हैं। साहित्य की अनेकानेक विधाओं में वे लिख रहे हैं। कनाडा में क्रिस्टोफ़र किंग, तो जर्मनी के कॉलोन नगर में स्लेंटर हिंदी सेवा के प्रचार–प्रसार में लगे हुए हैं। भारतीय सिने कलाकार भी अपना योगदान दे रहे हैं। अनिवासी भारतीयों की संख्या जहाँ अधिक है, वहाँ दूतावासों द्वारा हिंदी के प्रचार–प्रसार का कार्य हो रहा है।

भारत सहित दुनिया में हिंदी जाननेवालों की संख्या 1022 मिलियन है। भाषा शोध अध्ययन 2005 ने यह सिद्ध कर दिया है कि विश्व में हिंदी जाननेवाले प्रथम स्थान पर हैं। आज हिंदी विश्व के कोने–कोने में पहुँची है। उसने अपनी क्षमता के बलबूते भूमण्डलीकरण में विश्व भाषा बनने का सम्मान एवं योग्यता अर्जित की है। बिल गेट्स ने तो संस्कृत के बाद हिंदी को ही संगणक के लिए सर्वाधिक उपयुक्त भाषा माना है। हिंदी ध्वनि–विज्ञान की दृष्टि से भी भूमण्डलीय भाषा है। हिंदी को भूमण्डलीय स्वरूप दिलाने का श्रेय हिंदी फ़िल्म, टेलीविज़न आदि माध्यम हैं। फ़िल्म–टेलीविज़न को विदेशों में ज़बरदस्त लोकप्रियता प्राप्त है। विदेशों में हिंदी सिनेमा के अभिनेताओं, जैसे अमिताभ, शाहरूख, संजय, सलमान, करिश्मा, कैटरिना, प्रीति, ऐश्वर्या आदि के लाखों प्रशंसक हैं। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने भी हिंदी को ग्लोबल भाषा बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

हिंदी का यह परम सौभाग्य है कि बाज़ारवाद की विविध प्रयोजन–शक्तियाँ आज उसके साथ है। इससे यह स्पष्ट होता है कि धीरे–धीरे ही सही, वह विश्व रूप ले रही है। विदेशों में हिंदी चैनलों की बढ़ती माँग, श्रोताओं की बढ़ती संख्या, अंग्रेज़ी चैनलों का हिंदी अनुवाद आदि इसके कुछ उदाहरण हैं। बहुमाध्यम का उपयोग कर विश्व के उपेक्षित क्षेत्रों में हिंदी में संवाद सहजता व सरलता से हो रहा है। इसी कारण वह सभी क्रिया–व्यापारों की वाहिका बन सकती है। जनसंचार माध्यम के व्यापक प्रचार–प्रसार से भी हिंदी विश्व क्षितिज पर बढ़ रही है।

आज हिंदी भी संगणक, इंटरनेट, ई–मेल, वेबसाइट जैसी उपलब्धियों को अपने में समाने लगी है। तकनीकी दृष्टि से भी हिंदी में अनुरूप बदलाव के प्रयास हो रहे हैं। व्याकरण कोश आदि के अलावा साहित्य में भी बदलाव के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। इस परिवर्तन से यह स्पष्ट होता है कि हिंदी भी विश्व क्षितिज पर प्रतिनिधित्व करने के लिए योग्यता ग्रहण कर आगे बढ़ रही है, पर अभी भी उसके सामने अनेक चुनौतियाँ हैं :

1. सबसे पहले हमें सरकारी कामकाज में अंग्रेज़ी के महत्त्व को कम कर निजी क्षेत्र की कंपनियों को राजभाषा हिंदी के दायरे में लाना होगा।
2. हमें बाबू देवकीनन्दन खत्री जी को सामने रखकर, ('चंद्रकांता' उपन्यास पढ़ने हेतु कई विदेशी लोगों ने हिंदी सीखी) हिंदी साहित्यकारों के साथ–साथ अन्य भारतीय भाषाओं एवं विदेशी रचनाकारों के साहित्य का अनुवाद तथा उनपर गंभीर प्रौढ़ आलोचनाएँ, समीक्षाएँ हिंदी में लिखनी चाहिए, ताकि विश्व समुदाय उनको जानने के लिए हिंदी की ओर आकर्षित हो। साथ ही, साहित्यकारों के साथ–साथ विचार, सिद्धांतों का विश्व–मंच पर आदान–प्रदान हेतु कार्यक्रम आयोजित हो।

3. संचार माध्यमों के कारण हिंदी बोलने एवं ग्रहण करनेवालों में बढ़ोत्तरी हुई है। इसका लाभ उठाते हुए गलत अंग्रेज़ी की अपेक्षा गलत हिंदी बोलनेवालों का सहर्ष स्वागत तथा समर्थन करना होगा, जिससे भूमण्डलीकरण के दौर में वह अधिक तीव्र गति से आगे बढ़ सके। गलत ही क्यों न हो, उसका अधिकाधिक प्रयोग करने से सहज–सरल गति से जागतिक स्थान पर उसकी संख्या में वृद्धि होगी।
4. आज दुनिया सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आई क्रांति को केंद्रीय उपभोक्ता बनाने हेतु अपनी गतिशील दृष्टि का परिचय दे रही है। विश्वग्राम, वैश्वीकरण, विश्व बाज़ारवाद आदि संकल्पनाएँ आज वास्तविक रूप ले रही हैं। इस दृष्टि से भूमण्डलीकरण के दौर में अपना प्रभाव दर्ज कराने हेतु हिंदी को शुद्धतावाद को छोड़ वैश्विक रूप दिखाना आवश्यक बन गया है। शुद्धता पर अधिक ज़ोर न देकर हमें लचीला रुख अपनाना होगा; तभी इस भूमण्डलीकरण के दौर में हिंदी अपना महत्त्व कायम कर पाएगी।
5. भारत में भाषा का प्रश्न अत्यंत संवेदनशील है। बहुभाषिकता का यह गुण कभी अवगुण लगने लगता है। इस दृष्टि से हिंदी को सभी भारतीय भाषाओं को आत्मसात कर समर्थ बनना होगा।
6. हिंदी भाषा को भूमण्डलीकरण के अनुरूप ढालना होगा। इसके लिए केंद्रीकरण पर विचार हो सकता है। केंद्रीकरण की माँग यह है कि सभी लोग कम–से–कम ज़रूरत के मुताबिक हिंदी सीखें, तो विकेंद्रीकरण की माँग यह है कि भूमण्डलीय स्तर पर उपयोग में लाई जानेवाली हिंदी आवश्यकतानुरूप लचीली हो। किन्तु वह इतनी लचीली न हो कि भिन्न देशी, प्रदेशी लोग उसे समझ ही न पाएँ। स्वभाषा में अभिव्यक्ति कर अनुवाद द्वारा इन दो प्रेरणाओं का समुचित मेल बिठाना ही हितकारक होगा।
7. भूमण्डलीकरण के इस दौर में सभी दृष्टियों से हिंदी को अपनी उपादेयता दिखानी होगी। इसमें विदेशी भाषाओं से आई शब्दावली का जो प्रयोग हो रहा है, उसे अपनाना होगा। शुद्ध हिंदी के जुनून में ऐसी शब्दावली को बहिष्कृत करने की वकालत करनेवाले हिंदी के दुश्मन नहीं समझे जाएँगे। हाँ, ठीक है कि विदेशी शब्दों का बलात् अनावश्यक प्रयोग अवांछनीय है, किन्तु जो शब्द हिंदी ने प्रवृत्ति के अनुसार रचा–बसा लिए हैं, उनके प्रयोग पर बल देना आवश्यक है। उर्दू, अंग्रेज़ी और प्रादेशिक भाषाओं के प्रचलित शब्दों को उदारता से स्वीकारना होगा। जिस तरह हिंदी के 500 शब्द ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी ने अपनाए हैं, उसी तरह हिंदी को भी अन्य भाषाओं का आधार लेकर वैश्वीकरण को ध्यान में रखते हुए प्रयुक्त शब्दों को यथावत स्वीकार कर संप्रेषणीयता की दृष्टि से विचार करना होगा।
8. संगणक के अनुकूल होकर भी, हिंदी का जितनी मात्रा में उपयोग होना चाहिए, उतना उसका संगणक, इंटरनेट, ई–मेल, वेबसाइट में प्रयोग नहीं हो रहा है। इनपर अद्यतन जानकारी प्रकाशित करने पर बल देना चाहिए। हिंदी की ऑडियो एवं वीडियो कैसेट प्रचारित करने पर बल देकर उसका चप्पे–चप्पे प्रचार–प्रसार करना आवश्यक हो गया है।
9. हिंदी का वैश्विक संदर्भ विकसित होने पर उसमें ज्ञानार्जन, संप्रेषण एवं रोज़गार के अनेकानेक मार्ग निर्मित होंगे। इसीलिए व्यक्तिगत विकास के साथ–साथ अपने आप उसमें शिक्षा की नई पद्धतियाँ निर्मित होंगी। इस महान उद्देश्य–प्राप्ति हेतु हमें गंभीर प्रयास करने होंगे।
10. अंग्रेज़ी को ग्लोबल भाषा बनाने वाले मानसिक गुलामी में जी रहे हैं। वे हीन भावना से ग्रस्त हैं। उन्हें दूषित हवा ने पछाड़ दिया है। इस संदर्भ में भालचंद्र नेमाड़े जी का कथन महत्त्वपूर्ण है। अंग्रेज़ी के बलात् अनावश्यक प्रयोग पर अपना गुस्सा उतारते हुए वे कहते हैं कि –

''हमारे सभी राष्ट्रीय मामलों में अंग्रेज़ी का अंधाधुंध प्रयोग एक स्वतंत्र लेखन का विषय है। हमारे विद्वान अंग्रेज़ी में कविता तक लिख सकते हैं। इससे भी अधिक हास्यास्पद बात यह है कि हमारे तमाम लेखक अपनी कृतियों के अंग्रेज़ी अनुवाद के माध्यम से राष्ट्रीय अथवा अंतरराष्ट्रीय दर्जा हासिल करने की कोशिश करते हैं। साहित्यिक प्रतिष्ठा अर्जित करने का यह एक नकली साधन बन गया है। अब इस तथ्य को समझना हमारे लिए महत्त्वपूर्ण हो गया है कि हमारे अपने भाषा समुदाय के बाहर हमारे जो भी

साहित्यिक प्रयास होंगे वे दोयम दर्जे के होंगे। वे भारतीय अंग्रेज़ी लेखकों के प्रमाण–पत्र, अपनी पुस्तकों की पिछली ज़िल्द पर छपवाते हैं और इस प्रकार अपनी अंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा का प्रचार करते हैं। उनके ऊपर अलग से शोध अपेक्षित हैं।''

हमें राष्ट्रभाषा के प्रति वही सम्मान रखना होगा, जो राष्ट्र ध्वज तथा राज चिह्न के प्रति होता है। अनेकानेक क्षेत्रों में हिंदी का प्रयोग कर उसे दुनिया में श्रेष्ठ बनाना होगा। इसलिए अब साहित्यकारों, पत्रकारों और हिंदी–प्रेमियों को हिंदी के प्रचार–प्रसार में प्रभावी भूमिका का निर्वाह करना होगा। हमें राष्ट्रवादी समर्थक एवं प्रचारक बनकर जो भी हो सकता है, उसे करना होगा। अगर यह संभव नहीं, तो कम–से–कम विरोध तो नहीं करना चाहिए। इसे ध्यान में रखना होगा।

भूमण्डलीकरण और हिंदी भाषा के संदर्भ में यही कहना उचित होगा कि भूमण्डलीकरण पूर्णतः हितकारी भी नहीं और पूर्णतः हानिकारक भी नहीं। यह क्रिया अपने आप अटलता से घटनेवाली नहीं, नाही पूर्णतः मनुष्य की इच्छा एवं फ़ैसले पर आश्रित है। उसमें हम जिस तरह आदान करनेवाले हैं, उसी तरह प्रदान भी करनेवाले हैं। भूमण्डलीकरण वस्तुतः विविधता को अवकाश देनेवाली क्रिया है। मनुष्य जाति के इतिहास से बना यह स्थित्यंतर, जितना केंद्रीकरण की ओर झुकता है, उतना ही विकेंद्रीकरण की ओर भी झुकता है। अगर आज हमें इस भूमण्डलीकरण के स्थित्यंतर का सामना करना है, तो भयाकुल होकर नहीं, बल्कि आर्थिक, राजकीय, वैचारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि सभी प्रकार से आदान–प्रदान के लिए उत्सुकता से तैयार रहना होगा। अन्यथा कहना पड़ेगा कि इस भूमण्डलीकरण के दौर में हमने अर्वाचीन युग में प्रवेश किया ही नहीं, उसी तरह उत्तर मध्य युग में अटककर रह गए हैं। पाश्चात्यीकरण से खौफ़ खाए लोग या चकाचौंध से प्रभावित लोग इसी तरह अटके हुए हैं। इनमें संतुलित सामंजस्य बिठाकर हिंदी भाषा को आगे बढ़ाते हुए उस उँचाई पर पहुँचाने हेतु विश्व क्षितिज पर नेतृत्व की भूमिका में विराजमान करना होगा।

संदर्भ :

1. मर्सिया मार्खेन्स ने 'जादुई यथार्थवाद' साहित्य–लेखन की इस नई शैली को नए आयाम दिए। उसकी इसी शैली में 1970 में लिखित उपन्यास 'वन हंडरेड यर्स ऑव सॉलिट्यूड' को नोबेल पुरस्कार मिला। यह उपन्यास मार्कोंडो नामक काल्पनिक शहर के इर्द–गिर्द घूमता है। मार्कोंडो नामक काल्पनिक शहर या जादुई नगरी में 100 वर्षों तक लगातार वर्षा हो सकती है। आसमान पीले फूलों की झड़ी लगाकर सड़कों को पाट सकता है। दादियाँ–नानियाँ हवा में आध्यात्मिक शक्ति से उड़ सकती हैं। तानाशाह सड़ते हैं, मरते नहीं और किसान प्रेतों से वार्तालाप करते हैं।
इसके द्वारा लेखन ने लैटिन अमेरिका की अपनी पहचान और परिवेश को रेखांकित किया है। वहाँ स्थित हर व्यक्ति किसी–न–किसी समुदाय का सदस्य है। उसी रूप में उसकी पहचान है। उसके सामने बार–बार यह प्रश्न आता है कि 'हम कौन हैं?' 8 दिसम्बर, 1982 को नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने के बाद लेखक ने इस प्रश्न के संदर्भ में विस्तृत महत्त्वपूर्ण बातें कही थीं।
'जादुई यथार्थवाद' शब्द का प्रयोग प्रथमतः जर्मन कला समीक्षक फ्रांज़ रोह ने 1925 में एक उदीयमान अभिव्यंजनावाद शैली का विवरण प्रस्तुत किया। मूलतः जिस कला का वर्णन करने के लिए इस शब्द का प्रयोग किया गया, वह यथार्थवादी होने के साथ–साथ विलक्षण या स्वप्निल गुणवत्ता से युक्त था। जादुई यथार्थवाद से अनुप्राणित कहानी का नायक 199 वर्ष की उम्र का हो सकता है। उसके पात्रों के पंख निकल सकते हैं। वे उड़ सकते हैं। वे देवदूत बन सकते हैं। वे भूत या प्राणियों से बात कर सकते हैं। भ्रष्ट लोग विकृत होकर यातना भोगते हैं, मरते नहीं। विलक्षण तोते दार्शनिक सत्य मुखर कर सकते हैं। 'रामायण' का लक्ष्मण–शक्ति प्रसंग, सीता माता की अग्नि–परीक्षा के बाद धरती माता में प्रवेश, 'महाभारत' में यक्ष–युधिष्ठिर संवाद, अश्वत्थामा की दशा, मंडन मिश्र के द्वार पर नर–मादा तोते के बीच दार्शनिक शास्त्रार्थ आदि देखकर शंकराचार्य का चकित होना आदि घटनाएँ जादुई यथार्थवाद की ओर ही इंगित करती हैं।
2. Netizement in Literature : NetBIBism : Such genre criticisms, no. Makarand Paranjape (New Delhi, 1988), p. 253

अंबाजोगाई, जि. बीड, भारत
ghorpade.p123@gmail.com

20

असम में हिंदी

— श्रीमती अनुजा बेगम

'है भव्य भारत ही, हमारी मातृभूमि हरी भरी।
हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा और लिपि नागरी।'
— मैथिलीशरण गुप्त

संसार में कुल मिलाकर लगभग अट्ठाईस सौ भाषाएँ हैं, जिनमें तेरह ऐसी भाषाएँ हैं, जिनके बोलने वालों की संख्या साठ करोड़ से अधिक है। संसार की भाषाओं में हिंदी भाषा को तृतीय स्थान प्राप्त है। भारत के बाहर, म्यांमार, श्रीलंका, मॉरीशस, त्रिनिदाद, फ़िजी, मलाया, सूरीनाम, दक्षिण और पूर्वी अफ़्रीका में भी हिंदी बोलने वालों की संख्या काफ़ी है। यही विश्व–प्रसिद्ध हिंदी भाषा अधिकांश लोगों द्वारा हमारे स्वर्णिम भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा मानी जाती है।

भले ही भारत राजनीतिक दृष्टि से समय–समय पर खंडित क्यों न हुआ हो, सांस्कृतिक दृष्टि से सदा एकमत रहा। उत्तर के बद्रीनाथ से लेकर कन्या कुमारी तक, पश्चिम में द्वारका से लेकर चीन–बर्मा–भारत के संगम स्थल पर स्थित परशुराम कुण्ड तक के भूमिखंड को केवल प्रकृति ने ही नहीं, संस्कृति ने भी एक बनाकर रखा है। एकता के सूत्रधार, मर्यादा को बाँधने में सर्वदा से भारत के साधु–संत तथा महापुरुष सहायक रहे हैं।

भारत के पूर्वांचल का एक छोटा–सा प्रदेश, असम में भी हिंदी के प्रचार–प्रसार की परंपरा रही है। असम मूलतः एक अहिंदी–भाषी राज्य है, अतः असम के महान संत महापुरुष श्री शंकरदेव ने हिंदी भाषा को अपने धर्म और साहित्य का माध्यम बनाया। वर्तमान समय में हिंदी किसी–न–किसी रूप में पूरे देश में प्रचलित है।

साहित्यिक क्षेत्र में 'रामायण', 'महाभारत' आदि महाकाव्यों का भारतीय संस्कृति को एक सूत्र में बाँधने में बड़ा हाथ रहा है। भारत के पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण की प्रायः सभी मुख्य भाषाओं में 'रामायण' की रचना हुई है। असमिया और हिंदी में इस दिशा में श्री शंकर देव तथा श्री माधव देव के नाम उल्लेखनीय हैं। शंकर देव ने द्वारका से लेकर बद्रीनाथ तथा रामेश्वरम तक पदयात्रा की थी। इस यात्रा में उन्होंने उन अंचलों के साहित्य, संस्कृति, सभ्यता और जनजीवन से अपना संपर्क स्थापित किया था, जिसे उस समय के भारतीय संतों की माध्यम–भाषा भी कहा जा सकता है। शंकर देव और माधव देव के नाटकों और गीतों में प्रयुक्त 'ब्रजबुलि' नामक इस भाषा को आगे चलकर इतनी लोकप्रियता मिली कि उस काल के खुले रंगमंच की एकमात्र नाट्य–भाषा वही बनी। असम के कविवर श्री देवकांत ने एक स्थान पर कहा था, कि शंकर देव ने असम को भारत में विलीन कराया और भारत को असम के समीप पहुँचाया।

इस प्रकार शंकर देव के समय से ही असमिया और हिंदी भाषा के आदान–प्रदान की एक परंपरा चल पड़ी। नाथ पंथियों की साहित्य–साधना के ज़रिए असमिया और हिंदी के विनिमय का एक और अवसर आया था। आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के 'हिंदी साहित्य का आदिकाल' नामक पुस्तक में उल्लिखित

जन्म : 01.02.1986, असम, भारत

शिक्षा:
- हिंदी में स्नातकोत्तर उपाधि
- एम.फिल शोध जारी

व्यवसाय :
हिंदी प्राध्यापक, आर्य विद्यापीठ कॉलिज, गोपीनाथ नगर, गुवाहाटी

प्रकाशन :
- हिंदी कल, आज और कल (संगोष्ठी पेपर)
- असम में हिंदी की परंपरा का संक्षिप्त इतिहास (आलेख)
- राष्ट्रीय एकता में हिंदी की भूमिका तथा अहिंदी भाषी प्रदेशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार का महत्त्व (संगोष्ठी पेपर) आदि।
- अन्य आलेख व सृजनात्मक लेखन प्रकाशित।

गोरखनाथ के पदों को असमिया भाषा में रचित पद ही कहा जाना चाहिए। 'ब्रजबुलि' भाषा में असम के संतों द्वारा रचित नाटकों को डॉ. दशरथ ओझा ने अपने 'हिंदी नाट्य साहित्य का उद्भव और विकास' नामक पुस्तक में हिंदी के आदि नाटक माना है।

पश्चिम असम अंचल की बोलियों में हिंदी के अनेक तत्सम् और तद्भव शब्दों का व्यवहार मिलता है। असम के गोवालपारा तथा कामरूप ज़िले में मुगलों का आक्रमण बार–बार होता रहा। फलस्वरूप, इस अंचल के उत्तर भारतीय सैनिक शिविरों में असमिया–हिंदी मिश्रित भाषा का प्रयोग होता रहा। इनके चले जाने के बाद भी, यहाँ हिंदी के बहुत से शब्दों और शैलियों का प्रयोग होता रहा। भाषिक आदान–प्रदान की तरह साहित्यिक आदान–प्रदान की कहानी भी पुरानी है।

असमिया और हिंदी साहित्य के आदान–प्रदान का स्पष्ट और प्रथम निदर्शन संभवतः 18वीं सदी के आसपास श्रीकांत सूर्यप्रिय द्वारा 'पश्चिमी भाषा' में तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' के अनुवाद से हुआ। स्वर्गदेव चन्द्रकांत सिंह के महामंत्री पूर्णानंद बर गोहाँइ के आदेशानुसार ऐसा किया गया था।

असमिया साहित्य के इतिहास में हिंदी और अनेक भाषाओं के साहित्य का सार ग्रहण कर असमिया साहित्य रचे गए थे। ये काव्य साधारणतः सूफ़ी काव्यों के आधार पर रचित थे। इनमें द्विज राम द्वारा रचित 'मृगावती', किसी अज्ञात कवि द्वारा रचित 'मधुमालती', कवि द्विज का 'चन्द्रावली वृषकेतु' और पशुपति द्विज द्वारा रची गयी 'चम्पावती' प्रमुख हैं।

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में, गांधीजी के आविर्भाव के पश्चात् अनेक रचनाकार सामने आए। उन्होंने साथ–साथ साहित्यिक विनिमय का कार्य भी किया। सन् 1832 में यज्ञराम खारधरीया फुकन ने एक हिंदी–असमिया–अंग्रेज़ी कोश लिखना आरंभ किया था, परंतु इस काम की पूर्ति से पहले ही वे गुज़र गए। फिर भी, उन्हीं को प्रथम असमिया भाषी हिंदी लेखक का स्थान प्राप्त है।

द्वितीय विश्व–युद्ध के बाद प्रेमचन्द की एक कहानी का अनुवाद 'न बोवारी' (नयी बहू) का प्रकाशन पुस्तकाकार में हुआ। लगभग उसी समय डॉ. लक्ष्मीनारायण सुधांशु के 'काव्य में अभिव्यंजनावाद' का अनुवाद डॉ. विरिंचि कुमार बरुवा द्वारा हुआ। असमिया साहित्य के लिए यह एक उल्लेखनीय पुस्तक थी। असमिया और हिंदी साहित्य के विनिमय के पथ–प्रदर्शक के रूप में कमल नारायण देव तथा चक्रेश्वर भट्टाचार्य विशेष स्मरणीय साहित्यकार हैं। इन दोनों के प्रयत्नों से दोनों भाषाओं की अनेक कहानियाँ परस्पर अनूदित होकर प्रकाशित होती रहीं। इसके अतिरिक्त, कमल नारायण देव ने असम की भाषा एवं संस्कृति संबंधी अनेक मौलिक निबंधों द्वारा असम का परिचय हिंदी भाषा के ज़रिए बाहर वालों को दिया। बिरिंचि कुमार बरुवा की 'असमिया साहित्य की रूपरेखा' नामक पुस्तक का अनुवाद भी कमल नारायण देव ने ही किया था।

स्वतंत्रता के बाद, असम प्रांत में हिंदी के पठन–पाठन की व्यवस्था आधिकारिक हुई। इसके फलस्वरूप हिंदी कहानियाँ अनूदित होकर असमिया में आने लगीं। हरमोहनदास ने माधवदेव कृत 'नामघोषा' नामक पुस्तक को हिंदी में अनूदित कर प्रकाशित किया। हरिनारायण दत्त बरुवा ने अमूल्य वैष्णव ग्रंथ 'चित्र भागवत' का हिंदी अनुवाद प्रकाशित किया। इनके प्रकाशन से असमिया साहित्य का गौरव बढ़ा। कुछ समय पश्चात् हरिनारायण दत्त बरुवा ने श्रीशंकरदेव माधवदेव द्वारा रचित 'बरगीतों' का अनुवाद भी हिंदी में किया।

असमिया से हिंदी में अनुवाद करने वालों में श्री लोकनाथ भराली का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन्होंने रजनीकांत बरदलै के 'भनोमती' नामक प्रसिद्ध उपन्यास का हिंदी में अनुवाद किया। श्री वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के उपन्यास 'आई' का 'माँ' नाम से इन्होंने अनुवाद किया और दोनों उपन्यास प्रकाशित भी हुए। असम के चिंतन जगत के नायक महापुरुष माधवदेव के 'नामघोषा' के दो अनुवाद तो निकल ही चुके थे, परंतु इससे भारतीय जनमानस पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा ।

असम राष्ट्रभाषा प्रचार परिषद् का प्रयास इस क्षेत्र में स्तुत्य है। परिषद् ने असम के वाग्मी कवि नीलमणि फुकन के 'साहित्य–कला' नामक निबंध तथा प्रसिद्ध साहित्यिक कृति श्री हेम बरुवा के 'द रेड रीवर एण्ड द ब्लू हिल्स' नामक अंग्रेज़ी ग्रंथ को 'लौहित्य और नीलांचल' नाम से हिंदी में रूपांतरित कर प्रकाशित किया। प्रेमनारायण दत्त का बाल उपन्यास 'पोहरर वाटत' का 'रोशनी की राह में' नाम से श्रीमती सीतादेवी ने अनुवाद किया। श्री चित्र महल ने भी रजनीकांत बरदलै के उपन्यास 'निर्मल भक्त' का 'निर्मल' नाम से अनुवाद किया, जो 'राष्ट्र सेवक' पत्रिका में खण्डशः प्रकाशित हो गया है। सूर्य कुमार

भूजा द्वारा रचित 'लाचित वरफुकन एण्ड हिज़ टाइम्स' नामक पुस्तक का अनुवाद नेशनल बुक ट्रस्ट की ओर से हिंदी में हुआ। इसी प्रकार नेशनल बुक ट्रस्ट की ओर से ही रजनीकांत बरदलै का श्रेष्ठ उपन्यास 'मिरि जीयरी', 'मिरि की बिटिया' नाम से ही अनूदित है।

आकाशवाणी के अखिल भारतीय कार्यक्रम में अब तक अनेक असमिया नाटक हिंदी में अनूदित होकर प्रसारित हुए हैं। इन नाटकों के अनुवाद का श्रेय तरुण आज़ाद डेका को है। अनूदित नाटकों में ज्योतिप्रसाद अग्रवाल की 'कारेडर लिगिरी' अर्थात् 'राजमहल की चेरी', लक्ष्मीनाथ बेजवरुवा की 'जयमती', अतुल चन्द्र हज़ारिका का 'टिकेन्द्रजित' प्रसिद्ध हैं। सन् 1945 के आसपास प्रकाशित 'न बोवारी' के बाद अनूदित कहानियों के क्षेत्र में चित्र महंत तथा निरुपमा फुकन ने काफ़ी काम किया है। श्री महन्त ने हिंदी के श्रेष्ठ उपन्यासकार श्री भगवतीचरण वर्मा के प्रसिद्ध उपन्यास 'चित्रलेखा' का सफल अनुवाद किया है। उन्होंने जैनेन्द्र कुमार के 'त्यागपत्र' तथा नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित फ़णीश्वरनाथ रेणु कृत 'मैला आँचल' नामक उपन्यास का भी अनुवाद किया है। श्री निवारुण वर्मा ने योगेशदास का 'डावर आरुनाई' (बादल छट गए), श्री नवकांत बरुवा के 'कका देउतार हाड़' (बंधन) तथा माधव कन्दली कृत 'रामायण' का भी अनुवाद किया है।

असम राष्ट्रभाषा परिषद् ने 'पंत अरिहना' नामक एक काव्य का संपादन किया है। इसमें सूमित्रानंदन पंत की चुनी हुई कविताओं का असमिया भाषा में अनुवाद किया गया है। श्री राजेन्द्र प्रताप करण ने कुछ ही वर्ष पूर्व असम के प्रेमी कवि, गणेश गर्ग के अत्यंत लोकप्रिय काव्य 'पापरि' का हिंदी में अनुवाद किया। 'पापरि' काव्य की तुलना जयशंकर प्रसाद के 'आँसू' काव्य से की जाती है। नेशनल बुक ट्रस्ट की ओर से पुलिन बिह. ारी बरठाकुर ने भगवतीचरण वर्मा के अकादमी पुरस्कार प्राप्त उपन्यास 'भूले बिसरे चित्र' का असमिया में अनुवाद किया है। अब तक, असम संबंधी अनेक पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं, जिनमें श्री राजेन्द्र नारायण प्रसाद सिंह की 'अमृत प्रभा', श्री हरिहर प्रसाद द्विवेदी की 'शशई घाटी', श्री निवारुण वर्मा का 'लाचित बरफुकन' तथा 'जय आई असम' नामक पुस्तकें प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त 'नामाओं के देश में', 'असम की गोद में' आदि असम पर आधारित पुस्तकें हैं। हिंदी–असमिया के आदान–प्रदान के क्षेत्र में असम राष्ट्रभाषा प्रचार परिषद् द्वारा प्रकाशित द्विभाषी मासिक पत्रिका 'राष्ट्र–सेवक' का नाम उल्लेखनीय है। इस पत्रिका के माध्यम से हिंदी तथा असमिया भाषी दोनों उपकृत हुए हैं। इसके अतिरिक्त श्री छमनलाल जैन द्वारा संपादित 'पूर्व ज्योति', श्री विश्वनाथ गुप्त द्वारा संपादित 'अकेला' तथा श्री पूर्णनारायण सिंह द्वारा संपादित 'महाजाति' भी महत्त्वपूर्ण हैं। इन पुस्तकों ने तत्कालीन राष्ट्रीयता, एकता, समन्वय, साहित्य एवं संस्कृति के क्षेत्र में अभूतपूर्व सेवाएँ प्रदान की हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि प्राचीन काल से अब तक हिंदी तथा असमिया के मध्य भाषिक–साहित्यिक परम्परा अटूट रही है और भविष्य में इसका उज्ज्वल दीप हमेशा प्रज्ज्वलित हो, इसी की संभावना है। हिंदी एक सजीव और सरल भाषा है। इसका प्रचार–प्रसार बढ़ता जा रहा है। इसलिए डॉ. राव का यह सुझाव बहुत ही अच्छा है कि सभी लोगों को हिंदी पढ़नी चाहिए। अगर उन्हें लिपि की कठिनाइयाँ हैं, तो सरकार उन्हें अपनी क्षेत्रीय भाषाओं की लिपि के माध्यम से पढ़ने–लिखने की सुविधा दे सकती है। अहिंदी–भाषी प्रदेश होते हुए भी असम में हिंदी का बोलबाला है एवं असम का जन–जन प्रसन्नता से कह उठा है कि :

''बिहरो, 'बिहारी' की बिहार वाटिका में,
चाहे 'सूर' की कही में अड़ आसन जगाइए,
केशव के कुंज में कलोली केली कीजिए,
या तुलसी के मानस में डुबकी लगाइए,
भिन्न भाषा–भाषिये मिलेगा मन माना सुख,
हिंदी के हिण्डोले में ज़रा तो बैठ जाइये।''

संदर्भ :

- 'राष्ट्रभाषा प्रचार : एक झाँकी', लेखक : चित्त महन्त, प्रकाशक : असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

असम, भारत
begumanuja@gmail.com

21

हिंदी भवन भोपाल में हिंदी

– श्री गोवर्धन यादव

हिंदी भवन भोपाल में लगभग पूरे वर्ष साहित्यिक अनुष्ठान आयोजित होते हैं। इन आयोजनों के बारे में जानने के साथ ही, हम हिंदी भवन की स्थापना तथा अन्य आयोजनों के बारे में संक्षिप्त जानकारी भी प्राप्त करते चलें, तो उत्तम होगा।

मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल अपने विशाल ताल के लिए जगप्रसिद्ध है। इसके अलावा यहाँ बहुत कुछ हैं देखने के लिए – जैसे लक्ष्मीनारायण मंदिर, मोती मस्जिद, ताज–उल–मस्जिद, शौकत महल, सदर मंज़िल, पुरातात्विक संग्रहालय, भारत भवन, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मानव संग्रहालय, भीम–बेटका, भोजपुर आदि। इनके अलावा श्यामला हिल्स पर स्थित गांधी भवन, मानस भवन और इन दोनों भवनों के बीच स्थित है, हिंदी को समर्पित साहित्य का महातीर्थ, हिंदी भवन।

संभवतः भारत का यह एकमात्र ऐसा स्थान है, जहाँ होली के पावन पर्व पर शहर के तथा बाहर से आए हुए साहित्यकार इकट्ठे होकर रंग–बिरंगे त्योहार को सौहार्द के साथ मनाते हैं। यह वह स्थान है, जहाँ दीपावली जैसे त्योहार पर सभी साहित्यकार इकट्ठे होकर दीपपर्व मनाते हैं। यह वही स्थान है, जहाँ पर ऋतुओं के अनुसार पावस व्याख्यान माला, शरद् व्याख्यान माला तथा वसन्त व्याख्यान माला का आयोजन किया जाता है। इसके अलावा, हिंदी दिवस पर साहित्यिक आयोजन होते हैं। हिंदी से इतर जो साहित्यकार अपनी साहित्य–साधना कर रहे हैं, उन्हें भी यहाँ आमंत्रित कर उनका सम्मान किया जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि हिंदी भवन, भोपाल देश का एकमात्र ऐसा स्थान है, जहाँ वर्ष भर साहित्यिक आयोजन बड़े पैमाने पर आयोजित किए जाते हैं। शायद ही कोई ऐसा साहित्यकार होगा, जो यहाँ न आया हो। सभी ने अपनी उपस्थिति से इस भवन के प्रांगण को गुलज़ार बनाया है। पावस व्याख्यान माला अपने आप में एक ऐसा अनूठा आयोजन है, जिसमें भारत के कोने–कोने से साहित्यकार आकर अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं और अपने आप को अहोभागी मानते हैं।

जन्म : 17.07.1944, मुलताई (जिला बैतूल) म. प्र.

शिक्षा : स्नातक

व्यवसाय :
- (संप्रति) अध्यक्ष/संयोजक मध्य प्रदेश राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, जिला इकाई छिन्दवाड़ा
- सेवा निवृत्त पोस्टमास्टर (एच.एस.जी.–1)

प्रकाशन :
- महुआ के वृक्ष (कहानी–संग्रह)
- तीस बरस घाटी (कहानी–संग्रह)
- अपने समय को लिखते हुए (कविता–संग्रह)
- अब नगर शांत है (लघुकथा–संग्रह)
- पातालकोट –धरती पर एक–एक अजूबा (आलेख–संग्रह) तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :
- म. प्र. साहित्य सम्मेलन छिन्दवाड़ा द्वारा ''सारस्वत सम्मान''
- साहित्य समिति मुलताई द्वारा ''सारस्वत सम्मान''
- राष्ट्रीय राजभाषा पीठ इलाहाबाद द्वारा ''भारती रत्न सम्मान''
- सुरभि साहित्य संस्कृति अकादमी खण्डवा द्वारा ''कमल सरोवर दुष्यंत कुमार सम्मान'' तथा अन्य सम्मान

स्वाधीनता संग्राम के दौरान राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने सर्वप्रथम स्वाधीन भारत के लिए परिकल्पना की थी कि – ''एक राष्ट्र, एक राष्ट्रभाषा हो।'' इसी परिकल्पना को ध्यान में रखते हुए सन् 1936 में उन्होंने वर्धा ग्राम में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना की थी। संस्था का उद्देश्य राष्ट्रभाषा का प्रचार–प्रसार और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करना था। कार्यवाही पंजी में हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों में निम्नलिखित सदस्य थे –

1. महात्मा गांधी
2. डॉ. राजेन्द्र प्रसाद
3. राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन
4. श्री ब्रिजलाल बियाणी
5. श्री हरिहर शर्मा
6. श्री वियोगी हरि

7. सेठ श्री जमनालाल बजाज
8. श्री काका कालेलकर
9. श्री शंकर राव देव
10. श्री बाबा राघवदास

दक्षिण के चार प्रांतों (केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक) को छोड़कर समिति का कार्यक्षेत्र पूरे भारत में स्वीकृत किया गया। उसी संदर्भ में वर्ष 1954 से पहले मध्य–भारत राष्ट्रभाषा प्रचार समिति गठित की गई और सीतामऊ के महाराज कुमार रघुवीर सिंह इसके अध्यक्ष बने।

एक नवम्बर 1956 को नए मध्य प्रदेश का गठन हुआ और पं. रविशंकर शुक्ल प्रथम मुख्यमंत्री बने। वर्धा, महाराष्ट्र के अंतर्गत रहा। मध्यप्रदेश का गठन होने के बाद समिति को मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति में परिवर्तित कर प्रांतीय कार्यालय इन्दौर से भोपाल स्थानांतरित किया गया। समिति के कार्य को स्थायित्व देने के लिए मध्य प्रदेश शासन ने भूखण्ड दिया और शासन तथा जनता के सहयोग से हिंदी भवन का निर्माण हुआ। समिति के संस्थापक, मंत्री संचालक स्वर्गीय श्री बैजनाथ प्रसाद दुबे जी थे। 28 नवम्बर 1988 को उनके निधन के बाद यह दायित्व श्री कैलाशचन्द्र पंत को सौंपा गया।

संस्था के उद्देश्य

- हिंदी को राष्ट्रभाषा और विश्वभाषा बनवाने में सहयोग करना।
- हिंदी भाषा में साहित्येतर ज्ञान–विषयों पर पुस्तकों का लेखन एवं प्रकाशन करना।
- राष्ट्रभाषा प्रेम के साथ राष्ट्रीयता की भावनाओं में वृद्धि करना।
- लोकभाषाओं का संवर्धन और प्रकाशन करना।
- भारतीय भाषाओं के मध्य अन्तर्संवाद स्थापित कर भाषायी सद्भाव बढ़ाना।
- समाज के साहित्यिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक विकास की दिशा में आयोजन करना।
- हिंदी हित संवर्धन ही संस्था का मुख्य उद्देश्य है।
- हिंदी परीक्षाओं का संचालन कर हिंदी का प्रचार करना और भाषा–ज्ञान में प्रावीण्य प्रदान करना।

इन्दौर से भोपाल स्थानांतरित होने के साथ ही समिति के कार्य को गति मिलती गई। यह पं. रविशंकर जी शुक्ल (तत्कालीन मुख्यमंत्री, म. प्र. शासन) के हिंदी प्रेम का अनुपम उदाहरण है कि उन्होंने हिंदी भवन के लिए राजधानी में सवा एकड़ भूमि आबंटित की। कालान्तर में जो भी राज्यपाल और मुख्यमंत्री आए, उन सबका म. प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति को अपेक्षानुसार स्नेह और सहयोग मिलता रहा। शनैः शनैः हिंदी–प्रेमी भी समिति से जुड़ते गए और समिति आत्म–निर्भर होती गई। आज जिस विशाल स्वरूप में म. प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति और उसका हिंदी भवन खड़ा है, वह राष्ट्रभाषा के हित में उठे उदार हाथों, हिंदी–प्रेमियों और साहित्यकारों के अथक प्रयासों का ही प्रतिफल है। नगर, प्रदेश और देश में फैले हज़ारों हाथ ही समिति की ताकत भी हैं और गौरव भी। हिंदी भवन का निर्माण पूरा हो जाने पर म. प्र. रा. भा. प्र. समिति की व्यवस्थापिका सभा ने सर्वानुमति से प्रस्ताव पारित कर पं. रविशंकर शुक्ल हिंदी भवन न्यास का गठन किया।

समिति की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि उसने प्रदेश के पहले साहित्यकार निवास का निर्माण पूर्ण करने में सफलता प्राप्त की। मध्य प्रदेश पहला राज्य है, जहाँ अशासकीय स्तर पर इतना भव्य और सुन्दर साहित्यकार निवास जन–सहयोग से निर्मित हुआ। साहित्यकार निवास का द्वितीय चरण समिति एवं न्यास द्वारा अपने साधनों से किया गया है।

इस भवन में कुल 13 कक्ष हैं, जिन्हें श्री माखनलाल चतुर्वेदी, आचार्य श्री विनयमोहन शर्मा, श्री भवानी प्रसाद मिश्र, श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन', डॉ. चन्द्रप्रकाश वर्मा, श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान, श्री जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द, श्री हरिकृष्ण प्रेमी तथा श्री कृष्ण सरल की स्मृतियों को समर्पित किया गया है।

इसके अतिरिक्त, एक वातानुकूलित सेमिनार कक्ष और एक सामान्य संगोष्ठी कक्ष भी उपलब्ध है। भोपाल आने वाले लेखकों तथा शोधकर्ताओं के अलावा हिंदी प्रचारकों को भी साहित्यकार निवास में रहने के लिए राजधानी में कम दरों पर सुविधा दी जा रही है।

पंडित मोतीलाल नेहरू स्मृति पुस्तकालय

पं. रविशंकर शुक्ल हिंदी भवन न्यास म. प्र. शासन के स्कूल शिक्षा विभाग एवं नगर निगम भोपाल के सहयोग से वर्ष 1972 से हिंदी भवन में संचालित है। पुस्तकालय में लगभग छब्बीस हज़ार पुस्तकें हैं।

पुस्तकालय के अन्तर्गत एक वाचनालय भी संचालित है, जिसमें 17 स्थानीय और चार राष्ट्रीय समाचार–पत्र प्रतिदिन पढ़ने के लिए उपलब्ध कराए जाते हैं। युवा पाठकों की विशिष्ट आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए रोज़गार केन्द्रित साप्ताहिक 'रोज़गार समाचार' तथा 'रोज़गार निर्माण' भी वाचनालय में उपलब्ध रहते हैं। इसके अलावा विभिन्न संस्थानों द्वारा प्रकाशित पत्रिकाएँ रखी जाती हैं, जो शोधार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध हुई हैं। पठनावृत्ति को प्रोत्साहित करने तथा पाठकों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से वर्ष 2011 में 'सर्वश्रेष्ठ पाठक सम्मान' भी प्रारंभ किया गया है। पुस्तकालय में हिंदी साहित्य, गांधी दर्शन एवं विचार, धर्म एवं संस्कृति, इतिहास, राजनीति, समाजशास्त्र तथा बालोपयोगी साहित्य के अलावा अनेक स्वनाम धन्य लेखकों की समग्र रचनावली उपलब्ध हैं। इन लेखकों में सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, मुक्तिबोध, गंगाप्रसाद अग्निहोत्री, विष्णु प्रभाकर, विनायक दामोदर सावरकर, वृंदावनलाल वर्मा, शिवमंगल सिंह 'सुमन', शिवचन्द्र नागर, धर्मवीर भारती, माखनलाल चतुर्वेदी, अटल बिहारी वाजपेयी (संसद के तीन दशक) तथा समग्र गांधी वांङ्मय भी उपलब्ध है।

प्रकाशन

श्रेष्ठ हिंदी साहित्य के माध्यम से व्यक्ति, समाज व राष्ट्र को सही दिशा बोध कराने वाले चिन्तन को अधिक–से–अधिक लोगों तक पहुँचाकर हिंदी साहित्य की ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से समिति प्रकाशन–योजना भी संचालित कर रही है।

वर्ष 2000 से समिति ने 'सृजन–यात्रा' नाम से रचनाकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर केन्द्रित प्रकाशन माला प्रारम्भ की है। इसके अन्तर्गत श्री गोविन्द मिश्र, श्री नरेश मेहता, श्री शैलेन्द्र मटियानी, डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन', डॉ. रायकमल राय और पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह पर पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इसके अतिरिक्त पावस व्याख्यानमाला के विमर्श पर आधारित 'संवाद और हस्तक्षेप' नामक प्रकाशन के बीसों खण्ड प्रकाशित हो चुके हैं। इसी प्रकार शरद् और वसंत व्याख्यान माला में दिए गए व्याख्यानों पर आधारित 'मंथन' पुस्तिका भी प्रकाशित की जाती है। श्री कैलाशचन्द्र पंत द्वारा लिखित 'शब्द और विचार', 'धुंध के आर–पार' एवं 'कौन किसका आदमी' भी प्रकाशित की गई हैं। 'मालवांचल में कूर्मांचल', 'चिन्ता और चिंतन' तथा मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के परिचय ग्रंथ का भी प्रकाशन हुआ है।

आंचलिक बोलियों के हितार्थ प्रयास एवं प्रकाशन

समिति की मान्यता है कि हिंदी की प्रगति में आंचलिक बोलियों और आंचलिक बोलियों की प्रगति में हिंदी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इसी समन्वयकारी भावना के अनुरूप समिति मालवी, बुंदेली और निमाड़ी बोलियों के संबंध में क्रमशः उज्जैन, ओरछा और खंडवा में संगोष्ठियाँ आयोजित कर चुकी हैं, जिनमें सुप्रसिद्ध साहित्यकारों एवं विद्वानों ने भागीदारी की। इन संगोष्ठियों के विमर्श पर आधारित दो दस्तावेज़ – 'मालवी की उपबोलियाँ और उनका सांस्कृतिक परिवेश' और 'बुंदेली के विभिन्न आयाम' समिति द्वारा पुस्तकाकार प्रकाशित किए गए हैं। निमाड़ी के दस्तावेज़ की प्रकाशन–प्रक्रिया चल रही है। शीघ्र ही लोक गाथाओं की पुस्तक प्रकाशित करने की योजना है।

'अक्षरा'

हिंदी भवन की प्रगति–यात्रा की एक बड़ी उपलब्धि द्वैमासिक साहित्यिक पत्रिका 'अक्षरा' है। यह पत्रिका लगातार बत्तीस वर्षों से प्रकाशित हो रही है। इसकी यशस्वी यात्रा मार्च–अप्रैल 2016 के अंक के साथ 143वें अंकों तक पहुँच गई है। आज 'अक्षरा' की गणना देश की श्रेष्ठ साहित्यिक पत्रिकाओं में होती है। देश और विदेश के प्रतिष्ठित लेखकों की रचनाएँ जब छपती हैं, तब वे इसे 'अक्षरा' में गौरव की बात मानते हैं। पत्रिका को अपनी इस प्रकाशन–यात्रा में प्रख्यात साहित्यकार, डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय तथा गोविन्द मिश्र जैसे सुप्रसिद्ध विद्वानों का संपादकीय सहयोग मिला है। पद्मश्री रमेशचन्द्र शाह जी के लेख–आलेख

तथा ज्ञान–विषयों पर आलेख शब्द निरन्तर 'स्थायी स्तंभ' में प्रकाशित किए जा रहे हैं। यहाँ यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक होगा कि 'अक्षरा' अब मात्र एक साहित्यिक पत्रिका नहीं रह गई है, अपितु प्रखर अग्रलेखों और अन्य आलेखों के कारण एक वैचारिक आंदोलन का रूप ले चुकी है और सोए हुए समाज तथा राष्ट्र को जगाने एवं राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा के लिए समर्पित होने हेतु मानसिक रूप से तैयार कर रही है। पत्रिका पर प्राप्त होने वाली व्यापक पाठकीय प्रतिक्रियाएँ बताती हैं कि 'अक्षरा' की आवाज़ बहुत दूर तक जाती है। प्रसन्नता की बात है कि उसकी अंतर्ध्वनि सुनने–गुनने वालों की संख्या भी दिनों–दिन बढ़ रही है। वैचारिक जड़ता को तोड़ने का जो आंदोलन हिंदी भवन चला रहा है, 'अक्षरा' अब उसमें प्रभावी भूमिका निभाने लगी है। इस यात्रा में 'अक्षरा' के कई विशेषांक भी प्रकाशित हुए, जो संग्रहणीय हैं।

हिंदी भवन की गतिविधियाँ

पावस व्याख्यानमाला –

म. प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा साहित्यिक अनुष्ठान की शृंखला वर्ष 1994 से आरम्भ हुई। इस व्याख्यान–माला को प्रारंभ करने की प्रेरणा संस्कृति मंत्री डॉ. विजयलक्ष्मी साधौ ने दी थी और अपने विभाग से पचास हज़ार रुपये का विशेष अनुदान भी स्वीकृत किया था। म. प्र. संस्कृति विभाग द्वारा यह सहयोग निरंतर मिलता आया है। यह साहित्यिक निरन्तरता, संवादहीनता के परिवेश में एक ज़ोरदार दस्तक है।

इस आयोजन को नगर, प्रदेश के उदारमना नागरिकों, बैंक तथा अन्य सार्वजनिक प्रतिष्ठानों का भी भरपूर सहयोग और प्रोत्साहन प्राप्त है।

शरद् व्याख्यानमाला

समिति की मान्यता है कि हिंदी भाषा की समृद्धि के लिए साहित्यिक रचनाओं के अतिरिक्त साहित्येतर ज्ञान–विषयों पर अधिक–से–अधिक लेखन की आवश्यकता है। इसी विचार से प्रेरित होकर विख्यात कवि एवं कलाकार, स्वर्गीय श्री नरेश मे. हता की स्मृति में सन् 2001 में वांङ्मय पुरस्कार स्थापित किया गया। ज्ञान विषयों और मौलिक लेखन को प्रेरित करने और उनपर गहन चिन्तन की प्रक्रिया प्रारंभ करने के उद्देश्य से शरद् व्याख्यान माला सन् 2003 से प्रारम्भ की गई। शिक्षा, समाज, संस्कृति, काल चिंतन, विज्ञान, इतिहास, राजनीति जैसे गंभीर विषयों पर विचार का सर्वथा नया प्रवाह प्रारम्भ करने के समिति के प्रयास को विद्वत जगत् से मिली सराहना ने शीघ्र ही राष्ट्रीय परिदृश्य पर स्थापित कर दिया। नरेश मेहता स्मृति वांङ्मय पुरस्कार को भी सन् 2003 से व्याख्यान–माला में देने का निर्णय पुरस्कार और व्याख्यान–माला के अन्तर्संबंधों को स्पष्ट करने में सहायक हुआ। इस व्याख्यान–माला में दिए गए व्याख्यानों को 'मंथन' शीर्षक से पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया जाता है।

वसंत व्याख्यान–माला

सन् 2003 में समसामयिक विषयों पर विचार की परंपरा को अधिष्ठित करने के उद्देश्य से वसंत व्याख्यान–माला का आयोजन प्रारंभ किया गया। इसका शुभारंभ सर्वोच्च न्यायालय के तत्कालीन न्यायमूर्ति, श्री रमेशचन्द्र लाहोटी ने किया। समिति के इन आयोजनों से जहाँ भोपाल के प्रबुद्ध वर्ग को देश के विख्यात विचारकों को सुनने का अवसर मिला, वहीं उन विचारों का विश्लेषण कर स्वयं निष्कर्ष निकालने का मौका मिला। इस तरह हिंदी भवन विचारों की अभिव्यक्ति का मुक्त मंच बन गया और समाज के सामने चिंतन के लिए ऐसे विषय प्रस्तुत किए गए, जिनकी उपेक्षा की जाती रही है।

हिंदीतर भाषी हिंदी सेवी सम्मान

भारतीय भाषाओं में पारस्परिक सद्भाव एवं सार्थक संवाद बनाए रखने के उद्देश्य से वर्ष 1994 से प्रारंभ यह सम्मान समारोह म. प्र. के महामहिम राज्यपाल महोदय की गरिमामयी उपस्थिति में संपन्न होता है, जिसमें प्रत्येक भारतीय भाषा के एक हिंदी सेवी को हिंदीतर लेखकों की हिंदी में लिखी गई श्रेष्ठ कृतियों को भी पुरस्कृत किया जाता है।

विविध प्रतिष्ठित सम्मान/पुरस्कार

श्री नरेश मेहता वांङ्मय पुरस्कार

ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त श्री नरेश मेहता की अपेक्षा के अनुरूप साहित्येतर लेखन और चिंतन को प्रोत्साहित करने के प्रयोजन से श्रीमती महिमा मेहता द्वारा नरेश जी की स्मृति में 21,000/– के पुरस्कार की स्थापना की गई थी। वर्ष 2005 में इस राशि को बढ़ाकर 31,000/– कर दी गई है।

श्री शैलेश मटियानी स्मृति चित्रा–कुमार कथा पुरस्कार

समिति युवाओं की अधिक–से–अधिक भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु प्रयासरत है। इस दिशा में युवा कथाकारों के प्रथम कहानी–संग्रह के लिए विख्यात कथाकार, स्व. शैलेश मटियानी की स्मृति में 5,000/– रुपयों का एक पुरस्कार प्रारंभ किया गया है। इस हेतु यू. के. की गीतांजलि संस्था के संस्थापक अध्यक्ष, डॉ. कृष्ण कुमार ने पुरस्कार के संचालन के लिए समिति को एक लाख रुपए की राशि का चेक प्रदान किया। सन् 2008 से पुरस्कार राशि बढ़ाकर 11,000/– कर दी गई है।

श्री वीरेन्द्र तिवारी स्मृति रचनात्मक पुरस्कार

गांधीवादी विचारों के अनुरूप हिंदी में लेखन और कार्य करने वाले विद्वान को यह पुरस्कार दिया जाता है। इसकी राशि 21,000/– रुपए है।

श्री सुरेश शुक्ल 'चन्द्र' नाट्य पुरस्कार

अखिल भारतीय स्तर पर प्रकाशित मौलिक हिंदी नाटक/एकांकी संग्रह या कविता कृति के रचनाकार के लिए यह पुरस्कार वर्ष 2013 से आरंभ किया गया। इसकी राशि 11,000/– है।

श्रीमती हुक्मदेवी स्मृति प्रकाश पुरस्कार

किसी अहिंदी भाषी लेखक/लेखिका द्वारा हिंदी में लिखित पुस्तक एवं प्रकाशित रूपक/निबंध/समीक्षा/व्यंग्य/रेखाचित्र/पत्र विधा की पुस्तक (जो कम–से–कम 80 पृष्ठों की हो) पर यह पुरस्कार वर्ष 2014 से आरंभ किया गया है। इसकी राशि 5,000/– है। यह साहित्यिक पुरस्कार अहिंदी भाषी हिंदी सेवी सम्मान समारोह के अवसर पर दिया जाता है।

पूरे विश्व को अनूठा संदेश देने वाले पर्वों, जैसे दीपावली और होली पर म. प्र. रा. भा. प्रचार समिति एवं हिंदी भवन न्यास के संयुक्त प्रयास से ये पर्व उत्साहपूर्वक मनाए जाते हैं। इन आयोजनों का उद्देश्य भारतीय परम्पराओं के प्रति लोगों की आस्था पुष्ट करना है। दीपावली मिलन समारोह में सांस्कृतिक प्रस्तुतियों के साथ समाज को गौरवान्वित करने वाले वरिष्ठ साधकों को सम्मानित किया जाता है। इसका उद्देश्य समाज के वरिष्ठ जनों के प्रति सम्मान–भाव विकसित करना है।

होली मिलन कार्यक्रम समिति का अत्यन्त लोकप्रिय कार्यक्रम है। इस रंगारंग आयोजन में प्रदेश व देश के आंचलिक होली गीतों की प्रस्तुति के साथ हास्य–व्यंग्य की फुहारें भी समाहित होती हैं।

हिंदी दिवस और विश्व हिंदी दिवस

प्रतिवर्ष 14 सितम्बर को हिंदी दिवस के माध्यम से हिंदी के पक्ष में वातावरण बनाने एवं हिंदी की बात जन–जन तक पहुँचाने के उद्देश्य से कार्यक्रम आयोजित किया जाता है एवं हिंदी में कार्य/हस्ताक्षर करने की शपथ दोहराई जाती है। हिंदी पखवाड़े में ही प्रतिभा–प्रोत्साहन प्रतियोगिता व समापन पर हिंदीतर भाषी सेवी सम्मान समारोह आयोजित किए जाते हैं। इसी प्रकार 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस पर भी व्याख्यान एवं संगोष्ठी आयोजित की जाती है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य विश्व मंच पर हिंदी को प्रतिष्ठित करने के विचार को शक्ति प्रदान करना है।

राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ

विगत छः–सात वर्षों से समिति हिंदी को देश और विश्व स्तर पर यथोचित प्रतिष्ठा दिलवाने की दिशा में विशेष प्रयास कर रही है। इस दिशा में प्रतिवर्ष राष्ट्रीय संगोष्ठियों का आयोजन किया जाता है। विगत वर्षों में 'हिंदी का वर्तमान और भविष्य दृष्टि', 'हिंदी और भारतीय भाषाओं के बीच सार्थक संवाद की आवश्यक्ता', 'डॉ. राममनोहर लोहिया; वर्तमान संदर्भ में', 'निराला

के काव्य में सांस्कृतिक स्वर' आदि विषयों पर गोष्ठियाँ की गईं।

अंतरंग गोष्ठियाँ

समिति द्वारा समसामयिक विषयों पर विशेषज्ञों के व्याख्यान तथा साहित्य और वांङ्मय की विभिन्न विधाओं पर रचना–पाठ के कार्यक्रम भी 'अंतरंग' शृंखला के अन्तर्गत प्रतिमाह आयोजित किए जाते हैं।

समिति की संयुक्त भागीदारी

समिति के वार्षिक प्रतिष्ठित आयोजनों में मुख्य अतिथि, अध्यक्ष एवं वक्ता के रूप में पधारने वाले विद्वान अतिथियों, सुधी सहयोगियों और जागरूक मीडिया के माध्यम से विभिन्न संस्थाएँ भाषाई, साहित्यिक और बौद्धिक चेतना से सम्पन्न कार्यक्रमों के आयोजन करने के लिए संस्था अग्रसर होने लगी है। भारतीय उच्च शिक्षा संस्थान, शिमला और इलाहाबाद संग्रहालय, नेशनल बुक ट्रस्ट, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, मध्य प्रदेश लेखक संघ, दुष्यंत कुमार संग्रहालय, समकालीन साहित्य सम्मेलन मुम्बई, माखनलाल चतुर्वेदी पत्रकारिता एवं शोध विश्वविद्यालय तथा राष्ट्रीय अकादमी, रुपाम्बरा कोलकाता और निराला सृजन पीठ के साथ मिलकर हिंदी भवन में संयुक्त आयोजन भी किए जाते हैं।

प्रतिभा–प्रोत्साहन प्रतियोगिताएँ

युवा पीढ़ी को भाषा, साहित्य और संस्कृति से जोड़ने के उद्देश्य से समिति ने बारह वर्षों से 9वीं से 12वीं कक्षाओं के छात्र–छात्राओं के लिए प्रतिभा–प्रोत्साहन प्रतियोगिता की विशिष्ट पहल की है। इसके अंतर्गत निम्न प्रतियोगिताएँ दो चरणों में आयोजित की जाती हैं। प्रथम, शाला स्तर पर तथा द्वितीय, ज़िला स्तर पर।

'हम भारतीय अभियान'

सात संकल्पों वाला 'हम भारतीय अभियान' समिति का राष्ट्रीय कार्यक्रम है। इसका संदेश प्रदेश के गाँव–गाँव तक पहुँचाने के लिए समिति अलग–अलग ज़िलों में 'हम भारतीय अभियान' संचालित करती है। समिति का उद्देश्य है कि हिंदी के माध्यम से भारतीयों में राष्ट्रीयता का भाव प्रबल हो और वे राष्ट्र–निर्माण में अपना रचनात्मक योगदान देने के लिए आगे आएँ। पर्यावरण के प्रति जागरूकता, जातिगत व धर्मगत भेदभाव से मुक्त होकर हर नागरिक में भारतीय होने का गौरव–बोध जागृत हो। वृक्षारोपण, स्वच्छता–अभियान, साक्षरता–अभियान, सामाजिक समरसता बढ़ाने वाले सांस्कृतिक आयोजन इस अभियान के अंग हैं। महात्मा गांधी जी के अनुयायी, स्व. माननीय श्री मधुकर राव चौधरी जी ने 'सप्तपदी' अभियान की शुरुआत महात्मा गांधी जी की कर्मभूमि, वर्धा से प्रारंभ की थी। सातों पदों को क्रमवार दुहराया जाता है।

छिन्दवाड़ा, भारत
goverdhanyadav44@gmail.com

22

भाषा की इच्छा मृत्यु

– डॉ. रवीन्द्र अग्निहोत्री

हमारी वर्तमान सरकार का नारा है – 'सबका साथ : सबका विकास'। सामान्यतया लोग आर्थिक विकास को ही विकास का पर्याय समझते हैं। ऐसे लोग यह भूल जाते हैं कि विकास का भवन जिन स्तंभों पर टिका होता है, उनमें प्रमुख है भाषा का स्तंभ। भाषा के बिना तो विकास की कल्पना तक नहीं की जा सकती। मानव जाति में विकास की शुरुआत ही तब हुई जब मनुष्य को भाषा का वरदान मिला। इसलिए मनुष्य का विकास और उसकी भाषा का विकास एक–दूसरे के पर्याय हैं। आज अंग्रेज़ी विश्व की प्रमुख भाषा है, पर सदा से वह इस स्थान पर नहीं थी। जब ब्रिटेन विकसित देश नहीं था, तब जॉन फ़्लोरियो (1553-1625) ने एक शब्दकोश 'ए वर्ल्ड ऑफ़ वड्र्स' (1598) नाम से बनाया। इस कोश में अंग्रेज़ी के केवल 2,449 शब्द थे और X, Y, Z से शुरू होने वाला तो कोई शब्द था ही नहीं। विकास की दिशा में अग्रसर हो जाने के बाद 18वीं शताब्दी में जब डॉ. सैमुअल जॉनसन (1709–1784) ने 'ए डिक्शनरी ऑफ़ द इंग्लिश लैंग्वेज' (1755) नामक कोश बनाया तब उसमें 42,773 शब्द थे। आज अंग्रेज़ी–भाषी देशों का विकास और भी अधिक हो चुका है। अतः अब 21वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ऑक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी के 2014 के संस्करण में लगभग छः लाख शब्द हैं। यह प्रमाण है कि समाज का विकास और भाषा का विकास अन्योन्याश्रित होते हैं।

विकास ऊपर से आरोपित नहीं किया जा सकता। विकास तभी होता है जब जनता की उसमें सहभागिता होती है और जनता का सहयोग जनता की भाषा में ही मिल सकता है :

'यद्वैवाङ नाभविष्यन्न धर्मो नाधर्मो व्यज्ञापयिष्यत/न सत्यमं नानृतं साधु नासाधु न

हृदयज्ञो ना हृदयज्ञो वागेवैततसर्वम विज्ञापयति वाचमुपास्वेति।' (छान्दोग्योपनिषद् 7/2/1)

(यदि वाणी का अस्तित्व न होता, तो धर्म और अधर्म, सत्य और असत्य, प्रिय और अप्रिय का ज्ञान नहीं हो सकता था। वाणी द्वारा ही इनका ज्ञान होता है। इसलिए वाणी की उपासना करो।)

जन्म : 11.05.1937, लखनऊ

शिक्षा :
- ❖ इंडस्ट्रियल इंटर कॉलिज, लखनऊ
- ❖ राजकीय इंटर कॉलिज, बरेली
- ❖ स्त्री–शिक्षा की प्रसिद्ध सावासी संस्था, वनस्थली विद्यापीठ विश्वविद्यालय

व्यवसाय :
- ❖ भारतीय स्टेट बैंक, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई में राजभाषा विभाग के अध्यक्षपद से 1995 में सेवानिवृत्त
- ❖ सेवानिवृत्ति के पश्चात् बैंक में सलाहकार
- ❖ राष्ट्रीय बैंक प्रबंध संस्थान, पुणे में प्रोफ़ेसर–सलाहकार
- ❖ एस.बी. आई. ओ.ए. प्रबंध संस्थान, चेन्नई में वरिष्ठ प्रोफ़ेसर
- ❖ अनेक विश्वविद्यालयों एवं बैंकिंग उद्योग की विभिन्न संस्थाओं से सम्बद्ध

प्रकाशन :
- ❖ हिंदी, अंग्रेज़ी तथा संस्कृत में 500 से अधिक लेख–समीक्षाएँ प्रकाशित
- ❖ 15 शोध–लेख प्रकाशित
- ❖ 40 से अधिक पुस्तकों का लेखन एवं अनुवाद

पुरस्कार :
- ❖ कई पुस्तकों पर अखिल भारतीय पुरस्कार
- ❖ विद्या वाचस्पति, साहित्य शिरोमणि जैसी मानद उपाधियाँ, पुरस्कार एवं सम्मान
- ❖ राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित
- ❖ राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर का प्रतिष्ठित लेखक सम्मान
- ❖ उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ कामदन मोहन मालवीय पुरस्कार
- ❖ एन.सी.ई.आर.टी. की शोध परियोजना निदेशक एवं सर्वोत्तम शोध पुरस्कार
- ❖ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का अनुसंधान अनुदान
- ❖ अंतरराष्ट्रीय कला एवं साहित्य परिषद् का राष्ट्रीय एकता सम्मान

हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने भाषा के इस महत्त्व को समझा है। इसीलिए, वे देश में जहाँ भी जाते हैं, जनभाषा हिंदी में ही बोलते हैं। विदेशों में भी मोदी जी प्रायः हिंदी का ही प्रयोग करते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने हिंदी व्यवहार के नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। उनके इस प्रयोग से राष्ट्रभाषा अर्थात् संपर्क भाषा के रूप में ही नहीं, राजभाषा के रूप में भी हिंदी की स्थिति मज़बूत हुई और विश्व में उसकी पहचान बनी।

पर भाषा के संबंध में हमारे समाज की स्थिति बड़ी दयनीय है। अंग्रेज़ों की गुलामी से आज़ादी हमें भले ही मिल गई हो, एक बड़ा वर्ग अंग्रेज़ी की गुलामी छोड़ना ही नहीं चाहता। उसे बी. बी. सी., विश्व बैंक, ईसाई मिशनरियों की अंग्रेज़ी प्रचार–प्रसार की योजनाओं से विशेष प्यार है। वह हिंदी के प्रसार से आतंकित है, इसलिए वह हिंदी को तिरस्कृत करने के लिए तरह–तरह के षड्यंत्र रचता रहता है। कभी वह हिंदी की बोलियों को 'स्वतंत्र भाषा' बताकर आमने–सामने खड़ा कर देता है, तो कभी हिंदी के प्रचलित शब्दों को भी हटाकर अंग्रेज़ी के शब्द लाने का प्रयास करता है। प्रधानमंत्री को 'पी. एम.', मुख्यमंत्री को 'सी. एम.', उत्तर प्रदेश को 'यू. पी.', मध्य प्रदेश को 'एम. पी.' जैसे प्रयोग इसके उदाहरण हैं। ऐसा ही काम वे दफ़्तरों में करते हैं और इसके लिए कंप्यूटर की आड़ तो ऐसे लेते हैं मानो कंप्यूटर हिंदी का जन्मजात बैरी हो। सरकार ने तो कंप्यूटर पर हिंदी में (तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी) काम करने की सुविधा उपलब्ध करा दी है, पर उन सुविधाओं का कोई उपयोग करना ही नहीं चाहता। कुछ ही समय पहले कमज़ोर वर्ग को ध्यान में रखकर दो योजनाएँ बनाई गईं – प्रधानमंत्री जीवन ज्योति बीमा योजना और प्रधानमंत्री सुरक्षा बीमा योजना। सरकार ने तो इनके नाम भी जनभाषा हिंदी में रखे और इनके फ़ॉर्म हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में तैयार करवाए, पर बैंकों में बैठे अंग्रेज़ी–प्रेमियों ने इन्हें केवल अंग्रेज़ी में छपवा लिया। डाकघर में आप रजिस्ट्री कराएँ या मनिऑर्डर भेजें और उनपर पता हिंदी में लिखें, पर डाकघर आपको उनकी रसीद अंग्रेज़ी में ही देगा। एक संस्था के राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित गृहपत्रिका डाक से आई। मेरा पता तो हिंदी में लिखा था, पर प्रेषक के स्थान पर राजभाषा विभाग की मुहर केवल अंग्रेज़ी में लगी थी।

एक बाबा जी स्वदेशी का प्रचार करते हैं और विदेशी कंपनियों के उत्पादों के स्थान पर देशी कंपनियों के उत्पाद अपनाने की प्रेरणा देते हैं। उन्होंने अपने भी कुछ उत्पाद बनाए हैं। उनके कुछ उत्पादों की गुणवत्ता की शिकायत मैंने ई–मेल से हिंदी में भेजी। उत्तर तो तुरंत आया, पर अंग्रेज़ी में आया। अगली शिकायत मैंने इसी विषय पर भेजी, तो फिर उत्तर आया ही नहीं। तकाज़ा करने पर भी नहीं आया। उनके स्वदेशी प्रेम में विदेशी भाषा का अनावश्यक प्रयोग बाधक नहीं। 'मॉल' के रूप में जो नए बाज़ार खुले हैं, लोग वहाँ से लौकी, तुरई, कद्दू, टमाटर जैसी चीजें भी अंग्रेज़ी में लेकर आते हैं। यूनेस्को ने प्रतिवर्ष 21 फ़रवरी के दिन को मातृभाषा दिवस के रूप में मनाने का विश्व से अनुरोध लगभग दो दशक पहले 1999 में किया था। हमारे देशवासी 'वेलेंटाइन डे', 'चॉकलेट डे', 'रोज़ डे', 'फ्रेंड्स डे', 'मदर डे', 'फ़ादर डे' आदि के तो दीवाने बने, पर क्या कभी किसी ने 'मदर लैंग्वेज डे' अर्थात् मातृभाषा दिवस मनाया? अपनी भाषा के प्रति उपेक्षा का यह भाव हमें जिस दिशा में ले जा रहा है, उसका अनुभव हम आज नहीं कर पा रहे हैं, पर संस्कृत का उदाहरण हमें चेतावनी दे रहा है।

संस्कृत को हम भाषा नहीं, 'देवभाषा' कहते हैं, क्योंकि वह हमारी संस्कृति, सामाजिकता, जातीयता, राष्ट्रीयता और भारतीयता का प्रतीक है। अतः उसका हमारे जीवन में विशेष महत्त्व है। यों तो हर संपन्न भाषा में महत्त्वपूर्ण और महत्त्वहीन सभी तरह का साहित्य होता है, पर किसी भाषा को सम्मान उस साहित्य के कारण ही मिलता है, जो कालजयी होता है। संस्कृत की भी यही स्थिति है, फिर भी यदि तुलनात्मक रूप से देखें, तो उसमें उच्चकोटि के ललित साहित्य के साथ–साथ उच्च बौद्धिक जीवन से संबंधित ज्ञान–विज्ञान के साहित्य का भी बाहुल्य है, जो गर्व करने योग्य, गुणात्मक दृष्टि से अत्यंत उच्च, परिमाण में विपुल और विविधता में अनुपम है, अतः अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उसमें एक ओर उस युग में की गई मौलिक खोजें, अद्भुत आविष्कार, गहन दार्शनिक चिंतन और विभिन्न विषयों की गहरी जाँच–पड़ताल है, तो दूसरी ओर आयातित ज्ञान भी है। संस्कृत वाङ्मय से अनभिज्ञ कुछ लोग यह सोचते हैं कि संस्कृत में ज्ञान–विज्ञान से संबंधित साहित्य बहुत कम है, बस धार्मिक साहित्य भरा पड़ा है। उन्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि संस्कृत में धार्मिक साहित्य तो वस्तुतः 5 प्रतिशत ही है। जिस कालजयी साहित्य के कारण संस्कृत को विश्व भर में सम्मान मिला, वह ज्ञान–विज्ञान से ही संबंधित है :

'यस्तर्केण अनुसंधते स धर्मो वेद नेतरः?' (महाभारत)

(हिंदी अन्वयार्थ : जो तर्क के आधार पर परखा और सिद्ध किया जा सकता है, वही धर्म है, दूसरा नहीं। इसलिए हिंदू धर्म को कोई भी पौराणिक या ऐतिहासिक घटनाओं से बाँधे रखना, अनुचित है। अच्छी घटनाओं से ज़रूर सीखें।)

अनेक विद्वानों के अनुसार लाखों वर्षों से संस्कृत पूरे देश की भाषा रही है। विद्वानों का तो मानना है कि सुदूर अतीत में संस्कृत केवल भारत की नहीं, पूरे विश्व की भाषा रही है। (रघुनन्दन शर्मा, पुनरावृत्ति 1985, वैदिक संपत्ति, दयानंद संस्थान, नई दिल्ली, पृ. 204–240) विश्व के विभिन्न भागों में, निकटवर्ती श्रीलंका से लेकर अमेरिका तक ऐसे अनेक उदाहरण आज भी मिलते हैं, जिनसे पता चलता है कि अतीत में वहाँ संस्कृत का प्रयोग होता था। श्रीलंका के महाकवि कुमारदास (600 ई.) के संस्कृत में लिखे 'जानकी हरण' काव्य से अनेक लोग परिचित हैं। एशिया के तमाम देशों में नेपाल, म्यांमार, थाईलैंड, कम्बोडिया, लाओस, विएतनाम, मलेशिया आदि से लेकर कोरिया, चीन, जापान, ईरान, इराक, मिस्र आदि में स्थित कई स्थानों के नाम, व्यक्तियों के नाम आदि में ही नहीं, अन्य कार्यों के लिए भी संस्कृत का प्रयोग भारत के समान ही होता था। (डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, पांचवाँ संस्करण 1889, भारतीय आर्यभाषा और हिंदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 78–94) मिस्र के अल–अमर्ना नामक स्थान पर खुदाई से पता चला है कि ईसा से 1500 वर्ष पूर्व वहाँ के राजाओं के नाम संस्कृत में ही होते थे, जैसे आर्तमन्य, यशदत्त, सुत्तर्ण आदि। इससे भी अधिक रोचक बात एक संधि–पत्र से पता चली। ईसा से लगभग 1400 वर्ष पूर्व वहाँ हित्ती और मितन्नी राज्यों के बीच एक संधि की गई, जिसमें इंद्र, वरुण, और नासत्यौ (अश्विनी कुमार) इन तीन वैदिक देवताओं का उल्लेख है। इससे यह पता चलता है कि उस समय मिस्र, सीरिया, मेसोपोटामिया आदि में आर्यभाषा संस्कृत और आर्य सभ्यता वर्तमान थी। (रामधारीसिंह 'दिनकर', पुनरावृत्ति 1993, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 49) जर्मन भाषा वैज्ञानिक कुर्ट शिल्डमैन (1909–2005) के अनुसंधानों से पता चलता है कि अमेरिका और पेरू की अनेक प्राचीन गुफ़ाओं (Illinois cave archive and Tayos Cave, Ecuador) से प्राप्त शिलालेख प्राचीन संस्कृत में लिखे हुए हैं।

भाषा की दृष्टि से प्राचीन ही नहीं, आधुनिक विद्वानों ने भी संस्कृत को अद्वितीय वैज्ञानिक भाषा कहा है। सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक ब्लूमफ़ील्ड (1887–1949) ने और अन्य अनेक विद्वानों ने भी संस्कृत व्याकरण को मानव मेधा का सर्वोच्च स्मारक कहा है। नासा के प्रसिद्ध वैज्ञानिक रिक ब्रिग्स ने तो संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि को एकमात्र ऐसी मानव भाषा माना है, जिसका उपयोग कंप्यूटर में करके 'बिट' और 'बाइट' की भाषा से मुक्ति पाई जा सकती है। रिक ब्रिग्स के इस कथन को मानने से प्रयोगकर्ता हिंदी का संवर्धन करेगा। गीता में श्रीकृष्ण ने कहा :

'मैंने यह ज्ञान बताया इसपर विचार करो फिर जो चाहो सो करो, यथेच्छसि तथा कुरु।'

'सर्वगुण संपन्न भाषा' संस्कृत की वर्तमान स्थिति किसी से छिपी नहीं है। जब कोई उसे 'मृत भाषा' कहता है, तब हम तिलमिला जाते हैं और उसे जीवित सिद्ध करने के लिए तरह–तरह के तर्क देने लगते हैं। हम कहते हैं कि आज भी संस्कृत का अध्ययन किया जाता है। उसमें पत्रिकाएँ निकलती हैं। कविता, कहानी आदि लिखी जाती हैं। दूरदर्शन पर संस्कृत में समाचार भी प्रसारित किए जाते हैं। पूजा–पाठ एवं विवाह जैसे प्रमुख संस्कार के अनेक कार्य संस्कृत में ही संपन्न किए जाते हैं। कुछ घरों में संभाषण संस्कृत में ही किया जाता है। टी.वी. पर प्रसारित एक समाचार के अनुसार कर्नाटक के तो एक गाँव में सभी लोग संस्कृत में बात करते हैं। कुछ वर्ष पहले शंकराचार्य पर संस्कृत में एक फ़िल्म भी बनी थी। अनेक पाठशालाओं एवं गुरुकुलों में संस्कृत माध्यम से शिक्षा दी जाती है। लुप्तप्राय भाषाओं की श्रेणी में आने के लिए 10,000 से कम बोलने वाले लोग होते हैं :

'सवा अरब भारतीयों में से 80 करोड़ के संस्कार संस्कृत में ही होते हैं, पर केवल 14,963 लोगों की मातृभाषा संस्कृत है।'

अतः उसे 'मृतभाषा' कहना गलत है। ऐसे तर्कों के बावजूद हम जानते हैं कि आज संस्कृत न हमारे चिंतन की भाषा है, न बौद्धिक जीवन की, उसका प्रयोग सार्वजनिक शैक्षिक, अकादमिक और सामाजिक जीवन में नहीं होता। अब तो समाज की स्थिति यह है कि अगर कोई 'गीता' जैसा संस्कृत ग्रंथ पढ़ना चाहे, तो अंग्रेज़ी में उसके अनुवाद या व्याख्या की तलाश करता है। जो

कभी विश्व भाषा थी, वह आज किसी क्षेत्र की भी भाषा नहीं रह गई है। यह पराभव कैसे हुआ?

जो लोग यह सोचते हैं कि देश पर विदेशियों का शासन रहा, उन्होंने बलात् अपनी भाषाएँ हम पर 'थोप' दीं और इन भाषाओं ने संस्कृत को नष्ट कर दिया, वे भूल कर रहे हैं, क्योंकि जिनपर विदेशी भाषाएँ थोपने का आरोप है, उनमें से अनेक लोगों ने संस्कृत का अध्ययन भी किया, उसे प्रश्रय भी दिया, उसके विस्मृत हुए साहित्य की खोज भी की और प्रक्षेपयुक्त ग्रंथों की प्रामाणिक प्रतियाँ तैयार करने के जटिल कार्य भी किए। वस्तुतः कोई भाषा किसी दूसरी भाषा को नष्ट नहीं करती, नष्ट करने वाले तो भाषा के प्रयोक्ता होते हैं।

वे नष्ट कैसे करते हैं, यह समाज–भाषा वैज्ञानिकों ने अध्ययन करके बताया है। उनका कहना है कि भाषा मानव समाज की ऐसी संपदा है, जिसका हस्तांतरण आगामी पीढ़ी को सामाजिक प्रयोग, ज्ञान–विज्ञान के माध्यम एवं शिक्षा के द्वारा किया जाता है, पर जब किसी भाषा के प्रयोगकर्ता किसी दूसरी भाषा के आकर्षण, दबाव या लालच से अपनी भाषा का प्रयोग करना बंद कर देते हैं तब पैतृक भाषा का हस्तांतरण आने वाली पीढ़ियों को नहीं होता और वह 'मर' जाती है अर्थात् प्रचलन से बाहर हो जाती है।

यह ध्यान देने योग्य है कि भाषा की मृत्यु एक झटके में नहीं होती। उसके 'मरने' की प्रक्रिया बहुत धीमी होती है और कभी–कभी तो इतनी धीमी होती है कि पकड़ में ही नहीं आती। हम जानते हैं कि भाषा का प्रयोग सामान्य और विशिष्ट, दोनों प्रकार के कामों के लिए होता है, पर यह देखा गया है कि जब किसी भाषा के प्रयोगकर्ता अपनी भाषा को छोड़ दूसरी भाषा का प्रयोग शुरू करते हैं, तब शुरू में वे विशिष्ट कामों के लिए ही दूसरी भाषा का प्रयोग करते हैं। सामान्य कामों के लिए अपनी पैतृक भाषा को बचाए रखते हैं और सोचते हैं कि इससे उनकी भाषा जीवित बनी रहेगी, पर यह उनकी भूल है, क्योंकि इस स्थिति में उनकी पैतृक भाषा के मरने की गति कुछ धीमी तो हो जाती है, पर अन्दर–ही–अन्दर वह कमज़ोर होती चली जाती है। कुछ उसी तरह जैसे किसी को क्षय रोग (टी. बी.) हो जाए, उसका समुचित उपचार न किया जाए, अतः स्वास्थ्य धीरे–धीरे कमज़ोर होता जाए और अंत में उसकी मृत्यु हो जाए। उधर, जिस भाषा का प्रयोग विशिष्ट कामों के लिए किया जाता है, वह समय के साथ हावी होती जाती है और फिर पैतृक भाषा सामान्य कामों से भी बाहर होने लगती है। इस प्रकार अपनी भाषा को मरने के लिए छोड़ देने के लिए कोई और नहीं, उस भाषा के वे प्रयोक्ता ही ज़िम्मेदार होते हैं, जिन्होंने अपनी भाषा का प्रयोग बंद कर दिया है। जो वैज्ञानिक भाषा थी, ज्ञान–विज्ञान तथा उच्च बौद्धिक जीवन का आधार थी, उस संस्कृत का प्रयोग हमने ही स्वेच्छा से बंद किया, यही भाषा की इच्छा मृत्यु है।

आज हिंदी के प्रयोग की उपेक्षा करके क्या हम उसी दिशा में बढ़ना चाहते हैं? अगर नहीं, तो हमें समाज–भाषा वैज्ञानिकों के बताए उन दो सिद्धांतों पर ध्यान देना होगा, जो उन्होंने किसी भी भाषा के जीवित रहने, विकास करने और पुष्टि के लिए आवश्यक बताए हैं :

1. सबसे पहला तो यह कि उसके प्रयोग में नई पीढ़ी के लोग अग्रणी भूमिका निभाएँ, वे यह उत्तरदायित्व संभालें और यह तभी संभव होगा जब यही भाषा उनके लिए सामाजिक प्रयोग और ज्ञान–विज्ञान का माध्यम हो।
2. दूसरा यह कि उसका प्रयोग केवल बोलचाल या कविता या कहानी जैसे पारंपरिक कामों के लिए नहीं, निरंतर नए–नए कामों के लिए, ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के लिए, व्यापार–वाणिज्य जैसी गतिविधियों के लिए एवं प्रौद्योगिकी के लिए किया जाए। (द्रष्टव्य : Andrew Dalby, 2002, Language in Danger, The Loss of Linguistic Diversity and the Threat to Our Future, Columbia University)।

अभी तक हम इन दोनों सिद्धांतों की उपेक्षा करते रहे हैं। बच्चों को शिक्षा अंग्रेज़ी माध्यम से दे रहे हैं और अपनी भाषा का प्रयोग केवल बोलचाल एवं कविता, कहानी आदि सामान्य कामों के लिए कर रहे हैं। हम इस तथ्य की उपेक्षा कर रहे हैं कि भाषा को जीवंत बनाने में बोलचाल की भाषा और ललित साहित्य की भूमिका सीमित होती है। देश पर पड़ोसी देशों ने आक्रमण किया, हमारे कवियों ने हुंकार भरी :

''हम सोए शेर हैं, हमें छेड़ो मत, जाग गए तो तुम्हें छोड़ेंगे नहीं, हमारा खून खौल रहा है, हम महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी की संतानें हैं, तुम्हें मसल देंगे, कुचल देंगे, एक के बदले दस को मारेंगे, एक इंच भी भूमि नहीं देंगे, इत्यादि।''

निश्चित रूप से ऐसे शब्द हमारे सैनिकों में जोश भरने के लिए आवश्यक हैं और यह काम ललित साहित्य ही कर सकता है, पर वह विजय का पर्याय नहीं बन सकता। विजय के लिए युद्ध सामग्री चाहिए, पराक्रमी सैनिक चाहिए, युद्ध कला का ज्ञान चाहिए, युद्ध के लिए अपेक्षित रणनीति बनाने की योग्यता चाहिए, समुचित मार्गदर्शन चाहिए और इसके लिए ललित साहित्य नहीं, ज्ञान–विज्ञान का वह साहित्य चाहिए जो बौद्धिक जीवन को संपन्न बनाए, जो युद्ध कला में पारंगत करे तथा जिससे नए अस्त्र–शस्त्र बनाए जा सकें। इस साहित्य की ओर हम ध्यान नहीं दे रहे हैं और जो थोड़ा–बहुत तैयार हो रहा है, उसकी उपेक्षा करते आ रहे हैं।

इसी उपेक्षा का एक उदाहरण है भारतीय रिज़र्व बैंक के संरक्षण में पिछले लगभग तीन दशकों से चल रही बैंकिंग विषयों पर हिंदी में मौलिक पुस्तक लेखन की योजना, जिसके अंतर्गत पुस्तकें तो अनेक लिखी गईं, पर आम जनता की बात छोड़िए, कितने बैंक कर्मी इनसे परिचित हैं? क्या इन लेखकों का समाज ने, बैंकों ने कोई सम्मान किया? उन्हें कोई पुरस्कार, वेतन वृद्धि या विशेष पदोन्नति दी? बैंकों में अनेक खिलाड़ी हैं, इनमें से कुछ तो खेल में इतने व्यस्त रहते हैं कि बैंक का नियमित काम करने का उन्हें अवसर ही नहीं मिलता, फिर भी उन्हें खेल में उनकी उपलब्धियों के आधार पर पदोन्नति दी जाती है। क्या खेल ही हमारे लिए गर्व का विषय है, बौद्धिक लेखन नहीं?

मेरा मानना है कि केवल ललित साहित्य के बल पर हिंदी को राजभाषा बनाने का और शिक्षा के स्तर पर अंग्रेज़ी का विकल्प बनाने का स्वप्न देखना दिवास्वप्न ही सिद्ध होगा। यह स्वप्न तभी साकार होगा जब हम व्यावहारिक ज्ञान–विज्ञान के साहित्य के निर्माण और समाज में उसके सम्मान पर भी समुचित ध्यान दें। देर तो हो चुकी है, पर कहते हैं, 'जब जागो तभी सवेरा', क्योंकि हम कभी नहीं चाहेंगे कि प्राणवायु प्रदान करने वाली हमारी इन भाषाओं पर 'इच्छा मृत्यु' का आरोप लगे।

संदर्भ ग्रंथ :

1. रघुनन्दन शर्मा, पुनरावृत्ति 1985, वैदिक संपत्ति, दयानंद संस्थान, नई दिल्ली, पृ. 204–240
2. डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, पाँचवाँ संस्करण 1889, भारतीय आर्य भाषा और हिंदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 78–94
3. रामधारीसिंह 'दिनकर', पुनरावृत्ति 1993, संस्कृति के चार अध्याय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 49
4. Leonard Bloomfield (1887-1949), 1933, Language, Henry Holt and Company, New York
5. Salikoko Mufwene, December 2000, Magazine, University of Chicago
6. Andrew Dalby, 2002, Language in Danger, The loss of linguistic diversity and the threat to our future, Columbia University
7. छान्दोग्य उपनिषद् 7/2/1
8. महाभारत
9. गीता (18/63)

मेरठ, भारत
agnihotriravindra@yahoo.com

विद्वानों के वक्तव्य

23. उज़्बेकिस्तान में हिंदी भाषा का अध्ययन तथा अध्यापन : वर्तमान और भविष्य – डॉ. सिरोजिद्दिन सुल्तानमुरातोविच नुर्मातोव

24. वैश्विक हिंदी, भाषिक संपदा : विस्तार एवं संभावनाएँ – प्रो. वृषभ प्रसाद जैन

23

उज़्बेकिस्तान में हिंदी भाषा का अध्ययन तथा अध्यापन : वर्तमान और भविष्य

(विश्व हिंदी दिवस समारोह 2018 के उपलक्ष्य में प्रस्तुत वक्तव्य)

– डॉ. सिरोजिद्दिन सुल्तानमुरातोविच नुर्मातोव

आम तौर पर भाषा–शिक्षण किसी भाषा के बोलने, सुनने, पढ़ने और लिखने की शिक्षा देने की पद्धति पर आधारित है। इसका अनुसरण करते हुए हमारे संस्थान में गत वर्षों के दौरान तीन मुख्य परम्पराओं का शुभारंभ और रचनात्मक विकास हुआ था, जो क्रमशः तीन शिक्षात्मक आयामों या दिशाओं में परिवर्तित हो गयी थीं। अर्थात् हिंदी भाषा व साहित्य के अध्यापकों, अनुवादकों और शोधकर्ता विद्वानों की तैयारी करने का काम। आज तक इस प्रक्रिया के अंतर्गत कुल मिलाकर एक हज़ार से अधिक विशेषज्ञों की तैयारी की गयी है, जो वर्तमान में न केवल हमारे देश, बल्कि विदेशों में भी, जिनमें रूस, युक्रेन, कज़ाकिस्तान, किरगिज़स्तान, ताजिकिस्तान, जॉर्जिया, आज़रबयजान, क्यूबा, वियतनाम, पोलैंड, जर्मनी, बुल्गारिया, मंगोलिया, लिटोनिया जैसे छोटे और बड़े देश भी हैं, जो सफलतापूर्वक हिंदी क्षेत्र में कार्यरत हैं।

इसी पथ पर आगे बढ़ते हुए हमारी सबसे बड़ी उपलब्धि के रूप में इस बात पर विशेष ध्यान देना है कि गत अवधि में हमारे विभाग के अधिकांश प्राध्यापक पी.एच.डी. डिग्री प्राप्त करने के बाद एक साथ समान रूप से शिक्षात्मक तथा वैज्ञानिक शोध संबंधी काम करते आ रहे हैं। शोध–कार्य की प्रणाली में शिक्षा संबंधी पाठ्य-पुस्तकों एवं शब्दकोशों का निर्माण और पाठ्य-सामग्री का संकलन भी अनिवार्य रूप से प्रस्तुत है। इसी दिशा में स्वतंत्रता से पूर्व हमारे विभाग के यहाँ विश्वविद्यालयों के लिए रचित स्वर्गीय डॉ. रेना आउलोवा की पाठ्य–पुस्तक के अतिरिक्त, अन्य प्रौढ़ अध्यापकों के प्रयासों के फलस्वरूप उज़्बेकिस्तान के कई नगरों और प्रांतों में खुले हुए माध्यमिक स्कूलों के लिए भी काफ़ी मात्रा में विभिन्न कक्षाओं की पाठ्य सामग्रियाँ संकलित हुई थीं। निस्संदेह इसी सराहनीय कार्य में हमारे विभाग के बहुत से अध्यापकों ने सम्मिलित होकर अद्वितीय आत्म–त्याग से भाग लिया था।

इसी संदर्भ में वस्तुतः विदेशी भाषा–अध्यापन की प्रक्रिया

शिक्षा :

- 2000–2004 – पी.एच.डी.
- 2003– टाटा इंफ़ोटेक से कंप्यूटर कोर्स
- 1999 – एम.ए. हिंदी, जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय
- ताशकंद स्टेट इंस्टिट्यूट ऑफ़ ओरिएंटल स्टडीज़ से स्नातक की उपाधि

व्यवसाय :

- 1999 से अब तक – ताशकंद स्टेट इंस्टिट्यूट ऑफ़ ओरिएंटल स्टडीज़ में हिंदी प्राध्यापक के रूप में कार्यरत
- भारत और श्री लंका की सभ्यताओं एवं संस्कृतियों के बारे में शोध में विशेष रुचि

प्रकाशन :

- लगभग 30 हिन्दुस्तानी फ़िल्मों का हिंदी से उज़्बेक भाषा में अनुवाद किया है।
- Word-Formation Trend in South Asian Languages / Past and Present. Proceedings of the Conference on 50th anniversary of the South Asian Languages Department
- On Typology of Ordinal Numerals Formation in Central and South Asian Languages // Abstracts the Second International Symposium on Historical and Modern Links between Central and South Asia
- Concerning the Formation of Numerals in Central and South Asian Languages // the Second International Scientific Conference «Language, Culture and Society»
- A Comparison between Tamil and Uzbek Languages // A Report on the Conference of Uzbek Indologists
- हिंदी और तमिल भाषाओं के संख्यावाचक विशेषण के आकार–विज्ञान की विशेषताएँ
- On History of Sinhalese Languages // «Orientalist»
- On Astronautic Terminology in Sinhalese // Modern means of Communication and Pshycolinguistic problems of teaching of Scientific and Technical and Astro-aviacosmic Terminology in Higher Educational Establishments of Uzbekistan

- Functional specificity of Oriental International Lexicon (OIL) in the Languages of Central Asia and India // Cultures and Societies in Transition. India, Russia and other CIS countries (In collaboration with A.N.Shamatov)
- On phraseology units derived from Numerals in South Asian languages (with special reference to Hindi and Sinhalese) // Proceedings of the International Conference, dedicated to the 60th anniversary of the South Asian Languages Department
- Morphological and typological peculiarities of numerals of Hindi and Sinhalese // Modern means of Communication and Psycholinguistic problems of teaching of Scientific and Technical and Astro-aviacosmicTerminology in Higher Educational Establishments of Uzbekistan

हेतु आधारभूत समझे जाने वाले उद्देश्यों में से हमारे लिये निम्न उद्देश्य बहुत सुगम लग रहे हैं। कुछ लोग लेखक, दूसरे समूह के लोग अध्यापक और तीसरी श्रेणी वाले द्विभाषिया अर्थात् अनुवादक आदि बनने के लिए कई मातृभाषेतर भाषा पढ़ने की कोशिश करते हैं।

इससे अधिक यह बात भी बिलकुल सामान्य है कि असल में हर बच्चा अपनी मातृभाषा सीख लेता है। इस प्रक्रिया को भाषा का अर्जन (Language acquisition) कहते हैं। मातृभाषा सीख लेने के बाद कोई दूसरी भाषा सीखना भाषा अधिगम (Language learning) कहलाता है। अन्य भाषा अधिगम की समस्या के मोटे रूप से पाँच पक्ष हैं, उनमें से दो विशेष बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

पहला पक्ष अभिप्रेरणा (Motivation Stimulus) कहलाता है। किसी काम को करने या सीखने के पीछे अभिप्रेरणा जितनी तीव्र होती है, व्यक्ति उतने ही मनोयोग से उसे करने या सीखने के लिए प्रयत्न करता है।

दूसरा पक्ष भाषा है। यहाँ भाषिक पक्ष, विदेशी भाषा सीखने वाले की मातृभाषा तथा सीखी जाने वाली भाषा के बीच समानता और असमानता का प्रश्न उठता है। जो भाषिक तत्त्व समान होते हैं, उन्हें सीखने में कठिनाई नहीं होती, किंतु जो तत्त्व असमान होते हैं, उनमें कठिनाई होती है। यह असमानता जितनी अधिक होगी, कठिनाई भी उतनी ही अधिक होगी। सीखी जाने वाली भाषा से मातृभाषा की असमानता ही अन्य भाषा अधिगम में व्याघात उपस्थित करती है। इस व्याघात या व्यवधान (Interference) का ब्योरेवार पता लगाने के लिए व्यतिरेकी भाषा–विज्ञान (Contrastive Linguistics) का विकास हुआ है, जिसके आधार पर दोनों भाषाओं का व्यतिरेकी व्याकरण तैयार करते हैं, जिसे अंतरदर्शी व्याकरण (Differential Grammar) या अंतरण व्याकरण (Transfer Grammar) जैसे कई नामों से पुकारा गया है।

दरअसल उज़्बेकिस्तान में भारत विद्या की परम्पराओं का विकास, जो पिछले सत्तर वर्षों से होते आ रहा है, मुख्यतः भूतपूर्व सोवियत देश में कार्यरत मास्को और लेनिनग्राद के दो मौलिक भारतविद् स्कूलों की उपलब्धियों और अनुभवों के आधार पर उभर आया था। आजकल हमारे देश में हिंदी भाषा की उच्चतम शिक्षा का प्रतिनिधित्व करने वाले अध्येताओं में वरिष्ठ डॉ. मोस्काल्योव और प्रो. सेरेब्रयाकोव जैसे प्राध्यापक शिक्षक थे। कारण, विभाग की आधुनिक कार्य–प्रणाली में उपर्युक्त स्कूलों की परम्पराएँ अभी तक सुरक्षित हैं। हमारे विभाग को दक्षिण एशियाई भाषाओं का विभाग कहा जाता है।

गत अवधि के दौरान हमारे यहाँ नवीन भारतीय भाषाओं तथा साहित्य पर विशेषज्ञों की तैयारी के उद्देश्य से बहुत–सी पाठ्य–पुस्तकें, शब्दकोश और दूसरी पाठ्य–सामग्रियाँ संकलित की गई थीं, जिनका उपयोग माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के संस्थानों में हो रहा है और विभाग के सारे सदस्यगण हमारे पूर्वजों और स्वर्गवासी गुरुजनों की सृजनात्मक धरोहर को सीखने और दैनिक कार्यों में लाने को अपना कर्त्तव्य समझते हैं। हम इसी सिलसिले में पाठकों को हमारे प्रयत्नों के कुछ परिणामों से परिचित कराना चाहते हैं।

स्वाधीन उज़्बेकिस्तान के माध्यमिक और उच्च शिक्षा के क्षेत्रों में हो रहे सुधारों के कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए, जिनका लक्ष्य निरंतर शिक्षा का कार्यान्वयन माना जाता है, हिंदी की अध्यापन–प्रणाली को हम तीन चरणों में विभाजित कर सकते हैं। इनमें सबसे पहले चरण में आम शिक्षा प्रदान करनेवाली दो पाठशालाएँ हैं, जहाँ दूसरी कक्षा से नौवीं कक्षा तक पढ़ाई होती है। दूसरे चरण में दसवीं कक्षा से बारहवीं कक्षा तक शिक्षा दी जाती है। इसने अकादमिक Iyceums का नाम ले लिया है और

तीसरा चरण हमारे विभाग में दी जानेवाली बी. ए. और एम. ए. की शिक्षा के रूप में प्रस्तुत है। मेरा उद्देश्य पाठकों को इन तीन चरणों की बुनियाद में डाले गये मुख्य सिद्धांतों से अवगत कराना है।

हमारी समझ में सबसे पहले मुख्य सिद्धांत के रूप में उज़्बेक और हिंदी भाषाओं की सांस्कृतिक भाषागत तथा topological समानता का सिद्धांत परमोचित माना जा सकता है, जो हमारे सदियों पुराने प्राचीन और दीर्घकालीन ऐतिहासिक आपसी संबंधों का परिणाम है। इसीलिए हमारी जनता के इतिहास में जर्दूश्ती, सूफ़ी–मत, भक्ति, बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम की स्पष्ट रेखाएँ सर्वविदित हैं, जिनके सौजन्य से उज़्बेक भाषी तथा हिंदी भाषी दोनों के लिए अल–बेरूनिय, इब्न सिना, अमीर खुसरो, अलिशेर नवाई, ज़हरिद्दीन मुहम्मद बबुर, अब्दुल कदिर बेदिल, ज़ेबुनिसा, बयरम खाँ, अबदुर रहीम ख़ने ख़नान, मिर्ज़ा ग़ालिब और रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महात्मा गांधी, ज़ूल्फ़ीय, अमृता प्रितम जैसे व्यक्तित्व, कवि, लेखक, राजनीतिज्ञ और संस्कृति तथा कला की हस्तियाँ भी जीते–जागते मिसाल हो सकती हैं।

जहाँ तक भाषागत दृष्टिकोण का सवाल है, उज़्बेक और हिंदी भाषा में कई हज़ारों की संख्या में पायी जानेवाली आम शब्दावली सांस्कृतिक शब्द-संपदा का एक महत्त्वपूर्ण भाग सिद्ध है। ध्वनि–विचार, व्याकरण और वाक्य–विन्यास के क्षेत्रों में भी बहुत–सी समान विशेषताएँ दृष्टिगोचर हैं। इसी कारण दोनों भाषाओं के तुलनात्मक व्याकरण के संकलन हेतु बहुत ठोस आधार बनाया जा सकता है और इसी के भीतर ऐसे आधारभूत तत्त्वों का आविष्कार किया जा सकता है, जो पाठन प्रक्रिया के लिए परम लाभदायक सिद्ध हो सकता है। उदाहरण के लिए ध्वनि–समूह में ज़ (Za), क (qa), ग (ga), ख (kha), फ़ (fa) जैसे व्यंजन हैं, जो दोनों भाषाओं में अरबी और फ़ारसी प्रभावों के फलस्वरूप प्रविष्ट हुए थे। व्याकरण में तो ऐसी बहुत–सी संयुक्त क्रियाएँ मिल जाती हैं, जो दोनों भाषाओं में लगातार उपलब्ध हैं। फिर संज्ञा शब्दों के विकृत रूप, जो विशेष प्रत्ययों के माध्यम से उज़्बेक भाषा में बनते हैं, हिंदी में विभक्तियों या परसर्गों के प्रयोग के अनुकूल हैं। फिर बिलकुल इसी प्रकार दोनों भाषाओं के वाक्य–विन्यास में शब्दों का प्रमाणित क्रम–निर्धारण एक ही पद्धति से स्थापित किया जाता है। इसी क्षेत्र में संयुक्त वाक्यों के निर्माण में भी 'लेकिन', 'बल्कि', 'कि', 'ताकि', 'अगर', 'अगरची', 'या' जैसे संयोजकों की दोनों भाषाओं में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

इसी सिलसिले में उज़्बेक और हिंदी भाषाओं के इतिहास की तुलना अंग्रेज़ी और फ्रेंच के आपसी संबंधों और संपर्कों की ऐतिहासिक प्रक्रिया से की जा सकती है। इसीलिए हमें प्रतीत होता है कि हमारे भारतविद् विशेषज्ञों को अंग्रेज़ी–फ्रेंच तुलनात्मक व्याकरण का अनुभव गंभीरतापूर्वक सीखना चाहिए।

अब रही बात हिंदी भाषा के उन विशेष अध्यापन संबंधी पद्धतियों की, जो विद्यार्थियों की विभिन्न कुशलताओं और दक्षताओं को विकसित करने के लिए ख़ास तौर पर काम आ सकती हैं।

पहले पहल व्याकरण संबंधी कुछ ऐसी कुशलताओं का उल्लेख करना ज़रूरी है, जो बोलचाल और लेखन के अभ्यासों के ज़रिए अपने आप इस्तेमाल में मौलिकता या स्थिरता प्राप्त कर सकती हैं। ऐसी कुशलताएँ संश्लेषणात्मक और विश्लेषणात्मक मिश्रित प्रणाली वाली जर्मनी और हिंदी जैसी भाषाओं के अध्यापन के लिए बहुत सकारात्मक सिद्ध हो सकती हैं, जो प्रामाणिक रूप से बोलचाल और भाषा समझने में ठीक से काम आ सकती हैं।

यह बात भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि विश्लेषणात्मक भाषाओं में वाक्य–विन्यास के उचित नियमों को अपनाने की दक्षताओं के विकास की अलग भूमिका होती है।

इसके अतिरिक्त, हिंदी के अध्यापन–कार्य में भाषा माध्यम का भी बहुत विशेष महत्त्व होता है। इसी संबंध में वास्तव में उज़्बेकिस्तान में भाषा माध्यम के रूप में दो भाषाएँ, उज़्बेक और रूसी प्रचलित हैं। इसका मतलब यह है कि हमारे अधिकांश विद्यार्थी द्विभाषी हैं और यह तथ्य ख़ास तौर पर बहुत उल्लेखनीय है, क्योंकि हिंदी भाषा की कुछ व्याकरणिक विशेषताओं की तुलना बारी–बारी से उज़्बेक और रूसी भाषाओं से की जा सकती है। उदाहरण के लिए जब वाक्य–विन्यास के अभ्यासों की आवश्यकता पड़ती है, तो उज़्बेक भाषा से और जब कभी कारकों के प्रयोग की बात उठती है, तब रूसी व्याकरण से तुलना की जा सकती है।

इसीलिए हिंदी भाषा का अध्यापन करते समय तुलनात्मक पद्धति का सहारा लेना पड़ता है, जिसमें हिंदी की भाषागत

घटनाओं को कभी उज़्बेक में और कभी रूसी भाषा के व्याकरणिक तत्त्वों के द्वारा समझाना उचित लगता है। ख़ास तौर पर साधारण वाक्य के अंगों का क्रम समझाते हुए उज़्बेक घटनाओं से और हिंदी कारकों के विषय में रूसी भाषा के व्याकरण से तुलना करने की ज़रूरत का अनुभव होता है। इस तरह संश्लेषणात्मक कृदंत रूपों को भी उज़्बेक भाषियों को प्रदान करने में सुविधाजनक साबित होता है।

बिलकुल इसी तरह अप्रामाणिक या टकसाली न होनेवाले क्रिया रूपों के भूतकालिक कृदंत के अभ्यासों की ओर जब ध्यान जाता है, तब रूसी भाषा में प्रचलित व्याकरण के नियमों की सहायता ली जा सकती है।

उज़्बेक भाषी विद्यार्थियों को पढ़ाते समय समानता प्रधान विशेषताओं के अलावा दोनों भाषाओं के भिन्न–भिन्न तत्त्वों का आकलन करना भी अत्यंत आवश्यक माना जा सकता है। यहाँ पहले पहल हिंदी भाषा की संरचना में तत्सम् शब्दावली और शब्द–रचना को दृष्टि में रखना ज़रूरी है, जिनके नियमों के अनुसार अध्यापकों को पद–रचना और शब्द–रचना की मुख्य पद्धतियों को जानने और प्रयोग में लाने की आवश्यकता है, जो तत्सम् शब्दों और रूपों के साँचे बनाने के लिए आधार का काम कर सकते हैं। साथ ही, अध्यापकों को हिंदी के शब्द–समूहों के विकास की मौलिक प्रवृत्तियों से परिचित होकर उनको विद्यार्थियों की चेतना तक पहुँचाने में सक्षम होना चाहिए।

दूसरी ओर, आजकल विश्व भर में अंतरराष्ट्रीय सम्पर्क और संप्रेषण की भाषा में परिणत होने वाली अंग्रेज़ी के बढ़ते हुए प्रभाव को नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता है, जिसकी प्रबल धारा का प्रभाव हिंदी के शब्दगत और व्याकरणिक विकास में स्पष्ट रूप से विद्यमान होता जा रहा है, इसीलिए स्कूलों और उच्चशिक्षा संस्थानों में कार्यरत भारतविदों को अंग्रेज़ी व्याकरण और शब्दावली के उचित ज्ञान से सुसज्जित होते हुए भारतीय और अंग्रेज़ी मूर्धन्य ध्वनियों के उच्चारण में जो सूक्ष्म बारीकियाँ पायी जाती हैं, उन पर पूरा काबू पाना चाहिए।

वर्तमान उज़्बेक और हिंदी भाषाओं की सामाजिक और व्यावहारिक विशेषताओं में भी समानता उत्पन्न हो रही है। उदाहरणार्थ, दोनों भाषाएँ हाल ही में स्वाधीन हुए देशों की मान्य भाषाएँ बन चुकी हैं, जिनमें उन्हीं देशों की बहुजातीयता, बहसांस्कृतिकता और बहुपंथीयता निहित हैं। अतः दोनों में एक ही साथ विशेष महत्त्व रखनेवाली भाषा–निर्माण की प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही हैं, जो भाषागत परिस्थिति और भाषागत राजनीति पर निर्भर हैं। मिसाल के तौर पर नयी तकनीकी प्रौद्योगिकी और वैज्ञानिक परिभाषाओं के निर्माण और प्रमाणीकरण तथा नये शब्दों और परिभाषाओं को बनाने के स्रोतों की खोज, बोलचाल और साहित्य शैलियों के विभेदों से निपटने के उपायों का निर्धारण और स्पष्टीकरण जैसी समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। इन समस्याओं को सुलझाने की विधियाँ हमारे बीच में विचार और अनुभव का आदान–प्रदान और आपसी समृद्धिकरण की परंपराओं को विकसित करने के प्रयत्नों से ही सांस्कृतिक समन्वय की दिशा में आगे बढ़ाने हेतु नये–नये फलदायक आयाम स्थापित किए जा सकते हैं।

यह भी बहुत अहम बात है कि निश्चित स्थानों पर हिंदी और उज़्बेक भाषाओं के बीच जो बड़े अंतर या असमानताएँ हैं, उनको जान–बूझकर ध्यान में रखने का अवसर आता है। उदाहरणार्थ आधुनिक साहित्य हिंदी के अभिन्न अंग, संस्कृत की तत्सम् शब्दावली में प्रचलित, बहुत से पद रचनात्मक और शब्द–निर्माणगत ढाँचों को सैद्धांतिक तौर पर पहचानने और व्यावहारिक तौर पर प्रयुक्त करने के कौशल उत्पन्न करना काफ़ी सरल और सुगम हो जाता है।

दूसरी ओर देखा जाए, तो आजकल के अंतरराष्ट्रीय संबंधों के अत्यंत महत्तम माध्यम की हैसियत से उपयोगी भाषा, अंग्रेज़ी का हिंदी के शब्द–भण्डार, ध्वनिमाला और व्याकरण पर गंभीर प्रभाव नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता है। इसी संदर्भ में उच्च शिक्षा प्रणाली तथा माध्यमिक स्कूलों में कार्यरत भारतविदों के लिए अंग्रेज़ी के व्याकरण और शब्दावली के सिद्धांतों का ज्ञान उपलब्ध करके ठेठ हिंदी के और अंग्रेज़ी से आये शब्दों के अंतरों को गहरी समझ के साथ–साथ दोनों भाषाओं के मूर्धन्य व्यंजनों का फ़र्क भी समझना बहुत आवश्यक है।

अंततः सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू का उल्लेख करते हुए यह तथ्य बिलकुल नहीं भूलना चाहिए कि दोनों भाषाओं सामाजिक और व्यावहारिक विशेषताएँ भी आपस में मिलती हैं। ये

दोनों भाषाएँ असल में स्वाधीन बहुजातीय और अद्‌भुत अनोखी संस्कृतियों वाले राष्ट्रों की औपचारिक भाषाएँ हैं। इसलिए उज़्बेक और हिंदी भाषाओं में समान रूप से भाषा–नियोजन से संबंधित तथा भाषागत स्थिति और नीति से प्रक्रियाएँ घटित होती हैं। विशेषकर यही पहलू परिभाषाओं के निर्माण और प्रामाणीकरण के लिए नए शब्दों के स्रोतों को चूनने और इससे अधिक आधुनिक भाषा के बोलचाल और लिखित विधियों के मानकों के बीच के भेदों को समझने के उपाय ढूँढने पर निर्भर होगा।

यह बात भी ठीक है कि विदेशी भाषा को उच्च शिक्षा संस्थानों में पाठन की पद्धतिगत बुनियादें यथासंभव इसी भाषा तथा मातृभाषा को पढ़ाने के उद्देश्यों के अनुकूल आनेवाले विवरणों पर आधारित होनी चाहिए। इस प्रक्रिया में यह बहुत आवश्यक है कि ऐसे विवरणों को विदेशी भाषा को सीखने और सिखाने की पूर्ति करनेवाले तत्त्वों को ध्यान में रखते हुए संकलित किये जाएँ। इस प्रकार सैद्धांतिक उद्देश्यों के अतिरिक्त, उपरोक्त विवरणों को व्यावहारिक लक्ष्यों की ओर निर्दिष्ट किया जाना चाहिए। इसी प्रकार के विवरणों के लिए प्रयुक्त होनेवाली पद्धतियों में से फ़ॉर्मल–सिस्टेमिकल (formal–systemical) और फ़ंक्शनल–कॉम्युनिकेटिव (functional–communicative) पद्धतियाँ सर्वोपयोगी हैं। इन पद्धतियों के अंतर्गत एक भाषागत इकाई अर्थात् भाषागत घटना अन्य भाषाओं की प्रणाली में फिर से प्रस्थापित इकाई के रूप में मानी जाती है। वास्तव में, ये ही इकाइयाँ वक्तृता की इकाइयाँ समझी जाती हैं और अंततः वे वक्तृता का रूप देने तथा भाषा की प्रणाली को बनानेवाले मुख्य तत्त्व का काम दे सकती हैं।

वैसे ही हमारे विभाग ने सत्तर वर्षों के दौरान तेरह सौ से अधिक विशेषज्ञों को तैयार किया है, जो वर्तमान में अबू रयखाँ बेरूनिय नामक विज्ञान अकादमी के प्राच्य विद्या संस्थान में, विभिन्न प्रकाशन–गृहों में, उज़्बेकिस्तान के रेडियो और ब्रॉडकॉस्टिंग कंपनी में तथा विदेश मंत्रालय जैसे अनेक सरकारी कार्यालयों में, विशेष तौर पर पाठशालाओं और शैक्षणिक संस्थानों में सक्रिय रूप से कार्यरत हैं। उनके बीच अकादमीशियन प्रोफ़ेसर मुबिनजान बारातोव, प्रोफ़ेसर अज़ाद शमातोफ़, प्रोफ़ेसर इल्यास हाशिमोव, उज़्बेकिस्तान के अमेरिका तथा इंग्लैंड में भूतपूर्व राजदूत, स्वर्गीय डॉ. फ़तिह तेशाबाएव तथा स्वतंत्र उज़्बेकिस्तान के भारत में प्रथम राजदूत, प्रोफ़ेसर सुरात मिरकासिमोव के नाम उल्लेखनीय हैं।

उनके बीच रेडियो ताश्कंद का महत्त्व अलग–सी भूमिका अदा करता है। उज़्बेक भारतविदों के लिए यह गर्व की बात है कि सन् 1962 से लेकर सन् 2005 तक, लगभग 45 सालों के दौरान रेडियो ताश्कंद में हिंदी विभाग भी कार्यरत था। गत अवधि में उज़्बेकिस्तान के प्रत्येक क्षेत्र से संबंधित समाचार विशेष तौर पर उज़्बेकिस्तान की स्वाधीनता के बाद ताश्कंद में स्थित लाल बहादुर शास्त्री नामक भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में आयोजित किये गये प्रत्येक कार्यक्रम इसी विभाग के सहारे हिंदी भाषा में भारतीय श्रोताओं के लिए प्रसारित किये जाते थे।

यह भी कहने की आवश्यकता है कि रेडियो ताश्कंद में बीस साल पहले 'नमस्ते हिन्दुस्तान' नामक रेडियो कार्यक्रम को भी चालू किया गया था। इस कार्यक्रम के द्वारा हिंदी और उज़्बेकी भाषाओं में भारत का इतिहास, भारत की कला, भारतीय साहित्य तथा भारत की संस्कृति से संबंधित जानकारियाँ श्रोताओं को दी जाती थीं। पिछले साल सरकार की ओर से एक प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसका विषय था 'उज़्बेकिस्तान के रेडियो–कार्यक्रमों के बीच कौन–सा कार्यक्रम सबसे लोकप्रिय है' इस प्रतियोगिता में 'नमस्ते हिन्दुस्तान' नामक रेडियो–कार्यक्रम उज़्बेकिस्तान के रेडियो–कार्यक्रमों के बीच सबसे लोकप्रिय कार्यक्रमों में से एक माना गया है।

इसी के साथ–साथ तीन वर्ष पहले श्रोताओं के अनुरोध पर 'हम जानना चाहते हैं!' नाम के रेडियो–कार्यक्रम को चलाने का भी श्रीगणेश किया गया है। यह कार्यक्रम एक घंटे का है और प्रति सप्ताह चार बार होता है। एक घंटे के दौरान भारत से संबंधित, विशेष तौर पर भारत गणतंत्र की सफलताओं से संबंधित जानकारियाँ केवल हिंदी भाषा में ही दी जाती हैं तथा विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया जाता है।

उज़्बेकिस्तान के हिंदी प्रेमियों के लिए यह भी गर्व की बात है कि सन् 2007 में न्यू यॉर्क में आयोजित आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन में उज़्बेकिस्तानी विदुषी, डॉ. उल्फ़त मुखिबोवा को पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनसे पहले हिंदी के

जाने–माने वरिष्ठ विद्वान, प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव को सन् 2003 में सूरीनाम में आयोजित सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन में तथा डॉ. फ़तिह तेशाबाएव और डॉ. शिरीन जलीलोवा को सन् 1999 में लंदन में आयोजित छठे विश्व हिंदी सम्मेलन में 'विश्व हिंदी सम्मान' से नवाज़ा जा चुका है।

यह भी उल्लेखनीय है कि उज़्बेक भारतविदों के लिए गर्व और सौभाग्य की बात है कि सन् 2014 में भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति, श्री प्रणब मुखर्जी की ओर से स्वर्गीय प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव को जॉर्ज ग्रियर्सन पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव ने उज़्बेकिस्तान में भारतविद्या के विकास के लिए, विशेषकर हिंदी भाषा का प्रचार–प्रसार करने में काफ़ी परिश्रम किया है। उनकी तरफ़ से भाषा–विज्ञान, भारतीय साहित्य, विशेषकर भारतीय आर्य भाषाओं से संबंधित दो सौ से अधिक वैज्ञानिक–ग्रंथ, निबंध, पाठ्य–पुस्तकें, शब्दकोश आदि बड़ी संख्या में प्रकाशित किये गये हैं। अनेक प्रयासों से महात्मा गांधी भारतविद्या केंद्र की नींव भी रखी गयी थी और इसी केंद्र में प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव की ओर से हिंदी भाषा और भारतीय साहित्य से संबंधित विभिन्न विषयों पर कई संगोष्ठियों का आयोजन किया गया। प्रतिवर्ष महान नेता, महात्मा गांधी जी के जन्मदिन के सुअवसर पर सम्मेलनों का आयोजन भी किया जाता है। इन सम्मेलनों में भारतीय विद्वानों, हिंदी–प्रेमियों की ओर से गांधी जी की जीवनी से संबंधित आलेखों की प्रस्तुति की जाती है।

यह भी उल्लेखनीय है कि उज़्बेकिस्तान के हिंदी–प्रेमियों के लिए सौभाग्य का दिन रहा था जब 7 जुलाई, 2015 को भारत के प्रधान मंत्री, महामहिम श्री नरेंद्र मोदी की उज़्बेकिस्तान यात्रा के दौरान उनके हाथों प्रथम उज़्बेक – हिंदी शब्दकोश का लोकार्पण हुआ था, जिसे वरिष्ठ भारतविद्, प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव और वरिष्ठ हिंदी प्राध्यापक, बयात रखमातोव ने बनाया था। इस अवसर पर उज़्बेकिस्तान के माननीय प्रधान मंत्री, शवकात मिर्ज़ियाएव (वर्तमान में उज़्बेकिस्तान गणतंत्र के राष्ट्रपति) तथा प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव और भारतविद् बयात रखमातोव भी उपस्थित थे।

यह भी सुस्पष्ट है कि उज़्बेक जनता भारतीय फ़िल्मों को देखने में काफ़ी रुचि लेती है। वर्तमान काल में प्रतिदिन उज़्बेकिस्तान के प्रत्येक प्राँत, नगर तथा गाँव में भारतीय फ़िल्में टेलीविजन पर चलती हैं। उन फ़िल्मों का अनुवाद अनुभवी भारतविद् अनुवादकों द्वारा किया जाता है और निस्संदेह अनुवाद की गयीं सारी फ़िल्मों की डबिंग भी होती है। उज़्बेक जनता को विशेष तौर पर भारत के सुप्रसिद्ध, जाने–माने राज कपूर, नरगिस, अमिताभ बच्चन, शाहरूख़ ख़ान आदि अभिनेताओं और अभिनेत्रियों की सारी हिंदी फ़िल्में बहुत पसंद हैं।

उज़्बेकिस्तान में स्थित ताश्कंद प्राच्य विद्या संस्थान के दक्षिणी एशियाई भाषाओं के विभाग के अध्यापकगण विविध दिशाओं में शोध-कार्य करते आ रहे हैं। उल्लेखनीय है कि उनके बीच विशेषकर भाषा–विज्ञान तथा भारतीय साहित्य से संबंधित दिशाओं में काफ़ी शोध–कार्य किये जा चुके हैं तथा कई अन्वेषण ग्रंथों का प्रकाशन भी हो चुका है।

वरिष्ठ भारतविद्, प्रोफ़ेसर आज़ाद शमातोव की ओर से 'हिंदी भाषा का प्रामाणिक व्याकरण', 'दक्षिणी एशिया की भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन', 'हिंदी–उज़्बेकी शब्दकोश', 'उज़्बेक–हिंदी शब्दकोश', 'हिंदी भाषा का सैद्धांतिक व्याकरण' आदि पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। डॉ. तमारा होदजायेवा की तरफ़ से आधुनिक भारतीय साहित्य से तथा डॉ. उल्फ़त मुखिबोवा की तरफ़ से प्राचीन और मध्यकालीन भारतीय साहित्य से, विशेषकर भक्ति साहित्य से संबंधित कई वैज्ञानिक रचनाएँ छापी गयी हैं।

हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। हिंदी अत्यंत प्राचीन, उन्नत और श्रेष्ठ भाषा है। हमारी आकांक्षा यह है कि हिंदी भाषा संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषाओं की सूची में शामिल हो और इसके लिए दो महान देश, भारत और मॉरीशस सरकारों की ओर से हो रहे अथक प्रयासों के साथ–साथ उज़्बेकिस्तान में सक्रिय रूप से हिंदी का प्रचार–प्रसार कर रहे प्रत्येक हिंदी–प्रेमी, विशेषकर ताश्कंद प्राच्य विद्या संस्थान के दक्षिणी एशियाई भाषाओं के विभाग के अध्यापकगण तथा महात्मा गांधी भारतविद्या केंद्र के सभी सदस्यगण अपना योगदान देते रहेंगे।

ताशकंद, उज़्बेकिस्तान
sirojiddin2003@yahoo.com

24

वैश्विक हिंदी, भाषिक संपदा : विस्तार एवं संभावनाएँ

(विश्व हिंदी सचिवालय के 10वें आधिकारिक कार्यारंभ दिवस के उपलक्ष्य में प्रस्तुत वक्तव्य)

– प्रो. वृषभ प्रसाद जैन

मित्रो! भाषाएँ मनुष्य को पहचान देती हैं, उसकी पहचान कराती हैं और उसकी पहचान बनती भी हैं। आप कुछ भी बोलते हैं, तो आप पहचान लिए जाते हैं कि आप कौन हैं? हज़ारों मील दूर आकर आप यहाँ बसे हैं, फिर भी भारत के मूल की आपकी पहचान इतने वर्षों बाद भी बची है। यह अगर बची है, तो आपके धर्म, भोजन, परंपराओं, पारिवारिक नामों और अंततः इन सबके मूल में रहने वाली आपकी भाषा के कारण, जो आपने वर्षों बाद भी और हज़ारों थपेड़ों के बाद भी संजोकर रखी है। इसीलिए आप धन्य हैं और हम सबके लिए आदरणीय भी हैं। हम इतनी दूर आकर आपसे जब यहाँ मिलते हैं, या फिर जब आप भारत आकर हमसे मिलते हैं या भारत से बाहर भी, कहीं भी मिलते हैं, तब लगता है कि हम अपने सहोदर से मिल रहे हैं। यह सहोदर का भाव आखिर कौन पैदा कर रहा है? वह है हमारी मूल हिंदी भाषिक संपदा, जो हम सबने धरोहर के रूप में पायी है और उसे अब तक यथासंभव संभालकर व बचाकर रखा है तथा अनेक प्रसंगों में उसे समृद्ध भी किया है।

भाषाएँ हैं, तो संसार है। भाषाएँ नहीं, तो संसार भी नहीं। भाषा–रहित समाज अकल्पनीय है, बल्कि भाषा–रहित संसार भी अकल्पनीय है, क्योंकि भाषाएँ ही संसार की वस्तुओं को तथा संसार में होने वाली विभिन्न क्रियाओं को नाम देती हैं। भाषाओं के कारण या उनके आधार पर ही उन्हें नाम दिया जाता है। इस प्रकार उन वस्तुओं और क्रियाओं के साथ उन नामों को लेकर व्यवहार संभव हो पाता है। जब व्यक्तियों के नाम और व्यक्तियों का परस्पर व्यवहार नहीं, तब संसार और मनुष्य भी नहीं और जब मनुष्य नहीं, तो उसकी भाषाएँ आखिर कहाँ हो सकती हैं? इसीलिए तो निर्जन रेगिस्तान में मनुष्य की भाषाएँ बोली और सुनी नहीं जातीं। इससे स्पष्ट है कि भाषा से ही संसार है, मनुष्य की इयत्ता भाषा पर निर्भर है। आप ज़रा कल्पना कीजिए कि

शिक्षा:
- एम.ए. भाषाविज्ञान
- एम.ए. संस्कृत
- एम.फ़िल. भाषाविज्ञान
- आचार्य साहित्य
- पी.एच.डी. भाषाविज्ञान, कारक–व्याकरण
- उच्चतर ध्वनिविज्ञान में अल्पकालीन पाठ्यक्रम
- ग्रीष्मकालीन पाठ्यक्रम
- प्राकृतिक भाषाई संसाधन में सघन पाठ्यक्रम

व्यवसाय :
- (संप्रति) निदेशक, भाषा–केन्द्र, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी, विश्वविद्यालय, वर्धा, भारत
- अनुवाद, कोश–विज्ञान, व्याकरण, प्रतीक–विज्ञान, संगणक–विज्ञान, प्राकृत, पालि, संस्कृत, अपभ्रंश भाषाएँ, हिंदी व संस्कृत साहित्य, जैनविद्या और भारतीयविद्या में विशेषज्ञता

प्रकाशन :
- 1980–'कालिदास'
- 1981–'बाहुबलीयम्'
- 1982–'मध्य–भारतीय आर्यभाषा के शब्दकोश'
- 1995–'अनुवाद और मशीनी अनुवाद'
- 'समाधितंत्र–अनुशीलन व इष्टोपदेश–भाष्य समीक्षा', संपादक
- 'स्वरूप–संबोधन–परिशीलन', संपादक
- भाषा–विज्ञान, व्याकरण, अनुवाद व कोशकारिता पर अनेक प्रकाशन
- विभिन्न समाचार–पत्रों में आलेख

सम्मान :
- एम.ए. भाषाविज्ञान : चट्टोपाध्याय पदक
- एम.ए. संस्कृत : दो रजत एवं एक स्वर्णपदक
- एम.ए. संस्कृत : विश्वविद्यालय में द्वितीय स्थान
- 'बाहुबलीयम्' काव्य–रचना के लिए 'संस्कृत साहित्य पुरस्कार'
- 'अनुवाद और मशीनी अनुवाद' के लिए 'नातालि पुरस्कार'
- 'श्रुत संवर्द्धन पुरस्कार'
- 'आचार्य ज्ञानसागर पुरस्कार'
- 'अखिल भारतीय दिगम्बर जैन शास्त्रि पुरस्कार'

मनुष्य से और उसके संसार से उसकी भाषाएँ छीन ली जाएँ, तो क्या होगा? क्या वह अपने संसार से संपर्क बना सकेगा? निश्चित रूप से नहीं! इसलिए मनुष्य और संसार की सत्ता व उसकी पहचान भाषा पर निर्भर है। कैसा अद्‌भुत और अटूट संबंध है मनुष्य और उसके संसार का, भाषा के साथ!

भाषा से ही व्यक्ति बीज से वृक्ष बनता है अर्थात् व्यक्ति से समाज और फिर राष्ट्र। राष्ट्र वह महासागर है, जिसने विभिन्न समाजों को शरण दी है। महासागर का अस्तित्व इसको निर्मित करने वाले या इसके गर्भ में समाए सभी तत्त्वों के सुरक्षित रखने वाले पर ही निर्भर है। इसपर संकट आने का अर्थ है, इसके सभी निर्माता तत्त्वों का स्वयं सर्वनाश। ज़रा कल्पना कीजिए, सागर के उन सभी तत्त्वों का क्या हाल हुआ होगा, जब मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने सागर को सुखाने के लिए बाण पर मात्र प्रत्यंचा चढ़ाई थी और इस वेदना को लिखने के लिए गोस्वामी तुलसीदास जी ने कलम उठाई थी। गोस्वामी जी के समय भारत में मुगलों का शासन था, भारत तथा भारतीयता को समूल नष्ट करने के लिए सब ओर से आक्रमण हो रहे थे। ऐसे समय में गोस्वामी जी ने बड़ी सतर्कता से कलम चलाई थी और भारत की रक्षा के लिए राम की कथा के माध्यम से पूरी जनता में प्राण फूँके थे। आज का रचनाकार अपने इस धर्म से लगभग पूरी तरह विमुख हो गया है। आज का लेखक तो वह लिखता है, जो बिकता है, या जो बिक सके और उसका निजी स्वार्थ पूरा हो सके। व्यक्तिवाद अब जातिवाद, प्रांतवाद और राष्ट्रवाद से ऊपर उठ गया है।

हिंदी की वैश्विक स्थिति

इंटरनेट पर दी गई एक सूचना के आधार पर भारत सहित विश्व के 137 देशों में, एक दूसरी सूचना के अनुसार 160 देशों में और तीसरी सूचना के अनुसार 170 देशों में आज हिंदी–भाषी निवास कर रहे हैं और हिंदी लिखी, पढ़ी और बोली जा रही है। अमेरिका के 113 विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है। अंतः हिंदी आज केवल हिंदी की जनपदीय भाषाओं के क्षेत्र की भाषा नहीं है। सरकार ने उसे भले ही राष्ट्रभाषा न बनाया, फिर भी वह पूरे देश में लिखी, पढ़ी, बोली और समझी जा रही है। बस, इसकी आधिकारिक रूप में घोषणा की ज़रूरत थी और है। जो कोई करेगा, वह श्रेय लेगा, नहीं करेगा, तो उसके भाग्य में नहीं होगा। कुल मिलाकर हिंदी के भाषाई क्षेत्र का विस्तार हुआ है और वह पूरे संसार में फैला है। इसमें प्रमुखतः पाँच तरह के लोग हैं। पहले कुछ ऐसे हैं, जिनकी मातृभाषा हिंदी की कोई जनपदीय बोली या भाषा है और दूसरे ऐसे हैं, जिनकी मातृभाषा हिंदी की जनपदीय बोली तो नहीं, पर मानक या मानक–सी हिंदी हो गई है और तीसरे वे लोग हैं, जिनकी मातृभाषा न तो हिंदी है, न हिंदी की जनपदीय बोली या भाषा है, पर कोई–न–कोई भारतीय भाषा है। वे हिंदी से प्रेम करते हैं, इसलिए हिंदी को पढ़ते–लिखते, बोलते और समझते हैं तथा इसे समृद्ध करने की निरंतर कोशिश भी करते हैं। ये लोग आपस में जब भी मिलते हैं, तब हिंदी उनकी संपर्क भाषा बनती है। हिंदी उनकी भारतीयता की पहचान भी बनती है। ऐसे लोग भारत के भू–भाग पर भी हैं और इसके बाहर भी। चौथी श्रेणी में वे लोग हैं, जिनकी मातृभाषा हिंदी सहित भारत की कोई भी भाषा नहीं है, पर वे हिंदी से प्यार करते हैं, उसकी आराधना करते हैं, उसे प्रयोग में लाते हैं, उसे पढ़ते, पढ़ाते, लिखते, बोलते और समझते हैं। पहली कोटि वाले लोगों में कुछ लोग किसी कालखंड में हिंदी की जनपदीय भाषाओं के क्षेत्र से बाहर चले गए हैं और प्रवासी होकर भी हिंदी की जनपदीय भाषा के रूप को बचाकर रखे हुए हैं और अब भी उसे समृद्ध कर रहे हैं, ये हिंदी प्रयोक्ताओं की पाँचवीं कोटि में आते हैं, ऐसे लोग प्रमुखतः निम्नलिखित 10 देशों में हैं –

भारत, नेपाल, मॉरीशस, फ़िजी, पाकिस्तान, त्रिनिदाद और टोबेगो, बांग्लादेश, सिंगापुर, दक्षिण अफ़्रीका और सूरीनाम।

इतने विस्तृत क्षेत्र के कारण और उनके नए–नए संपर्कों के कारण हिंदी में नए–नए भाषिक प्रयोग विकसित हुए हैं और उसने नए–नए भाषिक प्रयोगों को आत्मसात किया है, इसलिए हिंदी की भाषिक संपदा आज बहुत समृद्ध रूप में है। हिंदी की पहचान उसके जन्मकाल से ही विविध रूपों के साथ रही है। हिंदी के ये अनेक रूप उसकी पृष्ठभूमि में समानांतर रहे हैं, इसलिए हिंदी की पहचान उसके विविध रूपों के साथ ही थी, है और रहेगी। अब तक समस्त सामाजिक संदर्भों को इकट्ठा करके हिंदी के उन विविध रूपों को ठीक तरह से सामने नहीं लाया जा सका है और न हम इस समृद्ध भाषिक संपदा को अभी तक ठीक तरह से संगृहीत कर पाए हैं और न उन्हें ठीक तरह

से परिभाषित ही किया गया है, जिसके दुष्परिणाम भी बहुत हुए। हम यह भी नहीं जान पाए कि हिंदी और उनकी जनपदीय भाषाओं के बीच होने वाली कोड स्विचिंग, कोड मिक्सिंग व कोड शिफ़्टिंग के सामाजिक संदर्भों की पहचान से किन परिस्थितियों में किन–किन की सत्ता का, किन–किन का, कैसा–कैसा प्रयोग होता है तथा वे कैसे अपनी स्वतंत्र पहचान रखते हुए भी एक लंबे अंतराल से हिंदी की पूरक पहचान बनाये रखे रहीं और यह पहचान केवल जनपदीय भाषाओं तक सीमित नहीं रही, बल्कि हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के साथ भारतीय संदर्भ में भी तथा इसी क्रम में विदेशी भाषाओं के साथ विदेशी सन्दर्भ में भी अपनी कुछ विशेषताएँ रखती है। हिंदी इन सबके साथ तालमेल बैठाकर क्रमशः आगे बढ़ती गयी और समृद्ध होती गयी, जिसने नहीं बैठाया, वह हाशिए पर रखा गया।

जिन देशों में हिंदी और उसके विविध रूपों का प्रयोग हो रहा है, उन देशों की भाषा–नीति इसे समाहित करके समुचित बने। इस दिशा में हमें प्रयत्न करना चाहिए। सबसे पहले भारत की बनानी चाहिए। उसकी बातें तो कई बार हुईं, पर वह बनकर उद्घोषित आज तक न हुई।

बात इतनी ही नहीं, जब हम इस बृहत्तर हिंदी सहित भारतीय भाषिक संपदा को संगृहीत नहीं कर पाए और उसपर आधारित व्याकरण हम नहीं लिख पाए एवं कोश नहीं बना पाए, इसलिए आज इसे संगृहीत करने और उस संग्रह का अध्ययन करने की बहुत ज़रूरत है। इससे हमारे आपसी रिश्ते मज़बूत होंगे और हमारी पहचान के अभी तक अनखुले अनेक पक्ष भी सामने आएँगे।

जैसे भाषाओं का अपना संसार होता है, वैसे ही भाषिक विचार का भी अपना संसार होता है। किसी भी भाषा की सभी व्याकरणिक कोटियाँ सार्वभौमिक नहीं होतीं, कुछ सार्वभौमिक होती हैं, कुछ एक समूह विशेष की भाषाओं की पहचान वाली होती हैं और कुछ अपनी स्वयं की भाषा की पहचान वाली होती हैं। आज हिंदी सहित समस्त भारतीय भाषाओं का जो व्याकरण पढ़ाया जा रहा है, वह उन भाषाओं का व्याकरण नहीं, वह तो अंग्रेज़ी का व्याकरण पढ़ाया जा रहा है। हिंदी में हम व्याकरण को पढ़ाते समय ''यहाँ, वहाँ, जहाँ, कहाँ, तहाँ'' को स्थानवाचक क्रिया विशेषण के रूप में पढ़ा रहे हैं, क्योंकि अंग्रेज़ी में इन्हें एडवर्ब ऑफ़ प्लेस अर्थात् स्थानवाचक क्रिया–विशेषण कहा गया तथा अंग्रेज़ी की नकल पर हमने भी वैसा ही पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। नकल करते समय हमने यह भी नहीं सोचा कि कम–से–कम हम वे गलतियाँ तो न दोहराएँ, जो अंग्रेज़ों ने या अंग्रेज़ी ने की हैं, पर अंग्रेज़ी की नकल पर हम वैसा भी करते आ रहे हैं। जबकि ध्यान से विचार करें, तो ''यहाँ, वहाँ, जहाँ, कहाँ, तहाँ'' के अंग्रेज़ी रूप ''हियर, व्हेयर, देयर, हिदर, थिदर'' अंग्रेज़ी में भी क्रिया–विशेषण नहीं हैं, क्योंकि ये प्रयोग में आ रहे हैं संज्ञा के स्थान पर, इसलिए संज्ञा के स्थान पर जो प्रयोग में आता है, वह दुनिया की सभी भाषाओं में सर्वनाम कहलाता है। एक विशेषता और है कि ये शब्द ऐसे सर्वनाम हैं, जो रूप नहीं बदलते अर्थात् ये शब्द सर्वनाम होने के साथ–साथ अव्यय भी हैं, अतः इन्हें सार्वनामिक अव्यय कहना उचित होगा। इन्हें निम्न प्रयोगों से स्पष्टता से समझा जा सकेगा –

राम कानपुर गया। राम घर आया।
राम वहाँ गया। राम यहाँ आया।

उपर्युक्त चारों वाक्यों में से दो–दो वाक्यों में ''राम आया'' और ''राम गया'' संरचनाएँ समान हैं तथा ''कानपुर'' के स्थान पर ''वहाँ'' और घर के स्थान पर ''यहाँ'' का प्रयोग मिल रहा है। ठीक ऐसी ही स्थिति निम्न वाक्यों में "there" और "here" की है – **Ram went there. Ram came here.**

अब प्रश्न उठता है कि एडवर्ब या क्रिया–विशेषण होता क्या है? जैसा कि इन दोनों पारिभाषिकों के नाम से ही स्पष्ट है कि जो क्रिया की विशेषता बताए, वह क्रिया–विशेषण और इसके ठीक विपरीत जो क्रिया की विशेषता न बता पाए, वह क्रिया–विशेषण नहीं। जैसे निम्न वाक्यों में ''तेज़ी से'' और ''धीमे–धीमे'' या ''धीरे–धीरे'' पद क्रिया–विशेषण हैं, क्योंकि ये क्रिया की विशेषता बता रहे हैं – **राम तेज़ी से घर आया। राम धीमे–धीमे या धीरे–धीरे घर आया।**

अब थोड़ा और आगे चलते हैं। तथ्य यह भी नहीं है कि राम जब कानपुर जाता है या घर आता है, तो उसके जाने या आने की क्रिया कुछ अलग तरह से होती है और 'वहाँ' या 'यहाँ' आने पर कुछ अलग तरह से, तो फिर उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर ''यहाँ'' और ''वहाँ'' को क्रिया–विशेषण मानना समुचित नहीं

लगता। ये तो सार्वनामिक अव्यय हैं, जैसा कि ऊपर कहा गया। मैं तो कहता हूँ कि अंग्रेज़ी में भी "there" और "here" क्रिया–विशेषण नहीं हैं, क्योंकि इन स्थानों पर जाने की क्रिया या आने की क्रिया कुछ अलग तरह से नहीं होती। कैसी भोंडी नकल कर रहे हैं, हम अंग्रेज़ी की! अंग्रेज़ी की गलती को भी हम गलती नहीं मान रहे हैं और हम कह रहे हैं कि यही हमारी भाषाओं का व्याकरण है। निम्न दो वाक्य और देखें –

राम घर से पढ़कर आया। राम घर से सोकर आया।

आप देख रहे हैं कि उपर्युक्त दोनों वाक्यों की ''पढ़कर'' और ''सोकर'' क्रियाओं में ''कर'' लगा होने के कारण ''कर'' को पूर्वकालिक कृदंत माना गया, क्योंकि ये दोनों क्रियाएँ ''आना'' क्रिया के पहले हुई हैं और आज व्याकरण में इन्हें ऐसा ही या पूर्वकालिक कृदंत के रूप में ही पढ़ाया जा रहा है। एक और वाक्य लीजिए– **राम घर से चलकर आया।**

उपर्युक्त व्याकरण के नियम के अनुसार यहाँ चलकर के ''कर'' को भी हम पूर्वकालिक कृदंत कह देंगे, जबकि यहाँ यह पूर्वकालिक कृदंत नहीं है। यहाँ तो चलकर क्रिया तब तक होती है, जब तक आना क्रिया होती है, इसलिए ''चलकर आना'' क्रिया का क्रिया–विशेषण है, क्योंकि यह बता रहा है कि वह कैसे आया? पर हम आज व्याकरण में ''कर'' प्रत्यय को केवल पूर्वकालिक कृदंत के रूप में ही पढ़ा रहे हैं। इस प्रकार हिंदी सहित किसी भी भारतीय भाषा का व्याकरण नहीं लिखा गया आज तक। और हम गाहे–बगाहे, जाने–अनजाने या इधर–उधर से किसी–न–किसी तरह अंग्रेज़ी के व्याकरण को ही भारतीय भाषाओं के व्याकरण के रूप में पढ़ा रहे हैं। इसलिए व्याकरण और कोश जो भी आज उपलब्ध हैं, उनमें व्याकरणिक कोटियाँ अंग्रेज़ी की हैं और उदाहरण हमारी भाषाओं के हैं। वस्तुतः आज़ादी एवं स्वतंत्रता की लड़ाई जिन उद्देश्यों को लेकर लड़ी गई थी, यदि हम उन उद्देश्यों की दृष्टि से व्याकरण, कोश और भारतीय भाषाओं की वर्तमान स्थिति पर विचार करें, तो पता चलेगा कि हम आज भी अंग्रेज़ी संसार की दृष्टि से मुक्त नहीं हुए हैं और अभी भी परतंत्रता की अवस्था में जी रहे हैं, बल्कि आज हम और अधिक परतंत्र होते जा रहे हैं।

भाषाओं के कारण ही हम पहचाने जाते हैं – हिंदी–भाषी के रूप में, बंगाली के रूप में, गुजराती के रूप में, मराठी के रूप में, तमिल के रूप में, तेलुगु के रूप में, मलयाली के रूप में, कन्नड़िगा के रूप में और अंततः भारतीय के रूप में। भारत के बाहर अभी यह स्थिति मज़बूत है, क्योंकि भारत की किसी भी भाषा का बोलने वाला जब परस्पर मिलता है और भिन्न भाषा–भाषी होता है, तो हिंदी को ही माध्यम भाषा के रूप में प्रयोग में लाता है। इसलिए भारत सरकार ने हिंदी को राष्ट्रभाषा भले न बनाया हो, पर भारत के बाहर बसे इन भारतीयों ने प्रयोग के स्तर पर हिंदी को ज़रूर अपनाया है और उसे अपनी पहचान की भाषा ज़रूर बनाया है।

दरअसल भाषा की लड़ाई केवल भाषा की लड़ाई नहीं है, संस्कृति की लड़ाई भी है और अर्थ/धन की लड़ाई भी है। बल्कि यूँ कहा जाए कि संस्कृति की लड़ाई और आर्थिक साम्राज्य की लड़ाई अधिक है, तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी; इसके साथ–ही–साथ यह वर्चस्व की लड़ाई है, यह अस्मिता की लड़ाई भी है ।

जब हम अमेरिका और यूरोप से तकनीक आयात करते हैं, तब उस आयातित सामग्री के साथ जुड़ी उसकी भाषा भी अपने–आप साथ में चली आती है। अनुवाद से अपने–आप चली आने वाली भाषा से होने वाली क्षति को रोका नहीं जा सकता, क्योंकि 'माउस' का अनुवाद 'चूहा' नहीं हो सकता। माउस को लेने के साथ–साथ माउस की भाषा की संस्कृति भी अपने आप चाहें न चाहें, आपको आत्मसात करनी ही पड़ती है और इस प्रकार उस संस्कृति का आपकी संस्कृति पर आक्रमण हो जाता है या वह संस्कृति आपकी संस्कृति के भीतर प्रवेश कर जाती है।

भारत की सभी भाषाएँ चाहे बृहत्तर प्रयोक्ताओं वाली हों या कम प्रयोक्ताओं वाली आज खतरे के दौर से गुज़र रही हैं। कुछ कम और कुछ अधिक। वे कराह रही हैं और उनकी जनपदीय भाषाएँ अर्थात् बोलियाँ सिसक रही हैं। यह स्थिति भारत के बाहर ही नहीं, भारत में भी होती जा रही है। कुछ के प्रयोक्ता कम हो रहे हैं, कुछ प्रयोग सिमट रहे हैं और कुछ भारतीय भाषाओं के प्रयोग विदेशी भाषाओं के द्वारा जबरन गायब कर दिए जा रहे हैं। मॉरीशस में भी हमारी मूल भाषाओं के साथ ऐसा हो रहा है। यह इसलिए हो रहा है, क्योंकि हममें अपनी भाषाओं के प्रति

स्वाभिमान निरंतर कम होता जा रहा है। हम अंग्रेज़ी संरचनाओं के प्रयोग में गौरव महसूस करते हैं, बल्कि उन स्थानों पर भी जिनकी संरचनाएँ हमारी अपनी भाषाओं में उपस्थित हैं। हम प्राचीन भारत की संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं से भी जुड़े नहीं रह पाए और पश्चिम की भाषा को भी हम पूरी तरह आत्मसात कर नहीं पाए। कुल मिलाकर हमारी स्थिति न इधर की रही और न उधर की, बल्कि हमने ऐसी पीढ़ी गढ़ी, जो न हमारे पूर्वजों की भाषा ठीक से बोल पा रही है और न अंग्रेज़ों की ही। सपने हमें अंग्रेज़ी में आते नहीं और हिंदी सहित भारतीय भाषाएँ हम ठीक से बोल पाते नहीं, कुल मिलाकर हमारी ज़बानों के प्रयोग लड़खड़ा रहे हैं। जो भाषाएँ हमें पीढ़ी–दर–पीढ़ी सींच रही थीं, पहचान दे रही थीं, वे धीरे–धीरे सिमटती जा रही हैं, संकुचित होती जा रही हैं और मरती जा रही हैं। कुल मिलाकर आज उनकी झंकार व पहचान धूमिल होती जा रही है, या फिर तिरोहित हो रही है और धीरे–धीरे ओझल होती जा रही है। यह काम केवल सरकारें ही नहीं कर रही हैं, जनता भी उनके साथ मिलकर खड़ी हुई दिख रही है, या फिर जनता बेसुध होकर होने दे रही है, क्योंकि उसे यह पता नहीं चल रहा कि माजरा क्या है या हो क्या रहा है और वह अंग्रेज़ी को ही अपना मान रही है, बड़ी भयावह स्थिति है। यदि हमने ठीक से सुरक्षा नहीं की, तो कुछ पीढ़ियों के बाद की हमारी पीढ़ी गूंगी और बहरी होगी, जो पूरी तरह हमारी संस्कृति से कटी होगी। ऐसी स्थिति से बचने के लिए हमें यत्न करने चाहिए।

हमारी भाषाओं और उनके साहित्य पर आक्रमण आज़ादी से पहले भी हुआ और आज़ादी के बाद भी और आज भी होता जा रहा है। आज़ादी की लड़ाई में हमने आज़ादी के जो तराने गाए थे, उनसे हमारे मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे सब जागृत हुए थे, सब जागृत हो रहे थे और इसकी पृष्ठभूमि में भक्ति की पूरे देश में व्याप्त एक लंबी परंपरा जागृत हुई थी, सब झंकृत हुए थे, हमारे स्वर झंकृत थे, हमारे शब्द झंकृत थे, हमारी भाषाएँ झंकृत थीं, उस काल का हमारा साहित्य झंकृत था और इसी क्रम में हमारा पूरा राष्ट्र झंकृत हुआ था, पर ऐसा लग रहा है कि आज सब सो रहे हैं। हमारी भाषाओं का, उनके साहित्य का एक–एक अध्यापक जागरण में लगा था, आज सब या तो उदास हैं या उनींदे हैं या फिर सो रहे हैं, या पूरी तरह बेसुध और बेखबर हैं। अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ियत दोनों हमारी भाषाओं को बाहर से भीतर तक प्रभावित कर रहे हैं और यह प्रभाव इतना गहरा है कि हमारी भाषाओं का अस्तित्व तक संकट में आ गया है, बल्कि अब भी होता जा रहा है। हम अपनी भाषाओं के शब्दों को भूलते जा रहे हैं और उनकी जगह अंग्रेज़ी के शब्दों का प्रयोग कर अपने को अभिमानी मानने लग गए हैं एवं अधिक पढ़ा–लिखा मानने लग गए हैं, जबकि तथ्य यह है कि जितने शब्द आप अपनी भाषा के भूलते जा रहे हैं, उतने अंशों में आप अपनी पहचान की हत्या करते जा रहे हैं, क्योंकि आपकी पहचान उतने अंशों में उतने शब्दों को लेकर मरती जा रही है।

दूसरा पक्ष यह भी कि हम भारतीय भाषा का इस्तेमाल तो कर रहे हैं, पर लहज़ा हमारा अंग्रेज़ी का होता जा रहा है। सिर का हिलाना, हाथ का हिलाना या मिलाना, शब्दों का उतार–चढ़ाव अर्थात् आरोह–अवरोह, सब कुछ अंग्रेज़ी का हमें अच्छा लग रहा है या लगने लगा है, पर इसके साथ–ही–साथ इस सबसे एक दूसरा काम और हो रहा है कि जो आपकी प्रकृति है, जो आपने, आपके पूर्वजों ने पीढ़ी–दर–पीढ़ी संभालकर रखी थी, सँजोकर रखी थी, वह आपसे, आपके हाथ से छूटती जा रही है। ज़रा विचार कीजिए – 'क्या आपकी पहचान मर नहीं रही है?' तीसरी बात यह कि भाषाओं के लोक रूप भी तेज़ी से मर रहे हैं, ये लोक–रूप– मुहावरों, लोकोक्तियों, लोकगीतों, लोकगायनों, लोकधुनों, लोकनृत्यों, लोकमुद्राओं आदि के रूप में हैं और रहे हैं। कुल मिलाकर हमारी भाषाओं की पहचानें आज लड़खड़ा रही हैं।

भारत के भीतर और बाहर सर्वत्र हिंदी सहित भारतीय भाषाएँ अपने अस्तित्व के खतरे से जूझ रही हैं, कुछ जल्दी नष्ट होने की कगार पर हैं, कुछ–कुछ काल के बाद। पूर्वोत्तर में तो यह स्थिति बड़ी साफ़ और भयावह दिख रही है और लगातार भाषाएँ मर रही हैं। भारत के बाहर भारतवंशियों की पाँचवीं, छठी पीढ़ी के बाद उनकी भाषा नहीं रह रही है, इसमें हिंदी के विविध रूप भी शामिल हैं। यूरोप व अमेरिका में हिंदी तो दूसरी पीढ़ी के बाद ही लगभग चली जाती है। गुजराती–मराठी तीसरी–चौथी में और कन्नड़–तमिल–तेलुगु आदि तीसरी से पाँचवीं के बीच में

लगभग अधिकांश प्रसंगों में ओझल हो जाती हैं। सभी संदर्भों को लेकर इसके लिए समग्रता में रणनीति बनाये जाने की ज़रूरत है। यह ठीक से बने, तभी भारत बचेगा और भारत की भारतीयता भी। इन्हें बचाने और समृद्ध करने की ज़रूरत है।

दुनिया में खेल कुछ उल्टा हो रहा है, विक्रेता को ग्राहक की भाषा सीखनी पड़े, तो यह उसकी ज़रूरत है, क्योंकि उसे व्यापार करना है, बढ़ाना है, पर हो ये रहा है, ग्राहक ही विक्रेता की भाषा सीखने लग रहा है और इतना ही नहीं अपनी भाषा की जाने–अनजाने हत्या कर रहा है। इसलिए हमारी भाषाओं पर संकट गहरा रहा है और यदि हमारी ये भाषाएँ विलुप्त हो गईं, तो फिर हमारी पहचान भी मर जाएगी और फिर हमारा अस्तित्व ही नहीं बचेगा। इसलिए हमें अपने अस्तित्व को बचाने के लिए अपनी भाषाओं को बचाना आवश्यक है। हमारी भाषाएँ बचेंगी, तो हम बचेंगे।

अंग्रेज़ी ही यदि उद्योग की भाषा है, तो रहे, पर हिंदी और उसकी जनपदीय भाषाएँ तो प्यार की भाषाएँ हैं, जब तक प्यार रहेगा, अपनत्व रहेगा और दोस्ती का पैगाम चलेगा, तब तक हिंदी का विस्तार कुछ जगह हो न हो, पर होता रहेगा और यह प्यार–मोहब्बत वैश्विक है, क्योंकि भारतीय मूल के लोग संसार में लगभग सभी देशों में हैं और वे अपने साथ अपनी भाषा को भी लेकर जाते हैं और वहाँ जाकर वे जब रचना करते हैं, तब वे अपनी भाषा को भूलते नहीं, इसलिए हज़ारों कोस दूर बैठकर भी साहित्य की विविध विधाओं में हिंदी में आज भी सृजन जारी है। इसके विपरीत जो लोग वहाँ जाकर वहाँ की भाषाओं के साथ मिलने पर अपनी भाषाओं को भूलते जाते हैं, वे और उनकी पहचान काल के साथ मिटती जाती है। बहुतों के साथ ऐसा हुआ है, बहुतेरे हिंदी वालों के साथ भी। न संस्कृति उनकी बची, न रिश्ते, न पहचान, अब हो गए वे पाँच–पाँच भूतपूर्व पति और भूतपूर्व पत्नियों वाले, नहीं बचा उनका इस जन्म और सात जन्मों तक रहने और चलने वाला पति–पत्नी का सम्बन्ध और कुल मिलाकर धीरे से अब वे भी हो जाएँगे गायब और बहुत सारे हो भी गए, इसलिए मेरे भाइयो और बहनो!

बचाना है भाषाओं को गुम हो जाने से
बचाना है भाषा को अपनी पहचान खो देने से या खोने से
बचाना है मनुष्य को बेज़ुबान होने से या
उसकी पहचान वाली भाषा के न रह जाने की स्थिति में होने से
बचाना है हमें स्वयं को, अपने परिवार को, देश को
उसके पूरे विस्तार में बोली जाने वाली विभिन्न स्तर की भाषाओं के
कभी धीरे–धीरे, कभी तेज़ी से लुटते जाने से
और कुल मिलाकर बचाना है मनुष्य को गूँगा और बहरा होने से

जिन देशों में हिंदी और भारतीय भाषाओं के विविध रूपों का प्रयोग हो रहा है, उन देशों की बहुतेरी भाषाएँ ऐसी भी हैं, जिनकी कोई लिपि या तो नहीं है, या फिर समुचित नहीं है। कुछ के लिए इसाई मिशनरियों ने भारत के पूर्वोत्तर में और भारत के बाहर कुछ देशों में रोमन का विकल्प सुझाया भी, वह भी पूरी तरह तो क्या, कुछ अंशों में भी काम का नहीं है, क्योंकि उसमें इन भाषाओं की सभी ध्वनियों का प्रतिनिधित्व करने वाले लिपि–संकेत ही नहीं हैं। जब पूरी तरह समृद्ध लिपि ही नहीं बन पाई, जो प्राचीन देवनागरी में थी, वह हमने प्रयोग से बाहर कर दी, तब फिर उस ज़रूरत की पूर्ति करने वाले फ़ॉण्ट आखिर कैसे विकसित होते! नई ज़रूरतों को जोड़ते हुए हमने ऐसी लिपियाँ और फ़ॉण्ट बनाए भी नहीं, क्योंकि हम तो मुफ़्त का खाने के अभ्यस्त हो गए हैं और हम चाहते हैं कि कोई और हमारे लिए बनाकर दे, पर ऐसा सोचते समय हम यह भूल जाते हैं कि जब कोई बनाकर देगा, तब जाने–अनजाने वह उसकी रोयल्टी भी खाएगा और उसकी कीमत भी हमसे वसूलेगा, एक बार बनाएगा और जीवन–भर खाएगा और फिर ऐसे ही हमारी मुद्रा अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में गिरती जाएगी, यही लगातार हो रहा है। बड़ी अजीब बात है – ज्ञान की समृद्ध परम्परा हमारे पास है, मेधा हमारे पास है, काम करने वाले लोग हमारे पास हैं, बाज़ार हमारा है, पर कब्ज़ा उनका है; हमारे ज्ञान का, हमारे बाज़ार का, हमारी समृद्धि का लाभ वे विकसित देश उठा रहे हैं, संस्कृत पर नासा काम कर रहा है और हम मौन या फिर अपने नशे में गाफ़िल। 1901 में हमारा 1 रुपया 26.48 अमेरिकन डॉलर के बराबर था, 1947 में यही 1 रुपया 1 अमेरिकन डॉलर के बराबर और 1984 में जब मैं पहली बार अमेरिका गया, तो वही 1 अमेरिकन डॉलर 12.36 रुपये के बराबर और अब 2018 में जब गया, तो लगभग 70.00 रूपये के बराबर। लगातार

हमारी मुद्रा गिरती गयी, यह इसलिए कि तब हम पूरी दुनिया की नब्ज़ जानते थे, आयात कम करते थे और निर्यात अधिक। आबादी हमारी बढ़ती गयी और फिर हमें आयात अधिक करना पड़ता गया। पहले दुनिया का सबसे अच्छा इस्पात, सबसे अच्छे मसाले, सबसे अच्छे मुलायम और महीन सिल्क और सूती कपड़े आदि हम बनाते थे, अनुसंधाता भी हम थे, निर्माता भी हम थे और विक्रेता भी हम थे और वे थे खरीददार। पर आज वे बौद्धिक विक्रेता हो गए हैं। अपनी भाषाओं से हम छूटते गए, अपने ज्ञान से विलग होते गए, हमारे मस्तिष्क ने दुनिया पर दृष्टि रखना, नया सोचना और सृजन करना लगभग बंद कर दिया, क्योंकि अंग्रेज़ी दासता में हम जकड़ते गए, उनकी आदतों के गुलाम होते गए और अपने को दिहाड़ी मज़दूर में बदलते गए और वे केवल बौद्धिक विक्रेता ही नहीं, बौद्धिक निर्माता भी बनते गए, भले, वे एक भी फ़ैक्ट्री लगाकर भौतिक रूप में कोई भी वस्तु पैदा न करते हों, तब भी। आज हिंदी प्रमुखतः वैश्वीकरण, बाज़ार और परिवार के बीच के अंतर्द्वंद्व में झूल रही है और इन तीनों के बीच का अंतर्द्वंद्व आज पूरे विश्व में बोली जाने वाली हिंदी को या हिंदी के विविध रूपों को प्रभावित कर रहा है। वैश्वीकरण का पर्यायवाची है– भूमण्डलीकरण, जिसकी कुंजी बहुराष्ट्रीय कंपनियों तथा निगमों के हाथों में है और वे अपनी पहुँच व्यापार तक ही सीमित न रखकर, मनुष्य के व्यापार से लेकर जीवन तक के सभी क्षेत्रों में रखने के लिए तेज़ी से बढ़ रहे हैं और सम्पूर्ण संसार की पूंजी भी इन्हीं कुछ लोगों के हाथों में है। आज मीडिया ही नहीं, बहुत देशों का शासन–तंत्र भी इनका गुलाम है और भाषा इनका हथियार। इसका परिणाम यह हो रहा है कि फ़्रांस और जर्मनी, जापान तथा चीन जैसे देशों में भी अर्थशास्त्र और प्रबंधन के ख्यातिलब्ध पाठ्यक्रम अब अंग्रेज़ी में होने लगे हैं। इनका मूल विचार है, एक जैसी तस्वीर देखो, एक जैसा सिनेमा देखो, एक जैसा सपना देखो, एक जैसा विचार करो और एक जैसी भाषा बोलो, एक जैसे परिधान पहनो। इसका परिणाम यह हो रहा है कि हमारी भाषाओं की वैयक्तिक और जनपदीय पहचानें लगातार खतरे में हैं। बाज़ार ने कभी निजी पहचान वाली भाषाओं को बचने नहीं दिया, व्यक्तियों की वैयक्तिक पहचान वाली भाषाओं को भी बचने नहीं दिया और उसने कहा कि तुम बाज़ार की भाषा सीखो, बाज़ार की भाषा अपनाओ। इसका परिणाम यह हुआ कि बाज़ार बदला, तो भाषा भी बदल गयी। बाज़ार की भाषा तो बहुत तेज़ी से बदलती है और उसका बहुत सारा हिस्सा बहुत तेज़ी से मरता भी है या मारा भी जाता है, क्योंकि जो काम का न हुआ या काम का न रहा, उसे वह बाज़ार तुरंत दूर फेंक भी देता है, पर जो भाषाएँ केवल बाज़ार तक सीमित नहीं रहतीं, वे ही बची रहती हैं या उनकी ही बची रहती हैं, जिनके परिवार बचे रहते हैं। जगहें बदलें तो बदलें, पर परिवार स्थिर रूप में बचे भी नहीं रह सकते या नहीं ही रहते, वे तो बदलाव के साथ–साथ निरंतर समृद्ध होते रहते हैं, इनकी भाषा भी समृद्ध होती रहती है। आप मॉरीशस में देखें, त्रिनिदाद में जाएँ, सूरीनाम में जाएँ, इन देशों के थपेड़े भी उन परिवारों की, जनपदों की भाषाओं को मार नहीं पायी, बल्कि ये एक और नया जनपद गढ़ती गयीं।

बाज़ार के थपेड़ों से यदि हम उबरना चाहते हैं, तो जीवन के हर क्षेत्र में हमें फिर से वह काम करना प्रारम्भ करना पड़ेगा, जो हमने अपनी भाषाओं के कारण वर्षों पहले छोड़ दिया है। हमें मस्तिष्क की सृजनात्मकता के लिए व अपने अनंत ज्ञान के स्रोतों को खँगालने के लिए फिर से अपनी भाषाओं से जुड़कर समृद्धि का सपना देखना होगा, उसके अनुसार ताना–बाना बुनना होगा, अपनी क्षमता और शक्ति के अनुसार उसे क्रमशः समृद्ध करते हुए तकनीक विकसित करनी होगी, अपने लिए भी और उनकी ज़रूरतों के लिए भी, जिससे कि वे फिर से हम पर निर्भर हों अर्थात् हम अधिक निर्यात करने लग जाएँ, तो फिर हम समृद्ध होंगे। इसलिए हिंदी सहित समस्त भारतीय भाषाओं की समृद्धि से आर्थिक समृद्धि भी जुड़ी है, क्योंकि बाज़ार हमारा है, जनशक्ति और प्राचीन से प्राचीन ज्ञान–स्रोत भी हमारे पास हैं, पर उनसे हम आज लगभग अनभिज्ञ–से हैं, अतः उन्हें हमें जानना होगा और आज की ज़रूरत के हिसाब से आज की भाषा में अंतराल को भरते हुए उन्हें आज के प्रसंग में उपलब्ध भी कराना होगा। इसलिए हमें संकल्प लेना होगा कि हम वह करके रहेंगे, तभी हम समृद्ध होंगे, हमारी परम्परा समृद्ध होगी।

वर्धा, भारत
vrashabh.jain@gmail.com

टिप्पणियाँ, अनुभव एवं विचार बिन्दु

25. हिंदी ऐसे बन पाएगी राजकाज की भाषा - श्री उमेश चतुर्वेदी

26. विश्व हिंदी सम्मेलन के संदर्भ में बैठकाः धार्मिक-सांस्कृतिक नेतृत्व का प्रतिमान - श्री संजय युधिष्ठिर मनबोध

25

हिंदी ऐसे बन पाएगी राजकाज की भाषा

– श्री उमेश चतुर्वेदी

व्यवसाय :

- (संप्रति) समाचार सेवा प्रभाग, आकाशवाणी में मीडिया सलाहकार
- टेलीविजन और समाचार–पत्रों में पत्रकारिता का ढाई दशक का अनुभव
- ज़ी न्यूज़, इंडिया टीवी और दैनिक भास्कर में कार्य का अनुभव
- भारतीय जनसंचार संस्थान के विज़िटिंग फ़ेलो

प्रकाशन :

- 'बाज़ारवाद के दौर में हिंदी पत्रकारिता' पुस्तक
- 'दिनमान' का मोनोग्राफ़ लेखन
- अब तक करीब पाँच हज़ार से ज़्यादा आलेख
- सैकड़ों साहित्यिक टिप्पणियाँ, बीसियों साहित्यिक साक्षात्कार और सैकड़ों पुस्तक समीक्षाएँ
- कई विश्वविद्यालयों के लिए पत्रकारिता पाठ्यक्रम का निर्माण और लेखन

सम्मान :

मदन मोहन मालवीय, काका कालेलकर पत्रकारिता, अटल पत्रकारिता सम्मान और हनुमान प्रसाद पोद्दार पत्रकारिता पुरस्कार से सम्मानित

तकरीबन एक साथ आज़ादी हासिल करने वाले दो देशों के राष्ट्रनायकों की प्रतिक्रियाएँ एक जैसी थीं। अपनी प्रतिक्रियाओं में उन नायकों ने अपने–अपने राष्ट्रों के निर्माण की भावी रूपरेखा के साफ़ संकेत दिए थे। गांधी की प्रतिक्रिया पर भारत नहीं चल पाया, जबकि भारत से हज़ारों मील दूर तुर्की अपने राष्ट्रनायक के निर्देश पर इतना आगे बढ़ गया कि वहाँ की भाषा में ओरहान पामुक जैसे लेखक पैदा हुए, जिन्हें दुनिया का सबसे प्रतिष्ठित साहित्य का नोबेल पुरस्कार तक हासिल हो चुका है। आखिर क्या वजह रही कि भारतीय राजनय अब भी हिंदी में काम करने की राह ही तलाश रहा है, हिंदी दिवस और हिंदी पखवाड़े के पाखंड में ही डूबा हुआ है, जबकि तुर्की में तुर्क भाषा में राजकाज चलते सत्तर साल हो चुके हैं। इन सवालों का जवाब हर साल खासतौर पर हिंदी दिवस पर तलाशा जाता है और हिंदी पखवाड़ा बीतते–बीतते यह सवाल अगले साल के लिए टाल दिया जाता है।

1947 में आज़ादी मिलते ही गांधी ने बी.बी.सी. को दी प्रतिक्रिया में कहा था, 'पूरी दुनिया से कह दो गांधी अंग्रेज़ी नहीं जानता।' इसके ठीक एक साल बाद तुर्की के राष्ट्रनायक कमाल पाशा ने अपने अधिकारियों से पूछा था, 'तुर्की भाषा में काम शुरू करने में कितना वक्त लगेगा?' अफ़सरों के जवाब जैसे होते हैं, वैसे ही रहे। लेकिन पाशा ने आदेश दिया, 'तुर्की में अभी से काम शुरू किया जाए।''गांधी हिंदी नहीं जानता' का संदेश देकर गांधी भारतीय राष्ट्र को चलाने वालों को साफ़ संकेत दे रहे थे कि भारत को आगे का काम अपनी भाषा में करना होगा। लेकिन गांधी की ही विरासत पर आगे बढ़ने का दावा करने वाले संविधान सभा में बैठे भारतीय राष्ट्रनायकों की एक खेप ने इस संदेश को स्वीकार नहीं किया।

संविधान के अनुच्छेद 343 ने हिंदी को भारतीय संघ की भाषा और देवनागरी को लिपि ज़रूर मान लिया है, लेकिन उसने राजभाषा में कामकाज शुरू करने की पंद्रह साल की जो अवधि तय की, वही गलत था। भारतीय राष्ट्रनायकों की दूरदर्शिता यह आंकने में नाकाम रही कि आने वाले दिनों में भाषा का सवाल किस तरह से उठ सकता है? हिंदी विरोध की आंच तमिलनाडु में सुलगने लगी थी और इसे देखते हुए ही 1963 में राजभाषा अधिनियम पारित हुआ, जिसमें 26 जनवरी 1965 से हिंदी को संघ की राजभाषा के तौर पर स्थापित करने की बाध्यता टाल दी गई। फिर भी जब हिंदी विरोधी आंदोलन नहीं थमा तब 1967 में इंदिरा सरकार ने इस अधिनियम में संशोधन किया, जिसके मुताबिक हिंदी को संघ की राजभाषा बनाने के संवैधानिक प्रावधान पर तब तक के लिए रोक लग गई, जब तक हिंदी का एक भी राज्य विरोध करता रहे। इस अधिनियम को बेशक हिंदी विरोधी

आंदोलन की आंच के दबाव में पास किया गया, लेकिन यह भी सच है नवंबर 1962 में नागालैंड नाम का एक राज्य अस्तित्व में आ चुका था, जिसकी आधिकारिक राजभाषा अंग्रेज़ी है। ज़ाहिर है कि जिस राज्य की राजभाषा ही अंग्रेज़ी हो, वह किस तरह हिंदी को स्वीकार करता। ऐसे में अगर हिंदी समर्थकों को राजकाज से हिंदी को परे रखने के षड्यंत्र में अतीत की सरकारों के अंदरूनी खेल नज़र आते हैं, तो इसमें कोई बुराई नहीं है।

हिंदी को दूर रखने की कोशिश तो संविधान में ही नज़र आती है। संविधान में उपबंध है कि अगर उसके हिंदी पाठ पर विवाद होगा, तो अंग्रेज़ी को मूल माना जाएगा। यानी संविधान ने ही मान लिया कि हिंदी, अंग्रेज़ी के मुकाबले कमतर है। जब ऐसी सोच के साथ राजभाषा का सवाल हल किया जाएगा, तो ज़ाहिर है कि उसका कोई स्पष्ट नतीजा नहीं निकल पाएगा।

इसलिए हिंदी आज भी कम–से–कम संघीय मामलों में राजकाज से पूरी तरह दूर है। राजभाषा अधिनियम 1973 के अधीन हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी में कामकाज करने का प्रावधान तो है, लेकिन संवैधानिक प्रक्रिया में हिंदी को दोयम रखने की नीति से प्रभावित नौकरशाही लगातार हिंदी को किनारे ही रखती रही है। हिंदी में कामकाज को बढ़ावा देने के लिए हर साल सितंबर महीने के पहले पखवाड़े में हिंदी में निबंध, टिप्पणी लेखन, आदि की प्रतियोगिताएँ कराकर, हिंदी में पत्रिकाएँ निकालकर हिंदी के विकास की कहानी लिख दी जाती हैं। हर वर्ग में पाँच हज़ार से लेकर दो हज़ार तक के पुरस्कार बाँटे जाते हैं, हिंदी दिवस के नाम पर भोजन–पानी, मिठाइयों का दौर चलता है और हिंदी को आगे बढ़ाने के कथित संकल्प के साथ हिंदी को विकसित करने के साथ तालियाँ बजा ली जाती हैं और अगले दिन से फिर से राजकाज की बैठकों का ब्यौरा से लेकर आदेश, निर्देश, टिप्पणी आदि का लेखन अंग्रेज़ी में शुरू हो जाता है।

राजकाज ऐसा विषय नहीं है, जहाँ भाषा के साथ ऐसा खिलवाड़ किया जाए। लेकिन भारतीय मानस को इसमें मज़ा आता है। इसके सहभागी भारतीय प्रशासन की रीढ़ माने जाने वाले प्रशासनिक सेवा के वे अधिकारी बनते हैं, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 311 के तहत संवैधानिक छत्रछाया हासिल है। उन्हें अंग्रेज़ी में काम करना और हिंदी में हाथ तंग बताना गौरवपूर्ण कार्य लगता है। मैकाले ने 1835 में अंग्रेज़ी और आधुनिक शिक्षण के लिए अपनी जो मिन्ट योजना पेश की थी, उसका मकसद अंग्रेज़ी जानने वाले लोगों की बढ़ोतरी के साथ ही अपनी भाषा को गुलाम मानने वाले लोगों की संख्या को बढ़ाना था। मैकाले की इस मामले में पीठ थपथपायी जा सकती है कि वह अपने मकसद में कामयाब रहा। भारतीय प्रशासनिक तंत्र अपनी हिंदी को दोयम मानकर ही खुश होता है। वह हिंदी को तभी सीखता है, जब उसे पश्चिम से आयातित बहुराष्ट्रीय निगमों के सॉफ़्टवेयर ऐसा करने को कहते हैं। यहाँ याद दिला देना चाहिए कि भारत के विशाल मध्यवर्ग के बाज़ार को दुहने के लिए बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ हिंदी में कारोबार लेकर उतर रही हैं। माइक्रोसॉफ़्ट भारतीय भाषाओं में भी सॉफ़्टवेयर लेकर आ गया है। गूगल पर संविधान के मुताबिक अंक रोमन की बजाय देवनागरी में भी आने लगे हैं और चूँकि यह सब पश्चिम के ज़रिए आ रहा है, इसलिए इसे सीखा भी जा रहा है। यह गुलाम मानसिकता का ही उदाहरण है कि जिसे हमें स्वनियोजित और स्वप्रेरित तरीके से सीखना चाहिए, उसे हम दकियानुसी मानते हैं और जैसे ही वही चीज़ पश्चिम के विकसित मुल्कों की कंपनियों या सरकारों के ज़रिए हमारे सामने आती है, हम उसे आधुनिकतावादी सोच के साथ स्वीकारने लगते हैं।

प्रशासनिक सेवा में आने वाले लोगों को जब कैडर आवंटित होते हैं तब उन्हें अपने कैडर राज्य की भाषा सीखनी पड़ती है। इसकी शुरूआत अंग्रेज़ों ने ही की थी। कोलकाता के फ़ोर्ट विलियम कॉलिज की स्थापना हो या तरजुमा महकमा की शुरुआत, अंग्रेज़ों ने इन्हें इसलिए बनाया था, ताकि भारतीय प्रशासनिक सेवा में आने वाले अधिकारियों को भारतीय भाषाओं का ज्ञान हो और अंग्रेज़ी से भारतीय एवं भारतीय भाषाओं से अंग्रेज़ी में आधिकारिक चिट्ठियों का अनुवाद हो। फ़ोर्ट विलियम कॉलिज में भारतीय प्रशासनिक अधिकारियों को भारतीय भाषाएँ पढ़ाई जाती थीं, तो तरजुमा महकमा में आधिकारिक चिट्ठियों का अनुवाद होता था। वह तरजुमा महकमा अब गृह मंत्रालय के अधीन अनुवाद ब्यूरो के तौर पर आज भी ज़िंदा है। अंग्रेज़ी सरकार की मजबूरी थी कि उसके पास अंग्रेज़ी जानने वाले अपने अधिकारी ज़्यादा थे। लेकिन उन्हें पता था कि अच्छा राजकाज स्थानीय भाषाओं में ही चलाया जा सकता है, इसलिए अधिकारियों को हिंदी या देसी भाषाएँ सिखाने की प्रक्रिया शुरू की। यह बात और है कि चूँकि ज़्यादातर अधिकारी अंग्रेज़ी माध्यम के विद्यार्थी थे,

इसलिए उनके लिए देसी भाषाओं का मकसद सिर्फ़ आधिकारिक अनुवाद तक सीमित रहा। कहना न होगा कि आज़ादी के बाद भी हिंदी सिर्फ़ अंग्रेज़ी के अनुवाद भर का प्रतीक रह गई है।

भारतीय राजकाज में हिंदी की सबसे बड़ी चुनौती यही है कि यहाँ मूल काम अंग्रेज़ी में होता है। अंग्रेज़ी को लेकर अब भी श्रेष्ठता बोध हावी है। इसलिए कि क्षेत्र के उत्तर भारतीय राज्यों में भी खालिस हिंदी में काम कर सकने वाले बाबू तक गलत ही सही, अंग्रेज़ी में ही सरकारी कामकाज करने को प्रेरित होता है। क्लर्कों को लगता है कि हिंदी में काम करने वाले लोगों को दोयम माना जाता है। वैसे ऐसा है भी। और तो और, हिंदी के पत्रकार तक अपने हिंदी वालों का मज़ाक हिंदी वाला कहकर करते हैं। भाषायी स्वाभिमान उन अधिकारियों में भी नहीं है, जिन्होंने भले ही अपनी पढ़ाई अंग्रेज़ी माध्यम से की है, लेकिन उनकी घरेलू भाषा हिंदी है। एक दौर में हिंदी को बढ़ावा देने में आकाशवाणी का बड़ा योगदान रहा। लेकिन आकाशवाणी के कार्यक्रम भले ही हिंदी में बनते हों, लेकिन उसके समाचारों में उन लोगों को ही तरजीह दी जाती है, जो अंग्रेज़ी में मूलतः काम कर सकते हैं। राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री या ऐसी दूसरी बड़ी हस्तियों की रिपोर्टिंग के लिए हिंदी जानने की बजाय अंग्रेज़ी जानने वालों को तरजीह दी जाती है। भले ही राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री अपना सारा भाषण हिंदी में देते हों।

संवैधानिक प्रावधानों और अंग्रेज़ी माध्यम की पढ़ाई एवं परीक्षा से प्रशासनिक सेवा में आए अधिकारियों ने राजकाज से हिंदी को दूर रखने में बड़ी भूमिका निभाई है। फिर नीति आयोग जैसी संस्थाएँ अंग्रेज़ी में ही नीतियों का मसविदा तैयार करती हैं। कानून मंत्रालय हिंदी की बजाय संसद में पेश किए जाने वाले अधिनियमों का ड्राफ़्ट अंग्रेज़ी में ही तैयार करता है। इसलिए अंग्रेज़ी पर ज़ोर की संस्कृति अब भी हमारे राजकाज में बरकरार है।

नरेंद्र मोदी सरकार बनने के बाद मूलतः अंग्रेज़ी में काम करने वाले अधिकारियों पर हिंदी में कामकाज करने का दबाव बढ़ा नज़र आया था। लेकिन वह दबाव अब कम ही नज़र आता है। अधिकारी फिर से अंग्रेज़ी में ही कामकाज करने में अपनी श्रेष्ठता देख रहे हैं। लिहाज़ा कर्मचारी भी अंग्रेज़ी में ही नोट और टिप्पणियाँ लिखने को मजबूर हैं।

राजभाषा की संसदीय समिति के आदेश के मुताबिक हर तीन महीने में हर सरकारी विभाग में राजभाषा पर कार्यशाला होनी ज़रूरी है। लेकिन विभागों ने इसे रस्मी बना दिया है। तीन महीने बाद विभागों या निगमों के हिंदी और राजभाषा विभाग कथित तौर पर कार्यशाला आयोजित करते हैं, जिसमें हिंदी के विद्वान को बुला लिया जाता है। उसे गुलदस्ता दिया जाता है, एक शॉल ओढ़ाया जाता है। फिर उससे संक्षिप्त भाषण कराया जाता है। फिर उसे दक्षिणा देकर विदा कर दिया जाता है। कार्यशाला का मतलब होता है कि व्यावहारिक तौर पर टिप्पणी आदि लिखने का अभ्यास कराना, लेकिन ऐसा नहीं होता है।

हिंदी को अगर सचमुच की राजकाज की भाषा बनानी है, तो सबसे पहले पाखंड का पखवाड़ा मनाने पर रोक लगा दी जानी चाहिए। हिंदी दिवस के मौके पर सालाना प्रतियोगिताएँ कराने की बजाय अधिकारियों और कर्मचारियों के सी.आर. में एक स्तंभ उनके हिंदी में कामकाज को भी जोड़ दिया जाना चाहिए। किस अधिकारी या कर्मचारी ने साल भर हिंदी में कितना कामकाज किया, उसके आधार पर उसका वरिष्ठ उसकी सी. आर. भरे। अगर ऐसा हो गया, तो दफ़्तरों में हिंदी में कामकाज को बढ़ावा मिलेगा। अधिकारी और कर्मचारी हिंदी में कामकाज करने को मजबूर होंगे। हिंदी पखवाड़े पर खर्च होने वाली रकम भी बचेगी और पाखंड के नाम पर निबंध प्रतियोगिता में चुराकर निबंध भेजने वाले कर्मचारियों पर नकेल लगेगी और हिंदी के नाम पर पिकनिकनुमा माहौल भी खत्म होगा। तब जनता की भाषा में जनता का कामकाज हो सकेगा। हिंदी को हकीकत में राजभाषा बनाने के लिए संसदीय राजभाषा समिति को तिमाही आधार पर होने वाली कार्यशालाओं की निगरानी के लिए भी तंत्र विकसित करना होगा और उसकी पूरी रिपोर्ट मांगनी होगी। कार्यशाला में विशेषज्ञों द्वारा कर्मचारियों–अधिकारियों से कराए गए कार्यों की कॉपियाँ समिति को मंगानी होगी। एक चीज़ और देखी जाती है। हिंदी दिवस के कार्यक्रमों में अखिल भारतीय सेवाओं से चुनकर आए अधिकारी शायद ही शामिल होते हैं। उन्हें भी कार्यशालाओं में शामिल होने के लिए बाध्य किया जाना चाहिए। तभी जाकर हिंदी को हकीकत में राजकाज की भाषा बनाई जा सकती है।

नई दिल्ली, भारत
uchaturvedi@gmail.com

26

विश्व हिंदी सम्मेलन के संदर्भ में बैठका : धार्मिक-सांस्कृतिक नेतृत्व का प्रतिमान

– श्री संजय युधिष्ठिर मनबोध

भारतीय आप्रवासन–काल से मॉरीशसीय समाज में हिन्दू समुदाय का उद्धार करने में बैठकाओं का बहुत बड़ा योगदान रहा है। यह भारतीय आप्रवासियों की मूल से सम्बद्ध था, जिसे भारत से लाया गया और मॉरीशस में बसाया गया। बैठका पूरे देश में झोंपड़ियों के रूप में स्थापित, शिक्षा तथा संस्कृति के प्रचार–प्रसार में रत, सांस्कृतिक मूल्यों से परिपूर्ण, भारतीय आप्रवासी समुदाय में अपनत्व का प्रतिनिधित्व करता था। तत्कालीन समय में बैठका एक ऐसा मंच भी था, जहाँ पर सामाजिक–पारिवारिक परियोजनाओं पर विचार–विमर्श हुआ करता था। हिंदी भाषा के पठन–पाठन तथा संवर्धन, आपसी सद्भाव और सहयोग तथा संस्कार, शिष्टाचार जैसे धार्मिक, सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण और सशक्तिकरण की माँग को लेकर सामूहिक स्वर इसी मंच से उठता था। यह ऐसा प्रतिमान था, जिसने औपनिवेशिक कालीन दैनिक यातनाओं से उबरने के लिए आप्रवासी समुदाय के बीच समरसता, सामंजस्य और दृढ़ता का मूल मंत्र फूँका।

बैठकाओं का नेतृत्व दूरदर्शिता पर आधारित था। उनका उद्देश्य हर नगर तथा गाँव के ढाँचे में हिंदी को सशक्त रूप से स्थापित करना था, क्योंकि उस समय के सर्वोच्च अनुक्रम के चलते, हिंदी ही वह सक्षम माध्यम बन सकती थी, जिससे रामायण, गीता, वेद आदि शास्त्रों का पठन और उनसे निःसृत ज्ञान का प्रसार हो सकता था। इस प्रकार समाज में मूल्यों का प्रसार होने लगा। बैठका इस कार्य को बढ़ावा देने के लिए एक नर्सरी का काम करती थी। कुछ बैठकाएँ जूनियर स्कोलॉर्शिप और स्कूल सर्टिफ़िकेट के छात्रों के लिए ऐसे पाठ भी तैयार करते थे, जो उन्हें अपने अध्ययन में और भी सक्षम बनाते थे।

प्रतिदिन सायंकाल में देश की बैठकाएँ सजीव हो उठती थीं। छात्र–गण समूह में अपने गुरुजी से मिलने जाते थे। वे तख्त पर बैठते थे और सभी छात्र पीढ़ों या चटाई पर। गुरुजी समर्पित भाव से उत्साहपूर्वक छात्रों को पढ़ाते थे।

कक्षा का प्रारम्भ 'गायत्री मंत्र' के उच्चारण से होता था, फिर हिंदी की कक्षा होती थी। उसके बाद, 'शांति पाठ' (सर्व के कल्याण व शांति की प्रार्थना) से समापन होता था। रात्रि में दीये या फिर लालटेन जलाए जाते थे। इसी के आलोक में दैनिक सत्संग हुआ करता था, जिसके अंतर्गत एक उत्साहपूर्ण वातावरण छाया रहता था और एक गहन पारिवारिक मेल–मिलाप की प्रेरणा मिलती थी। इन सबके बाद, 'रघुपति राघव राजा राम...' जैसे धार्मिक भजन गाए जाते, जिससे उस कठिन समय में हताश लोगों को मनोबल मिलता था।

जन्म : 21 फ़रवरी 1960

शिक्षा :

- एम.बी.ए.
- लोक प्रशासन में स्नातकोत्तर डिप्लोमा
- एम.फ़िल. – समाज–विज्ञान
- प्रबंधन में डिप्लोमा
- प्रशासन एवं प्रबंधन में डिप्लोमा
- कार्मिक प्रबंधन और औद्योगिक संबंधों में डिप्लोमा
- जनसंपर्क एवं पत्रकारिता में डिप्लोमा
- उष्णदेशीय कृषि और कृषि–वानिकी में डिप्लोमा
- "Bhagwad Gita and the Ramayana as cross-cultural paradigms of management/leadership v/s Western and American based models" पर शोध

व्यवसाय :

- (संप्रति) उपस्थायी सचिव, शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय, मॉरीशस
- पूर्व में लिपिक अधिकारी, कार्यकारी अधिकारी, संस्थापन अधिकारी (मानव संसाधन कैडर), सहायक सचिव (प्रशासनिक कैडर)
- विभिन्न मंत्रालयों/विभागों में काम किया है
- सार्वजनिक क्षेत्र में 35 से अधिक वर्षों से सेवारत

बैठकाओं में जहाँ एक तरफ़ लोगों को सुसंस्कृत किया जाता था, तो दूसरी तरफ़, हिंदी के पठन–पाठन के अंतर्गत, 'प्रवेशिका', 'परिचय', 'प्रथमा' जैसी परीक्षाओं के लिए व्याकरण, भारत का सदियों पुराना इतिहास, साहित्य, काव्य आदि पढ़ाए जाते थे।

बैठकाओं के प्रचार–प्रसार और सुचारु संचालन में अन्य महान व्यक्तित्वों के साथ–साथ महात्मा गांधी और मणिलाल डॉक्टर की प्रेरणा और प्रभाव विशेष उल्लेखनीय है। उनका नारा था कि 'कर्म ही पूजा है' और 'शिक्षा में निवेश करना पूजा है'। साथ ही, सक्रिय राजनीति को भी प्रोत्साहित किया जाता था। उसके बाद बैठकाओं की संस्कृति, आयाम तथा भूमिका को लेकर एक सैद्धांतिक कार्यनीति अपनाई जाने लगी। मूल बात थी शैक्षणिक बैठकाओं की, जहाँ अकादमिक और मूल्यनिष्ठ शिक्षा प्रदान की जाती थी, जहाँ बैठका सांस्कृतिक व धार्मिक मूल्यों का आश्रय थी। भले ही हिन्दू परिवार आर्थिक रूप से संपन्न नहीं थे, फिर भी वे अकादमिक तथा सांस्कृतिक, दोनों क्षेत्रों में अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए उत्सुक थे।

अतः पारंपरिक, आधुनिक एवं पारिवारिक तथा सामाजिक विकास के बीच, बैठका सेतु का काम करता था। इसके अलावा, कई सामाजिक चुनौतियों का सामना करते हुए भी बैठका एक राजनीतिक–सांस्कृतिक वातावरण पैदा करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता था। लोगों का मार्गदर्शन करते हुए शिक्षण का यह स्थल आंदोलनों के नेतृत्व का केंद्र बनने लगा था, जहाँ से 'जन संघ' उभरकर आया था। यह संघ औपनिवेशिक शासन–तंत्र तथा बुर्ज़ुवा व्यवस्था के खिलाफ़ खड़ा होने के लिए लोकप्रिय था। इस दिशा में हिंदी तथा भोजपुरी जनसंपर्क और संप्रेषण के लिए सशक्त तथा सम्पूर्ण माध्यम बन गयी थीं।

दुर्भाग्य से यह कहना पड़ रहा है कि आज इसकी गति में शिथिलता आ गयी है। औद्योगिक तथा डिजिटल क्षेत्रों के चलते धीरे–धीरे बैठका और हिंदी अपना महत्त्व खोने लगी हैं। इस शैक्षणिक संस्था की जड़ें धीरे–धीरे कमज़ोर होती जा रही हैं। बैठका के प्रति अब नोस्टाल्जिया की भावना रह गई है। आज, जबकि हम समाज में मूल्यों का हनन होते हुए देख रहे हैं, समय आ गया है कि बैठकाओं के स्थायित्व को सुनिश्चित करने के क्रम में, उन्हें पुनर्जीवित किया जाए। इस समुदाय में उन्नति केवल अकादमिक स्तर पर समृद्धि पा लेने तक सीमित हो गयी है, आध्यात्मिक स्तर पर वह दीनता की ओर बढ़ रहा है। इस चुनौतीपूर्ण स्थिति में सुधार लाने के कौन से नए उपाय हैं?

मॉरीशस
ymunbodh@govmu.org

कृतिकार का उद्देश्य या लक्ष्य केवल अनुभव का सम्प्रेषण है। सहज बोध द्वारा अपनी अनुभूतियों से व्यापकता अनुभवों में प्रवेश, उन अनुभवों की पकड़ और उनका सम्प्रेक्षण, यही उसका लक्ष्य है। यह पूरा हो जाता है, तो उसे तृप्ति होती है, यही आत्माभिव्यक्ति का सन्तोष है, यद्यपि आत्माभिव्यक्ति लक्ष्य नहीं था और यह पूरा हो जाता है, तो समाज प्रभावित भी होता है, यद्यपि समाज को प्रभावित करना भी लक्ष्य नहीं था।

– अज्ञेय

विश्व हिंदी सम्मेलन

27. मेरा बचपन, सूरीनाम और सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन – श्रीमती उषा राजे सक्सेना

28. पहला विश्व हिंदी सम्मेलन : एक अविस्मरणीय अनुभव – श्री सुरेश रामबर्ण

29. पूर्व में विश्व हिंदी सम्मेलनों में पारित प्रस्तावों का कार्यान्वयन – डॉ. उदय नारायण गंगू

30. 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन की सुमधुर स्मृतियाँ – डॉ. संयुक्ता भुवन-रामसारा

31. विश्व हिंदी सम्मेलनों का प्रभाव – डॉ. सरिता बुद्धु

32. 11वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन: एक सुखद अनुभव – डॉ. देवभरत सिरतन

27

मेरा बचपन, सूरीनाम और सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन

– श्रीमती उषा राजे सक्सेना

शिक्षाः एम.ए. (अंग्रेज़ी साहित्य)

व्यवसाय :

❖ शिक्षक (प्राथमिक तथा माध्यमिक)
❖ वरिष्ठ व्याख्याता (महात्मा गांधी संस्थान)
❖ फ्रीलांस पत्रकार (एम.बी.सी)

प्रकाशन :

❖ देशांतर प्रवासी भारतीयों की कविताएँ, 2013
❖ क्या फिर वही होगा, काव्य–संग्रह, 2012
❖ वह रात और अन्य कहानियाँ, 2007
❖ ब्रिटेन में हिंदी, 2006
❖ तथा अन्य प्रकाशन

सम्मान :

❖ सन् 2012 में, देवगुरु बृहस्पति अकादमी–कानपुर द्वारा 'साहित्य वाचस्पति' की मानद उपाधि प्रदान की गई।
❖ सन् 2011 में, डॉ. हरिवंशराय बच्चन यू.के. हिंदी लेखन सम्मान से भारतीय उच्चायोग द्वारा सम्मानित किया गया।
❖ सन् 2007 में, प्रवासी संसार द्वारा श्रीमती विमल गोयल स्मृति पुरस्कार, दिल्ली से पुरस्कृत किया गया।

2003 में भारतीय उच्चायोग ने अपने औपचारिक निमंत्रण–पत्र में लिखा था कि, 'सूरीनाम में 5–9 जून को सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। यह वर्ष सूरीनाम में भारतीयों के प्रथम आगमन की 130वीं वर्षगाँठ के रूप में मनाया जा रहा है।'

सूरीनाम.....सूर्यनाम, हमारे भारतवंशियों का देश.... ढेरों स्मृतियाँ मन–मस्तिष्क में बवंडर मचाने लगती हैं।

दशकों पहले की बात है कि गोरखपुर और उसके आस–पास के ज़िले, बस्ती, देवरिया, बड़हलगंज, महराजगंज आदि गाँव से बहुत लोग अच्छे और सुखद भविष्य की तलाश में रेलगाड़ी से कलकत्ता और कलकत्ता से पानी के जहाज़ में सूरीनाम गए थे। बरसों बाद, कुछ लोग लौट भी आए और कुछ लोग वहीं बस गए। मैं पुराने समय में लौट जाती हूँ, जब रोहिणी नदी पर बाँध नहीं बना था और हर बरसात में रोहिणी उफ़न पड़ती और पूरा बसिया डीह और सूरजकुंड तबाह हो जाता। माधोपुर और उसके आस–पास के इलाकों का शहर से संपर्क टूट जाता।

पतली, शांत, सुनहरी–चँदीली रोहिणी नदी साँप की तरह बल खाती, हमारी हवेली से बस चौथाई मील की दूरी पर बहा करती थी। अब बाँध बन जाने से दूरी ज़्यादा हो गई है। बरसात में रोहिणी कुछ इस तरह क्रोधित हो उठती, कि रातों–रात बिना बताए बाभन, केवट, बारिन और चमार टोले के कच्चे घरों को लील जाती। अफ़रा–तफ़री मच जाती। अंधेरे में, लालटेन और लुआठी की रोशनी में लोग भागते।

हमारी हवेली उँचाई पर थी। रोहिणी का पानी उसे छू नहीं पाता। नाना जी और मुंशी हरीराम हाथी दरवाज़े का फाटक खोल देते, औरत–मर्द, बच्चे–बूढ़े, ढोर–डंगर सब अंदर आ जाते। मैं बड़की दीदी के साथ अतारी पर खड़ी लोगों की लाचारी, कराह और रोना–धोना, चीख–पुकार सुनती। दिल दहल जाता। मैं रोने लगती। दीदी का हाथ मेरे कंधे पर कस जाता। अम्मा सौरी में थी। छोटा भइया जो आया था। मुंशी जी लोगों से कहते, "इ अन्धियारा में हाथ–के–हाथ नाही सूझत बा, जाव जा के सोई जाव। भिन्सारे देखल जाई। छोटकी मालकिन के तबियत ठीक नाहीं बाए। डाक्टर बाबू आइल रहलें।" कहते हुए मुंशी जी पिछवाड़े के कच्चे ओसारे और खाली पड़े गौशाले और घुड़साल में लोगों को जल्दी से जाने को कहते।

नानी, परबतिया और अन्हरी से पुराने खेस, चादर और चटाइयाँ नीचे भेजवातीं। महाराजिन रसद का इंतज़ाम करतीं। नाना जी की ज़मींदारी बहुत बड़ी थी। खाने–पीने की कोई कमी कभी नहीं होती। रात भर कोई नहीं सोता। बगिया वाली दादी आ जाती और अलाव जल जाता। फिर तो जब तक नदी उतर नहीं जाती, घर के पिछवाड़े कुछ जश्न जैसा माहौल होता। नानी

के भंडारे से रसद आता। बड़े से बटूले में खिचड़ी बनाई जाती, लिट्टी–बाटी और आलू–भाँटे का चोखा बनता। उन दिनों हम बच्चों को महाराजिन की बनाई रसोई अच्छी नहीं लगती और वहीं सूरीनाम से लौटी सुगन काकी, बिसनदेई दिदिया, घसीटा काका और बखरी बाबा से सूरीनाम की कहानियाँ सुना करते, दस बार मुंशी हरी राम बुलाने आते तब कहीं हम बच्चे घर जाते।

उन दिनों भारत में भुखमरी और छुआछूत बहुत थी। दुखिया लोग घर–परिवार और देश को छोड़ सूरीनाम 60 सेन्ट (पुरुष) और 40 सेन्ट (औरत और बच्चे) की मज़दूरी पर भागे। कुछ लोग ज़बरदस्ती भी ले जाए गए। सूरीनाम जंगली द्वीप था। कोई सुविधा नहीं। न घर–द्वार, न कोई मेडिकल और ना ही शिक्षा का कोई प्रबंध। निरीह ढोर की तरह लाकर छोड़ दिए गए लोग सूरीनाम द्वीप में 'श्री राम' के देश के मुगालते में।

वक्त ने यादों को धुंधला दिया था, पर उच्चायुक्त के निमंत्रण से स्मृतियाँ जीवंत हो उठीं।

और बस फिर राजे जी टिकट, वीसा और रिहाइश आदि के प्रबंध में लग गए। और मैं विश्व हिंदी सम्मेलन में पढ़ने के लिए आलेख तैयार करने लगी।

30 मई को, हम लोग हीथ्रो हवाई अड्डे से ब्रिटिश वेस्ट इंडीज़ एयर लाइन के जहाज़ से उड़े। पहला पड़ाव सात घंटे बाद 'सेन्ट लूसिया' था। वहाँ से उड़े तो डेढ़ घंटे में 'पोर्ट ऑफ़ स्पेन' पहुँचे और वहाँ पर सात घंटे की उबाऊ, प्रतीक्षा करनी पड़ी। फिर दो घंटे में हम 'पारामारिबो' सूरीनाम की राजधानी पहुँचे। पूरे पंद्रह घंटे की यात्रा और हम थकावट से चकनाचूर हो गये थे।

पारामारिबो के छोटे से अर्द्धविकसित हरे–भरे हवाई अड्डे पर झमाझम बरसात में, भारतीय उच्चायोग के अधिकारियों ने हमारा स्वागत किया। सामने खूबसूरत 'विश्व हिंदी सम्मेलन' का बैनर लगा हुआ था। हवाई अड्डे पर सभी बेहिचक हिंदी में बात कर रहे थे। हवाई अड्डे का प्रबंधन–कक्ष एक छोटे से हॉल के अंदर था। लगा कि हम अपनों के बीच आ गए हैं। वही अपनापन, वही बेफ़िक्री, वही अलसाया मध्यम गति वाला वातावरण।

पारामारिबो का हवाई अड्डा शहर से 40 मील दूर है। सूरीनाम एक छोटा–सा देश है। अन्य पश्चिमी देशों की तरह, यहाँ अभी 21वीं सदी के अधुनातन सुख–सुविधाओं का विकास नहीं हुआ है। लोग अभी भी उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में उन्नत सभ्यता के अनुसार रह रहे हैं। भारत से तकरीबन साढ़े चार सौ सरकारी अतिथि आने वाले थे। तमाम होटल उन लोगों के लिए आरक्षित हो चुके थे। अतः हमने अपने रहने का प्रबंध, अपने संपर्क पर, श्री कृष्ण मंदिर में कर लिया था। सुबह के 3.30 बज रहे थे। हमें अपने मेज़बान की फ़िक्र थी। वे हमारी प्रतीक्षा में बैठे होंगे।

भारतीय उच्चायोग की गाड़ी से हम 4 बजे सुबह श्री कृष्ण मंदिर के आवास पर पहुँचे। पंडित श्री हलधर मथुरा प्रसाद तथा उनके पुत्र सहन में खड़े, बड़े धैर्य से हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। अभी भी बारिश हो रही थी। सड़क के दोनों ओर कच्ची ज़मीन पर पानी की तरह बच्चे चमक रहे थे।

पंडित जी के भव्य एवं विनम्र व्यक्तित्व तथा विशाल मंदिर और भवन से हम लोग अत्यंत प्रभावित हुए। लग रहा था उनका यह विशाल आवास रामायण और कल्याण में चित्रित महलों की भव्य परिकल्पना है। द्वार पर ही एक ओर बृहत्कुंड में विशालकाय शिवलिंग के दर्शन हुए। शिवलिंग की बाईं ओर कुंजन–बन में राधा–कृष्ण की मनोरम जोड़ी सुंदर वैजंती माला पहने दर्शन दे रही थी।

सुंदर विशाल सदन में बैठे हम लोग थोड़ी देर पंडित जी से बातें करते रहे। शीघ्र ही हमारे चेहरों पर आई थकान को देखकर पंडित जी ने हमें हमारे रहने का स्थान दिखाया। इतना सुंदर भवन! इतनी कुशल व्यवस्था! हमारी सुविधा की हर चीज़ कमरे में रखी हुई थी। पंडित जी संभवतः हमारे मन में उठ रहे विचारों को समझ गए और बोले, 'अतिथि देवो भव, आप लोगन हमरे लिए ईश्वर स्वरूप हैं। आप संकोच तनिकौ नाहि करै।' पंडित जी से बातें करते हुए हमें एक पल भी ऐसा नहीं लगा कि हम अपरिचित थे। उनका स्नेह ही ऐसा था।

पंडित जी ने अब अवकाश ग्रहण कर लिया था। अब उनके पुत्र श्री कृष्ण मथुरा प्रसाद जी पंडिताई करते हैं।

दूसरे दिन, हमें पंडित जी का प्रवचन सुनने का विशेष सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रवचन से पूर्व सूरीनामी बाल–गोपालों ने भारतीय पारंपरिक परिधान में फूल, अक्षत, रोली और आरती से भगवान की अभ्यर्थना की। मंदिर में, असंख्य दीप जल रहे थे। प्रभु की वेदिका के समक्ष लम्बा–सा कक्ष था, जिसमें भक्तों के बैठने के लिए चर्च की तरह ढासनेदार बेंचें थीं। वेदिका के किनारे व्यासपीठ थी। मधुर–मधुर संगीत की स्वर लहरी वातावरण में

रस बरसा रही थी। धूप बत्ती की सुगंध से वातावरण आध्यात्मिक बन रहा था।

बड़ी संख्या में श्रद्धालु जन प्रेम–मग्न होकर तन्मय बैठे थे। तिलक और रेशमी उत्तरीय धारण किए, पंडित श्री कृष्ण मथुरा प्रसाद हारमोनियम और सिनथेसाइज़र के ऑरकेस्ट्रा पर भजन–कीर्तन करते हुए प्रवचन सुना रहे थे। हम भी उनके साथ भाव–विभोर हो उठे। भारत से आए श्री गोपेश गोस्वामी ने भी गीता–प्रवचन किया, जिसे सुनकर सूरीनाम की जनता गदगद हो उठी।

जलपान के मध्य पंडित जी ने हमें बताया कि वह उच्च कुल के सनातन–धर्मी कर्मकाण्डी पंडित हैं। उन्होंने कई शास्त्रार्थ जीते हैं। सूरीनाम में कर्मकाण्डी का बहुत महत्त्व है। नीचे हॉल के बगल में पंडित जी की पंडिताई की दुकान है, उसमें जन्म से लेकर मरण तक के सारे संस्कारों के लिए पूजा, हवन आदि के सामान और पुस्तकें करीने से सजी हुई थीं। पंडित जी ने स्वयं कर्मकाण्ड और भजन की असंख्य पुस्तकें लिख रखी थीं। पुस्तकें भारत में ही छपती हैं। सूरीनाम मंदिरों का देश है। हर घर के बाहर बाँस के डंडों पर झंडे लगे हुए हैं। जिसके घर जितने झंडे लगे हैं, उसने उतने ही यज्ञ और पूजा कराए हैं। झंडों के लाल, पीले, नीले रंग बताते हैं कि परिवार किस देवता के उपासक हैं।

यहाँ भी पश्चिम के अन्य देशों की तरह माता–पिता भोजपुरी और हिंदी बोलते हैं, किन्तु बच्चे और युवा वर्ग उत्तर डच में ही देते हैं। सूरीनाम में, हिंदी, रोमन यानी अंग्रेज़ी लिपि में लिखी जाती है। वेशभूषा सुविधानुसार, पाश्चात्य सभ्यता के अनुसार है, किन्तु आस्था 'श्री राम जी' में है। हिंदी और हिंदू संस्कृति का सूरीनाम में क्या भविष्य है? मैंने स्वयं, यहाँ–वहाँ छोटा–मोटा सर्वे किया। मेरी आँखों के सामने पंडित जी की पोतियाँ आ जातीं, जो मुझसे काफ़ी हिल–मिल गई थीं। लड़कियाँ अधिकांशतः सिर हिलाकर मेरे प्रश्नों का मूक उत्तर देती थीं और मैं समझती, वे शर्मीली हैं। पर बात यह नहीं थी।

पारामारिबो, सूरीनाम की राजधानी, उत्तर प्रदेश का कोई हरा–भरा छोटा शहर जैसा लगता है। सूरीनाम की उपजाऊ मिट्टी का कोई उपयोग नहीं हो रहा। लोग खेती–बाड़ी की ओर से उदासीन हैं। अंदर गाँवों में नशीले पदार्थों की खेती होती है। सूरीनाम नदी बहुत बड़ी है, जो सारे सूरीनाम में बहती है। उसका पाट खूब चौड़ा है।

बारिश खूब होती है। छोटे कद के आम के वृक्ष आम से लदे रहते हैं। सूरीनामी आम नहीं खाते हैं। पेड़ों पर लटकते गुदाज़, सिंसूरिया, तांबई और सुनहरे आम मुझे अक्सर ललचाते। मैं शाम को पेड़ पर लटकते आमों को तोड़ लाती। आम स्वादिष्ट, रसीले और मीठे थे।

मुझे लगा कि सूरीनाम को देखना और समझना मेरी ज़रूरत बनती जा रही है। मैंने अपनी आँख और कान खुले रखने का प्रयास किया। सूरीनाम की पूर्व एम.पी. और विधानसभा की महिला अध्यक्षा श्रीमती इंदिरा देज्यवी ज्वालाप्रसाद ने अपने आवास पर उत्तर–प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष, श्री केशरीनाथ त्रिपाठी के साथ मुझे भी निमंत्रित किया। बातचीत के दौरान उन्होंने सूरीनाम के तमाम राजनीतिक उठा–पटक और आंतरिक स्थिति का खुलासा किया।

सूरीनाम स्वतंत्र देश है। इसकी जनसंख्या भी अधिक नहीं है। डच सरकार सूरीनाम को आर्थिक सहायता देती है। देश की मिट्टी उर्वरा है। धूप है, बारिश है, नदी है, उपजाऊ ज़मीन है, फिर यह देश प्रगति क्यों नहीं कर रहा है? अकर्मण्यता, आपसी फूट और मानसिक बल की कमी के साथ पुरानी दासता अदृश्य रूप से जीवन–पद्धति में विष–वमन करती रहती है। साथ ही, स्वार्थी राजनीतिज्ञ, लोलुप सत्ताधारी की मानसिक वृत्ति के कारण ही संभवतः उन्नति नहीं हो रही है।

रेडियो राधिका और एक अन्य राष्ट्रीय रेडियो पर मेरा साक्षात्कार हुआ। मुझसे अधिकांश प्रश्न सूरीनाम में होनेवाले हिंदी–सम्मेलन और इंग्लैण्ड में हिंदी की स्थिति के बारे में पूछे गए। मैंने यू.के हिंदी समिति 'पुरवाई', 'कथा यू.के.', 'बर्मिंघम बहुभाषीय समुदाय' और 'हिंदी ज्ञान–प्रतियोगिता' आदि के बारे में बताया। राधिका जी ने कहा कि सूरीनाम में पश्चिमी भाषाएँ उद्योग–धन्धों और प्रौद्योगिकी के कारण अपनी जड़ें बाज़ार में जमा चुकी हैं। हिंदी उनसे टक्कर नहीं ले पा रही है। धीरे–धीरे हिंदी पूजा–पाठ, गीत–गज़लों और सामाजिक उत्सव की भाषा होती जा रही है। वैसे भी सूरीनामी हिंदी रोमन में लिखी जाती है। युवा वर्ग दिग्भ्रमित है। सारी पढ़ाई डच माध्यम से हो रही है। वैसी ही स्थिति जैसे भारत में होती जा रही है। राधिका जी को भारत में अंग्रेज़ी भाषा के विराट साम्राज्य का पूरा ज्ञान है। क्यों न हो, आखिर वह एक जागरूक पत्रकार है।

शाम को पंडित जी और उनके बेटे कृष्ण जी ने हमें

पारामारिबो के सभी दर्शनीय स्थलों से परिचित कराया। जैसे शहर, बाज़ार, नगर, खेत, सूरीनाम नदी, उसपर बना अद्वितीय अर्ध–गोलाकार पुल और वह घाट जहाँ पहली बार 'माई–बाप' नाव से इस अनजान देश में उतरे थे। सूरीनामी इस तट को पवित्र मानते हैं और यहाँ 'माई–बाप' यानी प्रथम स्त्री–पुरुष की मूर्ति 5 जून 1993 को स्थापित की गई थी। उस मूर्ति को एक क्रियोल कलाकार ने बनाया था।

सूरीनाम में गहमा–गहमी और चहल–पहल शुरू हो गई थी। सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन का कार्यक्रम तेज़ी से आकार लेने लगा था। जगह–जगह बैनर और पोस्टर कार्यक्रम की सूचना दे रहे थे। स्थानीय लोगों में विश्व हिंदी सम्मेलन की सुगबुगाहट अधिक नहीं है। नई पीढ़ी रंग–भेद और नस्ली रूढ़ियों से बहुत दूर निकल चुकी है। शादी–ब्याह में माँ–बाप अब ज़रा कम ही अड़चनें पैदा करते हैं। युवा वर्ग के मनोभाव पश्चिम से ज़्यादा मेल खाते हैं।

4 जून का दिन था। भारतीय उच्चायोग में बड़ी सरगर्मी थी। खूब ज़ोर–शोर से तैयारियाँ हो रही थीं। भाग–दौड़ गहमा–गहमी थी। गाड़ियाँ हाइ–कमीशन से एयरपोर्ट और एयरपोर्ट से होटलों के चक्कर लगा रही थीं। अतिथियों के जत्थे–के–जत्थे आ रहे थे। विदेश मंत्री श्री दिग्विजय सिंह जी भी अपने शिष्ट मंडल के साथ आ चुके थे। तकरीबन सभी बड़े होटल भर चुके थे। अतिथि अनुमान से ज़्यादा थे। बन्द होटल खुलवाए जा रहे थे। एक–एक कमरे में दो–दो और तीन–तीन लोगों को ठहराया जा रहा था। मित्रता और सौहार्द का समय था। सूरीनाम छोटा भारत है। हृदय में स्थान होना चाहिए तब सबके लिए जगह बन जाती है। हमने सुविधा के लिए दो–तीन दिनों के लिए विजय कुमार मल्होत्रा और सुनील जोगी के साथ होटल तोरारिका में आवास ग्रहण किया। दिन में दो–दो, तीन–तीन कार्यक्रम चल रहे थे। मंदिर से रोज़ इतनी सुबह आना संभव नहीं था।

विशाल चार सितारा होटल तोरारिका बड़ी ही सुरुचि से सजाया गया था। स्टाफ़ का व्यवहार अतिथियों के प्रति विनम्र और शिष्ट था। स्वीमिंग पूल, ज़कूज़ी, सोना–बाथ, जिम, टेनिस कोर्ट सब कुछ अतिथियों की सेवा में हाज़िर था। खुले मैदान में खूबसूरत फूलों से सजा कॉफ़ी हाउस, मदिरालय (वाइन बार) भी था। काफ़ी बड़ी तादाद में भारत से आए अतिथि वहाँ ठहरे थे। सम्मेलन के विभिन्न सत्र होटल तोरारिका के डायनिंग हॉल में थे। जलपान और स्वादिष्ट भोजन बहुतायत और कलात्मक ढंग से एक लंबे मेज़ पर समय से सजा होता था। खाने–पीने वालों को तो आनंद ही आनंद आ रहा था।

सम्मानित होने वाले एवं विशिष्ट अतिथिगण होटल कृष्ण पोलस्की में ठहरे थे। पोलस्की का स्टैंडर्ड, सर्विस और साज–सज्जा अन्य होटलों की तुलना में बेहतर था। कमलेश्वर जी, हिमांशु जोशी, कुँवर बेचैन, सोम ठाकुर तथा अन्य साहित्यकार होटल एम्बेसडर और स्टार–डस्ट में ठहरे थे, जो होटल तोरारिका से काफ़ी दूर है। आने–जाने के लिए वाहनों का समुचित प्रबंध था। प्रेस वाले कुछ सनसनीखेज न्यूज़ बनाने का प्रयास कर रहे थे।

राष्ट्रपति ने अपने महल में अतिथियों एवं सूरीनाम के विशिष्ट नागरिकों को रिसेप्शन दिया। पंडित हलदर मथुरा प्रसाद जी और उनके पुत्र ने अपने पारंपरिक परिधान में पदार्पण किया। हम पल भर उन्हें देखते ही रह गए। कैसा अलौकिक तेज दमकता था, उनके व्यक्तित्व में हम पंडित जी के साथ, तोरण, बिजली के लट्टुओं, रंग–बिरंगे फूलों और झंडों से सजे राष्ट्रपति–महल के प्रमुख द्वार पर पहुँचे।

फूलों, लताओं, आम और प्रहरी से खड़े खजूर और पॉम के बीच बना राष्ट्रपति का भव्य महल किसी कहानी किस्से में पढ़े परी–महल से कम नहीं लग रहा था। चारों तरफ़ रोशनी का सैलाब बिखरा हुआ था। आसमान में खिले चाँद–तारे और नीचे पानी के फव्वारे, मखमली हरी घास, पेड़–पौधे, परिवेश को बना रहे थे। रंगीन और आकर्षक समा था। महल में पारामारिबो के सभी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति तथा भारत एवं विदेशों से आए राजदूत, शिष्ट–मंडल और अतिथियों का जमघट लग रहा था। लोग जोड़ों और टोलियों में आ रहे थे। अतिथियों ने मन पसंद आकर्षक वस्त्राभूषण धारण कर रखे थे।

राष्ट्रपति श्री वेनेत्शियान, अपनी पत्नी और अंगरक्षकों के साथ हॉल में खड़े अतिथियों से हाथ मिलाते हुए अत्यंत विनम्र और सौजन्य से हर किसी से कुछ–न–कुछ मनोरंजक बात कह सिर हिलाते हुए हँस देते और अतिथि निहाल हो जाते।

राष्ट्रपति श्री वेनेत्शियान के साथ भारत के विदेश मंत्री श्री दिग्विजय सिंह और उनके नेतृत्व में आए भारतीय शिष्टमंडल एवं विश्व भर से पधारे हिंदी सेवियों का स्वागत सूरीनाम के राष्ट्र–गान से हुआ। राष्ट्रपति वेनेत्शियान ने सूरीनाम की

धरती पर पहुँचे प्रथम भारतीयों का भावात्मक विवरण देते हुए सूरीनाम और भारत के प्रगाढ़ संबंधों का उल्लेख किया और साथ ही सफल विश्व हिंदी सम्मेलन के लिए शुभकामनाएँ देते हुए अतिथियों को स्वादिष्ट भोजन एवं मदिरा के लिए निमंत्रण दिया। वहीं फूलों, लताओं और द्रुमों के बीच आकर्षक मदिरालय रंग–बिरंगी बोतलों और पैमानों से कलात्मक ढंग से सजाया गया था। बारमैन चेहरे पर स्वागतीय मुस्कान धारण किए मुस्तैदी से अतिथियों को जाम पर जाम दे रहे थे। मदिरा–प्रेमी बार के पास खड़े अपनी मन–पसंद मदिरा के घूँट ले रहे थे। किसी को कोई रोक–टोक नहीं थी। मदिरा पीने में कई महिलाएँ भी कम नहीं थीं। रंगीन समां था। आकर्षक पाश्चात्य एवं भारतीय परिधान में महिलाएँ पुरुषों का साथ पूरी तरह दे रही थीं। सभी मस्त थे। उधर कोने में खड़े, बार से दूर ज़रा शर्मीले लोग भी कोक में ह्विस्की मिलाकर या केवल फल का जूस पी रहे थे।

भोजन प्रेमियों के लिए मुर्गी, मटन, कबाब के साथ तरह–तरह की सब्ज़ियाँ, सलाद, केक, पेस्ट्री आदि करीने से रंग–बिरंगे गज़ीबो और वितान के अंदर कलात्मक ढंग से सजाकर रखे हुए थे। खाने के शौकीन लोग उत्साह के साथ भोजन और बतरस में व्यस्त थे। चारों ओर हर्ष, उत्साह, उल्लास और मित्रता का वातावरण था।

पाँच जून की सुबह सूरीनाम नदी का तट मीलों दूर तक तरह–तरह के भारतीय परिधान पहने हज़ारों सूरीनामी और सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन के प्रतिनिधियों से खचाखच भरा हुआ था। प्रथम प्रवासी भारतीय युवा पति–पत्नी की सजीव मूर्ति पर राष्ट्रपति तथा भारत के विदेश–मंत्री ने बाजे–गाजे के साथ माल्यार्पण किया। 'लालारुख जहाज़' के आगमन की वार्षिकी मनाई जा रही थी। सूरीनामी अत्यंत आनंद और उत्साह से इस पर्व को मना रहे थे। 5 जून 'राष्ट्रीय उत्सव दिवस' था। पूरे सूरीनाम में छुट्टी की घोषणा थी। युवा, बालक और वृद्ध उत्सव के अनुकूल अपने पूर्वजों द्वारा पहने गए वेशभूषा धारण कर 130 वर्ष पूर्व के उस यादगार दिन को सजीव करने का यत्न कर रहे थे। शोभा–यात्रा नाव और सड़क दोनों पर निकल रही थी। उधर ढोल, मंजीरा, शंख, घंटी और राम–धुन के साथ सड़क पर लोग झाँकियाँ और जुलूस निकाल रहे थे। इधर 91 वर्षीय श्रीमती इतवरिया रामदीन ने धीरे–धीरे जुलूस के साथ 'कलकत्ता से छुटल जहाज़, पवरिया धीरे बहो, आजा–आजी है अइले हमार' गाते हुए माई–बाप की मूर्ति को पुष्प–हार चढ़ाकर आरती उतारी। यह देखकर लोगों की आँखें नम हो रही थीं। चित्रा मुद्गल और मृदुला सिन्हा और भारत से आई कई महिलाएँ और पुरुष साहित्यकार भी उनके साथ सुर–में–सुर मिलाकर गाते हुए जुलूस के साथ चल रहे थे। पद्मेश, अशोक चक्रधर, कमल किशोर गोयनका, सुरेश ऋतुपर्ण तथा अन्य लोग फ़ोटो खींचने में व्यस्त थे। भारतीय और सूरीनाम के प्रेस रिपोर्टर इधर–उधर दौड़–भाग कर रहे थे। सबके कान राष्ट्रपति के संदेश सुनने को उत्सुक थे। तट पर स्टॉल और दुकानें सजी हुई थीं। खाना–पीना भी चल रहा था। लोग यहाँ–वहाँ झूँड में खड़े बतिया रहे थे। कुछ लोग ज़मीन पर दरी बिछाकर परिवार के साथ बैठे पिकनिक का आनन्द ले रहे थे। कुछ लोगों ने बच्चों को कंधे पर बैठा लिया था। सजावटी 'लाला रुख' नाव से उतरते माई–बाप और उनके साथ आए पुरातन परिधान में गठरी–मोटरी, तुलसी, गंगाजली कड़ा–छड़ा, धोती–कुर्ता पहने, बाजे–गाजे के साथ गीत गाते सूरीनामी पूर्वजों का स्वांग भरते लोग आकर्षण का केंद्र बन गए थे। कैमरे क्लिक कर रहे थे। तालियों की तुमुल ध्वनि से वातावरण गूँज उठा।

इस अवसर पर सूरीनाम के राष्ट्रपति वेनेत्शियान और प्रथम महिला लिज़बेथ वेनेत्शियान वानेबर्ग तथा उप–राष्ट्रपति श्री अजोधिया के अलावा सपत्नीक श्री दिग्विजय सिंह तथा भारतीय सांसद सर्वश्री वेदगोपाल रेड्डी आदि ने भी 'माई–बाप' की मूर्ति पर माल्यार्पण किया। उत्सव में बालकवि बैरागी, सरला माहेश्वरी, श्री बी. बेंकटेश्वरल्लु, श्री नवल किशोर राय, लेखक हिमांशु जोशी, कमलेश्वर, डॉ. अशोक चक्रधर, श्री विजय मल्होत्रा, सुनील जोगी, महातम सिंह, दाऊ जी गुप्त आदि भी इधर–उधर घूमकर उत्सव का आनंद ले रहे थे। भीड़ कटी और लोग आगे बढ़े।

सूरीनाम की विदेश मंत्री मारिया लेवेंस, शिक्षा मंत्री श्री वाल्तर सांद्रिमन, श्री दिग्विजय सिंह आदि सूरीनाम हिंदी परिषद् के नए भवन का उद्घाटन शानदार ढंग से करने में अग्रसर हुए। परिषद् परिसर में नीम का पेड़ लगाया गया। यह वर्ष 'सूरीनाम हिंदी परिषद्' की रजत जयंती का वर्ष था।

भारत से आए प्रतिनिधियों ने तीस–बत्तीस घंटों की यात्रा की थी। यद्यपि सबके चेहरों पर मधुर–मधुर मुस्कान थी, परंतु अंदर से सब थके हुए थे।

तोरारिका होटल का स्वागत–कक्ष अतिथियों से भर गया था। छोटी–छोटी टोलियों में कुछ लोग खड़े थे। कुछ सारी दुनिया से बेखबर निद्रा देवी से एकालाप कर रहे थे। बीच–बीच में गर्दन और मेरुदण्ड के असंतुलन से शरीर लुढ़कता, तो आँखें खुल जातीं। थकान इतनी थी कि मुँह खुल जाता और नाक बजने लगती। कुछ नटखट सैलानी उनके चित्र उतार रहे थे। इसी बीच तोरारिका के द्वारपाल ने बताया कि काँग्रेस–हॉल जाने के लिए कोच आ गई है। सोते हुए लोग भी जग गए। सभी तोरारिका के मुख्य द्वार की ओर बढ़े। काँग्रेस हॉल में सम्मेलन का औपचारिक उद्घाटन था। लोग अपने–अपने मित्रों को खोजते, ढूँढते, ठेलते कोच में बैठ गए। मुझे कोच में बैठे डॉ. अरुणा सीतेश, नरेश कोहली, शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव, राजकमल प्रकाशन के अशोक माहेश्वरी, असग़र वजाहत, मृदुला गर्ग, अजय गुप्त, बालशौरी रेड्डी आदि के हँसते–मुस्कराते चेहरे नज़र आए।

औपचारिक रूप से 'सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन' का उद्घाटन राष्ट्रपति श्री वेनेत्शियान के साथ भारत के विदेश राज्य मंत्री श्री दिग्विजय सिंह के नेतृत्व में आए भारतीय शिष्टमंडल, अनेक सांसद, राजनयिक तथा 500 से अधिक विश्व भर से पधारे हिंदी सेवियों के साथ काँग्रेस हॉल में हो रहा था। हॉल खचाखच भरा हुआ था। बार–बार बजती तालियों की ध्वनि हर्ष और उल्लास की प्रतीक थी। हॉल में मेरे साथ डॉ. सूरपनेनी, डॉ. गंगा प्रसाद विमल, बी. वै. ललिताम्बा आदि बैठे थे।

भारत के प्रसिद्ध रेडियो उद्घोषक श्री जसदेव सिंह ने अपनी सधी हुई मधुर वाणी में कार्यक्रम का संचालन किया।

उद्घाटन समारोह में मंच पर पोलैण्ड के प्रो. ब्रिस्की, सूरीनाम संसद के अध्यक्ष श्री रामदीन सरजू, सम्मेलन के संयोजक जानकी प्रसाद सिंह, सोहाक के अध्यक्ष अम्ब कृष्ण नन्दू एवं भारत के राजदूत श्री ओम प्रकाश पहली पंक्ति में थे। श्री केशरीनाथ त्रिपाठी एवं अन्य प्रमुख साहित्यकारों की उपस्थिति भी थी। सूरीनाम के राष्ट्रगान, दीप–प्रज्ज्वलन एवं भारतीय संस्कृत परिषद् के छात्रों द्वारा माँ सरस्वती की वंदना के साथ कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ। वीडियो से भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के संदेश का प्रस्तुतीकरण बड़े पर्दे पर किया गया। अन्य देशों के शीर्षस्थ नेताओं के संदेश पढ़े गए। सूरीनाम की सरकार ने विश्व हिंदी सम्मेलन से संबंधित डाक–टिकट भी जारी किया। उद्बोधन में दोनों देशों के प्रगाढ़ संबंधों और भाषाई सौहार्द के पुराने रिश्तों का उल्लेख बार–बार किया गया। भारत के विदेश राज्य मंत्री श्री दिग्विजय सिंह ने अपने भाषण में कहा कि, '21वीं शताब्दी में हिंदी के समक्ष एक ओर जहाँ अनेक चुनौतियाँ हैं, वहीं इसके लिए अवसर भी बहुत हैं। प्रौद्योगिकी का रिश्ता हिंदी से जोड़ना अत्यंत आवश्यक है। हिंदी को हम संयुक्त राष्ट्रसंघ की सातवीं भाषा बनाने के लिए प्रतिबद्ध हैं। मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना हो चुकी है।'

पोलैण्ड से आए प्रो. ब्रिस्की का मर्मस्पर्शी उद्बोधन लोगों के मन को छू गया। उन्होंने कहा कि, 'हम जो हैं भाषा के कारण हैं। हिंदी भाषा का प्रयोग हम दो प्रकार से करते हैं, हिंदी मातृभाषा के रूप में और हिंदी मित्र भाषा के रूप में।' श्रोताओं ने करतल ध्वनि से प्रसन्नता ज़ाहिर की।

भीड़ फिर छँटी। ऊपर हॉल में सूरीनाम के राष्ट्रपति महामहिम श्री वेनेत्शियान, श्री दिग्विजय सिंह, शिष्टमंडल तथा भारतीय सांसद सर्वश्री वेदगोपाल रेड्डी के साथ कनवेन्शन हॉल में विश्व हिंदी पुस्तक मेला, 'हमारी धरोहर : हिंदी हमारी भाषा प्रौद्योगिकी' का उद्घाटन हुआ। भूतपूर्व निदेशक, राजभाषा, रेलवे बोर्ड, माइक्रोसॉफ़्ट भाषा कन्सल्टेन्ट, श्री विजय कुमार मल्होत्रा ने कंप्यूटर सत्र और पुस्तक प्रदर्शनी के बारे में सूरीनाम के राष्ट्रपति वेनेत्शियान और जनता को विस्तारपूर्वक बताया। राष्ट्रपति वेनेत्शियान प्रसन्नतापूर्वक सिर हिलाते हुए बोले, 'सूरीनाम में भाषा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुत काम किया जाता है। आशा है कि भविष्य में हमें आप लोगों का सहयोग और मार्गदर्शन मिलता रहेगा।' विजय जी ने मुस्कराकर उनके विचारों का स्वागत किया। नीचे हॉल में एक अन्य कार्यक्रम चल रहा था। होटल तोरारिका के एनेक्सी में सम्मेलन की तैयारी हो रही थी। भीड़ फिर छँटी। लोग बिखरने लगे।

सारा दिन कोई–न–कोई कार्यक्रम चलता रहा। लोग अपनी–अपनी पसंद के कार्यक्रम में रुचि लेते रहे। कुछ सैलानी तबीयत के लोग चुपचाप कैमरा कंधे पर लटकाए हॉल में से खिसक गए।

अशोक चक्रधर ने होटल तोरारिका के एनेक्सी के एक कमरे में प्रेस–ऑफ़िस बना लिया था जहाँ 4 जून से प्रतिदिन 'न्यूज़–बुलेटिन' निकाली जा रही थी। वे अपने सहयोगियों राजमनी, घनश्याम, पद्मेश गुप्त और अनिल शर्मा आदि के साथ रिपोर्ट तैयार करने और समाचार बुलेटिन निकालने में व्यस्त हो

गए। व्यवस्थित होने में कुछ आरंभिक कठिनाइयाँ आईं। किन्तु के. बी. एल. सक्सेना ने जब न्यूज़ रूम का प्रबंधन अपने हाथ में ले लिया, तो सबके खाने–पीने का प्रबंध, फ़ोटो कॉपी, न्यूज़ पेपर को बाइंड करना, डिस्पैच करना आदि काम व्यवस्थित रूप से होने लगा।

बीच–बीच में मैं भी न्यूज़ रूम का चक्कर लगा लेती। देखती कि रात के 2.30 बजे तक अशोक चक्रधर, अनिल शर्मा और सक्सेना जी न्यूज़ तैयार करने में लगे रहते थे। अशोक जी चार दिन से सोए नहीं थे। मंत्री जी स्वयं एक रात आकर लोगों को दिन–रात एक करते देख गए थे।

होटल तोरारिका के कॉन्फ्रेंस हॉल में दो समानांतर सत्र चल रहे थे। कक्ष 'एक' में 'विश्व हिंदी : चुनौतियाँ और समाधान' पर देश–विदेश के विद्वान चर्चा कर रहे थे। सत्र के बीज व्याख्यान में रूसी विद्वान वारान्निकोव, रूस में हिंदी फ़िल्मों की लोकप्रियता के बारे में बता रहे थे। मॉरीशस के श्री राजनारायण अपने देश में क्रियोल की लोकप्रियता के कारण हिंदी की स्थिति पर चिंता प्रकट कर रहे थे। यू.के. हिंदी समिति के अध्यक्ष पद्मेश गुप्त ज़ोरदार शब्दों में कह रहे थे कि, 'विश्व हिंदी सम्मेलन में पारित प्रस्तावों के कार्यान्वयन के लिए एक स्थाई समिति के गठन की आवश्यकता है। साथ ही, वे यू.के. हिंदी समिति द्वारा किए जा रहे महत्त्वपूर्ण कार्यों को भी रेखांकित कर रहे थे। सत्र में पोलैण्ड से आई दानूता स्ताशिक, हंगरी की मारिया नेज्येशी, उज़्बेकिस्तान के प्रो. आज़ाद और सांसद नवल किशोर जी ने अपने–अपने विचार प्रभावशाली ढंग से प्रकट किए।

समानांतर सत्र में 'हिंदी बोलियों और सृजनात्मक लेखन' पर विस्तृत चर्चा हो रही थी। नीदरलैण्ड के मोहनकांत गौतम जी ने बीज व्याख्यान में कहा कि हिंदी और उसकी अन्य बोलियों में कोई तनाव नहीं होना चाहिए। फ़िजी के प्रो. सुब्रह्मण्यम ने कहा कि फ़िजी में राजनीतिक समस्याओं के कारण हिंदी नज़रअंदाज़ हो रही है। सत्र में भारत की श्रीमती मृदुला सिन्हा, उषा किरण, श्री मधुकर उपाध्याय, श्री भगवत रावत, नीदरलैण्ड के डॉ. नारायण मथुरा, श्री श्याम नारायण आदि ने ज़ोरदार शब्दों में अपने–अपने विचार प्रकट किए।

तीसरे सत्र में 'हिंदी पत्रकारिता : नई शताब्दी की चुनौतियाँ' पर विस्तृत चर्चा चल रही थी। अनेक वरिष्ठ पत्रकार उत्साह के साथ भाग ले रहे थे। व्याख्यान चल रहा था। डॉ. महीप सिंह चुनौतियों का संदर्भ लेते हुए कह रहे थे कि लोकप्रिय पत्रकारिता का विकास हुआ है, किन्तु साहित्यिक व वैचारिक पत्रकारिता नष्ट हो रही है। जब मॉरीशस और सूरीनाम जैसे हिंदी बहुल देशों में हिंदी का कोई अखबार नहीं निकल रहा है, तब विश्व स्तर पर हिंदी पत्रकारिता का क्या भविष्य है? वेद प्रताप वैदिक ने अपने बीज व्याख्यान में कहा कि हमें अंग्रेज़ी की निर्धारित भूमिका को तोड़ना होगा, तो पाँचजन्य के संपादक तरुण विजय ने कहा कि हिंदी के नाम पर करोड़ों रुपए कमाने वाले अखबारों का कोई संवाददाता पड़ोसी देशों में नहीं भेजा जाता है। हिंदी अख़बार अंग्रेज़ी अखबारों के शीर्षकों का धड़ल्ले से प्रयोग करते हैं। पत्रकार श्री ओम थानवी, मॉरीशस के डॉ. बीरसेन जगासिंह, मध्य प्रदेश के रामशरण जोशी, सूर्यकांत बाली, श्री शंभुनाथ सिंह, श्री मनोहर पुरी आदि अपने–अपने विचार ज़ोरदार और प्रेरणादायक शब्दों में अभिव्यक्त कर रहे थे। लोग तरुण विजय द्वारा वितरित विस्फ़ोटक लेख पर आपत्ति कर रहे थे। सत्र के अध्यक्ष श्री प्रभाष जोशी, पूंजी प्रेरित भूमंडलीकरण की अपेक्षा श्रम के भूमंडलीकरण के प्रयास पर ज़ोर दे रहे थे और कह रहे थे कि संचार तथा प्रौद्योगिकी के विस्फ़ोट के युग में हिंदी की भूमिका पर विशेष विचार करना आवश्यक है।

उधर होटल कृष्ण पोलस्की में पद्मेश जी ने 'यूरोप हिंदी समिति' की बैठक बुलाई। बैठक में सर्व–सम्मति से यह निर्णय लिया गया कि अगले 'विश्व हिंदी सम्मेलन' को हॉलैण्ड में आयोजित करवाने का प्रस्ताव भारत सरकार के समक्ष रखा जाए। साथ ही, यह भी प्रस्तावित किया गया कि 'यूरोप हिंदी समिति' के लंदन स्थित सचिवालय के प्रबंधक के रूप में श्री के.बी.एल. सक्सेना कार्य करेंगे और संयोजक पद्मेश गुप्त जी होंगे। बैठक में डॉ. पद्मेश गुप्त, उषा राजे सक्सेना, के.बी.एल. सक्सेना, अनिल शर्मा (लंदन), डॉ. मारिया नेज्येसी (हंगरी), डॉ. दानूता स्ताशिक (पोलैण्ड), डॉ. योरंदका बोयानोवा (बल्गेरिया), डॉ. मारियाला अफ़ीदी (इटली) तथा डॉ. मोहनकांत गौतम इत्यादि ने भाग लिया।

कल की तरह आज भी विभिन्न कक्षों में सत्र चल रहे थे। एक सत्र चुनकर मैं वहाँ थोड़ी देर बैठी। पर मन कुछ और जानने–सुनने को कर रहा था। अतः मैं एक सत्र से दूसरे सत्र में चुपचाप जाकर बैठ गई और मैंने कुछ नोट्स लिए।

एक अन्य कक्ष में 'हिंदी के विकास में जन–संचार माध्यमों

का योगदान' विषय पर चर्चा हो रही थी। अध्यक्षता कर रहे थे, उत्तर प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष एवं सुकवि श्री केशरीनाथ त्रिपाठी और समन्वयक का दायित्व निभा रही थी सुश्री अचला शर्मा। बीज व्याख्यान दिया डॉ. असगर वजाहत ने और चर्चा में भाग लिया सर्व श्री रवीन्द्र कालिया, संतोष भारतीय, डॉ. बी. सुधा, श्री अमर सिंह रमन, श्रीमती मोहिनी हिंगोरानी एवं श्री लाल शुल्क ने। श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि 'इलेक्ट्रॉनिक जन–संचार माध्यम हिंदी के प्रचार–प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, परंतु उनके द्वारा व्याकरण पर ध्यान नहीं दिया जाता। साथ ही, जिन शब्दों का हिंदी में पर्याय उपलब्ध है, उसका प्रयोग न कर अंग्रेज़ी के शब्दों का उपयोग किया जाता है। उन्होंने कहा कि जन–संचार माध्यमों में हिंदी भाषा की गुणवत्ता व शुद्धता पर ध्यान देने की आवश्यकता है, ताकि दर्शकों और पाठकों को शुद्ध हिंदी का ज्ञान हो सके।

सम्मेलनों में 'विश्व का आर्थिक परिदृश्य और हिंदी', 'हिंदी सूचना और प्रौद्योगिकी', 'विदेशों में हिंदी–शिक्षण', 'भारतीय संस्कृति और हिंदी', 'हिंदी अनुवाद की समस्याएँ' आदि विषयों पर सार्थक एवं सकारात्मक चर्चा के साथ–साथ हिंदी के साहित्यकारों के साथ भी संवाद हुआ।

विभिन्न सत्रों में हो रही गोष्ठियों की झलक लेने के बाद मैंने सोचा कि आज सत्रों में न बैठकर कुछ लोगों से बातचीत भी की जाए अथवा पत्रकारों और मीडिया द्वारा चल रहे इंटरव्यू का ही जायज़ा लिया जाए। मीडिया सेन्टर में आयोजित पत्रकार सम्मेलन में विदेश मंत्रालय के सचिव जे.सी. शर्मा एक उत्तेजक प्रश्न के उत्तर में कह रहे थे, सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन भारत और सूरीनाम के संबंधों में एक नए अध्याय का आरंभ है। सूरीनाम में रहने वाले 90 प्रतिशत लोग हिंदी का प्रयोग करते हैं। इसलिए सम्मेलन की आधारभूत संरचना में कमियाँ होते हुए भी यहाँ के लोगों के हिंदी और संस्कृति के प्रति लगाव को देखते हुए, हमने यहाँ सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय लिया है। वे कह रहे थे, 'यहाँ के दूतावास में मात्र 5 अधिकारी हैं, फिर भी इस आयोजन में कुछ ऐसी उपलब्धियाँ हुई हैं, जो उल्लेखनीय हैं।'

इसी बीच 'भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्' की महानिदेशिका सूर्यकांति त्रिपाठी जी दिख गईं। सांस्कृतिक कार्यक्रम गीत–संगीत, नाटक, नृत्य, सभी कलात्मक आयोजनों के पीछे उनका महत्त्वपूर्ण दिशा–निर्देशन था। सूर्यकांति त्रिपाठी जी अत्यंत सहज–सरल किन्तु प्रभावशाली गरिमामयी सौम्य महिला हैं, जो स्वयं नहीं बोलतीं उनकी उपस्थिति बोलती है। बातचीत के दौरान सूर्यकांति त्रिपाठी जी ने अत्यंत सधे हुए शब्दों में कहा कि सम्मेलन भारत–सूरीनाम के बढ़ते हुए सांस्कृतिक और भाषाई संबंधों का प्रतीक है।

मीडिया हॉल से बाहर निकलते हुए मैंने देखा कि पुष्पिता अवस्थी जी आदरणीय विद्यानिवास मिश्र जी, प्रभात जी और कई अन्य महत्त्वपूर्ण लोगों को लेकर सत्र में बैठने जा रही थीं। डॉ. विद्यानिवास मिश्र की उपस्थिति मात्र से ही सत्र गरिमामय हो उठा था। उन्होंने कई सत्रों में महत्त्वपूर्ण व्याख्यान दिए, जिनके एक–एक शब्द संग्रहणीय है। विद्यानिवास मिश्र जी ने एक सत्र में अपने अध्यक्षीय भाषण में बड़े ही प्रभावशाली ढंग से कहा कि विदेशों में भारतीय मूल के लोगों को हिंदी जानने की आवश्यकता इसलिए भी है, कि जब उनके बच्चों से यह पूछा जाए कि तुम क्या हो, तुम्हारी पहचान क्या है? तो वे उत्तर देने में सही ढंग से समर्थ हों। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि यदि हमें स्वतंत्र होकर जीना है, तो हमें अपनी भाषा को ही माध्यम बनाना होगा। हिंदी हमारी शक्ति है। आगे उन्होंने इस बात पर दुख प्रकट किया कि भारतवंशियों ने अंग्रेज़ी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं की खिड़कियाँ बंद कर दी हैं।'

हॉल में लंबे रिसेप्शन मेज़ पर 'भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्' की स्मारिकाएँ एवं कई अन्य पत्र–पत्रिकाएँ रखी थीं, जो इस अवसर के लिए विशेषकर प्रकाशित की गई थीं। फ़िजी के भारतीय उच्चायोग से सहायता के लिए आयी मोहिनी हिंगोरानी जी अपने सहयोगियों के साथ यहाँ का कार्य–भार पिछले चार रोज़ से संभाल रही थीं। लोग उनसे उलझ पड़ते थे। थकान के बावजूद भी वे मुस्कराती हुई लोगों को स्मारिका की प्रतियाँ पकड़ा देती थी।

'प्रभात प्रकाशन' की प्रदर्शनी में लगी पुस्तकों को लोग निःशुल्क स्मारिका समझ अपनी थैलियाँ भर ले गए। प्रभात जी खड़े देखते रहे।

मेरे पूछने पर उन्होंने मुस्कराते हुए कहा, 'कोई बात नहीं, जो लोग ले गए हैं वे पढ़ेंगे, तो हिंदी का प्रचार–प्रसार होगा।' प्रभात जी की प्रतिक्रिया उनके दार्शनिक व्यक्तित्व जैसी ही थी। प्रभात जी के संस्कारों और प्रसन्न–स्वभाव को मैंने मन–ही मन–नमन किया।

अचानक मुझे सांसद सरला माहेश्वरी जी दिख गईं। राजे जी उनके प्रशंसक हैं। मैं सरला जी का परिचय उनसे कराकर चुपचाप खिसक ही रही थी कि तभी मुझे मेरे प्रिय गीतकार सोम ठाकुर और मित्र कुंवर 'बेचैन' आते दिखे। मैं कुंवर जी को अपनी ताज़ा ग़ज़ल सुनाने को आतुर हो गई। हम दोनों में अक्सर अच्छी–ख़ासी, मधुर–मधुर नोक–झोंक चलती रहती है। सोम ठाकुर किसी और से बातें करने लगे थे। मैं कुंवर जी के साथ बातें करते–करते सांस्कृतिक कार्यक्रम के हॉल में पहुँच गई।

गीत–संगीत की संध्या थी। मैं अपनी ग़ज़लों के बाबत भूल गई और स्टेज से आती स्वर लहरियों में खो गई। कुंवर जी ने ही मुझे याद दिलाया कि, 'अगर यहाँ बैठे रहे, तो तुम्हारी ग़ज़ल तो मैं सुन ही नहीं पाऊँगा, चलो बाहर चलते हैं।' इसरार करने पर भी मैं उन्हें अपनी ग़ज़ल नहीं सुना पाई। चबूतरे पर बैठी देर तक उनसे ही उनके नए–नए गीत–ग़ज़ल सुनती रही। भला ऐसा मनभावन संयोग कभी और मिल सकता था क्या?

दिन में एक ही साथ भिन्न–भिन्न कमरों में सत्र चल रहे थे। आज मुझे भी अपना पर्चा पढ़ना था। विषय था 'भारतवंशी बहुल देशों में हिंदी की स्थिति।' मेरा सौभाग्य था कि आज के मंच पर हिंदी साहित्य के विद्वान सहित्यकार डॉ. शैलेन्द्र श्रीवास्तव अध्यक्ष थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि अब हिंदी के पाठ्यक्रमों में पारंपरिक पद्धति से हटकर नवीन उपकरणों तथा प्रक्रियाओं की सहायता लेनी होगी। मात्र वाचन या पठन से काम नहीं चलनेवाला है। अब तो हमें इलैक्ट्रॉनिक माध्यम जैसे इंटरनेट, कम्प्यूटर आदि का सही उपयोग करना होगा, तभी हिंदी आज की भाषा बन पाएगी। नए उपकरणों का सहयोग लेना होगा, शिक्षण–प्रणाली में परिवर्तन करने के साथ एक मानवतावादी नई दृष्टि विकसित करनी होगी। तभी हम भारतवंशी तथा यूरोप और अमेरिका जैसे देशों को बाँध पाएँगे।

उत्तर प्रदेश विधान सभा के अध्यक्ष, श्री केशरीनाथ त्रिपाठी, कमल किशोर गोयनका आदि भी विशिष्ट अतिथि एवं संचालक बैठे हुए थे। मैं मंच पर आलेख पढ़ने आई, तो गोयनका जी ने कहा, 'आपके पास केवल दो मिनट का समय है' किन्तु मैंने इशारा किया, कि मुझे पूरे पाँच मिनट चाहिए। गोयनका जी के साथ अध्यक्ष जी ने भी मुस्करा कर हामी भर दी। श्रोताओं ने ताली बजाकर मेरा उत्साह बढ़ाया। मुझे अपनी चिंता ज़ोरदार शब्दों में श्रोताओं और हिंदी के समर्थकों तक पहुँचानी थी। मातृभाषा को लेकर मेरी बहुत–सी चिंताएँ हैं, किन्तु देवनगरी यानी लिखित हिंदी के प्रति मेरी चिंता बहुत गहरी है। देवनागरी धीरे–धीरे घर की देहरी से उठती जा रही है। यदि भाषा अपनी लिपि में संकलित नहीं होती, लिखी नहीं जाती है, तो उसका दस्तावेज़ कैसे रहेगा? अन्तरजाल (इंटरनेट) बात–खिड़की (इंटरनेट–चैट) आदि पर हिंदी रोमन में लिखी जाती है। भारत के बड़े शहरों में, विदेशों में पत्र–व्यवहार, बही खातों में, पढ़ने–लिखने सब में अंग्रेज़ी का प्रयोग दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। यदि हम सतर्क नहीं हुए, तो हिंदी भविष्य में संस्कृत की तरह पुस्तकालयों की ही शोभा बढ़ाएगी।' लोग मेरी चिंता से सहमत हुए और मुझे सुखद अनुभूति हुई। हर शाम लगातार कोई–न–कोई उच्चकोटि का सांस्कृतिक कार्यक्रम चल रहा था। आई.सी.सी.आर. अपने उत्कृष्ट चुनिंदा कलाकारों और कार्यक्रमों को लेकर आई थी। वस्तुतः आई.सी.सी.आर. की चयन समिति बधाई की पात्र है।

उत्साही लोगों ने सभी स्थानों पर पहुँचने का प्रयास किया। कई कार्यक्रम छूट भी जाते तो लोग आपस में परिचर्चा करके उसके बारे में जान लेते। नृत्य–नाटिका, नाटक, शास्त्रीय संगीत, ग़ज़ल, कव्वाली, लोक–गीत, कवि–सम्मेलन, फ़िल्म आदि सांस्कृतिक कार्यक्रमों का उत्कृष्ट मंचन हुआ। सूरीनामी जनता बड़ी संख्या में प्रतिदिन कार्यक्रम देखने आती। हर रोज़ दर्शकों की संख्या बढ़ रही थी। कबीर का मंचन अत्यंत सजीव और लोकप्रिय रहा। भोजपुरी गायक मनोज तिवारी से तो सूरीनाम की जनता ऐसी प्रसन्न हुई कि निकेरी शाह के धनाढ्यों ने उन्हें धन–धान्य और पुरस्कारों से नवाज़ा। सांस्कृतिक कार्यक्रमों के प्रसारण दिन में कई–कई बार स्थानीय टेलीविजन पर दिखाया गया और रेडियो पर सुनाया गया। सम्मेलन की सफलता इन्हीं बातों से आँकी जा सकती थी। सूरीनामी समाचार–पत्रों के संवाददाता प्रतिदिन सम्मेलन में आ रहे थे। सूरीनामी समाचार–पत्र के कॉलम सम्मेलन के समाचार से भरे होते।

अंतिम शाम विश्व–मंच पर कवि–सम्मेलन का आयोजन था। कवि–सम्मेलन के लिए कवियों के नामों का चयन करने का भार युवा गजेन्द्र सोलंकी को दिया गया। कवियों की संख्या बहुत थी। नन्दन जी की अध्यक्षता में सोम ठाकुर जी ने संचालन किया। विशिष्ट अतिथि उत्तर प्रदेश विधान सभा अध्यक्ष, सुकवि, श्री केशरीनाथ त्रिपाठी थे। तकरीबन 30–40 कवि मंच पर बैठे थे। सोम जी ने कवियों पर समय का बंधन लगा दिया था। हॉल

सुधी श्रोताओं से खचाखच भर गया था। मंच से विभिन्न रसों की कविताएँ पढ़ी गईं। गजेन्द्र सोलंकी ने वीर रस की रचनाएँ सुनाईं, तो कुंवर बेचैन जी ने श्रृंगार रस की। राजस्थान से आए मयूख जी ने दार्शनिक कविता सुर में सुनाई। मृदुला सिन्हा ने भोजपुरी गीत गाया। मध्य प्रदेश से आई आशा शुक्ल ने स्त्री–विमर्श की कविता मुक्त–छंद में सुनायी। मैंने भी अपनी एक छोटी–सी ग़ज़ल 'रात भर काला धुआँ उठता रहा, दिल किसी खलिहान–सा जलता रहा' सुनाया और फिर मंच से उतरकर श्रोता बन अन्य कवियों के गीतों–ग़ज़लों का रसास्वादन किया। साथ ही, श्रोताओं को ताली बजाने और वाह–वाह करने के लिए उकसाती रही। श्रोता कविताओं को बड़े प्रेम से सुन रहे थे, किंतु सुर–संगम और शब्दों की जादूगरी में ऐसे खो जाते थे कि दाद देना, ताली बजाना ही भूल जाते थे।

सम्मेलन के समापन से पूर्व, कुछ प्रस्ताव पारित किए जाने थे। प्रस्तावों का आलेख बनाने हेतु एक बैठक आयोजित की गई, जिसमें श्री केशरीनाथ त्रिपाठी, मैं स्वयं तथा सुश्री चित्रा मुद्गल, सुश्री आशा शुक्ल, श्री कमल किशोर गोयनका आदि उपस्थित थे। श्री कमलेश्वर जी ने आलेख बनाने का दायित्व श्री केशरीनाथ त्रिपाठी जी को सौंप दिया।

समापन सत्र में पहला प्रस्ताव संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिंदी को आधिकारिक भाषा बनाने के संबंध में था, जिसे श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने प्रस्तुत किया और मॉरीशस के श्री मोती रामदास ने उसका अनुमोदन किया। डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी पीठों की स्थापना व हिंदी–शिक्षण संबंधित प्रस्ताव प्रस्तुत किया, जिसका समर्थन श्री वेद व्यास ने किया। तीसरा प्रस्ताव हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार–प्रसार, हिंदी–शिक्षण संस्थाओं के बीच संबंध तथा भारतीय मूल के लोगों में हिंदी के प्रयोग के प्रचार के बारे में था। इसे प्रस्तुत किया हॉलैण्ड के डॉ. मोहनकांत गौतम ने और अनुमोदन किया मैंने।

हिंदी के प्रचार–प्रसार हेतु, वेबसाइट की स्थापना और सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग से संबंधित प्रस्ताव डॉ. अशोक चक्रधर द्वारा प्रस्तुत किया गया और अनुमोदन किया डॉ. विजय कुमार मल्होत्रा ने। एक अन्य महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव था – हिंदी विद्वानों की एक विश्व निर्देशिका प्रकाशित करने के बारे में, जिसे प्रस्तुत किया श्री अजामिल माताबदल ने तथा समर्थन किया डॉ. कमल किशोर गोयनका ने। विश्व हिंदी दिवस, कैरेबियन हिंदी परिषद् की स्थापना, भारत के हिंदी पाठ्यक्रम में विदेशों में रचित हिंदी लेखन को समुचित स्थान देने, दक्षिण भारत में हिंदी विभाग की स्थापना व सूरीनाम में हिंदी–शिक्षण की व्यवस्था करने के बारे में भी प्रस्ताव प्रस्तुत किए गए। सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से व बड़े उत्साह के साथ पारित किए गए।

हिंदी सम्मेलन के समापन के कार्यक्रम में विदेश राज्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह ने घोषणा की कि भारत सरकार द्वारा हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने की ठोस पहल जल्द ही की जाएगी। इस संकल्प को क्रियान्वित करने के लिए राज्यमंत्री की अध्यक्षता में गठित समिति के सदस्य के रूप में श्री केशरीनाथ त्रिपाठी, श्री विद्यानिवास मिश्र, श्री कमलेश्वर, गोयनका जी, चित्रा मुद्गल और वेदप्रताप वैदिक आदि को शामिल किया गया।

विश्व हिंदी सम्मेलन की अंतिम सुबह की चहल–पहल ज़रा दूसरे तरह की थी। लोगों के मन में प्रसन्नता के साथ कुछ अवसाद भी उथल–पुथल कर रहा था। कमरों के अंदर सूटकेस में कपड़े रखे जा रहे थे। जाने की तैयारी के साथ कुछ छूटते जाने का अहसास भी हो रहा था।

अंतिम दिन संसार के श्रेष्ठ हिंदी साहित्यकारों और विद्वानों को सम्मानित करने का उत्सव था। सम्मेलन के संयोजक अत्यंत व्यस्त थे। सम्मान–पत्र, स्मारिका, स्मृति–चिह्न, दुशाला आदि सब कुछ मंच के पास होना चाहिए। कहीं कुछ त्रुटि न रह जाए। भारत के 10 वरिष्ठ साहित्यकार और विदेशों के 15 हिंदी सेवी सम्मानित हुए।

लंदन से बी.बी.सी., हिंदी सेवा की अध्यक्षा, सुश्री अचला जी को भी श्रेष्ठ पत्रकारिता के लिए सम्मानित किया गया। यू.के. से आए सभी लोग हर्षित थे। हमने अपने–अपने कैमरे तैयार कर रखे थे। भारत के विदेश राज्यमंत्री, श्री दिग्विजय सिंह तथा सूरीनाम के उपराष्ट्रपति ने उन्हें सम्मानित किया। एक के बाद एक सम्मान–पत्र पढ़े गए, विद्वानों को शॉल ओढ़ाकर स्मारिका दी गई। भाषण, बधाई और विदाई तीनों का ही मिश्रित समां था।

समारोह–समापन का दिन आया। इन पाँच अद्भुत दिनों में आपस में स्नेह–संबंध ऐसा बना कि लोग संपर्क कायम करने के लिए विज़िटिंग कार्ड, ई–मेल एड्रेस, फ़ोन नम्बर ले और दे रहे थे। कुछ लोग अत्यंत भावुक हो रहे थे। बार–बार गले मिल रहे थे। लग रहा था कि ऐसी प्रगाढ़ मैत्री की ऊष्मा जीवन पर्यंत

रहेगी। प्रेम का यह स्थाई भाव सदा बना रहेगा।

सूरीनाम विश्व हिंदी सम्मेलन की संयोजिका पुष्पिता जी तो अत्यंत भावुक हो उठीं। वह अपनी रुलाई नहीं रोक पाईं। मेरा कंधा उनके आँसुओं से भीग गया। मेरे गले में भी गुठली अटक गई। कैसे समेटे कोई इतना स्नेह, इतना प्यार। आस–पास खड़े न जाने कितने लोगों की आँखें भीग गईं।

ये पाँच दिन, ये अद्‌भुत पाँच दिन। इन पाँच दिनों में कितना कुछ मिला। ज्ञान मिला, साहित्य मिला, दर्शन मिला, सहयोग मिला, प्यार मिला, सौहार्द मिला और साथ में ढेरों दोस्त मिले। सम्मेलन ने विश्व भर के हिंदी प्रेमियों की एक कड़ी बनाई, जो चिंतन साहित्य और कला के 'लिंक' से जुड़ी है। सूरीनाम के सम्मेलन की उपलब्धि है 'विश्व हिंदी बंधुत्व की स्थाई कड़ी'। वास्तव में, सूरीनाम 'श्री राम का देश' है। कभी भोले–भाले भारतवासियों को इस सरकार के लोग झाँसा देने के लिए यह बात कहते थे। आज हमारी सूरीनामी परिवारों ने इसे सचमुच ही 'श्री राम' का देश बना दिया है। कई समुंदर पारकर लोग आए थे। यह कितनी बड़ी उपलब्धि है कि हम अपने देश में नहीं मिल पाते हैं और सूरीनाम में न केवल मिले, दिन रात एक ही रस 'हिंदी के प्रेम संसार' के रस में पगे रहे, सराबोर रहे! जय हिंद! जय हिंदी भाषा!

लंदन, यू.के.
usharajesaxena@gmail.com

जो साहित्य हमारी वैयक्तिक क्षुद्र संकीर्णताओं से हमें ऊपर उठा ले जाए और सामान्य मनुष्यों के साथ एक करा के अनुभव करावे वही उपादेय है।

– हज़ारीप्रसाद द्विवेदी

जिस साहित्य से हमारी सुरुचि न जागे, आध्यात्मिक और मानसिक तृप्ति न मिले, हममें शक्ति और गति न पैदा हो, हमारा सौंदर्य–प्रेम न जाग्रत हो – जो हम में सच्चा संकल्प और कठिनाइयों पर विजय पाने की सच्ची दृढ़ता न उत्पन्न करे, वह आज हमारे लिए बेकार है, वह साहित्य कहलाने का अधिकारी नहीं।

– प्रेमचंद

28

पहला विश्व हिंदी सम्मेलन : एक अविस्मरणीय अनुभव

— श्री सुरेश रामबर्ण

पिछली शताब्दी का अंतिम चरण मॉरीशस राष्ट्र के लिए विकास के नए द्वार खोलने का युग था। हमारे अर्थतंत्र का आधार निस्संदेह शक्कर उद्योग था, जिसे विदेशी मुद्रा का अर्जक माना जाता था। पर्यटन एक विशिष्ट मार्ग था, जिसपर सरकार और निजी विभाग, दोनों ने निवेश करना शुरू कर दिया था। हमारे बहुजातीय देश में सांस्कृतिक विरासत की विचारधारा के साथ–साथ हमने अपने इंद्रधनुषी राष्ट्र में पर्यटन को विकसित करने के लिए विविध परंपराओं, आचारों, खानपान की आदतों, जीवन–शैली और रिवाज़ों पर ध्यान केंद्रित करना शुरू किया।

इसी अनुकूल और स्वस्थ वातावरण में एशियाई भाषाओं के रसास्वादन ने मॉरीशस को उसकी सच्ची पहचान दिलवाई। उन दिनों हिंदी के साथ–साथ भोजपुरी बोलने वाले लोगों की संख्या हमारी आबादी के 70 प्रतिशत भाग की थी। हिंदी ने सभी क्षेत्रों के साथ–साथ शहरी और ग्रामीण इलाकों में कारगर संचार के सबूत दिए। प्राथमिक स्कूलों, सायंकालीन बैठकाओं और रविवारीय स्कूलों में हिंदी के लोकप्रिय उपयोग के साथ हिंदी–शिक्षण को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला।

जनवरी 1975 के सम्मेलन में मॉरीशस में दूसरे विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन के फ़ैसले से मॉरीशस के हिंदी प्रेमी रोमांचित हो गए थे। विभिन्न हिंदी संस्थाओं ने नागपुर, भारत में 10 से 12 जनवरी तक पहले विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन का स्वागत किया। यह सम्मेलन संत विनोबा भावे के आशीर्वाद से राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के प्रांगण में संपन्न हुआ। जिस तरह से भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान महात्मा गांधी ने अथाह उत्साह और विश्वास दिखाया था, उसी तरह संत विनोबा जी ने राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के महत्त्व की वकालत की थी।

उस समय भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी और मॉरीशस के प्रधान मंत्री सर शिवसागर रामगुलाम ने हिंदी को बढ़ावा देने के लिए आपस में सहमति जताई थी। इसके फलस्वरूप भारत के केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री, डॉ. कर्ण सिंह, मॉरीशस स्थित भारतीय विदेश मंत्रालय के संयुक्त सचिव, श्री बच्चू प्रसाद सिन्हा, श्री अनंत गोपाल शेवड़े और श्री ललन प्रसाद व्यास ने

जन्म : 26 जनवरी 1949

व्यवसाय :

- (संप्रति) प्रधान, हिंदी संगठन
- अध्यक्ष, फ़ेडेरेशन ऑफ़ द हिन्दू ऑर्गानाइज़ेशन, मॉरीशस
- अध्यक्ष, शाश्वत फ़ाउण्डेशन मॉरीशस
- सदस्य, प्रेसिदेंत फ़ंड फ़ॉर क्रियेटिव राइटिंग, मॉरीशस सरकार
- प्रधान संपादक –'मॉरीशस हिंदी जागरण' (त्रैमासिक)
- 1975 – मॉरीशस के तत्कालीन प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम के निजी कार्यालय में सचिव
- 1982 – 2009 – शोध एवं प्रलेखन अधिकारी, महात्मा गांधी संस्थान, मोका
- 1985 – 1995 – सलाहकार, शिक्षा मंत्रालय तथा कला एवं संस्कृति मंत्रालय, मॉरीशस
- 1990 – 1995 – नशेड़ी के उपचार व पुनर्वास हेतु ट्रस्ट फ़ंड के अध्यक्ष
- 1982 – 1995 – सनातन धर्म टेम्पल्स फ़ेडेरेशन के महासचिव व प्रधान
- फ़्रीलांस रेडियो व टीवी प्रस्तुतकर्ता

प्रकाशन :

- 'द मेम्वार्स ऑफ़ द प्राइम मिनिस्टर, चाचा रामगुलाम के संस्मरण'
- 'आराधना'
- 'काशीनाथ किश्तो, सिलेक्टेड स्पीचस'
- 'गंगा तालाब चालीसा'

सम्मान :

- 1990 –ब्रिटेन की महारानी क्वीन एलिज़ाबेथ II के हाथों ब्रिटिश साम्राज्य के मानद सदस्य (एम.बी.ई.) की उपाधि से सम्मानित।

मॉरीशस की सरकार के साथ सहयोग प्राप्त करने के लिए मार्ग प्रशस्त किया। इस संदर्भ में उस समय के आर्थिक नियोजन और विकास मंत्री, सर खेरसिंह जगतसिंह और खेल–कूद मंत्री, श्री दयानंदलाल वसंत राय द्वारा निभाई गई भूमिका को भुलाया नहीं जा सकता।

यह निर्णय लिया गया कि पूर्व प्रधान मंत्री सर शिवसागर रामगुलाम मॉरीशस के प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व करेंगे। सर खेरसिंह जगतसिंह की अध्यक्षता में एक अभियान चलाया गया जिसके माध्यम से हिंदी से जुड़ी सभी संस्थाओं और गैर–सरकारी संगठनों को सम्मेलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया गया। सौभाग्य से मुझे भी इस प्रतिनिधि–मंडल में सम्मिलित होने का अवसर मिला और दिसंबर 1974 में मैं मुंबई के लिए रवाना हुआ। डॉ. धर्मवीर भारती द्वारा कृत 'अंधा युग' नाटक का मंचन, नाटक विशेषज्ञ श्री मोहन महर्षि के निर्देशन में किया गया। उप–निर्देशक थे – श्री रामदेव धुरंधर।

भारत में

भारत में कदम रखना हम सभी के लिए एक भावपूर्ण घड़ी रही। हममें से कई लोगों ने झुककर उस पवित्र भूमि का नमन किया। सत्रह सदस्यों वाला मॉरीशस का प्रतिनिधि–मंडल मुंबई के शांग्रीला होटल में ठहरा। इस मौके पर हमने जूहू बीच का दौरा किया, तत्पश्चात् हमने इसकॉन केंद्र का भी दौरा किया, जहाँ हमें स्वामी प्रभुपाद की 'हरि कथा' को सुनने का मौका मिला। मुंबई में कुछ दिन बिताने के बाद हम रेलगाड़ी से नागपुर गए। यह यात्रा बत्तीस घंटों की रही।

मॉरीशस का प्रतिनिधि–मंडल सम्मेलन के प्रांगण में पहुँचा, जहाँ हमारा भव्य स्वागत किया गया। भारतीय प्रतिभागियों के साथ बातचीत करने के लिए हम सभी उत्सुक थे। भारतीय परंपरा के अनुसार हमारे लिए केले के पत्तों पर भोजन परोसा गया। हमें आज भी याद है कि खाने में चपाती और चावल के साथ–साथ हरी मिर्च, दही, दाल और सब्ज़ी अर्थात् शुद्ध शाकाहारी भोजन मिला था।

सम्मेलन–स्थल पर पहुँचने पर कुछ स्वयंसेवकों ने हमें कार्यक्रम की सूची प्रदान की। सम्मेलन स्थल पर 10,000 प्रतिभागियों के लिए व्यवस्था की गई थी। अलग–अलग विभागों का नामकरण हिंदी के महान् कवियों और साहित्यकारों के नाम पर किया गया था, जिनमें मीराबाई, तुलसीदास, कबीरदास और विनोबा भावे के नाम सम्मिलित थे।

उद्घाटन समारोह

भारत की तत्कालीन प्रधान मंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी ने 10 जनवरी 1975 को औपचारिक रूप से सम्मेलन का उद्घाटन किया। उस मौके पर कई महानुभाव उपस्थित थे, जिनमें सर शिवसागर रामगुलाम, काका कालेलकर, डॉ. कर्ण सिंह, महादेवी वर्मा आदि प्रमुख थे।

श्रीमती इंदिरा गांधी ने अपने भाषण में इस बात पर बल दिया कि हिंदी प्रेम की भाषा है। इसके साथ–साथ हिंदी आधुनिक भारत के विकास के लिए एक साधन भी है। उन्होंने आगे स्पष्ट किया कि हिंदी विश्व भर में भारतीय लोगों को एकत्र करने की क्षमता रखती है। अतः हिंदी विश्व शांति और भाईचारे के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

दूसरी ओर सर शिवसागर रामगुलाम ने हिंदी को बढ़ावा देने के लिए उच्च स्तर पर एक सफल हिंदी सम्मेलन का आयोजन करने के लिए भारत सरकार के प्रति आभार प्रकट किया। उन्होंने इस बात का भी उल्लेख किया कि मॉरीशस की स्वतंत्रता के संदर्भ में हिंदी ने एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने कुछ नारे भी सुनाए, जो बाद में लोकप्रिय हो गए, जैसे 'हिंदी प्रेम की भाषा है', 'हिंदी की प्रगति से हमारी समझ मज़बूत होगी', आदि।

महासचिव श्री अनंत गोपाल शेवड़े ने भारतीय प्रवासियों का योगदान और समर्थन स्वीकार किया। उन्होंने सूचित किया कि विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन अब से एक वार्षिक गतिविधि के रूप में किया जाएगा।

हिंदी साहित्य की प्रसिद्ध कवयित्री, महादेवी वर्मा ने विश्व स्तर पर हिंदी प्रचार–प्रसार पर बात करते हुए इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की कि भारतीय प्रवासी अपनी संस्कृति और परंपरा की रक्षा के उद्देश्य से हिंदी की प्रगति में लगे हुए हैं। फ़ादर कामिल बुल्के और संयुक्त राष्ट्र संघ के एक प्रतिनिधि ने भी लोगों को संबोधित किया।

शैक्षिक सत्र

भारतीय और विदेशी प्रतिनिधियों ने शैक्षिक सत्रों के अंतर्गत अपने लेख प्रस्तुत किए। इनमें अमृता प्रीतम, कन्हैयालाल नंदन, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, काका कालेलकर, रघुवीर सहाय, ललन प्रसाद व्यास, धर्मवीर भारती आदि प्रमुख थे। इनके अलावा कई विद्वानों ने हिंदी की प्रासंगिकता पर बात की। मौके पर हमने हिंदी के महान कथाकार, मुंशी प्रेमचंद के सुपुत्र, अमृत राय से भी मुलाकात की।

कवि–सम्मेलन

विश्व हिंदी सम्मेलन के अंतर्गत एक कवि–सम्मेलन का आयोजन किया गया था, जिसमें महादेवी वर्मा, हरिवंशराय बच्चन, बालकवि बैरागी, शिवमंगल सिंह 'सुमन', काका हाथरसी और अन्य समकालीन कवियों ने भाग लिया।

नागपुर स्थित गणवते मंदिर थिएटर में 'अंधा युग' नाटक का मंचन किया गया, जिसमें मॉरीशस के कलाकारों ने भाग लिया और जिसे खूब सराहा गया।

अनुशंसाएँ :–

सम्मेलन के अंत में कई अनुशंसाएँ पारित हुईं, जो इस प्रकार हैं :–

1. संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिंदी को आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिलाया जाए।
2. विश्व हिंदी विद्यापीठ की स्थापना वर्धा में हो।
3. विश्व हिंदी सम्मेलनों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए अत्यंत विचारपूर्वक एक योजना बनाई जाए।

कुछ महत्त्वपूर्ण स्थलों का दौरा

मॉरीशस के प्रतिनिधि मंडल के सदस्यों को वर्धा का दौरा करने और श्री विनोबा भावे के प्रति उनके आश्रम में आभार प्रकट करने का अवसर मिला।

नागपुर में सम्मेलन के बाद मॉरीशस के प्रतिनिधि मंडल के सदस्य नई दिल्ली गए, जहाँ वे चाणक्यपुरी में 'नैशनल यूथ सेंटर' में ठहरे थे। मॉरीशस के कलाकारों ने नई दिल्ली स्थित गांधी मेमोरियल सेंटर में एक कार्यक्रम में भाग लिया। उल्लेखनीय बात यह है कि बॉलीवुड फ़िल्म उद्योग में डेब्यू कर रहे अभिनेता राज बब्बर ने व्यक्तिगत रूप से मॉरीशस के कलाकारों का मेकअप किया था। अगले दिन नई दिल्ली के प्रेस वालों ने मॉरीशसीय कलाकारों द्वारा प्रस्तुत अच्छे कार्यक्रम की सफलता को लेकर अनेक लेख छापे।

सर खेरसिंह जगतसिंह ने अशोक हॉटल में एक शानदार रिसेप्शन दिया, जिसमें अनेक महानुभावों ने भाग लिया। मॉरीशसीय प्रतिनिधि मंडल के कुछ सदस्यों ने हरिद्वार तीर्थ स्थान का भी दौरा किया।

भारतीय प्रधानमंत्री से मुलाकात

भारतीय प्रधानमंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी ने अपने दफ़्तर में मॉरीशस के प्रतिनिधि मंडल का स्वागत किया। अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए उन्होंने भारत के बाहर हिंदी के प्रचार–प्रसार के लिए अपना समर्थन देने का वचन दिया। उन्होंने 1976 में मॉरीशस में होने वाले दूसरे विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लेने के लिए अपनी दिलचस्पी दिखाई।

अंततः तैंतालीस साल पहले नागपुर, भारत में जो पहले विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया था, वह भारत और भारतीय प्रवासियों के बीच हिंदी की छत्रछाया में संबंधों को ज़्यादा मज़बूत करने का एक अवसर था। इसके पश्चात् पाँचों महाद्वीपों में बसे भारतीय प्रवासियों के बीच 'हिंदी हमारी माँ है' का नारा लोकप्रिय हो गया।

मॉरीशस में 18 से 20 अगस्त तक होने वाले ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन में एक बार फिर मॉरीशस को हिंदी के क्षेत्र में अपनी गतिशीलता का सबूत देने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ।

मॉरीशस
sramburn@hotmail.com

29

पूर्व के विश्व हिंदी सम्मेलनों में पारित प्रस्तावों का कार्यान्वयन

– डॉ. उदय नारायण गंगू,
जी.ओ.एस.के, आर्य रत्न

अभी तक संसार के विभिन्न देशों में ग्यारह विश्व हिंदी सम्मेलनों का आयोजन हो चुका है। प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन नागपुर, भारत में 10 से 12 जनवरी 1975 में सम्पन्न हुआ था। दूसरा विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस में 28 से 30 अगस्त 1976 में हुआ था। तीसरे का आयोजन भारत में 28–30 अक्तूबर 1983 को आयोजित हुआ था। चौथा विश्व हिंदी सम्मेलन 2 से 4 दिसंबर, 1993 को मॉरीशस में आयोजित हुआ था। 4 से 8 अप्रैल 1996 को पाँचवें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन ट्रिनिडाड एवं टोबेगो में हुआ था। तीन वर्ष बाद छठा विश्व हिंदी सम्मेलन लंदन में सम्पन्न हुआ था। सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन सूरीनाम में 6 से 9 जून 2003 में आयोजित हुआ था। वर्ष 2007 में न्यू यॉर्क में आठवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन जुलाई में आयोजित हुआ था। वर्ष 2012 में नौवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन जोहान्सबर्ग, दक्षिण अफ़्रीका में 22 से 24 सितंबर के बीच सम्पन्न हुआ था। दसवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन भोपाल, भारत में 10 से 12 सितंबर 2015 को सम्पन्न हुआ था। ग्यारहवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन मॉरीशस में 18 से 20 अगस्त को सम्पन्न हुआ। इसका आयोजन भारत और मॉरीशस की सरकारों ने मिलकर किया।

स्वतन्त्र मॉरीशस के प्रथम प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के मुख्य अतिथि थे। वह ऐतिहासिक सम्मेलन बहुत सफल हुआ था। उस शुभ अवसर पर भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री माननीया श्रीमती इंदिरा गांधी एवं माननीय सर शिवसागर रामगुलाम ने निर्णय लिया था, कि दोनों देश (भारत एवं मॉरीशस) मिलकर संसार के भारतीय डायस्पोरा देशों में हिंदी का प्रचार–प्रसार करेंगे।

प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के दौरान तीन प्रस्ताव पारित किए गए थे :

1. संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिंदी को आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान दिलाया जाए।

2. विश्व हिंदी विद्यापीठ की स्थापना वर्धा में हो।

जन्म : 20 जनवरी 1943

शिक्षा :

- बी.ए. जेनेरल : हिंदी साहित्य, अंग्रेज़ी, समाज–शास्त्र व राजनीति–शास्त्र – विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन, भारत
- एम.ए. हिंदी –उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, भारत
- रिफ्रेशर कोर्स –भारतीय दर्शन– सरदार पटेल कॉलिज, दिल्ली
- पी.एच.डी. हिंदी – "A Study of Mauritian Bhojpuri Folk Literature in the perspective of Indian Culture" – जिवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, भारत
- परिचय, प्रथमा, मध्यमा, साहित्य विशारद, विद्या वाचस्पती

व्यवसाय :

- (संप्रति) आर्य सभा, मॉरीशस के आर्य नेता, ऋषि दयानंद इन्स्टीट्यूट के डीन तथा आर्य सभा मॉरीशस द्वारा प्रकाशित 'आर्योदय' साप्ताहिक पत्रिका के संपादक।
- 1964 से 1981 तक प्राथमिक पाठशाला में हिंदी शिक्षक रहे।
- 1981 में महात्मा गांधी संस्थान के हिंदी विभाग में शिक्षक अधिकारी नियुक्त हुए।
- प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर पाठ्य–सामग्रियों का निर्माण किया।
- 2003 में महात्मा गांधी संस्थान के हिंदी विभाग में वरिष्ठ व्याख्याता के पद से सेवानिवृत्त हुए।
- 2007 में मॉरीशस में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के सौजन्य से डी.ए.वी. डिग्री कॉलिज की स्थापना की।

प्रकाशन :

- एक समर्पित जीवन : पंडित रामलगन
- मॉरीशस के निर्माता : सर शिवसागर रामगुलाम
- स्वतंत्रता के अमर सेनानी : सुखदेव विष्णुदयाल
- मॉरीशस के भोजपुरी लोक–साहित्य एवं भारतीय संस्कृति
- Hindu Names in Mauritius
- The light of truth-An abridged version
- Hinduism for H.S.C
- The Arya Samaj in Mauritius and South Africa
- Vedic Marriage Rites

→

- ❖ Hindu Names for children
- ❖ समर्पण, वेद मंत्रों का अंग्रेज़ी में अनुवाद
- ❖ वेद–पीयूष, निबंध–संग्रह
- ❖ एक प्रेरक व्यक्तित्व, श्रीमती धनवन्ती रामचर्ण
- ❖ एक और शताब्दी समारोह, 2015
- ❖ मॉरीशस की संस्कृति और साहित्य, 2017
- ❖ अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में अनेक लेख प्रकाशित हो चुके हैं।

सम्मान :

- ❖ होनोरेरी सिटिज़ेनशिप ऑफ़ मेबर्ग विलेज, 1977
- ❖ भारतीय संस्कृति साहित्य कला संस्थान जयपुर सम्मान, 1989
- ❖ ओ. एस. के. (O.S.K), 1998
- ❖ आर्य रत्न, अंतरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन, दिल्ली, 2003
- ❖ हिंदी रत्न, हिंदी संगठन, 2007
- ❖ अंतरराष्ट्रीय वागेश्वरी सम्मान, 2013
- ❖ महर्षि दयानंद सरस्वती सम्मान, 2015
- ❖ विश्व हिंदी गौरव सम्मान, 2016
- ❖ जी. ओ. एस. के. (G.O.S.K), 2017
- ❖ 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन में 'विश्व हिंदी सम्मान' से सम्मानित, 2018।

3. विश्व हिंदी सम्मेलनों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए अत्यंत विचारपूर्वक एक योजना बनाई जाए।

महात्मा गांधी का यह दृढ़ विचार था कि हिंदी मात्र भारत की ही राष्ट्रभाषा न रहे, बल्कि उसे एक अंतरराष्ट्रीय भाषा का दर्जा मिलना चाहिए। वर्ष 1975 में नागपुर में सम्पन्न प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन में महात्मा गांधी के स्वप्न की झलक प्रतिबिम्बित होती है। प्रथम पारित प्रस्ताव हिंदी के पक्ष में ही था कि उसे संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा का दर्जा दिलाया जाए।

चौथे विश्व हिंदी सम्मेलन में पारित सात प्रस्तावों में से पाँच इस प्रकार थे :

1. चौथे विश्व हिंदी सम्मेलन की प्रबन्धक समिति को यह अधिकार दिया जा रहा है कि एक कार्यकारिणी समिति का गठन करते हुए सचिवालय की स्थापना करे, ताकि अंतरराष्ट्रीय भाषा स्वरूप हिंदी का विकास और प्रचार किया जा सके।
2. यह सम्मेलन पूर्व में आयोजित तीन सम्मेलनों में पारित किए गए प्रस्तावों का अनुमोदन करते हुए एक 'विश्व हिंदी पीठ' के निर्माण की माँग करता है। साथ ही, यह माँग करता है कि मॉरीशस में 'विश्व हिंदी केन्द्र' की स्थापना की जाए।
3. संसार के अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी के अध्ययन में वृद्धि हुई है। यह सम्मेलन उन देशों और विश्वविद्यालयों से माँग करता है कि वहाँ हिंदी पीठ की स्थापना की जाए।
4. भारतीय डायस्पोरा देशों और भारत के बीच सम्पर्क सुदृढ़ किया जाए। संचार माध्यमों – रेडियो, टी.वी, समाचार–पत्र आदि के माध्यम से हिंदी में आदान–प्रदान किया जाए। यह सम्मेलन भारत सरकार से माँग करता है कि समाचार–पत्रों, पत्रिकाओं एवं पुस्तकों के प्रकाशन में सक्रिय रूप से सहायता प्रदान करे।
5. राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के प्रभाव में वृद्धि हुई है। फिर भी उसे यथोचित मान और स्थान प्राप्त नहीं हुआ है। अतः इस सम्मेलन का मानना है कि सरकार और जनता इस क्षेत्र में विशेष रूप से प्रयत्न करें।

प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन में पारित प्रथम प्रस्ताव कि हिंदी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा बनायी जाए, बाद के सम्मेलनों में बराबर चर्चा का विषय रहा, परन्तु महात्मा गांधी का सपना कि हिंदी विश्व भाषा बने, अभी तक पूरा नहीं हो पाया है। सौभाग्यवश चौथे विश्व हिंदी सम्मेलन के दूसरे और तीसरे पारित प्रस्तावों को कार्यरूप दिया जा सका है।

दूसरे प्रस्ताव को वर्धा में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की स्थापना द्वारा कार्यरूप दिया जा चुका है। भारत की संसद में 1997 में पारित एक अधिनियम के फलस्वरूप यह विश्वविद्यालय अस्तित्व में आया। इसके उद्देश्य इस प्रकार हैं :

1. हिंदी को एक प्रान्तीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय भाषा स्वरूप विकसित करना।
2. हिंदी को संपर्क, व्यवसाय, विज्ञान, प्रौद्योगिकी–शिक्षण और प्रबंधन कार्य की भाषा स्वरूप पुष्ट करके उसे रोज़गार से

जोड़ना।

3. हिंदी के लिए विद्वतापूर्ण वातावरण तैयार करना, जिसमें शिक्षण और अध्ययन में वृद्धि हो सके।
4. हिंदी में शोध और प्रकाशन को बढ़ावा देना।
5. सामाजिक–सांस्कृतिक वातावरण में नवीनताएँ प्रोत्साहित करना।

बहुत ही उत्साह के साथ प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के तीसरे प्रस्ताव को कार्यरूप दिया गया था। भारत सरकार ने सभी सम्भव प्रयास किए, ताकि विश्व हिंदी सम्मेलनों को स्थायित्व प्राप्त हो सके। इसी प्रकार प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के प्रथम प्रस्ताव तथा चौथे विश्व हिंदी सम्मेलन के दूसरे प्रस्ताव के क्रियान्वयन हेतु भारत सरकार और मॉरीशस सरकार ने मिलकर विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना की। क्यूर्पिप में भाड़े के एक भवन में विश्व हिंदी सचिवालय की गतिविधियाँ सन् 2008 में प्रारम्भ हुईं। वर्ष 2001 में भारत सरकार के मंत्री माननीय श्री मुरली मनोहर जोशी मॉरीशस यात्रा पर पधारे थे। प्रस्थान से पूर्व उन्होंने सचिवालय के भवन की शिलान्यास–विधि सम्पन्न की। मॉरीशस की सरकार ने इंदिरा गांधी भारतीय सांस्कृतिक केन्द्र, फ़ेनिक्स के पास सचिवालय के निर्माणार्थ 7542 वर्ग मीटर ज़मीन दी थी। दिनांक 12 मार्च 2015 को आयोजित समारोह में भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी एवं मॉरीशस के तत्कालीन प्रधानमंत्री माननीय सर अनिरुद्ध जगन्नाथ जी ने विश्व हिंदी सचिवालय के भवन–निर्माण के शुभारंभ का उद्घाटन किया। 3261 वर्ग मीटर पर विश्व हिंदी सचिवालय के अति आधुनिक भवन के निर्माण में तीन साल लगे। भारत सरकार ने इस कार्य हेतु मॉरीशसीय रुपये 163,757,612 के व्यय का वहन किया। विश्व हिंदी सचिवालय के भवन में एक सभागार, एक समिति कक्ष, एक कार्यकारिणी कक्ष, एक व्याख्यान व संगोष्ठी कक्ष, एक कंप्यूटर कक्ष, एक मल्टीमीडिया कक्ष, एक शोध–केंद्र, एक ग्रंथालय एवं प्रलेखन केंद्र, प्रशासन केंद्र, प्रकाशन केंद्र तथा अतिथि गृह भी है।

सचिवालय के मुख्यालय का उद्घाटन भारत के राष्ट्रपति, महामहिम श्री रामनाथ कोविन्द जी तथा मॉरीशस के प्रधानमंत्री माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ जी ने 13 मार्च 2018 को किया। भारतीय विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज 03 जून, 2018 को सचिवालय के नये भवन में पधारी थीं और 20 अगस्त 2018 को उन्हीं के करकमलों द्वारा सचिवालय के ग्रन्थालय एवं प्रलेखन केंद्र की नामपट्टिका का अनावरण किया गया। चौथे विश्व हिंदी सम्मेलन के दूसरे प्रस्ताव को पूर्णतः क्रियान्वित होते देखकर विश्व हिंदी समुदाय को हर्ष एवं गर्व की अनुभूति होती है।

मॉरीशस
aryamu@intnet.mu

30

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन की सुमधुर स्मृतियाँ

– डॉ. संयुक्ता भुवन–रामसारा

10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन 10 से 12 सितम्बर 2015 को भोपाल, भारत में आयोजित किया गया था। इस सम्मेलन का मुख्य विषय था 'हिंदी जगत : विस्तार और संभावनाएँ। सम्मेलन का केंद्रबिंदु था वर्तमान समय में हिंदी की वैश्विक स्थिति तथा उसके प्रचार–प्रसार की संभावनाओं पर विचार–विमर्श करना। इस तीन दिवसीय सम्मेलन में विश्व के 39 देशों से आये हिंदी विद्वानों को एक ऐसा सशक्त मंच मिला, जहाँ वे हिंदी से संबंधित राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर अपनाए गए अत्याधुनिक, रचनात्मक और अभिनव व्यावहारिक बिंदुओं पर विचार मंथन कर सकें।

मॉरीशस की शिक्षा और मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन इस सम्मेलन की विशेष अतिथि थीं। उन्होंने 17 सदस्यों के प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व किया, जिसमें मॉरीशस के वरिष्ठ हिंदी सेवी, हिंदी प्रचारक संस्थाओं के अधिकारी और प्रतिनिधिगण, मीडिया के प्रतिनिधि और हिंदी लेखक शामिल थे। प्रतिनिधि मंडल की संरचना इस प्रकार थी – श्री जयकर नायक, श्रीमती सूर्यकान्ति गयान, डॉ. राजरानी गोबिन, श्री गंगाधरसिंह सुखलाल, डॉ. सरिता बुद्धु, श्री सत्यदेव टेंगर, श्री केसन बधु, डॉ. विनोदबाला अरुण, श्री यंतुदेव बुधु, श्री प्रह्लाद रामशरण, श्री सत्यदेव प्रीतम, श्री राजनारायण गति, श्री टहल रामदीन, श्री अजामिल माताबदल, डॉ. संयुक्ता भुवन–रामसारा तथा डॉ. हेमराज सुन्दर। सुदूर देशों, यथा आटलांटिक महासागर में त्रिनिदाद और टोबैगो से, प्रशांत महासागर में फ़िजी द्वीप समूह से तथा यूरोप, अमेरिका, अफ़्रीका और एशिया से कई प्रतिनिधि अपने–अपने देश के हिंदी अनुभव को साझा करने के लिये भारत में बत्तीस वर्ष बाद एकत्र हुए थे। इस प्रकार यह सम्मेलन दुनिया भर से आये हिंदी–प्रेमियों का एक अनूठा विचार–महाकुम्भ था।

सम्मेलन में उपस्थित कई देशों के प्रतिनिधियों ने दास–प्रथा की दयनीय स्थिति का अनुभव किया था तथा वर्षों तक भूमिहीन रहकर वे पुलिस–सुरक्षा तथा राजनीतिक और नागरिक अधिकारों से वंचित रहे थे। फिर भी, समय के उतार–चढ़ाव को चुनौती देते हुए, वे जिस देश के निवासी हुए, उस देश को एक सफल राष्ट्र

जन्म : 8 जुलाई 1968

शिक्षा :
- बनारस हिंदू विश्वविद्यालय से बी.ए., एम.ए. और पी.एच.डी.
- प्रोजेक्ट लीडरशिप कोर्स
- योग में डिप्लोमा
- संस्कृत–शास्त्र तथा शास्त्रीय संगीत का अध्ययन

व्यवसाय :
- पूर्व एसोसिएट प्रोफ़ेसर व अध्यक्षा, हिंदी विभाग, महात्मा गांधी संस्थान
- पूर्व अध्यक्षा, भाषा संसाधन केंद्र, महात्मा गांधी संस्थान
- पूर्व वरिष्ठ प्राध्यापिका, महात्मा गांधी संस्थान
- राज–योग शिक्षिका
- 250 से अधिक स्नातक शोध छात्रों के अनुसंधान का निर्देशन
- पी.एच.डी. शोधकर्ताओं के शोध का निर्देशन

प्रकाशन :
- 'निराला : रचना और अंतःसंघर्ष'
- Thoughts on peace
- Indian Diaspora : Voices of grandparents and grandparenting
- स्थानीय तथा अंतरराष्ट्रीय पत्र–पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित

सम्मान :
- 'ग्लॉरी ऑफ़ इंडिया आवर्ड'
- 'सर्टिफ़िकेट ऑफ़ एक्सेलेंस'
- 'भारत गौरव सम्मान'
- साहित्यिक सांस्कृतिक शोध संस्था द्वारा अंतरराष्ट्रीय सम्मान

बनाने में सक्षम रहे। आज उन्हें अपने इतिहास के विभिन्न पड़ावों तथा उसकी उपलब्धियों पर गर्व है।

सम्मेलन के अंतर्गत भारत के प्रधानमंत्री, माननीय श्री नरेंद्र मोदी एवं विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज के प्रभावशाली वक्तव्य सुनने का सुअवसर सभी को प्राप्त हुआ। मॉरीशस की शिक्षा मंत्री तथा सम्मेलन की विशेष अतिथि, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन की अकादमिक सत्र में प्रभावशाली प्रस्तुति थी।

जैसे ही हम राजा भोज अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर पहुँचे, भोपाल की हिन्दीमय खुशबू से वातावरण सुगन्धित हो उठा था। पूरे मार्ग पर और चौराहों को पार करते हुए प्रसिद्ध हिंदी रचनाकारों, जैसे गोस्वामी तुलसीदास, संत कबीरदास, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद, सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' आदि के चित्र, बैनर, पोस्टर और बिल बोर्ड लगे थे, मानो पूरा भोपाल हिंदी का महोत्सव मना रहा हो ।

सम्मेलन–स्थल और आतिथ्य

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन लाल परेड मैदान, भोपाल में हुआ था। वहाँ विशाल 'माखनलाल चतुर्वेदी नगर' का निर्माण किया गया था, जहाँ तीन दिनों तक 39 देशों से 5000 से अधिक प्रतिभागी सम्मिलित हुए थे। विभिन्न सम्मेलन–कक्षों के नाम प्रसिद्ध साहित्यकारों, जैसे सुभद्रा कुमारी चौहान, कवि प्रदीप, दुष्यंत कुमार, काका साहेब कालेलकर आदि के नामों पर रखा गया था।

स्वागत–कक्ष को हिंदी के महान लेखकों के चित्र, प्रोफ़ाइल और संदेशों द्वारा सजीव और सशक्त बनाया गया था, जिनमें आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी, भारतेंदु हरिश्चंद्र, मैथिलीशरण गुप्त, मीराबाई, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा, मुक्तिबोध, हरिवंशराय बच्चन आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय थे।

हर दृष्टि से सम्मेलन का आयोजन भव्य था। सबसे शाही तरीके से हज़ारों प्रतिभागियों को शुद्ध शाकाहारी भोजन प्रदान किया गया था। सभी सुविधाएँ सर्व–सुलभ थीं और स्वयंसेवक मदद के लिए सदैव तत्पर थे। इस प्रकार कहा जा सकता है कि भारतीय संस्कृति की प्रसिद्ध आचार संहिता 'अतिथि देवो भव' का व्यावहारिक रूप देखने में आया।

उद्घाटन समारोह

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन रामधारी सिंह 'दिनकर' सम्मेलन सभागार में 10 सितम्बर 2015 को भारत के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी द्वारा हुआ था। कई गण्यमान्य अतिथियों के साथ विदेश मंत्री तथा सम्मेलन के संयोजक, भारत की विदेश मंत्री, श्रीमती सुषमा स्वराज, मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री तथा सम्मेलन के प्रमुख संरक्षक, माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान, अनेक राज्यों के राज्यपाल, केन्द्रीय मंत्री और सम्मेलन की विशेष अतिथि, मॉरीशस की शिक्षा मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन भी उपस्थित थीं।

भारत के प्रधानमंत्री, श्री नरेंद्र मोदी ने कहा कि हिंदी भाषा की स्थिति और महत्त्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है तथा भाषाएँ जड़ नहीं, बल्कि चैतन्य हैं और उनमें व्यक्ति, समाज, संस्कृति और पूरी सभ्यता को परिवर्तित करने की शक्ति है। उन्होंने स्पष्टतः कहा कि भाषाविदों का मानना है कि वर्तमान समय में संसार में लगभग 6000 भाषाएँ हैं और यदि उनपर पर्याप्त ध्यान न दिया गया, तो 21वीं सदी के अंत तक 90 प्रतिशत भाषाएँ लुप्त हो जाएँगीं। अतः हिंदी के साथ–साथ अन्य भाषाओं की सुरक्षा एवं विकास के लिए सचेत प्रयास आवश्यक है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में आने वाले दिन में तीन भाषाएँ इस डिजिटल दुनिया में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाएँगी। यथा – अंग्रेज़ी, चीनी और हिंदी।

भारत के प्रधान मंत्री ने उद्घाटन समारोह के अंतर्गत हिंदी भाषा के प्रति मॉरीशसवासियों की आस्था, निष्ठा और लगन की सराहना भी की और विगत भारतीय प्रवासी दिवस को स्मरण किया, जिसमें मॉरीशसीय लेखकों द्वारा 150 से अधिक पुस्तकें प्रदर्शित की गई थीं। उनके लिए यह एक अद्भुत उपलब्धि थी।

दूसरी ओर, विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने कहा कि यह सम्मेलन हिंदी भाषा के इतिहास में मील का पत्थर है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि पूर्व के नौ हिंदी सम्मेलन, हिंदी साहित्य पर आधारित थे और पहली बार हिंदी भाषा को विश्व हिंदी सम्मेलन का केंद्रबिंदु बनाया गया है।

पुस्तक–लोकार्पण

उद्घाटन समारोह के दौरान दो पत्रिकाओं तथा एक पुस्तक का लोकार्पण हुआ। इन्हें इनके मुख्य संपादकों द्वारा प्रधान मंत्री को प्रस्तुत किया गया। प्रो. अशोक चक्रधर द्वारा *गगनांचल विशेषांक,* डॉ. कमल किशोर गोयनका द्वारा *प्रवासी साहित्य : जोहानेसबर्ग से आगे* और श्री मनोहर पुरी द्वारा सम्मेलन को समर्पित *सम्मेलन स्मारिका* का क्रमिक रूप से विमोचन हुआ।

शैक्षिक सत्र

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में निम्नलिखित बारह विषयों पर चार सभागारों में समानांतर सत्रों के अंतर्गत शोध–पत्र प्रस्तुत किये गए : 'विदेशों में हिंदी शिक्षण : समस्याएँ और समाधान', 'प्रशासन में हिंदी', 'विज्ञान क्षेत्र में हिंदी', 'संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी में हिंदी', 'विदेशियों के लिए भारत में हिंदी अध्ययन की सुविधा', 'विधि एवं न्याय क्षेत्र में हिंदी और अन्य भाषाएँ', 'गिरमिटिया देशों में हिंदी', 'बाल साहित्य में हिंदी', 'अन्य भाषा–भाषी राज्यों में हिंदी', 'विदेश नीति में हिंदी', 'हिंदी पत्रकारिता और संचार माध्यमों में हिंदी और भारतीय भाषाएँ', तथा 'देश–विदेश में प्रकाशन : समस्याएँ और समाधान'। प्रत्येक सत्र के पश्चात् महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर विस्तृत एवं गहन विचार–विमर्श किए गए। रिपोर्ट और अनुशंसाएँ प्रस्तुत की गयीं और उनका अनुमोदन किया गया तथा समापन समारोह के दौरान पारित मंतव्यों को प्रस्तुत किया गया।

मॉरीशस की शिक्षा मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन ने प्रथम सत्र में 'प्रवासी देशों में हिंदी एवं उसका भविष्य' पर शोध–पत्र प्रस्तुत किया, जिसके अंतर्गत उन्होंने प्रवासी देशों में हिंदी के प्रचार–प्रसार में मॉरीशस की भूमिका, प्रवासी देशों में हिंदी के अध्ययन–अध्यापन के नवीन आयाम, विश्व हिंदी सचिवालय और हिंदी का सशक्तिकरण, हिंदी का भावी वैश्विक रूप, प्रौद्योगिकी और हिंदी, आदि विषयों पर गंभीर विचार प्रस्तुत किये। इस प्रस्तुतीकरण को सराहा गया और सुनने वालों ने उनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया। मॉरीशस के अन्य प्रतिभागियों ने अपने शोध–पत्र प्रस्तुत किए तथा परिचर्चा में सक्रिय रूप से भाग भी लिया।

प्रतिभागियों को सत्रों की चर्चा–परिचर्चा तथा सम्मेलन की समस्त गतिविधियों से अवगत कराने के लिए दैनिक सम्मेलन समाचार–पत्र निकाले गए थे।

विश्व हिंदी सम्मान

विश्व हिंदी सम्मेलनों के दौरान भारत तथा अन्य देशों के कर्मठ हिंदी सेवियों को हिंदी सम्मान प्रदान करने की परंपरा रही है। 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में बीस भारतीय तथा बीस भारतेतर हिंदी सेवियों को सम्मानित किया गया। मॉरीशस से श्री अजामिल माताबदल और श्री गंगाधरसिंह सुखलाल विश्व हिंदी सम्मान से सम्मानित हुए। सम्मानित अन्य भारतेतर विद्वान निम्नलिखित देशों से थे : अमेरिका, कनाडा, त्रिनिदाद और टोबैगो, बेल्जियम, दक्षिण अफ़्रीका, जर्मनी, जापान, फ़िजी, लिथुआनिया, इंग्लैंड, श्रीलंका, रूस, हंगरी, ऑस्ट्रेलिया, सऊदी अरब और सूरीनाम ।

सम्मेलन–लोगो एवं हिंदी गान

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन का लोगो भारत के राष्ट्रीय पक्षी मोर के चित्रांकन द्वारा सम्मेलन के उद्देश्य और मिशन को परिलक्षित करता है। मोर पक्षी पवित्रता का प्रतीक है और उसके रंग–बिरंगे चमकीले रमणीक पंखों का फैलना हिंदी के वैश्विक रूप का सूचक है, जो वैविध्यपूर्ण संस्कृति और विविध रंगीन परम्पराओं का परिचायक है। भोपाल, अर्थात् सम्मेलन–स्थल को भी विश्व के नक्शे पर दर्शाया गया है। उद्घाटन समारोह के दौरान भारत के प्रधानमंत्री, माननीय श्री नरेंद्र मोदी ने 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन के लोगो पर आधारित डाक–टिकट का लोकार्पण किया।

उद्घाटन समारोह और सम्मेलन के अंतर्गत श्री महेश श्रीवास्तव द्वारा रचित तथा प्रख्यात गायिका, सुहासिनी जोशी द्वारा स्वरबद्ध हिंदी प्रशस्ति–गान मानो हर सहृदय हिंदी रसिक

की आत्मा का संस्पर्श कर रहा हो –

भाषा, संस्कृति प्राण देश के, इनके रहते राष्ट्र रहेगा ।
हिंदी का जयघोष गूँजाकर, भारत माँ का मान बढ़ेगा।।

प्रदर्शनी, सांस्कृतिक कार्यक्रम और अन्य गतिविधियाँ

प्रदर्शनी–स्थल का नाम मॉरीशस के लेखक श्री सोमदत्त बखोरी के नाम पर रखा गया था। प्रदर्शनी में अनेक संस्थाओं की प्रतिभागिता थी, जैसे अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा, केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा, सी–डैक, गूगल, वेब दुनिया, भारत कोश, माइक्रोसॉफ़्ट, एप्पल, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास आदि।

शैक्षिक सत्रों के पश्चात् सायंकालीन बेला में अनेक मनोरंजक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गए थे। पहले दिन, भारत के विभिन्न राज्यों की अनूठी सांस्कृतिक विविधता को सरस गायन और वाद्य–यंत्रों द्वारा प्रस्तुत किया गया। दूसरे दिन, 'अथ हिंदी' नामक एक घंटे की नृत्य–नाटिका प्रस्तुत की गयी, जिसमें आदि से अब तक की हिंदी विकास–यात्रा को अत्यंत कलात्मक और मनोहारी ढंग से दर्शाया गया था ।

भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (आई.सी.सी.आर.) द्वारा एक भावोद्बोधक कवि–सम्मेलन का आयोजन भी किया गया था, जिसका भरपूर रसास्वादन किया गया।

समापन समारोह तथा पारित अनुशंसाएँ

इन तीन दिवसीय परिचर्चा–सत्रों के उपरांत, एक भव्य समापन समारोह के साथ सम्मेलन की औपचारिक समाप्ति हुई। उस अवसर पर, भारत के गृहमंत्री, श्री राजनाथ सिंह मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। साथ ही, गोवा की राज्यपाल, महामहिम श्रीमती मृदुला सिन्हा, माननीय श्री शिवराज सिंह चौहान, विदेश राज्यमंत्री, माननीय जनरल डॉ. वी.के. सिंह, हरियाणा के मुख्य मंत्री, माननीय श्री मनोहरलाल खट्टर, मॉरीशस की शिक्षा मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री, माननीय श्री हर्षवर्धन तथा विदेश मंत्रालय के सचिव, श्री अनिल वाधवा ने अपनी उपस्थिति से सम्मेलन को गरिमा प्रदान की। 12 शैक्षिक सत्रों की रिपोर्ट और उनमें पारित मंतव्य प्रस्तुत किए गए। प्रथम प्रस्ताव के अनुसार विदेश मंत्रालय द्वारा विशेष समीक्षा समिति का गठन किया जाए, जिसमें हिंदी के विद्वानों द्वारा पारित प्रस्तावों को विभिन्न मंत्रालयों को प्रेषित कर उचित कार्यवाही की जाए। दूसरा प्रस्ताव था कि ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन सन् 2018 में मॉरीशस में किया जाए।

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में पारित कुछ अन्य अनुशंसाएँ इस प्रकार हैं : मॉरीशस स्थित विश्व हिंदी सचिवालय को अधिक सक्रिय किया जाए, विदेशी छात्र–छात्राओं को भारत में हिंदी अध्ययन के लिए छात्रवृत्ति तथा अन्य सहायता उपलब्ध कराई जाए, संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को समयबद्ध तरीके से आधिकारिक भाषा बनाने के लिए संकल्प लिया जाए तथा इस सम्बन्ध में अन्य देशों का समर्थन जुटाने के लिए भारतीय दूतावासों और मिशनों द्वारा अधिक प्रयास किए जाएँ, विंडोज़, एंड्रॉइड, लाइनक्स और एप्पल आदि में हिंदी के भाषिक अनुप्रयोगों के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए नए सिरे से अभियान चलाये जाएँ, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली व परिभाषा कोश का निर्माण किया जाए, पाठ्यक्रम की एकरूपता हो, परन्तु विभिन्न देशों की आवश्यकता के अनुसार पाठ्यक्रम निर्धारित हो, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा 5 हिंदी विद्वानों को फ़ेलोशिप प्रदान की जाए, पुस्तक संस्कृति का विकास करने के लिए प्रभावशाली कदम उठाए जाएँ और ई–पुस्तकालय विकसित किये जाएँ, बाल–साहित्य में देशी–विदेशी महापुरुषों, स्वतंत्रता–सेनानियों और पौराणिक पात्रों की जीवनियाँ सम्मिलित हों, वैश्विक हिंदी साहित्य में भारतीय संस्कृति तथा मानव मूल्य को यथासंभव स्थान दिया जाए, मानक भाषा तय की जाए ताकि विदेशी विद्यार्थियों को शब्द को पढ़ने, लिखने व उच्चारण करने में किसी प्रकार की दुविधा न हो आदि।

समापन समारोह के दौरान श्री राजनाथ सिंह ने हिंदी के उज्ज्वल भविष्य की ओर इशारा करते हुए कहा कि, ''हिंदी संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा के रूप में शामिल होनी चाहिए और इसके लिए भारत सरकार अपनी ओर से पूरा प्रयास करेगी।''

वाणी में ओज और दृढ़ता लाते हुए उन्होंने विश्वास के साथ कहा कि, ''यदि हम योग को 177 देशों के समर्थन से संयुक्त राष्ट्रसंघ में स्थान दिला सकते हैं, तो मात्र 127 देशों के समर्थन से हिंदी को संयुक्त राष्ट्रसंघ में शामिल करने की क्षमता भी रखते हैं।'' अपने सशक्त वक्तव्य के अंत में उन्होंने गिरमिटिया मज़दूरों की हिंदी के प्रति लगन की हार्दिक प्रशंसा करते हुए कहा कि ''इन्होंने विदेशों में भी इस भाषा को मरने नहीं दिया''।

भोपाल से मॉरीशस तक

10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने सभी हिंदी–संरक्षकों को आश्वस्त करते हुए कहा था कि ''यह सम्मेलन परिणाम मूलक रहेगा और इसी उद्देश्य से सम्मेलन में ऐसे विषयों का चयन किया गया है, जिनमें वर्तमान समय में हिंदी भाषा के विस्तार की संभावनाएँ हैं।'' भारत की विदेश मंत्री का आश्वासन सत्य सिद्ध हुआ, जब प्रो. अशोक चक्रधर द्वारा सम्पादित पुस्तक 'भोपाल से मॉरीशस' 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन में सुधी प्रतिभागियों के हाथों में साक्षात प्रस्तुत हुई। यह पुस्तक भोपाल से मॉरीशस तक की अनुशंसा – अनुपालन – यात्रा का प्रतिफल है अर्थात् इसमें10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में पारित अनुशंसाओं का वरिष्ठ व अनुभवी हिंदी विद्वानों से गठित अनुशंसा अनुपालन समिति की कार्यवाही का आकलन प्रस्तुत किया गया है। और ऐसा पहली बार हुआ है।

अतः 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन अविस्मरणीय, अनिर्वचनीय और उत्साहवर्धक रहा। यह सम्मेलन मॉरीशस में पच्चीस वर्ष बाद आयोजित 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन का एक प्रत्यक्ष मापदंड था, जिसपर मॉरीशस खरा उतरने में सर्वथा सक्षम रहा। इस प्रकार, भारत के साथ–साथ मॉरीशस भी हिंदी को वैश्विक मंच पर आसनस्थ करने के लिए संकल्पबद्ध है।

मॉरीशस
holyswan108@yahoo.co.uk

प्राचीन हिंदी–कवियों के ऐसे–ऐसे गीत मैंने सुने हैं कि सुनते ही मुझे ऐसा लगा है कि वे आधुनिक युग के हैं। इसका कारण यह है कि जो कविता सत्य है, वह चिरकाल ही आधुनिक है। मैं तुरंत समझ गया कि जिस हिंदी–भाषा के खेत में भावों की ऐसी सुनहरी फ़सल फली है, वह भाषा भले ही कुछ दिन यों ही पड़ी रहे, तो भी स्वाभाविक उर्वरता नहीं मर सकती, वहाँ फिर खेती के सुदिन आयेंगे और पौष मास में नवान्न उत्सव होगा।

– रवीन्द्रनाथ ठाकुर

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में सभासीन हो सकती है।

– मैथिलीशरण गुप्त

31

विश्व हिंदी सम्मेलनों का प्रभाव

– डॉ. सरिता बुद्धु

शिक्षा :

- डॉक्टरेट (हिंदी), महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, बनारस
- स्नातकोत्तर (हिंदी), पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर
- स्नातक (भूगोल), कोलकाता विश्वविद्यालय
- एडवांस्ड डिप्लोमा (पत्रकारिता), फ्रांस
- डिप्लोमा (पत्रकारिता) इंस्टीट्यूट ऑफ़ जर्नलिज़म बर्लिन, जर्मनी

व्यवसाय :

- (संप्रति) अध्यक्षा, भोजपुरी संगठन, मॉरीशस
- 1997–2001, विशेष सलाहकार, मॉरीशस सरकार
- स्वतंत्र पत्रकार
- निदेशिका एवं सम्पादक 'जनवाणी' (साप्ताहिक हिंदी समाचार–पत्र)
- सन् 1993 से 2001 के मध्य मॉरीशस में स्थित विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- गोपियो (GOPIO) इंटरनेशनल की संस्थापक–सदस्या।
- 'भोजपुरी गीत गवाय स्कूल' की संस्थापक।

प्रकाशन :

- 'कन्यादान' (1993, Kanya Dan, the Whys of the Hindu Marriage Rites)
- Bhojpuri Traditions in Mauritius
- Bhojpuri Bola - Speak Bhojpuri (2010)
- An Easy Approach to Bhojpuri Grammar - Bhojpuri Ke Sahaj Vyakaran

सम्मान :

- 9वें विश्व हिंदी सम्मेलन में 'विश्व हिंदी सम्मान' से सम्मानित, 2012।
- जुलाई 2013 में, बिहार सरकार, भारत द्वारा विश्व भोजपुरी सम्मान से सम्मानित।

क्रिस्टल (1900) ने ठीक ही उल्लेख किया है – *'किसी भाषा को दुनिया की नज़रों में महत्त्वपूर्ण यह तथ्य नहीं बनाता कि उसको मातृभाषा के रूप में कितने लोग प्रयोग में लाते हैं, बल्कि उसे उसके मूल परिवेश से बाहर किस हद तक उपयोगी माना जाता है, यह प्रासंगिक है।'*

1975 में नागपुर, भारत से प्रारम्भ होकर अभी तक दस विश्व हिंदी सम्मेलनों का आयोजन हो चुका है। तब से लेकर आज तक काफ़ी कुछ हुआ है। प्रारम्भ में कई विश्व हिंदी सम्मेलन अनियमित अंतरालों पर आयोजित हुए। त्रिनिदाद में संपन्न सम्मेलन के बाद स्थिति में कुछ सुधार आया और सम्मेलनों का आयोजन नियमित और अधिक गतिमान रूप से होने लगा। 1975 में भारत में हुआ प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन ऐतिहासिक रहा, जिसके तुरंत एक साल बाद मॉरीशस में दूसरा विश्व हिंदी सम्मेलन आयोजित किया गया। इस ऐतिहासिक युग के दो दिग्गज व्यक्तित्व दूरदर्शिता तथा नई दृष्टि के अग्रदूत थे। भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी और मॉरीशस के तत्कालीन प्रधानमंत्री, सर शिवसागर रामगुलाम, दोनों ने भारत तथा मॉरीशस में इन दो सम्मेलनों के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया। नागपुर में ही सर शिवसागर रामगुलाम ने सर्वप्रथम विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना करने का विचार व्यक्त किया था। लेकिन इस प्रस्ताव को अगले कई विश्व हिंदी सम्मेलनों के दौरान मात्र समर्थन ही दिया गया। 21 वर्ष बाद जब अंततः मैंने इसे सरकार की भाषाई नीति के विकास में एक प्रमुख मुद्दे के रूप में सम्मिलित किया, तब जाकर 1996 में यह प्रस्ताव साकार हो पाया। मैंने शीर्ष पदों को संभालने वालों से कहा कि यदि वे इस मुद्दे को लेकर गंभीरता नहीं दिखाएँगे, तो कई अन्य देश इसके निर्वाह के लिए तैयार हैं। मुझे विश्व हिंदी सचिवालय को स्थापित करने का भार सौंपा गया। मैंने अत्यंत धैर्य के साथ इसे कई कठिनाइयों के बीच तब तक संचालित किया, जब तक 1999 के अगस्त में दोनों देशों की सरकारों के बीच समझौता–ज्ञापन पत्र पर हस्ताक्षर नहीं किए गए, मैंने सचिवालय की कार्यनीतियों की योजना पर काम किया, उसके विज़न, उद्देश्य और परियोजनाओं को विकसित कर तैयार किया तथा उसे विधिसम्मत मूर्त रूप देने के लिए कानूनी बिल के प्रारूप पर काम किया।

मॉरीशस में दो विश्व हिंदी सम्मेलनों का आयोजन हुआ

था। विश्व हिंदी सम्मेलन की मद्धिम गति की उड़ान के पूरे तंत्र और संरचना पर गौर करें, तो काफ़ी दिलचस्प लगता है। 1976 में मॉरीशस में संपन्न हुए दूसरे विश्व हिंदी सम्मेलन के सात साल बाद जाकर दिल्ली में इसका तीसरा आयोजन हुआ था, 31 अक्टूबर 1984 को हुई इंदिरा गांधी जी की हत्या के एक साल पहले।

दस वर्षों के लम्बे अंतराल के बाद ही, 1993 में मॉरीशस में चौथा विश्व हिंदी सम्मेलन फिर से आयोजित हुआ था। विश्व हिंदी सम्मेलन के आरंभ से अब 43 वर्ष हो चुके हैं। तब से लेकर अब तक हिंदी कलम और स्याही डिजिटल दुनिया में पदार्पण कर चुकी हैं।

उसके बाद, यह प्रबल एहसास हुआ कि विश्व हिंदी सम्मेलन को अपना क्षेत्र अधिक विस्तृत करना चाहिए और हिंदी के संवर्धन के उद्देश्य से उसे पश्चिमी डायस्पोरा देशों तक पहुँचना चाहिए।

मॉरीशस इस मामले में सौभाग्यशाली है कि एक के बाद एक आनेवाली सरकारें अपनी भाषाई नीति को लेकर दूरदर्शी थीं और उन्होंने भाषाई संतुलन को बनाए रखा। लेकिन कैरीबियाई देशों में केवल सूरीनामी प्रवासी समुदाय, अल्पसंख्यक होने के बावजूद, अपनी जातीय तथा भाषाई धरोहर (हिंदी/भोजपुरी) को संजोकर रखने में सफल हो पाया है। 'सरनामी हिंदी' (हिंदी/भोजपुरी मिश्रित) से अभिहित, यह भाषा सूरीनाम में बड़ी संख्या में बोली जाती है। हाल ही में, भारत से जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के सेंटर फ़ॉर अफ़्रीका स्टडीज़ के अध्यक्ष तथा डायस्पोरा स्टडीज़ जर्नल, रुटलेज, लंदन के प्रधान सम्पादक, प्रो. अजय दुबे ए.आर.एस.पी. – 'इंटरनेश्नल कॉन्फ़्रेंस ऑन नेशन बिल्डिंग एंड द इंडियन डायस्पोरा' के सिलसिले में मॉरीशस आए हुए थे। सूरीनाम में हिंदी की स्थिति पर उनका कथन था –

''मैं सूरीनाम में हिंदी को फलते–फूलते देखकर दंग रह गया, सबसे आश्चर्य कर देने वाली बात यह थी कि वहाँ पर लोग गर्व के साथ इसका प्रयोग दफ़्तरों, बाज़ार, हवाई जहाज़ तथा दैनिक व्यवहार में करते हैं। डच और अंग्रेज़ी जैसी अन्य भाषाओं को तभी प्रयोग में लाया जाता है जब आप गैर–भारतीयों से बातचीत करते हैं।''

विश्व हिंदी सम्मेलनों को अब ठहराव प्राप्त हो गया है। उन्हें अब दृढ़ स्थिरता मिल गयी है। विशेषकर प्रवासी भारतीय दिवस के आयोजन में, जो डायस्पोरा देशों के 35 मिलियन बहुसंख्यक भारतवंशियों के लिए भारत माता से जुड़ने का एक सशक्त माध्यम हिंदी को जीवंत बनाने का अवसर भी मिलता है। हिंदी एक ऐसी लचीली भाषा है, जो नए परिवेश में ढलती भी है और उसे अपनाती भी है। वह बड़े ही सुन्दर तरीके से बॉलीवुड की हिंदी, दक्षिण भारतीय हिंदी और हिंग्लिश की दुनिया की हिंदी बन जाती है। उसकी यही अनेकरूपता उसे 21 वीं सदी की प्रीतिकर और गतिशील भाषा बना देती है।

अब विश्व हिंदी सम्मेलनों में भाग लेना ज़्यादा सुगम हो गया है, वे बेहतर तरीके से आयोजित होने लगे हैं। 2014 में मॉरीशस में गिरमिटिया आप्रवासियों के आगमन की 180 वीं वर्षगाँठ की स्मृति में आयोजित सम्मेलन में गयाना की एक विदुषी श्रीमती वर्शिनी सिंह ने अपना शोध–पत्र पढ़ते हुए कहा था –

''हमने यह माँग की थी कि दसवें विश्व हिंदी सम्मेलन और उसके बाद आयोजित हर सम्मेलन के उपलक्ष्य में हिंदी नौसिखियों के लिए कार्यशालाओं के रूप में विशेष पठन सत्रों को सम्मिलित किया जाए, जिनके तहत उन्हें हिंदी पढ़ना, लिखना और बोलना सिखाने के लिए आधुनिक प्रविधियों और तकनीकों का सहारा लिया जाए। हम कई वर्षों से हर स्तर पर विश्व हिंदी सम्मेलन में इस प्रस्ताव को स्वीकृत करने और सम्मिलित करने की माँग करते रहे हैं, लेकिन अभी तक हम असफल ही रहे।''

उन्होंने आगे कहा

''यदि इसके लिए विश्व हिंदी सम्मेलन सही मंच नहीं है, तो फिर मॉरीशस के महात्मा गांधी संस्थान को इसका नेतृत्व सौंपा जाए और भारत और मॉरीशस सरकारों तथा विश्व हिंदी सचिवालय के सहयोग से, आर्थिक रूप से जहाँ तक व्यवहार्य हो, हम अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के साथ आगे बढ़ें और वह अपेक्षित ठोस नींव रखें, जिसके लिए हम तरसते आए हैं। यह दिल की तह से निकला अत्यावश्यक निवेदन है।''

गयाना में ऐसी पाठशालाएँ हैं, जो कुछ निजी संस्थाओं द्वारा संचालित हैं। लेकिन डॉ. चेद्दी जगन के राजनीतिक रूप से सत्ताहीन होने के कुछ सालों बाद, पश्चिमी क्षेत्र में भारतीयों

के बीच अत्यंत खालीपन–सा छा गया है। हालाँकि यू.एस. में अमेरीकियों का दबदबा रहा है, फिर भी कैरीबियाई देशों में भारतीय मूल के लोग अपनी भाषाई और सांस्कृतिक धरोहर बनाए रखने में संघर्षरत हैं। हमें इस बात के लिए आभारी होना चाहिए कि मॉरीशस से भारत का सामीप्य बढ़ रहा है और दूरदर्शी मॉरीशसीय सरकार ने यह समझ लिया है कि जनता को अपनी भाषाई और सांस्कृतिक धरोहर को व्यवहार में लाने का मानवीय अधिकार देने से राजनीतिक स्थिरता और संतुलन बना रहेगा।

अतः 1993 में मोका, मॉरीशस में हुए सम्मेलन के दौरान त्रिनिदाद की हिंदी निधि से श्री रवि महाराज के अनुरोध पर तीन वर्ष बाद, 1996 में पोर्ट ऑफ़ स्पेन, त्रिनिदाद एवं टोबैगो में 5वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन संपन्न हुआ। इससे कैरीबियाई भारतीय मूल के लोगों के बीच आशा, प्रेरणा और अपेक्षा का भाव जागृत हुआ। उसके पश्चात्, विश्व हिंदी सम्मेलन उत्तरी गोलार्ध की दिशा में मुड़ा और 1999 में लंदन में 6ठा सम्मेलन आयोजित किया गया। उसके बाद चीज़ें बढ़ती गयीं। सन् 2003 में सूरीनाम तथा 2007 में न्यू यॉर्क में हुए क्रमशः 7वें तथा 8वें विश्व हिंदी सम्मेलनों के चलते संयोजकों ने उसकी संरचना और स्थिरता पर गंभीरता से सोच–विचार किया। संयुक्त राष्ट्रसंघ के तत्कालीन महासचिव, बान की मून ने विश्व हिंदी सम्मेलन के प्रतिभागियों को संबोधित करते हुए, हिंदी के कुछ शब्दों का प्रयोग किया। इससे विश्व हिंदी सम्मेलन के द्वारा हिंदी का संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा बनने की आशा जगी। फलतः 2012 में जोहान्सबर्ग, दक्षिण अफ़्रीका में 9वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन आयोजित किया गया।

2014 में श्री नरेन्द्र मोदी के शासन में भारत सरकार की भाषाई नीति को संबल मिला। 2015 में भोपाल में हुए 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन ने वैश्विक भाषा के रूप में हिंदी के प्रचार को नई दिशा, उत्साह और बल दिया। अभी तक के सबसे सुचारू और व्यावहारिक रूप से संयोजित विश्व हिंदी सम्मेलन जोहान्सबर्ग तथा भोपाल में संपन्न हुए।

11 वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन मॉरीशस में करने का निर्णय भोपाल में ही लिया गया। भाषाओं की महत्ता होती है, अब यह कोई विवादास्पद विषय नहीं। हम उस घटना के साक्षी हैं जब 21 फ़रवरी 1952 को ढाका के युवा बांग्लादेशी मेडिकल छात्रों ने अपनी मातृभाषा की रक्षा करते हुए अपने प्राणों की आहुति दी थी। 21 फ़रवरी 1999 में, यूनेस्को को मातृभाषा दिवस घोषित करना पड़ा था।

हिंदी पूरे विश्व में एक लोकप्रिय भाषा के रूप में चिह्नित है और इसका प्रयोग 164 से भी अधिक विश्वविद्यालयों में हो रहा है।

1996 में जब त्रिनिदाद में 5वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन हुआ था, तब वहाँ के तत्कालीन प्रधानमंत्री, श्री बासदेव पाण्डेय यह जानकर अति प्रसन्न हुए थे कि हिंदी एक डिजिटल बोली के रूप में कंप्यूटर पर उपस्थित है। उनकी खुशी की कोई सीमा नहीं थी। उन्होंने बताया कि किस प्रकार उन्होंने बैठकाओं में पुराने विधान के अनुसार चटाई पर बैठकर, हाथ में छड़ी लिए अपने गुरुजी के साथ 'अ', 'आ', 'क', 'ख' दोहराते हुए हिंदी सीखी थी!

अतः वे त्रिनिदाद की पाठशालाओं में हिस्पानिया के साथ इ–टेक्नोलॉजी के माध्यम से हिंदी शिक्षण प्रारम्भ करना चाहते थे। लेकिन शासन बदल गया और उनकी योजना साकार नहीं हो पाई।

आज हिंदी और उसकी लिपि देवनागरी को बिल गेट्स जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति ने भी एक सुस्पष्ट भाषा और इंटरनेट के लिए उत्तम भाषा के रूप में चिह्नित किया है।

हिंदी एक ऐसी भाषा के रूप में है, जिसने स्वयं को ब्लॉग्स, ह्वाट्सएप्प, स्मार्ट फ़ोन्स, ट्विटर और बहुमाध्यमों (multimedia) के अनुरूप ढाल दिया है। अब प्रौद्योगिकी में आई क्रांति के चलते, कंप्यूटर पर किसी भी भाषा और लिपि में हिंदी का अनुवाद हो सकता है। बॉलीवुड और अनेक हिंदी टी.वी. चैनल्स के आने से इस भाषा को बड़े फ़लक पर विस्तार प्राप्त हुआ है। हिंदी का भविष्य उज्ज्वल नज़र आता है, क्योंकि उसकी पहुँच युवा तक फैल चुकी है। भोपाल वाले सम्मेलन में नायजेरिया, केन्द्रीय एशियाई देशों, सऊदी अरब, इजिप्ट आदि से आए कई अभारतीय हिंदी प्रेमियों ने हिंदी फ़िल्में देखते हुए हिंदी के प्रति विकसित अपना प्रगाढ़ स्नेह व्यक्त किया। सन् 2016 में अदीस अबाबा में, 'यूनेस्को इंटरगवर्नमेंटल कमिटी फ़ॉर द सेफ़गार्डिंग ऑफ़ द इंतानजिबल कल्चरल हेरिटेज' के 11वें सत्र में जब यूनेस्को के रिप्रिज़ेन्तेटिव लिस्ट ऑफ़ द इंतानजिबल कल्चरल

हेरिटेज ऑफ़ ह्युमानिटी में मॉरीशस के भोजपुरी लोकगीत – 'गीत गवाई' को सम्मिलित किए जाने के अवसर पर मैं आधिकारिक प्रतिनिधि के तौर पर गयी थी, तब मुझे अपने इथोपियन गाइड को दिल से हिंदी गाने गाते हुए सुनकर आश्चर्य हुआ था।

विश्व हिंदी सम्मेलनों में पारित अनुशंसाओं में दो को मूर्त रूप दे दिया गया है – पहला, वर्धा, भारत में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय तथा दूसरा, मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना। विश्व हिंदी सचिवालय अब फ़ेनिक्स में स्थित अपने अत्याधुनिक भवन में पूर्ण रूप से कार्यरत है। हिंदी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा बनाने की तीसरी अनुशंसा साकार होने की राह पर है।

भारत के विशाल आर्थिक शक्ति के रूप में उभरने से तथा बदलते आर्थिक परिप्रेक्ष्य के चलते, कुछ 'तकनीकी समस्याओं' के बावजूद, यह उम्मीद है कि हिंदी को संयुक्त राष्ट्र के बीच अधिक स्वीकृति मिलेगी। भारत के सेक्युरिटी काउन्सिल में सम्मिलित होने से संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा बनने के लिए हिंदी का रास्ता अपने आप साफ़ हो जाएगा।

लोजिस्टिक सपोर्ट तथा सुविधाओं को सुनिश्चित करने से युवा पीढ़ी के बीच हिंदी का बेहतर प्रचार हो सकता है। बहुभाषी अध्ययन क्षेत्रों में भारी मात्रा में अनुवादकों तथा दुभाषियों को प्रशिक्षित करने की तीव्र आवश्यकता है।

मॉरीशस भारतीय डायस्पोरा की राजधानी के रूप में स्थापित हो रहा है। यहाँ पर विश्व हिंदी सचिवालय के स्थापित होने का उल्लेखनीय महत्त्व है। शिक्षण–व्यवस्था में अपने मज़बूत तथा प्रतिष्ठापित आधार के कारण तथा अभिमन्यु अनत, रामदेव धुरंधर आदि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति और सम्मान प्राप्त साहित्यकारों के होने से मॉरीशस पूरे विश्व में हिंदी के संवर्धन को गतिशील बनाने और उसके लिए एक प्रासंगिक मंच तैयार करने में सक्षम है।

मॉरीशस में 400 से भी अधिक पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है और यहाँ के लगभग 75 कर्मठ हिंदी लेखक एवं कवि हिंदी–लेखन में सक्रिय हैं।

यहाँ 1909 से मणिलाल डॉक्टर द्वारा स्थापित 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका के समय से हिंदी पत्रकारिता का एक समृद्ध इतिहास है, हालाँकि आर्थिक कारणों से इसकी गति अवरुद्ध होती रही है।

यह दिलचस्प तथ्य है कि मॉरीशस में एक साथ हिंदी भाषी, तमिल भाषी, अंग्रेज़ी भाषी, फ्रेंच भाषी, भोजपुरी भाषी तथा क्रियोल भाषी निवास करते हैं। यदि विभिन्न भाषाओं में हिंदी एक संपर्क–सूत्र की तरह काम करे और अनुवाद के माध्यम से नई चाल चले, तो वैश्विक भाषा का स्वरूप प्राप्त कर सकता है। संभावनाएँ असीम हैं। यह हिंदी के उन्नयन का दायित्व–निर्वहन करने वालों की इच्छा–शक्ति पर निर्भर है कि वे हिंदी को कहाँ तक आगे बढ़ाएँ।

निकट भविष्य में महात्मा गांधी संस्थान/रवीन्द्रनाथ टैगोर संस्थान और विश्व हिंदी सचिवालय को वैश्विक स्तर पर इसके संबंध में निर्धारक भूमिका निभानी होगी।

यदि हिंदी का संरक्षण आधुनिक भाषा के रूप में करना है, तो समय आ गया है कि इसे इलेक्ट्रॉनिक नेटवर्किंग के ज़रिये युवा पीढ़ी तक प्रसारित किया जाए, ताकि वे हिंदी का प्रयोग करते हुए सोशल मीडिया पर आपस में संपर्क रख सकें तथा हिंदी को हृदय और रचनात्मकता की भाषा के रूप में मानें।

मॉरीशस
saritaboodhoo@yahoo.com

32

11वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन : एक सुखद अनुभव

– डॉ. देवभरत सिरतन

मॉरीशस में आयोजित ग्यारहवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन हर तरह से सफल रहा। वास्तव में, वह महाकुम्भ का मेला ही रहा, जिसमें भाग लेने के लिए लगभग 35 देशों से दो हज़ार से भी ज़्यादा प्रतिभागी मॉरीशस आए थे। असल में, ग्यारहवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन18–20 अगस्त 2018 तक मॉरीशस में 'पाय' स्थित स्वामी विवेकानंद अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन केंद्र में आयोजित हुआ, जिसे विशेष रूप से इस सम्मेलन के परिप्रेक्ष्य में गोस्वामी तुलसीदास नगर नाम दिया गया। यह उल्लेखनीय है कि मॉरीशस में तीसरी बार विश्व हिंदी सम्मेलन आयोजित हुआ। पहली बार 28 से 30 अगस्त 1976 तक मॉरीशस स्थित महात्मा गांधी संस्थान, मोका में तथा दूसरी बार 2 से 4 दिसंबर 1993 को पुनः महात्मा गांधी संस्थान, मोका में ही आयोजित हुआ।

18 अगस्त को गोस्वामी तुलसीदास नगर (मॉरीशस) में ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन के उद्घाटन समारोह में प्रस्तावना वक्तव्य देते हुए, भारत की विदेश–मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने कहा कि गिरमिटिया देशों में लुप्त हो रही हिंदी भाषा को बचाने की ज़िम्मेदारी भारत की है। उन्होंने कहा कि इस सम्मेलन में दो भाव एक साथ उभर रहे हैं। पहला शोक का भाव और दूसरा संतोष का भाव। भारत के भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी का निधन गुरुवार 16 अगस्त 2018 को हुआ था। श्रीमती सुषमा स्वराज ने कहा कि अटल जी के निधन में शोक की छाया इस सम्मेलन पर है, किंतु दूसरा संतोष का भाव भी है कि समूचा हिंदी विश्व अटल जी को श्रद्धांजलि देने के लिए यहाँ एकत्र है। 18 अगस्त को उद्घाटन सत्र के बाद श्रद्धांजलि सत्र रखा गया था।

प्रस्तावना वक्तव्य के दौरान ही भारतीय विदेश मंत्री ने बताया कि इसी साल मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय के भवन का उद्घाटन भारतीय राष्ट्रपति महामहिम श्री रामनाथ कोविंद जी के हाथों किया गया। संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिंदी को आधिकारिक भाषा का दर्जा दिए जाने के लिए भारत 129 देशों का समर्थन हासिल कर लेगा, जिस तरह से अपने योग दिवस के लिए 177 देशों का समर्थन जुटाया था।

जन्म : 09.11.1947

शिक्षा :
- पी.एच.डी. (हिंदी, दिल्ली विश्वविद्यालय)
- एम.ए. (हिंदी, उस्मानिया विश्वविद्यालय)
- बी.ए. (हिंदी, दिल्ली विश्वविद्यालय)
- पी.जी.सी.ई
- डिप्लोमा – भाषा प्रवीणता (हिंदी)
- डिप्लोमा – दूरस्थ शिक्षण (फ्रेंच)
- जी.सी.ई (ए) – हिंदी, उर्दू

व्यवसाय :
- हिंदी शिक्षक (प्राथमिक तथा माध्यमिक)
- वरिष्ठ व्याख्याता, हिंदी विभाग, महात्मा गांधी संस्थान
- फ्रीलांस पत्रकार (एम.बी.सी)

प्रकाशन :
- पत्र–पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित

श्रीमती स्वराज ने सम्मेलन 'लोगो' पर बनाई गई एनिमेशन फ़िल्म का हवाला देते हुए बताया कि भारत का मोर आएगा और डोडो को बचाएगा। लोगो वाली इस फ़िल्म में दिखाया गया कि मॉरीशस का राष्ट्रीय पक्षी डोडो जब डूबने लगता है तब भारत का राष्ट्रीय पक्षी मोर आकर उसे बचाता है। फिर दोनों पक्षी नृत्य करते हैं।

मॉरीशस की शिक्षा मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन ने स्वागत–भाषण दिया। तत्पश्चात् मॉरीशस के प्रधानमंत्री माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ ने हिंदी सम्मेलन पर जारी किए गए दो डाक टिकटों का लोकार्पण किया। इसके अलावा उन्होंने सम्मेलन स्मारिका का भी लोकार्पण किया। इस मौके पर कई पत्रिकाओं और पुस्तकों का विमोचन किया गया, जिनमें विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'विश्व हिंदी साहित्य' भी शामिल रही।

गोस्वामी तुलसीदास नगर में ही 18 अगस्त को मॉरीशस के

प्रधानमंत्री माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ ने यह घोषणा की कि मॉरीशस का साइबर टावर अब अटल बिहारी वाजपेयी टावर के नाम से जाना जाएगा। श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन में उद्घाटन वक्तव्य दे रहे थे। उन्होंने कहा कि अटल जी के निधन से हिंदी जगत् का अनमोल हीरा खो गया है और भारत माता ने एक वीर राजनेता तथा बुद्धिमान व कर्त्तव्यपूर्ण हिंदी सेवी खो दिया है। मॉरीशस के प्रधानमंत्री ने आगे कहा कि अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने प्रधानमंत्रित्व काल में मॉरीशस के साथ संबंधों को बहुत मज़बूती दी थी। मॉरीशस में साइबर टावर भारत के सहयोग से ही बना था। साइबर टावर का उद्घाटन अटल जी ने ही किया था। इसीलिए मॉरीशस की सरकार ने निर्णय लिया कि साइबर टावर का नामकरण अटल बिहारी वाजपेयी के नाम पर किया जाएगा।

उद्घाटन समारोह के बाद वाजपेयी जी की स्मृति में एक विशेष श्रद्धांजलि–सत्र आयोजित किया गया, जिसमें सम्मेलन में उपस्थित महान हस्तियों ने अपने–अपने विचार व्यक्त किए। पश्चिम बंगाल के राज्यपाल और हिंदी के वरिष्ठ कवि महामहिम श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने कहा कि अटल बिहारी वाजपेयी के निधन से शब्द निःशब्द हो गए हैं। वाणी मूक हो गई है। उन्होंने कहा कि सामान्यतः आकाश में उड़ते पंछी शाम को बसेरे पर लौट आते हैं, लेकिन 16 अगस्त 2018 की शाम को भारत के राजनीतिक गगन में उड़ता हुआ विशाल गरुड़ अपने नश्वर शरीर को त्यागकर अमरत्व के मार्ग पर बढ़ चला और नभ में राजनीतिक सिद्धांतों का ध्रुवतारा बन गया। श्रद्धांजलि–सत्र को संबोधित करते हुए मॉरीशस के मार्गदर्शक मंत्री, सर अनिरुद्ध जगन्नाथ ने कहा – "मैं अपनी और अपने देश की ओर से अपने करीबी दोस्त और सहयोगी के लिए शोक व्यक्त करता हूँ। मैंने उनसे बहुत कुछ सीखा है। वे भारत को शांति और अमन का देश बनाना चाहते थे। अटल जी दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंधों को अटल बंधन में बाँधने के लिए प्रयत्नशील थे।" बारी–बारी से कई महानुभावों ने श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी को श्रद्धांजलि अर्पित की। इनमें चीन में हिंदी के पुरोधा, जियांग जिंग खुई, गोवा की राज्यपाल, महामहिम श्रीमती मृदुला सिन्हा, पोर्ट ऑफ़ स्पेन के रामप्रसाद परशुराम, अमेरिका के प्रो. सुरेन्द्र गंभीर, सांसद के. सी त्यागी, अमेरिका की डॉ. मृदुल कीर्ति, नीदरलैंड की डॉ. पुष्पिता अवस्थी, सांसद भर्तृहरि महताब, रूस के डॉ. अन्ना चेर्ने कोवा, दक्षिण कोरिया की डॉ. यंग ली, जापान के प्रो. मचीदा, मॉरीशस की डॉ. विनोदबाला अरुण, ब्रिटेन के निखिल कौशिक आदि सम्मिलित थे।

श्रद्धांजलि–सत्र के पश्चात् अभिमन्यु अनत नामक सभागार और अलग–अलग कक्षों में सम्मेलन के समानांतर सत्र शुरु हुए।

विश्व हिंदी सम्मेलन के दो पहले दिनों के अंतर्गत 8 समानांतर सत्र अलग–अलग कक्षों में आयोजित हुए। गोस्वामी तुलसीदास नगर स्थित अभिमन्यु अनत सभागार में पहला समानांतर सत्र आयोजित हुआ, जिसका विषय था – 'भाषा एवं लोक–संस्कृति का अंतः संबंध'। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के कुलपति तथा जाने–माने मनोविज्ञानी और भारतीय संस्कृति के भाष्यकार प्रो. गिरीश्वर मिश्र ने इस विषय पर कहा कि संस्कृति और भाषा का बड़ा गहरा संबंध है। उन्होंने अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा कि संस्कृति एक प्राणी है और भाषा उसके प्राण। उन्होंने कहा कि लोक में व्यक्ति महत्त्वपूर्ण नहीं है, लोक में समाज महत्त्वपूर्ण है। इस सत्र में डॉ. मृदुल कीर्ति, डॉ सरिता बुद्धु तथा श्रीमती मृदुला सिन्हा ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

तीसरे सत्र का विषय था 'हिंदी शिक्षण में भारतीय संस्कृति'। सत्र की अध्यक्षता मॉरीशस के डॉ. उदय नारायण गंगू ने की थी। बीज वक्तव्य देते हुए सुरेंद्र गंभीर ने कहा कि शास्त्रीय मूल्य शाश्वत होते हैं। इस सत्र में स्वीडन के श्री हैंस वर्नर वेसलर, प्रो. आनंद वर्धन शर्मा, प्रो. हरजेंद्र चंद्र, प्रो. त्रिभुवन नाथ शुक्ल, प्रो. अतुल कोठारी, प्रो. विमलेश कांति वर्मा, प्रो. गोपीनाथन और प्रो. वेंकटेश्वर मन्नार ने अपने विचार व्यक्त किए।

चौथे समानांतर सत्र का विषय था – 'हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक चिंतन'। अध्यक्षता डॉ. राजरानी गोबिन कर रही थीं। बीज वक्ता थे डॉ. नरेंद्र कोहली। उन्होंने संस्कृति के प्रवाह को अविच्छिन माना। डॉ. प्रीति हरदयाल का वक्तव्य रामचरितमानस पर केंद्रित रहा। सत्र के अगले भाग में डॉ. स्वर्ण अनिल, डॉ. श्रीनिवास पाण्डेय, डॉ. रंजना, डॉ. राजेश श्रीवास्तव, डॉ. सत्यकेतु, डॉ. ओमप्रकाश पाण्डेय, डॉ. सदानंद गुप्त तथा डॉ. उदय प्रताप सिंह ने अपने–अपने विचार व्यक्त किए।

गोस्वामी तुलसीदास नगर स्थित अभिमन्यु अनत सभागार

में रविवार 19 अगस्त को पाँचवा समानांतर सत्र लगा, जिसका विषय था – 'फ़िल्मों के माध्यम से भारतीय संस्कृति का संरक्षण'। इस सत्र की अध्यक्षता भारत के प्रसिद्ध फ़िल्मकार और सेंसर बोर्ड के चेयरमैन, श्री प्रसून जोशी ने संभाली। बीज वक्ता डॉ. शशि दुखन रहीं। प्रसून जोशी ने कहा कि संस्कृति वही है, जो मानवता का विकास करे। सिनेमा अपना विचार संस्कृति से लेता है। मौके पर मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री, माननीय श्री सत्यपाल सिंह, यतींद्र मिश्र, वाणी त्रिपाठी, अशोक चक्रधर व कुमुद शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए।

छठे समानांतर सत्र का विषय था – 'संसार माध्यम और भारतीय संस्कृति'। इसकी अध्यक्षता श्री सत्यदेव टेंगर ने की। बीज वक्ता थे वरिष्ठ पत्रकार श्री शास्त्री शेखर। उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि मॉरीशस में आकर भारत से बाहर आने का अहसास नहीं हुआ, क्योंकि भारतीय संस्कृति मॉरीशस में अच्छी तरह रची–बसी है। अन्य वक्ता थे वी.के. कुठियाला, विवेक गुप्त, जगदीश उपासने, बाबूराम त्रिपाठी, केसन बधू, सत्यदेव प्रीतम, टी. एन. सिंह, राजेंद्र शर्मा, आर. संतुनाथ, भारती कुठियाला, विजय शंकर चतुर्वेदी, मनोज तिवारी, रीना यादव, आशा रानी, श्रीनिवास पाण्डेय, गीता सहाय, कविता सहाय, शीला शर्मा, हरेंद्र प्रताप, योगेंद्र प्रताप, मीना यादव, एम. एल. गुप्त, विष्णु, लोक बिहारी, आरती कुमारी, निर्मला भुराड़िया आदि।

सातवें समानांतर सत्र का विषय था – 'प्रवासी संसार : भाषा और संस्कृति'। इसकी अध्यक्षता डॉ. कमल किशोर गोयनका द्वारा संभाली गयी थी। बीज वक्तव्य में प्रेम जनमेजय ने कहा कि प्रवासी देशों में भाषा और संस्कृति पहचान का सब से सशक्त माध्यम है। उन्होंने कहा कि युवा लोगों में भाषा और संस्कृति को अपनाना आवश्यक है, जिसके लिए युवा प्रवासी मैत्री मंचों की स्थापना की जानी चाहिए। मॉरीशस के पूर्व प्रधानमंत्री सर अनिरुद्ध जगन्नाथ ने कहा कि राजसत्ता को चुनौती देने का कार्य हिंदी भाषा के माध्यम से ही किया जा सका। मॉरीशस की जीवन–संस्कृति में रची–बसी भोजपुरी बोली, पूजा–पाठ एवं फ़िल्मों के माध्यम से हिंदी भाषा आगे बढ़ी है। हिंदी में हस्ताक्षर कर सकने के कारण ही मॉरीशस के नागरिकों को वोट का अधिकार मिल सका। इसी के बल पर कुली संतानों का प्रधानमंत्री बनने तक का सफ़र पूरा हुआ है। उस सातवें समानांतर सत्र में गयाना के हरिशंकर शर्मा, त्रिनिदाद के रवि महाराज, यूनाइटेड किंगडम की शैल अग्रवाल, अमेरिका की मृदुल कीर्ति, फ़िजी के अनिल जोशी, सिंगापुर की संध्या सिंह, हरजेंद्र चौधरी, गुलशन सुखलाल आदि ने भी अपने–अपने विचार व्यक्त किए।

आठवें और अंतिम समानांतर सत्र का विषय था – 'हिंदी बाल साहित्य और संस्कृति'। इसपर बीज वक्तव्य देते हुए डॉ. दिविक रमेश ने कहा कि कोई भी साहित्य देशद्रोही नहीं हो सकता। सृजनात्मक साहित्य अनुभव की कलात्मक अभिव्यक्ति है, इसीलिए वह मौलिक होता है। उन्होंने कहा कि हिंदी में अनूदित उत्कृष्ट साहित्य को भी हिंदी का अपना मानना चाहिए। अन्य वक्ताओं में देवेंद्र मेवाड़ी, डॉ. अलका धनपत, सुरेंद्र विक्रम, उषा पुरी आदि ने बताया कि आज के बाल साहित्यकार को अत्यंत सावधानी बरतने की ज़रूरत है। इसी सत्र में विवेक गौतम, गिरिराज शरण, प्रदीपराव तथा मनोहारी ने खुला संवाद किया। देवपुत्र के संपादक और सत्र के अध्यक्ष कृष्ण कुमार अस्थाना ने आज के बालकों को भारतीय संस्कृति की महत्त्वपूर्ण बातों को सिखाए जाने पर बल दिया।

हर सम्मेलन में जिस तरह समापन समारोह से पहले समानांतर सत्रों की अनुशंसाएँ प्रस्तावित की जाती हैं, उसी तरह आठों समानांतर सत्रों में निर्धारित किए गए प्रस्तावों को प्रस्तुत किया गया। समानांतर सत्र एक का विषय था –'भाषा एवं लोक संस्कृति का अंतः संबंध'। इसके अंतर्गत पाँच प्रस्ताव आए। समानांतर सत्र दो का विषय था –'प्रौद्योगिकी के माध्यम से हिंदी सहित भारतीय भाषाओं का विकास'। इसके अंतर्गत 7 प्रस्ताव चुने गए। समानांतर सत्र 3 का विषय था – 'हिंदी शिक्षण में भारतीय संस्कृति।' इसके अंतर्गत 4 प्रस्ताव निर्धारित किए गए। समानांतर सत्र 4 का विषय था – 'हिंदी साहित्य में संस्कृति चिंतन'। इस सत्र में 4 प्रस्ताव एकत्र किए गए। समानांतर सत्र 5 का विषय था – 'फ़िल्मों के माध्यम से भारतीय संस्कृति का संरक्षण'। इस सत्र में 6 प्रस्ताव रखे गए। समानांतर सत्र 6 का विषय था –'संचार माध्यम और भारतीय संस्कृति'। इसमें 11 प्रस्ताव लिए गए। समानांतर सत्र 7 का विषय था – 'प्रवासी संसार: भाषा और संस्कृति।' इसमें 12 प्रस्ताव सामने आए। समानांतर 8 का विषय था – 'हिंदी बाल साहित्य और संस्कृति'। इसमें 10 प्रस्ताव चुने गए। आठवें समानांतर सत्रों में कुल मिलाकर 59 प्रस्ताव रखे गए।

प्राप्त जानकारी के अनुसार भारत में अनुशंसा संबंधी बैठक

आयोजित हुई, जिसके अंतर्गत दो अनुशंसाएँ पारित हुईं –

पहली है कि अगला विश्व हिंदी सम्मेलन फ़िजी में हो और दूसरी यह कि हिंदी भाषा और साहित्य में भारतीय सांस्कृतिक पक्ष को सुदृढ़ किया जाए।

समापन समारोह में मॉरीशस के 18 और विदेश के 18 हिंदी सेवी विद्वानों को 'विश्व हिंदी सम्मान' से सम्मानित किया गया, इसके अलावा दो भारतीय और तीन विदेशी संस्थाओं को भी 'विश्व हिंदी सम्मान' से नवाज़ा गया। मॉरीशस के प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर सेवारत श्रेष्ठ हिंदी शिक्षकों को 'सर्वश्रेष्ठ हिंदी शिक्षक पुरस्कार' प्रदान किया गया। इस अवसर पर ही विश्व हिंदी सचिवालय के 'लोगो' के विजेता श्री वासुदेवेन सी. तथा ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन के 'लोगो' के विजेता श्री रुचित यादव को भी पुरस्कृत किया गया।

गोस्वामी तुलसीदास नगर मॉरीशस में 18 और 19 अगस्त को लगाए गए आठ समानांतर–सत्रों के पश्चात् अभिमन्यु अनत सभागार में ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन का समापन समारोह संपन्न हुआ। इस अवसर पर मॉरीशस गणराज्य के कार्यवाहक राष्ट्रपति और मुख्य अतिथि महामहिम श्री परमशिवम पिल्लै वायापुरी तथा मार्गदर्शक और रोड्रिग्स मंत्री सर अनिरुद्ध जगन्नाथ उपस्थित थे। साथ ही, भारतीय विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज, मॉरीशस की शिक्षा मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन, महामहिम श्रीमती मृदुला सिन्हा, महामहिम श्री केशरी नाथ त्रिपाठी, माननीय श्री एम.जे. अकबर तथा माननीय श्री सत्य पाल सिंह मंच पर उपस्थित थे। अपने संबोधन में मुख्य अतिथि ने कहा कि इस महान हिंदी सम्मेलन में भाग लेना उनके लिए अत्यंत गर्व और प्रसन्नता की बात है तथा श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी को याद करते हुए उन्होंने कहा कि वे मॉरीशस के अच्छे और सहयोगी मित्र के रूप में सदा स्मरणीय रहेंगे। भारत की ओर से साइबर टावर के निर्माण में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। साइबर टावर को उनका नाम दिया जाना, उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है। मॉरीशस के कार्यवाहक राष्ट्रपति ने विश्व के कोने–कोने से पधारे प्रतिभागियों की उपस्थिति के लिए धन्यवाद किया। उन्होंने हिंदी सम्मान पाने वाले हिंदी सेवियों, शिक्षकों व संस्थाओं को बधाई दी और ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन की समाप्ति की घोषणा की।

कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि के रूप में बोलते हुए मॉरीशस गणराज्य के मार्गदर्शक मंत्री सर अनिरुद्ध जगन्नाथ ने कहा कि हिंदी का यह महाकुम्भ वर्षों तक याद किया जायेगा। उन्होंने याद दिलाया कि उनके कार्यकाल में वे हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के उन्नयन के लिए लगातार प्रयासरत रहे। उन्होंने हिंदी विश्व को आश्वस्त किया कि हिंदी को अंतरराष्ट्रीय मंच पर पहचान दिलाने के लिए तथा भारतीय संस्कृति के प्रचार–प्रसार हेतु मॉरीशस की सरकार और मॉरीशसवासी अपना पूरा सहयोग देंगे। उन्होंने आगे कहा कि जब वे मॉरीशस के प्रधान मंत्री थे, तब भारत के प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने विश्व हिंदी सचिवालय के मुख्यालय निर्माण का शुभारंभ विधिपूर्वक संपन्न किया था, जो हमारे पूर्वजों के प्रति एक सच्ची श्रद्धांजलि है।

विश्व हिंदी सचिवालय के महासचिव प्रो. विनोद कुमार मिश्र के अनुसार सौभाग्य की बात है कि भारत और मॉरीशस दोनों देशों के राजनैतिक नेतृत्व का रुख हिंदी को लेकर सकारात्मक है। अन्यथा व्यवस्था के लौह आवरण को तोड़कर लक्ष्य तक पहुँचना कष्टसाध्य हो जाता। उन्होंने बताया कि उद्घाटन भाषण में माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज की घोषणा हमारी उस उम्मीद को बृहद आकार देती है, जिससे संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा बनने की दिशा में हम कुछ कदम और उठा सकते हैं। राष्ट्रसंघ के साप्ताहिक हिंदी समाचार तथा हिंदी में ट्वीट हमारी उम्मीदों को स्वर्ण पंख लगा देते हैं।

मॉरीशस में आयोजित ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन के समापन समारोह के अवसर पर धन्यवाद ज्ञापित करते हुए भारत के विदेश राज्य मंत्री, माननीय श्री एम. जे. अकबर ने कहा कि इस तीन दिवसीय भव्य सम्मेलन से सिद्ध हो गया है कि हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। इस अवसर पर उन्होंने विश्व के कोने–कोने से पधारे प्रतिभागियों, अतिथियों एवं सम्मेलन को सफल बनाने में सहयोगी व्यक्तियों व संस्थाओं के प्रति हार्दिक आभार प्रकट किया। श्री अटल बिहारी को याद करते हुए उन्होंने कहा कि जिन्होंने हमें रास्ता व मंज़िल दिखाई, वे अब हमारे साथ नहीं हैं। श्री एम. जे. अकबर ने श्रीमती सुषमा स्वराज जी के नेतृत्व की सराहना करते हुए कहा कि वे सम्मेलन को कल्पना से मूर्त तक ले आईं और उन्होंने एक–एक करके हर गतिविधि की स्वयं देख–रेख की। एक तरह से वे इस सम्मेलन की 'माई' है। उन्होंने याद दिलाया कि इतिहास खामोशी से बदलता है और इसी प्रक्रिया

में आज हिंदी विश्व भाषा बन चुकी है। समापन समारोह में मंच संचालन डॉ. माधुरी रामधारी और प्रो. कुमुद शर्मा ने किया।

विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन पर केंद्रित दैनिक समाचार–पत्र 'हिंदी विश्व' के चार संस्करण प्रकाशित किए गए।

मॉरीशस में 18–20 अगस्त के बीच आयोजित ग्यारहवें विश्व हिंदी सम्मेलन को हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त हुई, इसमें दो राय नहीं। यह तीन दिवसीय सम्मेलन भारत और मॉरीशस की सरकारों के मिले–जुले सहयोग से सम्पन्न हुआ। हम मॉरीशसवासी गर्व महसूस करते हैं कि इस छोटे से देश ने इतने बड़े विश्व हिंदी सम्मेलन की मेज़बानी सफलतापूर्वक की। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जिन लोगों ने इसे सफल बनाने में सहयोग दिया वे बधाई के पात्र हैं। इस सफलता का श्रेय विशेष रूप से विश्व हिंदी सचिवालय और उससे जुड़े कर्मचारियों को जाता है, जिनका कार्य सराहनीय रहा।

संदर्भ :

11वें विश्व हिंदी सम्मेलन पर केंद्रित दैनिक समाचार–पत्र –'हिंदी विश्व'

संस्करण :

शनिवार	–	18 अगस्त 2018
रविवार	–	19 अगस्त 2018
सोमवार	–	20 अगस्त 2018
मंगलवार	–	21 अगस्त 2018

मॉरीशस

मुझे पक्का विश्वास है कि किसी दिन हमारे द्रविड़ भाई–बहन गम्भीर भाव से हिंदी का अध्ययन करने लगेंगे। आज अंग्रेज़ी भाषा पर अधिकार प्राप्त करने के लिए वे जितनी मेहनत करते हैं, उसका आठवाँ हिस्सा भी हिंदी सीखने में करें तो बाकी हिंदुस्तान जो आज उनके लिए बन्द किताब की तरह है, उससे वे परिचित होंगे और हमारे साथ उनका ऐसा तादात्म्य स्थापित हो जायेगा, जैसा पहले कभी नहीं था।

– महात्मा गांधी

यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है कि हमारी जाति की जीवित भाषा होने का गौरव प्राकृत को ही प्राप्त हुआ है, जो देववाणी संस्कृत की वरिष्ठतम पुत्री है और आज की भाषा में वह हिंदी अथवा हिंदुस्तानी कहलाती है।

– विनायक दामोदर सावरकर

2018
में हिंदी जगत् की चयनित खबरें

33. 'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2018 की चयनित खबरें

– विश्व हिंदी सचिवालय

33

'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2018 की चयनित खबरें

विश्व हिंदी समाचार, अंकः 41, मार्च 2018

विश्व हिंदी दिवस 2018 : मॉरीशस

10 जनवरी, 2018 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग, मॉरीशस के तत्वावधान में फ़ेनिक्स स्थित इंदिरा गांधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में विश्व हिंदी दिवस समारोह का आयोजन किया। समारोह के मुख्य अतिथि, शिक्षा मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन रहीं, जिन्होंने सचिवालय के नए भवन के उद्घाटन को हिंदी के विकास का एक अगला पड़ाव बताया तथा हिंदी को लेकर हो रहे प्रयासों का उल्लेख करते हुए, नए सुधार लाए जाने की इच्छा जताई। इस वर्ष सचिवालय ने मॉरीशसीय हिंदी समाज के समक्ष ताशकंद स्टेट इंस्टिट्यूट ऑव ओरियंटल स्टडीज़ में दक्षिण एशियाई भाषा विभाग के अध्यक्ष व इंडोलॉजी सेंटर के निदेशक, डॉ. सिरोजिद्दिन सुल्तानमुरातोविच नुर्मातोव को आमंत्रित किया, जिन्होंने 'उज़्बेकिस्तान में हिंदी–शिक्षण : दशा एवं दिशा' विषय पर अपना वक्तव्य दिया। इस अवसर पर भारतीय उच्चायुक्त, महामहिम श्री अभय ठाकुर ने भारतीय प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी का संदेश पढ़ा तथा भारत और मॉरीशस के भाषाई संबंध में सुदृढ़ता का रेखांकन किया। कला एवं संस्कृति मंत्री, माननीय श्री पृथ्वीराजसिंह रूपन ने भाषा को सभी की पहचान बताते हुए हिंदी भाषा को पढ़ने एवं बोलने की अपील की। विश्व हिंदी दिवस 2018 के उपलक्ष्य में सचिवालय द्वारा आयोजित 'अंतरराष्ट्रीय हिंदी एकांकी प्रतियोगिता' के परिणाम की घोषणा की गई तथा मॉरीशसीय विजेताओं को पुरस्कार राशि तथा प्रमाण–पत्र प्रदान किया गया। सचिवालय के वार्षिक प्रकाशन 'विश्व हिंदी पत्रिका' के 9वें अंक (मुद्रित व वेब प्रारूप) का लोकार्पण भी किया गया। इस अवसर पर भारत से 'क्षितिज थिएटर ग्रुप' द्वारा 'कर्मभूमि' नाटक का मंचन किया गया।

विश्व हिंदी दिवस 2018 : विश्व भर में

प्रतिवर्ष के ही समान इस वर्ष भी अधिक–से–अधिक देशों में हिंदी के वैश्विक प्रचार के उद्देश्य से विश्व हिंदी दिवस का भव्य आयोजन किया गया। भारत के अतिरिक्त होंग कोंग, काठमांडू–नेपाल, लंदन, मापुटो–मोज़ाम्बिक, मास्को–रूस, नायरोबी, न्यू यॉर्क, शंघाई, सीरिया, बैंकॉक–थाईलैंड, कैंडी–श्रीलंका इत्यादि देशों में विश्व हिंदी दिवस भव्य रूप से मनाया गया।

विश्व हिंदी सचिवालय के आधिकारिक कार्यारंभ की 10वीं वर्षगाँठ तथा विचार–मंच : 'काव्य–शिक्षण में गीतों का प्रयोग'

7 फ़रवरी, 2018 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग, मॉरीशस के सौजन्य से सुब्रमण्यम् भारती सभागार, महात्मा गांधी संस्थान, मोका में अपने आधिकारिक कार्यारंभ दिवस तथा विचार–मंच : 'काव्य–शिक्षण में गीतों का प्रयोग' का आयोजन किया। प्रथम सत्र में आधिकारिक कार्यारंभ दिवस मनाया गया। इस अवसर पर मॉरीशस की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन मुख्य अतिथि थीं तथा भारतीय उच्चायोग की द्वितीय सचिव, डॉ. नूतन पाण्डेय, महात्मा गांधी संस्थान की महानिदेशिका, श्रीमती सूर्यकान्ति गयान, संस्थान की निदेशिका डॉ. विद्योत्मा कुंजल, संस्थान की परिषद् के अध्यक्ष, श्री जयनारायण मीतू व अन्य गण्यमान्य अतिथियों ने भी समारोह की शोभा बढ़ाई। अतिथि वक्ता के रूप में महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, भारत के भाषा–केंद्र के निदेशक, प्रो. वृषभ प्रसाद जैन को आमंत्रित किया गया, जिन्होंने 'वैश्विक हिंदी, भाषिक संपदा : विस्तार एवं संभावनाएँ' विषय पर अपना वक्तव्य प्रस्तुत किया।

द्वितीय सत्र के दौरान सचिवालय ने अपने त्रैमासिक

कार्यक्रम 'विचार–मंच' का भी आयोजन किया, जो 'काव्य–शिक्षण में गीतों का प्रयोग' विषय पर आधारित रहा। इस अवसर पर महात्मा गांधी संस्थान के हिंदी विभाग की व्याख्याता, डॉ. लक्ष्मी झमन ने 'मध्यकालीन काव्य–शिक्षण में गीतों का प्रयोग' विषय पर तथा मणिलाल डॉक्टर एस.एस.एस. के हिंदी शिक्षक, श्री लेखराज सिंह पांडोही ने 'आधुनिक काव्य–शिक्षण में गीतों का प्रयोग' विषय पर प्रस्तुति की। तत्पश्चात् उपस्थित विद्वानों ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

विश्व हिंदी सचिवालय मुख्यालय का उद्घाटन

13 मार्च, 2018 को फ़ेनिक्स, मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय मुख्यालय के नवनिर्मित भवन का उद्घाटन किया गया। उद्घाटन भारत गणराज्य के राष्ट्रपति, महामहिम श्री रामनाथ कोविन्द के कर–कमलों द्वारा मॉरीशस गणराज्य के प्रधानमंत्री, माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ की उपस्थिति में सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। इस अवसर पर शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन व मॉरीशस सरकार के अन्य माननीय मंत्री गण, मंत्रालयों के स्थाई सचिव व अधिकारीगण, मॉरीशस के हिंदी विद्वानों, साहित्यकारों, लेखकों, प्रचारकों, प्राध्यापकों, छात्रों तथा हिंदी–प्रेमियों ने समारोह में भाग लिया। महामहिम श्री रामनाथ कोविन्द ने भारत और मॉरीशस के संबंधों में सुदृढ़ता का उल्लेख किया तथा हिंदी भाषा की महत्ता पर बल देते हुए दोनों देशों के सामाजिक विकास में हिंदी की महत्त्वपूर्ण भूमिका पर बात की। उन्होंने भारत में हिंदी के प्रचार हेतु हो रहे कार्यों तथा 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन का उल्लेख किया। मॉरीशस गणराज्य के प्रधानमंत्री, माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ ने दोनों देशों की मित्रता पर बात की। साथ ही, उन्होंने मॉरीशसीय सरकार द्वारा तैयार दो महत्त्वपूर्ण परियोजनाओं के लोकार्पण पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। समारोह में भारतीय प्रतिनिधिमंडल से लोकसभा सदस्य, माननीय श्री हुकुम देव नारायण यादव ने अपने वक्तव्य में भारत तथा मॉरीशस के सशक्त संबंधों को रेखांकित किया। शिक्षा मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन ने सचिवालय के मुख्यालय के उद्घाटन तथा मॉरीशसीय सरकार की परियोजनाओं के शुभारंभ पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए भवन–निर्माण के विभिन्न पहलुओं को उजागर किया।

इस अवसर पर महात्मा गांधी संस्थान के कलाकारों द्वारा कथक, भरतनाट्यम एवं कुचिपुड़ी नृत्य शैलियों के संगम से ***'मिलाप हमारी भावपूर्ण भेंट'*** नृत्य प्रस्तुत किया गया। इसके बाद दोनों देशों के ऐतिहासिक सहयोग के उदाहरण दर्शाते हुए, विश्व हिंदी सचिवालय के भवन–निर्माण, मॉरीशस में प्रारम्भिक डिजिटल अध्ययन योजना, छात्र सहायता योजना एवं सामाजिक आवास परियोजना पर अलग–अलग वीडियो प्रस्तुतियाँ हुईं। कार्यक्रम में भारत के महामहिम राष्ट्रपति तथा मॉरीशस के माननीय प्रधानमंत्री द्वारा विश्व हिंदी सचिवालय के 'लोगो' तथा प्रारम्भिक डिजिटल अध्ययन योजना व छात्र सहायता योजना का लोकार्पण और दो सामाजिक आवास परियोजनाओं के शुभारंभ हेतु स्मारक पट्ट का अनावरण किया गया। महामहिम श्री रामनाथ कोविन्द द्वारा माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ की उपस्थिति में विश्व हिंदी सचिवालय मुख्यालय के स्मारक पट्ट का अनावरण किया गया। इसके पश्चात् महामहिम भारतीय राष्ट्रपति के कर कमलों द्वारा सचिवालय के नए भवन का उद्घाटन फ़ीता काटकर किया गया। श्री गंगाधरसिंह सुखलाल द्वारा धन्यवाद–ज्ञापन के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ।

'नीदरलैंड में हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि की स्थिति' विषयक व्याख्यान–माला

29 जनवरी, 2018 को के.आई.आई.टी. परिसर, गुरुग्राम में विश्व नागरी विज्ञान संस्थान द्वारा 'नीदरलैंड में हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि की स्थिति' विषयक व्याख्यान–माला का आयोजन किया गया, जिसमें नीदरलैंड की हिंदी साहित्यकार डॉ. पुष्पिता अवस्थी ने विषय पर अपना व्याख्यान दिया। संस्थान के महासचिव, प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी ने डॉ. पुष्पिता अवस्थी की रचनाओं को श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत किया। डॉ. अवस्थी ने अपने व्याख्यान में कहा कि नीदरलैंड में हिंदी सीखना अपनी संस्कृति सीखना माना जाता है तथा भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में हिंदी का प्रयोग होता है। उन्होंने हिंदी के लिए देवनागरी लिपि

को आवश्यक बताते हुए कहा कि देवनागरी लिपि हिंदी भाषा की देह और आकृति है। उन्होंने नीदरलैंड में देवनागरी लिपि के विकास हेतु प्रयास करने पर बल दिया।

सी–डैक का 31वाँ स्थापना दिवस

18 मार्च, 2018 को पुणे में सी–डैक ने अपना 31वाँ स्थापना दिवस मनाया। समारोह के दौरान वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किए। डॉ. अशोक चक्रधर ने हिंदी के प्रचार–प्रसार व प्रयोग में प्रौद्योगिकी के समावेश की आवश्यकता की व्याख्या की। सी–डैक के भाषा–संबंधी सॉफ़्टवेयर व उपकरणों की उपलब्धता जनमानस के लिए महत्त्वपूर्ण है, जिससे हिंदी को सरलता से सीखा जा सकता है। डॉ. विजय भटकर ने अपने वक्तव्य में हिंदी को प्रौद्योगिकी के माध्यम से अधिक सशक्त और व्यापक बनाने की अपील की।

श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफ़को साहित्य सम्मान समारोह

31 जनवरी, 2018 को एन.सी.यू.आई. सभागार, नई दिल्ली में आयोजित श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफ़को साहित्य सम्मान समारोह के दौरान मॉरीशस के वरिष्ठ कथाकार, श्री रामदेव धुरंधर को सुविख्यात साहित्यकार श्री गिरिराज किशोर के हाथों 6 खंडों में प्रकाशित उनके चर्चित उपन्यास 'पथरीला सोना' के लिए वर्ष 2017 का श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफ़को साहित्य सम्मान प्रदान किया गया। समारोह के मुख्य अतिथि, श्री गिरिराज किशोर रहे तथा प्रथम सचिव श्री वी. चिट्टू विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित रहे। सांसद श्री देवी प्रसाद त्रिपाठी ने धुरंधर जी के साहित्य को किसानों और मज़दूरों को समर्पित बताया तथा इफ़को के प्रबंध निदेशक, डॉ. उदय शंकर अवस्थी ने कहा कि उनका विपुल साहित्य पूरी तरह किसानों का आर्त्तस्वर मुखरित करता है। श्री गिरिराज किशोर ने कहा धुरंधर जी की कृतियों में प्रेमचंद की छाप है। इस अवसर पर कवि–सम्मेलन का भी आयोजन हुआ, जिसमें उपस्थित कवियों ने कविता–पाठ किया।

विश्व हिंदी समाचार, अंक : 42, जून 2018

11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के वेबसाइट एवं 'लोगो' का लोकार्पण

10 अप्रैल, 2018 को भारत के विदेश मंत्रालय के जवाहरलाल नेहरू भवन में 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन का मीडिया लॉन्च कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि भारत की विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज व विशेष अतिथि मॉरीशस गणराज्य की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन उपस्थित थीं। कार्यक्रम के दौरान 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के वेबसाइट एवं 'लोगो' का लोकार्पण माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज तथा माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन द्वारा किया गया। वेबसाइट के लोकार्पण के साथ ही 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन में प्रतिभागिता हेतु पंजीकरण की औपचारिक शुरुआत हुई। इस अवसर पर भारत के विदेश राज्य मंत्री, माननीय डॉ. वी.के. सिंह, गृह राज्य मंत्री, माननीय श्री किरेन रिजिजु, मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री, माननीय डॉ. सत्यपाल सिंह, सांसद गण, हिंदी जगत् के प्रतिष्ठित विद्वान व अन्य विशिष्ट अतिथियों ने भाग लिया।

मॉरीशस में श्री अभिमन्यु अनत को 'राष्ट्रीय सम्मान'

16 मई, 2018 को रावेनाला आटिट्यूड हॉटल, बालाक्लावा में मॉरीशस की स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में कला व संस्कृति मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय सम्मान समारोह के प्रथम संस्करण का शुभारंभ किया गया। मॉरीशस के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य को आकार देने में जिन कलाकारों ने अमूल्य योगदान दिया है, उनको इस समारोह में विधिवत सम्मानित किया गया। इन कलाकारों की मौलिकता और रचनात्मकता को ध्यान में रखते हुए कला एवं संस्कृति मंत्रालय की ओर से पुरस्कारों को छः श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया था – संगीत, रंगमंच, सिनेमा, नृत्य, साहित्य एवं दृश्य कला। इसके अंतर्गत साहित्य की श्रेणी में प्रसिद्ध मॉरीशसीय हिंदी लेखक श्री अभिमन्यु अनत को प्रधानमंत्री माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ के हाथों 'राष्ट्रीय सम्मान' से विभूषित किया गया। अस्वस्थ होने के कारण श्री अभिमन्यु अनत कार्यक्रम में उपस्थित नहीं हो सके थे अतः उनकी जगह उनके पुत्र श्री रत्नेश अनत ने पुरस्कार ग्रहण किया। साथ

ही, संगीत के क्षेत्र में श्री सेर्ज़ लेब्रास, रंगमंच के क्षेत्र में श्री गास्तों वलाइदेन, सिनेमा के क्षेत्र में श्री सुरेंद्र बृजमोहन, नृत्य के क्षेत्र में सुश्री आन्ना पातेन तथा दृश्य कला के क्षेत्र में श्री वाको बाइसाक को राष्ट्रीय सम्मान से विभूषित किया गया। इस अवसर पर प्रधानमंत्री माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ ने कहा कि विभिन्न उपायों तथा कार्यवाहियों के माध्यम से सरकार सृजनात्मक कला उद्योग को बढ़ाने में कटिबद्ध है। कला व संस्कृति मंत्री माननीय श्री पृथ्वीराज सिंह रूपन ने स्थानीय कलाकारों के योगदान की सराहना की और भावी कार्यों हेतु उनको प्रोत्साहित किया। अन्य मंत्रीगण तथा गण्यमान्य अतिथि भी समारोह में उपस्थित थे।

कनाडा में अंतरराष्ट्रीय हिंदी साहित्यिक सम्मेलन

26–30 अप्रैल, 2018 को ओंटारियो राज्य के ब्रैम्प्टन शहर में विश्व हिंदी संस्थान, कनाडा व ग्लोबल हिंदी साहित्य शोध संस्थान, कुरुक्षेत्र, भारत के संयुक्त तत्वावधान में पाँच दिवसीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी साहित्यिक सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन का मुख्य विषय था ***'हिंदी का वैश्विक परिदृश्य : विस्तार और संभावनाएँ'***। इसके अंतर्गत हिंदी के वैश्विक परिदृश्य को लेकर विभिन्न पहलुओं पर विचार–विमर्श किया गया। कार्यक्रम के अंतर्गत 25 अप्रैल को उद्घाटन समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि कनाडा स्थित भारतीय कौंसलावास के प्रधान कौंसल, महामहिम श्री दिनेश भाटिया थे और विशेष अतिथि एवं अध्यक्ष के रूप में पद्मश्री प्रो. यार्लगड्डा लक्ष्मीप्रसाद उपस्थित थे। इस कार्यक्रम की सह–अध्यक्षता साहित्यकार डॉ. कैलाश भटनागर व विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस के महासचिव, प्रो. विनोद कुमार मिश्र ने की। सम्मेलन के आयोजक डॉ. सरन घई ने अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन के ध्येय वाक्य 'हिंदी का सूर्य कभी अस्त नहीं होता है' पर बल दिया। संस्थान के उपाध्यक्ष डॉ. साधना जोशी ने संस्था के प्रकाशनों पर और संस्था के महासचिव आभा गुप्त ने संस्था की गतिविधियों पर बात की। कार्यक्रम के अंतर्गत पत्र प्रस्तुति, कवि–सम्मेलन, परिचर्चा–सत्र, कहानी–पाठ, सम्मान समारोह आदि का आयोजन हुआ।

इटली में 8वाँ अंतरराष्ट्रीय हिंदी साहित्य एवं संस्कृति सम्मेलन

4 जून, 2018 को विश्व हिंदी साहित्य परिषद् के तत्वावधान में इटली के मिलान शहर में ***'8वाँ अंतरराष्ट्रीय हिंदी साहित्य एवं संस्कृति सम्मेलन'*** का आयोजन किया गया। सम्मेलन को चार सत्रों में बाँटा गया। उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में भारतीय कौंसलवास के कौंसल, महामहिम श्री प्रदीप गौतम उपस्थित थे। डॉ. मुक्ता, डॉ. मीनाक्षी जोशी, डॉ. गुरमीत सिंह और डॉ. राजेश श्रीवास्तव विशिष्ट अतिथि के रूप में मंचासीन थे। सत्र की अध्यक्षता डॉ. हरीश नवल ने की। इस अवसर पर लगभग 15 पुस्तकों का लोकार्पण किया गया। सत्र का संचालन डॉ. आशीष कंधवे ने किया।

दूसरे सत्र में ***'हिंदी की वैश्विकता के वर्तमान'*** विषय पर चर्चा की गई। मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. नयना डेलीवाला तथा डॉ. स्नेहसुधा उपस्थित थीं। सत्र की अध्यक्षता डॉ. आनंद सिंह ने की। इस अवसर पर डॉ. विनोद कुमार मंगलम, डॉ. मीना शर्मा, डॉ. सीमा रानी, डॉ. कंचन शर्मा, डॉ. स्नेह लोहिया, डॉ. संज्ञा उपाध्याय और डॉ. चरण सिंह तोमर ने अपने विचार रखे। सत्र का संचालन डॉ. संगीता राय ने किया।

तृतीय सत्र में इटली और भारत के कलाकारों द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति की गई।

चौथे सत्र में भारत और इटली के लगभग 20 कवियों ने अपनी–अपनी कविताओं का पाठ किया। श्री प्रेम भारद्वाज 'ज्ञानभिक्षु' मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। सत्र की अध्यक्षता डॉ. नवल ने की। सत्र का संचालन श्री सुशील साहिल ने किया। इस अवसर पर ***'हिंदी धरा'*** के नाम से एक विशेष स्मारिका का भी प्रकाशन किया गया।

लंदन में अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन

13 जून, 2018 को भारतीय उच्चायोग, लंदन के तत्वावधान में अंतरराष्ट्रीय हिंदी परिषद् और आधारशिला विश्व हिंदी मिशन द्वारा अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया। उपस्थित हिंदी साहित्यकारों एवं हिंदी सेवियों में डॉ. कृष्ण कुमार, श्री तेजेंद्र शर्मा, ज़ाकिया ज़ुबैरी, श्रीमती उषा राजे सक्सेना,

दिव्या माथुर, श्री अरुण सबरवाल, अरुणा अजितसरिया, कादंबरी मेहरा, श्री के.बी.एल. सक्सेना, श्रीराम शर्मा मीत, काउंसलर ग्रेवाल आदि शामिल थे। इस कार्यक्रम में हिंदी सम्मेलनों का लघु रूप देखने को मिला। पुस्तकों की प्रदर्शनी, चित्रकला प्रदर्शनी, काव्य–पाठ, गज़ल एवं गीत और विभिन्न विद्वानों द्वारा वक्तव्य और विचार–विमर्श का आयोजन किया गया। श्री भगत सिंह कोश्यारी ने प्रवासी साहित्यकारों और हिंदी सेवियों को वास्तविक राजदूत बताते हुए उनके प्रयासों की सराहना की और कहा कि वे हिंदी और भारतीय संस्कृति के माध्यम से विदेशों में भारत की गरिमा बढ़ा रहे हैं। अंतरराष्ट्रीय हिंदी सिनेमा के विशेषज्ञ श्री अजित राय ने हिंदी के वैश्विक–प्रचार में हिंदी सिनेमा के योगदान को रेखांकित किया। 'आधारशिला' के संपादक, डॉ. दिवाकर भट्ट ने स्थानीय साहित्यकारों और भारत से आए हिंदी सेवियों को सम्मानित किया। इस अवसर पर कई पुस्तकों का विमोचन भी हुआ। साथ–साथ हिंदी के कई विषयों तथा 'हिंदी देश से दुनिया तक', 'हिंदी और विज्ञान' आदि पर अलग–अलग विद्वानों ने अपने विचार रखे।

रूस में 'राम संस्कृति की विश्वयात्रा : साहित्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी' विषयक संगोष्ठी

10–17 मई, 2018 को कज़ान, रूस में साहित्यिक–सांस्कृतिक शोध संस्था, मुंबई द्वारा रूसी–भारतीय मैत्री संघ –'दिशा', मास्को, अयोध्या शोध संस्थान, भारत, कज़ान फ़ेडेरल यूनिवर्सिटी, कज़ान और मास्को स्टेट यूनिवर्सिटी के संयुक्त तत्वावधान में 'राम संस्कृति की विश्वयात्रा साहित्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी' विषयक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इसके अंतर्गत भारतीय और रूसी विशेषज्ञों ने *'राम संस्कृति की विश्वयात्रा : साहित्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी'* विषय पर अपने शोध–पत्र प्रस्तुत किए।

इस अवसर पर काव्य–संध्या संपन्न हुई, जिसमें भारत और रूस के प्रतिभागी कवियों ने रूसी और हिंदी के साथ संस्कृत, कोंकणी, पंजाबी तथा मराठी में काव्य–पाठ किया। कुलपति प्रो. लतीपोव ने भारतीय दर्शन और रूसी संस्कृति के आपसी संबंध पर प्रकाश डाला। साहित्यिक सांस्कृतिक शोध संस्था के संस्थापक डॉ. प्रदीप कुमार सिंह ने वर्तमान विश्व के लिए राम–संस्कृति की प्रासंगिकता को रेखांकित किया तथा रामलीलाओं तथा ललित कलाओं के माध्यम से विश्व भर में भारतीय जीवन दृष्टि के प्रसार की व्याख्या की। भारतीय दूतावास से संबद्ध डॉ. जयसुंदरम् ने भारत और रूस के आपसी संबंधों की दृढ़ता के लिए रामकथा की आवश्यकता का उल्लेख किया। प्रो. ऋषभ देव शर्मा ने अपने वक्तव्य में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से राम–संस्कृति के वैश्विक प्रसार की संभावनाओं पर प्रकाश डालते हुए अमेरिका में बनी एनीमेशन फ़िल्म 'सीता सिंग्स द ब्ल्यूज़' की चर्चा की। इस अवसर पर डॉ. प्रदीप कुमार सिंह के प्रधान संपादकत्व में प्रकाशित ग्रंथ 'राम–संस्कृति की विश्वयात्रा : साहित्य, विज्ञान और प्रौद्योगिकी' तथा 'रामलीला की विश्वयात्रा' का लोकार्पण किया गया। मास्को विश्वविद्यालय के भारत–अध्ययन विभाग में संपन्न द्वितीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी/परिसंवाद में विशेष रूप से रूसी भारतविद् प्रो. बरीस अलेक्सेइविच ज़ख़रिन, प्रो. लुद्मिला ख़ख़लोवा, प्रो. गुज़ेल म्रात्खूज़ीना और प्रो. आन्ना बाचकोश्का ने इतिहास, साहित्य, अनुवाद और ललित कलाओं के माध्यम से रूस में राम–संस्कृति के प्रति अध्येताओं की अभिरुचि पर सप्रमाण विचार–विमर्श किया। इस अवसर पर लगभग 50 भारतीय और विदेशी विद्वानों का सारस्वत सम्मान भी किया गया।

साथ–साथ सेंट पीटर्सबर्ग में पाँच रूसी विद्वानों के सान्निध्य में बहुभाषी काव्य–संध्या का आयोजन किया गया, जिसमें रूसी रचनाकारों और अनुवादकों ने भाग लिया। राम संस्कृति को समर्पित इस काव्य–संध्या की अध्यक्षता डॉ. वंदना प्रदीप ने की तथा संचालन डॉ. सत्यनारायण ने किया। एकेडमी ऑफ़ साइंस की भाषाविद्, प्रोफ़ेसर डॉ. एलेना सोबोलेवा मुख्य अतिथि रहीं, जिन्होंने राम संस्कृति की प्रासंगिकता को रेखांकित किया।

विश्व हिंदी समाचार, अंक: 43, सितंबर 2018

11वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन

18 से 20 अगस्त 2018 को स्वामी विवेकानंद अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन केंद्र, पाय, मॉरीशस में 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन का भव्य आयोजन किया गया। सम्मेलन का मुख्य विषय था ***'हिंदी विश्व और***

भारतीय संस्कृति'। सम्मेलन में विशेष रूप से भारतीय प्रतिनिधिमंडल में भारत की विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल, माननीय श्री केशरीनाथ त्रिपाठी, गोवा की राज्यपाल, माननीया श्रीमती मृदुला सिन्हा, विदेश राज्य मंत्री, माननीय जनरल वी. के. सिंह, विदेश राज्य मंत्री, माननीय श्री एम. जे. अकबर, गृह राज्य मंत्री, माननीय श्री किरेन रिजिजु व विदेश मंत्रालय, भारत सरकार के अनेक उच्चाधिकारी शामिल हुए। मॉरीशस की ओर से कार्यवाहक राष्ट्रपति, महामहिम श्री परमशिवम् पिल्लै वायापुरी, प्रधानमंत्री, माननीय श्री प्रवीण कुमार जगन्नाथ, मार्गदर्शक और रोड्रिग्स मंत्री, माननीय सर अनिरुद्ध जगन्नाथ, उपप्रधानमंत्री व ऊर्जा और सार्वजनिक उपयोगिता मंत्री, माननीय श्री आइवान कोलेनदावेलु, विदेश मंत्री, माननीय श्री विष्णु लक्ष्मीनारायडु, शिक्षा मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन, कला एवं संस्कृति मंत्री, माननीय श्री पृथ्वीराज सिंह रूपन, अन्य मंत्रीगण, संबद्ध मंत्रालयों के अधिकारी गण व अन्य गण्यमान्य अतिथियों ने भाग लिया। साथ ही, मॉरीशस स्थित भारतीय उच्चायोग के उच्चायुक्त, महामहिम श्री अभय ठाकुर व अन्य अधिकारियों ने भी आयोजन में सक्रिय भाग लिया। विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, मॉरीशस में प्रधानमंत्री कार्यालय, शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय, कला व संस्कृति मंत्रालय, विदेश मंत्रालय, विश्व हिंदी सचिवालय, महात्मा गांधी संस्थान व अन्य हिंदी प्रचारक संस्थाओं की साझेदारी से विश्व हिंदी सम्मेलन का सफल आयोजन किया गया। सम्मेलन के अंतर्गत उद्घाटन समारोह, 8 समानांतर सत्र, अटल बिहारी वाजपेयी जी की स्मृति में काव्यांजलि, प्रदर्शनी, नुक्कड़ नाटक व अन्य पॉकेट शो, प्रतिवेदन सत्र, सम्मान समारोह तथा समापन समारोह का आयोजन किया गया। हिंदी के इस महाकुम्भ में देश–विदेश से 2000 से अधिक प्रतिभागियों ने सक्रिय रूप से भाग लिया।

सी–डैक के सॉफ़्टवेयर 'लीला' – हिंदी प्रवाह का लोकार्पण

14 सितंबर 2018 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा आयोजित हिंदी दिवस के अवसर पर उपराष्ट्रपति, महामहिम श्री वेंकैया नायडू के कर–कमलों द्वारा सी–डैक के सॉफ़्टवेयर 'लीला' – हिंदी प्रवाह (Learn Indian Languages through Artificial Intelligence) का लोकार्पण किया गया। राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार ने इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रोद्योगिकी मंत्रालय की स्वायत्त वैज्ञानिक संस्था सी–डैक की सहायता से लीला हिंदी प्रवाह का विकास किया है। यह पैकेज वेब एवं मोबाइल (एंड्रॉइड व आई.ओ.एस.) आधारित एक कुशल स्व–शिक्षक प्रणाली है, जिसे हिंदी भाषा सीखने के इच्छुक लोगों के लिए विकसित किया गया है। इसमें हिंदी प्रबोध, हिंदी प्रवीण एवं हिंदी प्रवाह पाठ्यक्रम शामिल हैं।

लीला हिंदी प्रवाह के द्वारा हिंदी सीखने के लिए माध्यम भाषा के रूप में अंग्रेज़ी, असमिया, बोडो, बांग्ला, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, ओड़िआ, पंजाबी, तमिल अथवा तेलुगु में से कोई भी भाषा चुनी जा सकती है।

लीला हिंदी प्रवाह में भारत के सुविख्यात लेखकों और कवियों जैसे मुंशी प्रेमचंद, महादेवी वर्मा, अल्लामा इकबाल, हरिवंशराय बच्चन आदि की प्रसिद्ध कहानियाँ और कविताएँ मुख्य रूप से शामिल हैं। इसमें भारतीय प्रशासन के कार्यकरण, भारतीय संविधान, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन, उपभोक्ता एवं स्वास्थ्य जागरूकता, इलेक्ट्रॉनिक संचार के माध्यम, खेलों में भारतीय महिलाएँ इत्यादि विषयों से संबंधित विषय–वस्तु को भी शामिल किया गया है।

इन शिक्षण पैकेजों में सीखने की विविध एवं प्रचुर विषय–वस्तु विद्यमान है। इनमें वर्णमाला से आरंभ करके, सरल से जटिल शब्दों एवं वाक्यों का निर्माण करना तथा शब्दावली, वाक्य के विभिन्न स्वरूपों और व्याकरण का ज्ञान प्राप्त करके, इन सभी का अभ्यास करना तथा उसके पश्चात परीक्षा देना शामिल है। भाषा को अच्छी तरह से सीखा जा सके, इसके लिए इन पैकेजों में श्रव्य एवं दृश्य सामग्रियाँ उपलब्ध की गई हैं।

विश्व हिंदी सचिवालय के ग्रंथालय एवं प्रलेखन केंद्र का नामकरण तथा मॉरीशसवासियों को विशेष प्रवासी भारतीय नागरिक कार्ड प्रदत्त

20 अगस्त 2018 को भारतीय विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने फ़ेनिक्स स्थित विश्व हिंदी सचिवालय में दो महत्त्वपूर्ण गतिविधियों में भाग लिया। सबसे पहले उन्होंने सचिवालय के ग्रंथालय एवं प्रलेखन केंद्र का नामकरण श्री बालेश्वर अग्रवाल के नाम पर किया। इस अवसर पर उन्होंने सचिवालय के ग्रंथालय की नाम पट्टिका का औपचारिक अनावरण किया। ध्यातव्य है कि श्री बालेश्वर अग्रवाल अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद् के समर्पित कार्यकर्ता के रूप में प्रवासी देशों में दशकों तक समर्पित भाव से काम करते रहे। इस अवसर पर मॉरीशस गणराज्य के मार्गदर्शक मंत्री, रक्षा मंत्री और रोड्रिग्स मंत्री, माननीय सर अनिरुद्ध जगन्नाथ, लेडी सरोजिनी जगन्नाथ, शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन, मॉरीशस में भारतीय उच्चायुक्त, महामहिम श्री अभय ठाकुर और अन्य महानुभाव उपस्थित थे।

अनावरण के पश्चात् माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने सचिवालय के प्रेक्षागृह में आयोजित एक दूसरे समारोह में कुछ मॉरीशसवासियों को प्रवासी भारतीय नागरिक कार्ड (ओ.सी. आई.) प्रदान किए, जिनमें लेडी सरोजिनी जगन्नाथ, शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन एवं चुनाव आयुक्त, श्री इरफ़ान रमन आदि प्रमुख रहे। यह कार्ड मॉरीशसवासियों के लिए विशेष महत्त्व रखता है। भारतीय विदेश मंत्री ने बताया कि इस कार्ड को प्राप्त करने के लिए मॉरीशसवासियों के लिए पीढ़ी की कोई सीमा निर्धारित नहीं है।

महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस में 'पाणिनि भाषा प्रयोगशाला' का नामकरण

19 अगस्त 2018 को भारत की विदेश मंत्री, माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज के कर–कमलों द्वारा मॉरीशस की शिक्षा मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन–लछुमन तथा कला एवं संस्कृति मंत्री, माननीय श्री पृथ्वीराज सिंह रूपन की गरिमामयी उपस्थिति में महात्मा गांधी संस्थान की 'पाणिनि भाषा प्रयोगशाला' का उद्घाटन किया गया। 'पाणिनि भाषा प्रयोगशाला' की स्थापना 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के उपलक्ष्य में विदेश मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से की गई है, जिसमें 34 कंप्यूटरों के साथ–साथ भाषा प्रयोगशाला से संबंधित अन्य संसाधन भी प्रदान किए गए हैं। इस प्रयोगशाला में, भारत से आए तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के अधुनातन सॉफ़्टवेयर लगाए गए हैं, जिनके द्वारा प्राथमिक, माध्यमिक तथा विश्वविद्यालयी स्तर के विद्यार्थियों को शिक्षण की नवीन प्रविधियों के माध्यम से भाषा अधिगम के चारों कौशलों को सुगम एवं वैज्ञानिक तरीके से सिखाया जा सकेगा। इस उद्घाटन समारोह में माननीया श्रीमती सुषमा स्वराज ने संतोष व्यक्त करते हुए कहा कि मॉरीशस में हिंदी भाषा को बहुत संजोकर रखा गया है और यहाँ हिंदी का भविष्य पूरी तरह सुरक्षित है।

बड़ौदा में 'हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में उपलब्ध तकनीक' विषय पर व्याख्यान

29 अगस्त, 2018 को बैंक ऑफ़ बड़ौदा के प्रधान कार्यालय, बड़ौदा के सभागृह में बैंक द्वारा आयोजित भाषा उत्सव के अंतर्गत श्री बालेन्दु शर्मा दाधीच ने 'हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में उपलब्ध तकनीक' विषय पर व्याख्यान दिया। समारोह के दौरान उन्होंने भारतीय भाषाओं में माइक्रोसॉफ़्ट की नई तकनीकों, उत्पादकता, सॉफ़्टवेयरों के प्रयोग में कुशलता का परीक्षण तथा भाषाओं के प्रयोग में आर्टीफ़िशियल इंटेलिजेंस की भूमिका पर बात की। समारोह में सार्वजनिक क्षेत्र के कई अन्य बैंकों के लगभग 150 अधिकारियों ने भाग लिया। यह कार्यक्रम बहुत सफल और सार्थक रहा, जिसमें बैंक कर्मियों ने हिंदी माध्यम से अत्यंत उपयोगी जानकारी प्राप्त की। **भाषा उत्सव** के अंतर्गत एक माह के दौरान भारत के विभिन्न कार्यालयों में भारतीय भाषाओं के माध्यम से एक दर्जन आयोजन हुए, जिनमें कार्यशालाएँ, प्रौद्योगिकी का प्रदर्शन, कौशल विकास, नवीनतम सूचनाएँ और रुचिकर गतिविधियाँ प्रमुख रहीं, जिसके प्रस्तुतकर्ता श्री बालेन्दु शर्मा दाधीच थे।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जयंती एवं काव्य–गोष्ठी

3 अगस्त, 2018 को पटना में बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन के दौरान राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जयंती एवं काव्य–गोष्ठी का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता डॉ. अनिल सुलभ ने की। उन्होंने मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अपने विचार व्यक्त किए। स्वागत वक्तव्य देते हुए श्री नृपेंद्रनाथ गुप्त ने कहा कि मैथिलीशरण जी की काव्य–धारा में राष्ट्रीय भाव का प्रवाह है। 'साकेत', 'यशोधरा', 'जयद्रथ वध' तथा 'भारत–भारती' जैसी दर्जन भर अमर–कृतियाँ हैं, जो उनकी महान काव्य–प्रतिभा का परिचय देती हैं। मगध विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति, मेजर बलबीर सिंह भसीन ने 'साकेत' का उल्लेख करते हुए कहा कि गुप्त जी ने लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के त्याग और बलिदान का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। 'साकेत' की उर्मिला भारतीय नारी का उच्च आदर्श है। सम्मेलन की उपाध्यक्ष, डॉ. कल्याणी कुसुम सिंह तथा डॉ. मधु वर्मा ने भी अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर कवि–गोष्ठी का भी आयोजन किया गया, जिसमें राजकुमार प्रेमी, वरिष्ठ कवि मृत्युंजय मिश्र, डॉ. शंकर प्रसाद, कवि घनश्याम आदि कई कवियों ने कविता–पाठ किया। मंच संचालन कवि योगेन्द्र प्रसाद मिश्र ने तथा धन्यवाद–ज्ञापन श्री कृष्ण रंजन सिंह ने किया।

– संपादक मंडल

हिंदी को आप हिंदी कहें या हिंदुस्तानी, मेरे लिए तो दोनों एक ही हैं। हमारा कर्तव्य यह है कि हम अपना राष्ट्रीय कार्य हिंदी भाषा में करें।

– महात्मा गांधी

हिंदी भाषा अपनी अनेक धाराओं के साथ प्रशस्त क्षेत्र में प्रखर गति से प्रकाशित हो रही है।

– छविनाथ पांडेय

हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य को सर्वांग सुंदर बनाना हमारा कर्त्तव्य है।

– डॉ. राजेंद्रप्रसाद

श्रद्धांजलि

34. मॉरीशस के लब्धप्रतिष्ठ हिंदी रचनाकार अभिमन्यु - डॉ. देविना अक्षयवर
अनत को याद करते हुए

35. श्रद्धांजलि 2018 - विश्व हिंदी सचिवालय

34

मॉरीशस के लब्धप्रतिष्ठ हिंदी रचनाकार अभिमन्यु अनत को याद करते हुए

– डॉ. देविना अक्षयवर

औपनिवेशिक काल में प्रवासन के लिए विवश हुए भारतीय गरीब मज़दूरों के वंशज भारत से बाहर अपनी पहचान के साथ–साथ अपनी संस्कृति को जीवित रखने के उद्देश्य से और बार–बार अपने पूर्वजों के अतीत को जिलाए रखने के मंतव्य से लिखते रहे हैं। मॉरीशस, फ़िजी, सूरीनाम, टोबैगो, त्रिनिदाद आदि देशों में भारतीय प्रवासियों के साहित्य–सृजन के पीछे यही ध्येय रहा है।

प्रवासी समाज का यह सांस्कृतिक समन्वय ही है कि भारत से इतर जहाँ भी भारतीय प्रवासी बसे थे, उनके वंशज आज हिंदी भाषा में साहित्य–सृजन कर उसकी अभिवृद्धि कर रहे हैं। एक अलग सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, भाषागत और सांस्कृतिक परिवेश में रहकर भी वे हिंदी में लिखते हुए हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में उन भूले–बिसरे भारतीय प्रवासियों को स्थापित करने की आवश्यकता महसूस करते हैं, जिनके बारे में अवगत कराए बिना साहित्य–सृजन अधूरा है। इसी उद्देश्य के साथ मॉरीशस के लब्धप्रतिष्ठ और कर्मठ साहित्यकार, श्री अभिमन्यु अनत ने अपने साहित्य–जगत का निर्माण किया। अनत जी ने पिछले 4 जून 2018 को हिंदी जगत को अपनी अमूल्य साहित्य–निधि सौंपकर भौतिक जगत से विदा ले ली। भारत से बाहर रहकर भी वे हिंदी साहित्य के प्रति पूर्ण समर्पित रहे। हिंदी को भारत के बहुसंख्यक समाज की भाषा माना जाता है, लेकिन अनत जी ने हिंदी के फ़लक को भारत से मॉरीशस तक इतना विस्तृत किया है कि अब हिंदी भाषा और साहित्य केवल भारत से ही नहीं चिह्नित होते, बल्कि उन्हें एक अंतरराष्ट्रीय धरातल प्राप्त हो चुका है। मॉरीशस में अंग्रेज़ी और फ्रेंच भाषाओं, क्रियोली बोली आदि के होते हुए हिंदी को साहित्य–सृजन के माध्यम रूप में प्रयुक्त करना, वस्तुतः अभिमन्यु अनत का हिंदी भाषा के प्रति लगन, सम्मान और रुचि का प्रमाण है।

अभिमन्यु अनत का जन्म मॉरीशस के उत्तरी प्रान्त के त्रियोले नामक गाँव में 9 अगस्त 1937 ई. में हुआ था। इनके पूर्वज भारतीय आप्रवासी थे। यद्यपि उनका जन्म एक संपन्न परिवार में हुआ था, तथापि, उनके पिताश्री पतिसिंह के दयालु स्वभाव एवं समाज के प्रति पूर्णतः समर्पण के कारण उनका बचपन काफ़ी हद तक अभावों में बीता। उनके पिता तथा माता सुभागो, दोनों हिंदी के अच्छे पाठक और क्रमशः प्रेमचन्द और शरतचंद्र से अत्यन्त प्रभावित थे। इसलिए अभिमन्यु अनत पर भी इन लेखकों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। उन दिनों घरों एवं गाँवों में

शिक्षा :

- बी.ए. – महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस
- एम.ए. – जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
- पी.एच.डी.–जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

व्यवसाय :

- जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र में एक साल तक अतिथि प्राध्यापक के रूप में हिंदी टूल्स का अध्यापन
- विश्वविद्यालय के जर्मन अध्ययन केंद्र में तीन महीनों तक भाषा विशेषज्ञ के रूप में हिंदी अध्यापन
- अनुवाद योजनाओं में भी कार्य किया।
- रॉयल कॉलिज तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर संस्थान, मॉरीशस में अध्यापन कार्य
- विज़िटिंग जर्मन छात्रों को हिंदी पढ़ाया। (बिगिनर्स कोर्स)
- तीन महीने के लिए विश्व हिंदी सचिवालय में विशेषज्ञ के रूप में कार्य किया।

प्रकाशन :

- 'प्रवासी साहित्य और विचारधारा' – संपादन सहयोग
- 'मॉरीशसीय हिंदी साहित्य में स्त्री' – संपादन सहयोग
- 'आधुनिक भारत के इतिहास लेखन के कुछ साहित्यिक स्रोत' – सह–संपादन
- 'हमारे समय का साहित्य' – सह–संपादन
- विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशित।

किस्सागोई का प्रचलन था। पूर्वजों के इतिहास को कहानी के रूप में सुनाने की प्रवृत्ति के चलते ही अभिमन्यु अनत को भारतीय आप्रवासी समाज द्वारा व्यतीत, यातनापूर्ण जीवन का अच्छा ज्ञान प्राप्त हुआ। अपनी माता के अथक प्रयासों के बाद वे माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर पाए, लेकिन आर्थिक अभाव के कारण उनकी शिक्षा इससे आगे नहीं बढ़ पाई। सन् 1955 में उन्होंने हिंदी प्रचारिणी सभा, मॉरीशस द्वारा आयोजित 'परिचय' की परीक्षा पास की तथा सन् 1957 में उन्होंने अध्यापकों के प्रशिक्षण महाविद्यालय में प्रवेश पाया। अध्यापन का कार्य करते हुए उन्होंने हिंदी साहित्य–लेखन को अपना प्रशस्त–पथ बना लिया।

सामान्यतः अभिमन्यु अनत एक कवि, कहानीकार, नाटककार, चित्रकार एवं उपन्यासकार के रूप में कला के सेवक रहे। किन्तु उनकी ख्याति उनके कथा–साहित्य, विशेषकर उपन्यास–साहित्य के कारण है। सन् 1979 में भारत में हिंदी साहित्य संस्थान, उत्तर प्रदेश की ओर से उनको उनके सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वप्रसिद्ध उपन्यास 'लाल–पसीना' के लिए पुरस्कृत किया गया था। सन् 1983 में फ्रांसीसी सरकार ने उनको अपनी सोलह कहानियों के एक संग्रह के प्रकाशन हेतु वित्तीय सहयोग प्रदान किया।

डॉ. रामविलास शर्मा ने साहित्य और जनता के संबंधों के संदर्भ में लिखा है –

'' साहित्य की परंपरा का मूल्यांकन करते हुए सबसे पहले हम उस साहित्य का मूल्य निर्धारित करते हैं, जो शोषक वर्गों के विरुद्ध श्रमिक जनता के हितों को प्रतिबिम्बित करता है। इसके साथ हम उस साहित्य पर ध्यान देते हैं, जिसकी रचना का आधार शोषित जनता का श्रम है और यह देखने का प्रयत्न करते हैं कि वह वर्तमान काल में जनता के लिए कहाँ तक उपयोगी हैं.... ।''[1]

यदि अभिमन्यु अनत के समूचे साहित्य पर ध्यान दिया जाए, तो पाएँगे कि वस्तुतः उनके साहित्य का मूल्य उपरोक्त विशेषताओं से ही निर्मित हुआ है। साहित्य रचने के पीछे इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अभिमन्यु अनत ने साहित्य–सृजन के क्षेत्र में पर्दापण किया था। उन्होंने अपनी लेखन–कला से यह सिद्ध किया है कि साहित्य मात्र इतिहास के महापुरुषों का जीवन–चरित नहीं होता, बल्कि उसका वास्तविक उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन और विकास के लिए जनता को जागृत करना है। उनके अनुसार 'इतिहास बड़े लोगों का उपन्यास होता है और उपन्यास छोटे लोगों का इतिहास।' अभिमन्यु अनत के साहित्य में साम्राज्यवाद के प्रति विरोध, वर्ग–संघर्ष तथा मानवाधिकारों का स्वर बुलंदी पर पाया जाता है।

अनत जी के हिंदी–लेखन के क्षेत्र में पदार्पण से पहले आप्रवासी मज़दूरों को देश की स्वतंत्रता के लिए एकजुट होकर संघर्ष करने का आह्वान हिंदी कविताओं के माध्यम से किया जाता रहा है, लेकिन भाषा उतनी परिमार्जित नहीं हुआ करती थी। अभिमन्यु अनत के आविर्भाव से मॉरीशस के हिंदी साहित्य के विकास का दूसरा चरण शुरू हुआ। उनके साहित्य–सृजन की यात्रा 'रानी' नामक पत्रिका (जून 1965) में उनकी कहानी 'लहरें कराह उठीं' के छपने से प्रारंभ हुई। इसके बाद उनकी कहानियाँ 'सुषमा', 'नवनीत', 'सरिता' आदि भारतीय पत्रिकाओं में छपती रहीं। इसके अतिरिक्त उनकी दो कहानियाँ–'पहाड़ी ख़ामोशी' तथा 'कोलाहल', 'आजकल' पत्रिका (जुलाई 1968) में छपी थीं।[2]

ग़ौरतलब है कि मॉरीशस का हिंदी साहित्य दूसरे देशों के साहित्य की तरह किसी भी एक खास विचारधारा या फिर 'वाद' या शिल्प–सिद्धांत की जकड़ में नहीं रहा। समय–परिवर्तन और सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक संरचनाओं में आए बदलावों के चलते साहित्य–लेखन ने जिस प्रकार की विषय वस्तु की माँग की, उसी प्रकार की मूल संवेदना साहित्य का अंग बनी। मॉरीशस की हिंदी कहानियों के संदर्भ में इस तथ्य को और पुष्ट करते हुए अभिमन्यु अनत ने अपना मत इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

''यहाँ की कहानियों की कुछ मुख्य प्रवृत्तियाँ हैं – अपने देश और समय का बोध कराना, देश में विसंस्कृतीकरण के विरुद्ध 'अस्मिता की लड़ाई' को वाणी देना, जन–जीवन के साहस और संघर्ष के साथ विघटन, लिजलिजेपन और टूटन की अभिव्यक्ति तथा बौद्धिकता, शिल्प तथा वादों के जंगल में खोने से बचना, आदि।''[3]

वास्तव में उपरोक्त कथन में चर्चित प्रवृत्तियाँ अभिमन्यु अनत की कहानियों में ही नहीं, बल्कि उनकी प्रत्येक साहित्यिक कृति में देखी जा सकती है। उन्होंने एक जागरूक एवं सहृदय साहित्यकार के रूप में अपने लेखन की मूल संवेदना के केंद्र में

सामान्य जनों, मज़दूरों तथा कृषक समाज के जीवन में शोषण के दुष्प्रभावों को रखा। उनके अनुसार 'मज़दूर की ऐसी प्रतिष्ठा होनी चाहिए, जो किसी भी प्रतिष्ठा से कम न हो।' इसीलिए उनके साहित्य में मॉरीशस की आत्मा का संस्पर्श और उनकी मातृभूमि की सोंधी खुशबू सर्वत्र व्याप्त है।

अभिमन्यु अनत मॉरीशस के हिंदी गद्य साहित्य की विधाओं को समृद्ध करने में एक महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। 'त्रिवेणी' (1974), 'नागफ़नी में उलझी सांसे' (1977), 'कैक्टस के दाँत' (1982) तथा 'एक डायरी बयान' (1986) जैसे महत्त्वपूर्ण कविता–संग्रहों के बाद, उन्होंने हिंदी कथा–साहित्य में पदार्पण कर मॉरीशस के हिंदी गद्य–साहित्य को अपनी संवेदना एवं भाषा से संवारा। 'इंसान और मशीन' (1976), 'खामोशी के चीत्कार'(1976), 'वह बीच का आदमी' (1981) और 'एक थाली समन्दर' (1978) जैसे कहानी–संग्रहों से उन्होंने हिंदी गद्य के विकास में अपना अवदान दिया।

ध्यान देने योग्य बात है कि जहाँ एक ओर उन्होंने श्रव्य काव्य की रचना की, वहीं मॉरीशस में दृश्य काव्य को प्रचलित करने में भी अपना अप्रतिम योगदान दिया है। 'विरोध' (1977), 'तीन दृश्य' (1981), 'गूंगा इतिहास' (1984) तथा 'रोक दो कान्हा' (1986) उनके सफल नाटक माने जाते हैं। उन्होंने इनके साथ ही 35 से अधिक रेडियो नाटक भी लिखे, जिनका प्रस्तुतीकरण मॉरीशस में रेडियो तथा दूरदर्शन पर होता रहा है। नाटकों का मंचन कराने के साथ ही उन्होंने स्वयं उनमें भूमिकाएँ भी निभाईं। कई पुस्तकें लिखने के बाद सन् 1975 में उन्हें महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस के हिंदी विभागाध्यक्ष के पद पर नियुक्त किया गया। वे संस्थान की ओर से निकलने वाली 'वसंत' पत्रिका के भी संपादक रहे। कालान्तर में उन्हें मॉरीशस के रवींद्रनाथ टैगोर संस्थान के सांस्कृतिक विभाग में अध्यक्ष के पद के लिए मनोनीत किया गया। उन्होंने सन् 1982 में 'अजन्ता आर्ट्स' नामक संस्था की स्थापना की थी, जिसके तहत वे एक कर्मशील रंगकर्मी, निर्माता, निर्देशक, लेखक और अभिनेता के रूप में नाट्य–साहित्य को प्रोत्साहन देते रहे। अपनी कहानियों, नाटकों एवं उपन्यासों को उन्होंने कई धारावाहिक रूप देकर टी.वी. के माध्यम से मॉरीशस की जनता के घर–घर तक पहुँचाकर अपने विचारों की अभिव्यक्ति कर उनमें जन–चेतना लाने का सफल प्रयास किया ।

अभिमन्यु अनत की रचनाओं की पृष्ठभूमि तथा परिप्रेक्ष्य सामान्यतः मॉरीशस में भारतीय आप्रवासियों के इतिहास एवं उनकी जीवन–शैली पर आधारित हैं। लेकिन इसके साथ ही वे अपनी युगीन समस्याओं से निरपेक्ष भी नहीं रह पाते हैं। अपने विचारों, भावनाओं एवं संवेदनाओं को विस्तारपूर्वक काग़ज़ पर उतारने के उद्देश्य से ही शायद उन्होंने उपन्यास–लेखन को अपना आधार चुना। अपने साहित्य–सृजन के प्रारंभिक दौर में जहाँ वे कविता, कहानी, उपन्यास तथा नाटक की रचना में रुचि लेते थे, वहीं लगभग दो दशकों में (1990–2010) उनका झुकाव उपन्यास–लेखन की ओर रहा। अब तक उनके लगभग तीस उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं, जिनकी बहुरंगी मूल संवेदना देशकाल से प्रेरित है, जिसपर सामाजिक तथा राजनीतिक कुरीतियों, अंधविश्वासों और आर्थिक विषमता के चलते पारिवारिक क्लेश, स्त्री–पुरुष संबंध की जटिलताएँ, आंचलिक जीवन की वास्तविकताएँ, विविध समस्याओं से घिरे आम आदमी के मनोवैज्ञानिक पक्ष जैसे 'थीम' स्थान पा सके हैं। लेकिन उनके अधिकांश उपन्यासों (लाल पसीना, आन्दोलन, जम गया सूरज, कुहासे का दायरा, हड़ताल कल होगी, और पसीना बहता रहा आदि) की विषयवस्तु बुर्जुआ वर्ग द्वारा पददलित, शोषित मज़दूर वर्ग द्वारा भोगे गए संताप की करुण गाथा के रूप में हमारे सामने है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उपन्यास के उद्देश्य पर विचार करते हुए लिखा है –

''किसी जन–समाज के बीच काल की गति के अनुसार जो गूढ़ एवं चिंतन की समस्याएँ खड़ी होती रहती हैं, उनको गोचर रूप में सामने लाना और कभी–कभी विस्तार का मार्ग भी प्रत्यक्ष करना उपन्यास का काम है।''[4]

राजनीतिक एवं मज़दूरों की स्थिति–परक उपन्यासों के बहाने अभिमन्यु अनत ने जहाँ एक ओर साहित्य के माध्यम से अपने समाज के इतिहास तथा उसके चिंतन की समस्याओं को उभारा, वहीं कई रचनाओं में उन्होंने मज़दूर–विद्रोह और उनकी एकजुटता दिखाकर उन समस्याओं से निजात पाने का मार्ग भी प्रशस्त किया। अतः उनके उपन्यास ऊपर उद्धृत कथन में उक्त उपन्यास की विशेषताओं से परिपूर्ण हैं।

अभिमन्यु अनत के उपन्यासों के पात्र औपनिवेशिक राजनीति में ग्रामीण भारतीय समाज, खासकर, गरीब श्रमिक वर्ग के लोगों के जीवन का ब्योरा प्रस्तुत करते हैं। भारतीय आप्रवासी समाज की समस्या, जो प्रत्यक्षतः दिखती है, वह है—गरीबी, बेरोज़गारी तथा भूख। लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से उनके जीवन को निगलने वाले तत्त्व हैं – धार्मिक अंधविश्वास, जातिगत विषमता, अशिक्षा एवं नियतिवादी सोच। इतिहास इस बात की पुष्टि करता है कि ज्ञान और सत्ता मनुष्य पर मनुष्य द्वारा शोषण तथा सामाजिक गुलामी थोपने के ठोस आधार रहे हैं। ज्ञान तथा सत्ता, दोनों शासक वर्ग की शक्ति रहे। भारतीय समाज में ज्ञान एवं सत्ता के दावेदार तथाकथित 'उच्च' जाति और सामंतवर्ग रहे हैं। जबकि इन दोनों अधिकारों से गरीब, शोषित और निरीह वर्ग वंचित रहा। सामंतवाद का अंत होते—होते सत्ता का हस्तांतरण साम्राज्यवादियों के हाथों हुआ जबकि अभावग्रस्त तबके का और दमन होता गया। इस हद तक कि वह स्वयं ही अपनी हीनता क़बूल करे और इसे नियति मानकर दासत्व की स्थिति में आ जाए। अभिमन्यु अनत ने भारतवंशियों के समाज, जो अपनी लाचारी के कारण अपनी मातृभूमि से कटकर एक अजनबी जीवन जीने के लिए बाध्य हुआ, का मार्मिक दिग्दर्शन अपने उपन्यासों में किया है। इसलिए डॉ. श्यामधर तिवारी ने उनके बारे में टिप्पणी की है—

''वे मालिकों की शोषक—वृत्ति एवं पूंजीवादी व्यवस्था के निर्मम आलोचक हैं।''[5]

अतः जीवन के प्रति अभिमन्यु अनत की विचारधारा ही उनकी रचना—दृष्टि सिद्ध हुई। उनकी एक और कालजयी कृति 'हम प्रवासी' की विषय—वस्तु पर यदि गौर किया जाए, तो पाएँगे कि इस उपन्यास में महावीर, चंपा, हनीफ़, मधुआ जैसे पात्रों का जीवन यदि भारतीय परिप्रेक्ष्य में दर्शाया जाता, तो उनकी स्थिति भी प्रेमचंद के गोबर या फिर हल्कू जैसे पात्रों की स्थिति से अलग न होती।

औपनिवेशिककालीन बंधुआ मज़दूरों की दुखदायी प्रवास—यात्रा और उनके द्वारा तीन महीनों तक एक जहाज़ पर झेले गए भूख, विरह—यातना, शुद्ध भोजन और पानी के अभाव और खराब मौसम के कारण बीमारियाँ, उनकी मॉरीशस—भूमि पर जल्द—से—जल्द पहुँचने की अकुलाहट और उनकी मनोवैज्ञानिक स्थिति में अनिश्चितता, संदेह, चिंता तथा अस्थिरता की मार्मिक अभिव्यक्ति इस उपन्यास के रूप में हमारे सामने है।

जबकि विडम्बनापूर्ण स्थिति तो यह है कि मॉरीशस में पहले से बसे भारतीय आप्रवासी समाज अपने मालिकों के अमानुषिक व्यवहार और दमनकारी नीतियों से असंतुष्ट एवं त्रस्त थे। अनत जी ने अपनी रचना के ज़रिये वर्णित किया है कि आप्रवासियों के बीच 'जहाज़िया भाई' की एक अद्‌भुत भेदभाव रहित संस्कृति किस प्रकार आकार ले रही थी।

अभिमन्यु अनत के प्रायः सभी उपन्यासों में वर्ग के आधार पर सामाजिक विकासोन्मुख युग—विशेष का प्रबल चित्रण हुआ है। चूँकि औपनिवेशिककालीन आप्रवासी समाज मूलतः श्रमिकों से निर्मित था, इसीलिए उनके उपन्यासों में शोषितों और शोषकों के बीच चलते निरन्तर संघर्ष का सजीव चित्रण दिखाई देता है।

अभिमन्यु अनत को याद करना वस्तुतः उन लाखों प्रवासी पूर्वजों को याद करना है, जिनके खून और पसीने के मिश्रण से पथरीली ज़मीनें उर्वर हो पायीं। अनत जी ने अपनी लेखनी को अपनी कलात्मकता की स्याही में डुबोकर भारतीय प्रवासियों की संघर्ष—गाथा को दर्ज किया है, वे सच में उस मेहनतकश जनता के इतिहासकार हैं... ।

संदर्भ :

1. डॉ. शर्मा, रामविलास, 2009, परंपरा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृ. 10—11
2. अभिमन्यु अनत की 250 कहानियाँ 'आजकल', 'कनक', 'कहानी', 'कादम्बिनी', 'धर्मयुग', 'कथादेश', 'शांतिदूत', 'नवनीत', 'सरिता', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'सारिका', 'इन्द्रप्रस्थ भारती', 'हंस' आदि भारतीय पत्रिकाओं में छप चुकी हैं ।
3. डॉ. गोयनका कमल किशोर (सं.) 1976, मॉरीशस की हिंदी कहानी, भूमिका से उद्धृत।
4. शुक्ल, आचार्य रामचंद्र, 1929, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, सं. 2008, पृ. 381
5. डॉ. तिवारी श्यामधर, 1984—85, अभिमन्यु अनत : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, अभिनव प्रकाशन, आगरा, पृ. 19

मॉरीशस

drdevina85@gmail.com

35

विश्व हिंदी सचिवालय की ओर से वर्ष 2018 में हिंदी संसार के दिवंगत महानुभावों को भावपूर्ण श्रद्धांजलि

श्री दूधनाथ सिंह

11 जनवरी, 2018 को हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार एवं कवि, श्री दूधनाथ सिंह का 81 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 17 अक्तूबर, 1936 को उत्तर प्रदेश के बलिया ज़िले के सोबंथा गाँव में हुआ था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिंदी साहित्य में एम. ए. करने के पश्चात् आप कलकत्ता में प्राध्यापक रहे तथा सेवानिवृत्ति के बाद लेखन में समर्पित हो गए। आपकी प्रमुख कृतियों में 'आखिरी कलाम', 'लौट आओ धार', 'निराला : आत्महंता आस्था', 'सपाट चेहरे वाला आदमी', 'यमगाथा', 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे', जैसी कालजयी कृतियाँ, 'एक और भी आदमी है', 'अगली शताब्दी के नाम' और 'युवा खुशबू' जैसे कविता–संग्रह, 'सुरंग से लौटते हुए' जैसी कविता, 'महादेवी', 'मुक्तिबोध : साहित्य में नई प्रवृत्तियाँ' जैसी आलोचनात्मक रचनाएँ शामिल हैं। आपको 'भारतेंदु सम्मान', 'शरद जोशी स्मृति सम्मान', 'कथाक्रम सम्मान' तथा 'साहित्य भूषण सम्मान' आदि से सम्मानित किया गया है।

श्री मुज़फ़्फ़र हुसैन

13 फ़रवरी, 2018 को प्रसिद्ध चिंतक, लेखक और पत्रकार श्री मुज़फ़्फ़र हुसैन का 72 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 20 मार्च, 1945 को राजस्थान के बिजोलिया में हुआ था। आपने नीमच विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि प्राप्त की तथा इसके बाद एल. एल. बी. की पढ़ाई करने गए। व्यवसाय के रूप में आपने पत्रकारिता को अपनाया। आप राष्ट्रीय उर्दू काउंसिल के उपाध्यक्ष भी रहे। आपने औरंगाबाद के दैनिक 'देवगिरी समाचार' के सलाहकार संपादक के पद पर भी कार्य किया। हिंदी, उर्दू, मराठी एवं गुजराती पर अच्छी पकड़ होने के कारण इन भाषाओं के अखबारों में आपके लेख प्रकाशित होते रहे हैं। आपने मराठी, हिंदी एवं गुजराती में 9 पुस्तकें लिखीं, जिनमें 'इस्लाम और शाकाहार', 'अल्पसंख्यकवाद के खतरे', 'मुस्लिम मानस' आदि प्रमुख हैं। आपको 2002 में 'पद्मश्री', 2014 में महाराष्ट्र सरकार द्वारा पत्रकारिता हेतु 'लोकमान्य तिलक पुरस्कार' तथा 'जीवन गौरव पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है।

श्री श्रीलाल जोशी

17 फ़रवरी, 2018 को हिंदी व मायड़ भाषा के वरिष्ठ साहित्यकार, श्रीलाल जोशी का निधन हो गया। आपका जन्म 1956 में हुआ था। आप समवेत संस्था के सचिव पद पर कार्यरत थे। साहित्य के साथ–साथ आप पत्रकारिता से भी जुड़े हुए थे। आपकी रचनाओं में हिंदी कहानी–संग्रह 'मिनख कमाने का सुख' एवं राजस्थानी कहानी–संग्रह 'नाथुम्ब' शामिल हैं।

श्री अभिमन्यु अनत

4 जून, 2018 को मॉरीशस के वरिष्ठ हिंदी सेवी, लेखक व प्रचारक श्री अभिमन्यु अनत का 81 वर्ष की आयु में निधन हो गया। श्री अभिमन्यु अनत मॉरीशस के हिंदी कथा साहित्य के सम्राट माने जाते हैं। शांत एवं सौम्य व्यक्तित्व के धनी श्री अभिमन्यु अनत केवल मॉरीशस ही नहीं, वरन् पूरे हिंदी जगत् के शिरोमणि हैं। अभिमन्यु अनत अपने देश के भूमिपुत्र तथा राष्ट्रीय उपन्यासकार माने जाते हैं।

प्रो. केदारनाथ सिंह

19 मार्च, 2018 को प्रसिद्ध कवि तथा जे.एन.यू. के भूतपूर्व प्रोफ़ेसर, श्री केदारनाथ सिंह का 83 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 7 जुलाई, 1934 को उत्तर प्रदेश के बलिया ज़िले के चकिया गाँव में हुआ था। आपने 1956 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. और 1964 में पी.एच.डी की। आप कई महाविद्यालयों में प्राध्यापक रहे तथा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के अध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त हुए। 'अभी बिल्कुल अभी', 'ज़मीन पक रही है', 'यहाँ से देखो', 'बाघ',

'अकाल में सारस', 'उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ', 'तालस्तॉय और साइकिल' जैसे कविता–संग्रह, 'कल्पना और छायावाद', 'आधुनिक हिंदी कविता में बिंब विधान', 'मेरे समय के शब्द' तथा 'मेरे साक्षात्कार' जैसी आलोचनात्मक कृतियाँ, 'ताना–बाना' (आधुनिक भारतीय कविता से एक चयन), 'समकालीन रूसी कविताएँ', 'कविता दशक', 'साखी' (अनियतकालिक पत्रिका), 'शब्द' (अनियतकालिक पत्रिका) के संपादन कार्य आपके प्रमुख प्रकाशन हैं। 2013 में आपको '49वें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त आपको 'मैथिलीशरण गुप्त सम्मान', 'कुमारन आशान पुरस्कारम्', 'जीवन भारती सम्मान', 'दिनकर पुरस्कार', 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' तथा 'व्यास सम्मान' से विभूषित किया गया।

श्री बालकवि बैरागी

13 मई 2018 को प्रसिद्ध साहित्यकार श्री बालकवि बैरागी का 87 वर्ष की आयु में देहांत हो गया। आपका जन्म 10 फ़रवरी 1931 को मंदसौर ज़िले की मनासा तहसील के रामपुरा गाँव में हुआ था। आपने विक्रम विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. किया। आप केंद्रीय हिंदी सलाहकार समिति के सदस्य रहे। राजनीति एवं साहित्य, दोनों से जुड़े रहने के कारण आपकी रचनाओं में इसकी झलक पाई जाती है। आप मध्य प्रदेश सरकार के मंत्री तथा लो. कसभा के सदस्य रहे तथा हिंदी काव्य–मंचों पर भी लोकप्रिय रहे। 'मैं उपस्थित हूँ यहाँ', 'दीवट (दीप पात्र) पर दीप', 'झर गये पात', 'गन्ने मेरे भाई!!', 'जो कुटिलता से जीएँगे', 'अपनी गंध नहीं बेचूँगा', 'मेरे देश के लाल', 'नौजवान आओ रे!', 'सारा देश हमारा' आदि आपकी प्रतिनिधि रचनाएँ हैं। आपने बाल कविताएँ और फ़िल्मी गीत भी लिखे हैं। आपको मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 'कवि प्रदीप सम्मान' सहित कई सम्मानों से अलंकृत किया जा चुका है।

श्री प्राण शर्मा

25 अप्रैल 2018 को लेखक श्री प्राण शर्मा का 80 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 13 जून, 1937 को वज़ीराबाद, पाकिस्तान में हुआ था। आपने अपनी प्राथमिक शिक्षा दिल्ली में की तथा पंजाब विश्वविद्यालय से एम. ए. और बी.एड. किया। आपकी रचनाएँ युवावस्था से ही पंजाब के दैनिक पत्र, 'वीर अर्जुन' एवं 'हिंदी मिलाप', ज्ञानपीठ की पत्रिका 'नया ज्ञानोदय' जैसी अनेक उच्चकोटि की पत्रिकाओं और अंतरजाल के विभिन्न वेब्स पर प्रकाशित होती रही हैं। आप हिंदी ग़ज़लों और गीतों में शब्दों के विलक्षण प्रयोग के लिए जाने जाते हैं। 'ग़ज़ल कहता हूँ', 'सुराही' (मुक्तक–संग्रह), 'घर वापस जाने की सुध–बुध बिसराता है मेले में', 'आँखों में कभी अश्कों को भर कर नहीं जाते', 'कौन उस–सा फ़कीर होता है', 'जग में मुरीद अपना बनाता किसे नहीं', 'उड़ते हैं हज़ारों आकाश में पंछी' आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। पत्र–पत्रिकाओं में भी आपके लेख प्रकाशित हैं। आपको कई प्रतियोगिताओं में पुरस्कार प्राप्त हैं। आपको हिंदी समिति, लंदन द्वारा सम्मानित तथा भारतीय उच्चायोग, यू. के. द्वारा साहित्य के विशिष्ट सम्मान से विभूषित किया गया है।

श्री राज किशोर

4 जून, 2018 को वरिष्ठ पत्रकार, लेखक व कवि श्री राज किशोर का दिल्ली के अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) में निधन हो गया। आप 71 साल के थे। श्री राज किशोर का जन्म 2 जनवरी 1947 को पश्चिम बंगाल के कोलकाता में हुआ था। आप बदलाव के पक्षधर थे और समाज में इस बदलाव को होते हुए देखना चाहते थे। आप पत्रकारिता के क्षेत्र में सक्रिय थे और अपने कार्यकाल में आपने खुलकर अपने विचार रखे। वैचारिक लेखन में आपकी कई किताबें भी प्रकाशित हुईं। 'पत्रकारिता के परिप्रेक्ष्य', 'धर्म', 'सांप्रदायिकता और राजनीति', 'एक अहिंदू का घोषणापत्र', 'जाति कौन तोड़ेगा', 'रोशनी इधर है', 'सोचो तो संभव है', 'स्त्री–पुरुष : कुछ पुनर्विचार', 'स्त्रीत्व का उत्सव', 'गांधी मेरे भीतर', 'गांधी की भूमि से' आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। आपकी रचनाओं में व्यंग्य भी शामिल हैं। आपने 'दूसरा शनिवार', 'आज के प्रश्न' पुस्तक शृंखला तथा 'समकालीन पत्रकारिता : मूल्यांकन और मुद्दे' का संपादन किया। उपन्यास में 'तुम्हारा सुख' तथा 'सुनंदा की डायरी' आपकी मुख्य कृतियाँ रहीं। 'पाप के दिन' आपका चर्चित कविता–संग्रह है। आपने पत्रकारिता, उपन्यास, कविता, व्यंग्य जैसी कई विधाओं में अपनी

प्रतिभा दिखाई। आप पत्रकार होने के साथ ही साहित्यकार भी थे। हिंदी साहित्य में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए आपको 'लोहिया पुरस्कार', 'साहित्यकार सम्मान', हिंदी अकादमी, दिल्ली तथा 'राजेंद्र माथुर पत्रकारिता पुरस्कार', 'बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना से सम्मानित किया गया है।

श्री अटल बिहारी वाजपेयी

16 अगस्त, 2018 को हिंदी कवि, पत्रकार, प्रखर वक्ता एवं राजनीतिज्ञ, भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी का 93 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 25 दिसंबर, 1924 को ग्वालियर, मध्य प्रदेश में हुआ था। अटल जी ने बी.ए. की शिक्षा ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलिज में प्राप्त की तथा कानपुर के डी.ए.वी. कॉलिज से राजनीति शास्त्र में एम.ए. किया। छात्र जीवन में आप राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के स्वयं सेवक बने और तभी से राष्ट्रीय स्तर की वाद–विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेने लगे। उसके बाद आपने कानपुर में ही एल.एल.बी. की पढ़ाई प्रारम्भ की, लेकिन उसे बीच में ही विराम देकर पूरी निष्ठा से संघ के कार्य में जुट गए। आपने पत्रकारिता में अपना करियर शुरू किया। आप भारत के दसवें प्रधानमंत्री बने। आपने पहले 16 मई से 1 जून 1996 तक, तथा फिर 19 मार्च, 1998 से 22 मई, 2004 तक भारत के प्रधानमंत्री का पद संभाला। आप भारतीय जन संघ के संस्थापकों में से एक रहे और 1968 से 1973 तक उसके अध्यक्ष भी रहे। आप 1977 में पहले विदेश मंत्री बने, जिन्होंने संयुक्त राष्ट्रसंघ अधिवेशन में हिंदी में भाषण देकर भारत को गौरवान्वित किया। आप मुख्यतः ब्रजभाषा और खड़ी बोली में काव्य–रचना करते थे। अपने संघर्षमय जीवन, परिवर्तनशील परिस्थितियों, राष्ट्रव्यापी आन्दोलन, जेल–जीवन आदि अनेक आयामों के प्रभाव एवं अनुभूति ने आपके काव्य में सदैव अभिव्यक्ति पाई। आपकी प्रमुख रचनाओं में 'मेरी इक्यावन कविताएँ' तथा 'न दैन्यं न पलायनम्' जैसे काव्य–संग्रह , कविता 'ताजमहल', 'रग–रग हिन्दू मेरा परिचय', 'मृत्यु या हत्या', 'अमर बलिदान', 'कैदी कवि राय की कुण्डलियाँ', 'संसद में तीन दशक', 'अमर आग है', 'कुछ लेख : कुछ भाषण', 'सेक्युलरवाद', 'राजनीति की रपटीली राहें', 'बिन्दु बिन्दु विचार', 'पंद्रह अगस्त की पुकार', 'क़दम मिलाकर चलना होगा', 'हरी हरी दूब पर', 'कौरव कौन, कौन पांडव', 'दूध में दरार पड़ गई', 'क्षमा याचना', 'मनाली मत जइयो', 'पुनः चमकेगा दिनकर', 'अंतर्द्वंद्व', 'जीवन की ढलने लगी साँझ', 'मौत से ठन गई', 'मैं न चुप हूँ न गाता हूँ', 'एक बरस बीत गया', 'आओ फिर से दीया जलाएँ', 'अपने ही मन से कुछ बोलें', 'झुक नहीं सकते', 'ऊँचाई', 'हिरोशिमा की पीड़ा', 'दो अनुभूतियाँ', 'राह कौन–सी जाऊँ मैं?', 'जो बरसों तक सड़े जेल में', 'मैं अखिल विश्व का गुरु महान', 'दुनिया का इतिहास पूछता', 'भारत ज़मीन का टुकड़ा नहीं' तथा 'पड़ोसी से' जैसी प्रतिनिधि रचनाएँ शामिल हैं। आपने 'पंचजन्य', 'राष्ट्रधर्म', 'दैनिक स्वदेश' और 'वीर अर्जुन' जैसे पत्र–पत्रिकाओं के संप. ादन का कार्य भी किया।

अपनी कविता के संबंध में आपने लिखा है – 'मेरी कविता युद्ध की घोषणा है, हारने के लिए एक निर्वासन नहीं है। यह हारने वाले सैनिक की निराशा की ड्रमबीट नहीं है, लेकिन युद्ध योद्धा की जीत होगी। यह निराशा की इच्छा नहीं है, लेकिन जीत का हलचल चिल्लाओ।'

आपको 1992 में 'पद्म विभूषण', 1994 में 'लोकमान्य तिलक पुरस्कार', 1994 में 'श्रेष्ठ सांसद पुरस्कार', 1994 में 'पंडित गोविंद वल्लभपंत पुरस्कार', 2015 में बांग्लादेश सरकार द्वारा 'फ्रेंड्स ऑफ़ बांग्लादेश लिबरेशन वार आवर्ड' तथा 2015 में 'भारत रत्न' से सम्मानित किया गया।

श्री गोपालदास नीरज

19 जुलाई, 2018 को प्रसिद्ध गीतकार श्री गोपालदास नीरज का 93 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 4 जनवरी, 1925 को ग्राम पुरावली, ज़िला इटावा, उत्तर प्रदेश, भारत में हुआ था। आपने 1942 में एटा से हाई स्कूल परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। कई जगहों में टाइपिस्ट की नौकरी करने के पश्चात् आपने 1951 में बी.ए. और 1953 में प्रथम श्रेणी में हिंदी साहित्य से एम.ए. किया। आपने मेरठ कॉलिज में हिंदी प्रवक्ता के पद पर कुछ समय तक अध्यापन–कार्य किया। उसके बाद आप अलीगढ़ के धर्म समाज कॉलिज में हिंदी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हुए। 1944 में 'संघर्ष', 1946 में 'अन्तर्ध्वनि', 1948 में 'विभावरी', 1951 में

'प्राणगीत', 1956 में 'दर्द दिया है', 1957 में 'बादर बरस गयो', 1958 में 'मुक्तकी', 1959 में 'गीत भी अगीत भी', 1963 में 'आसावरी', 1970 में 'फिर दीप जलेगा', 1972 में 'तुम्हारे लिये' तथा 1987 में 'नीरज की गीतिकाएँ' आदि रचनाओं का प्रकाशन हुआ। आपको 'विश्व उर्दू परिषद् पुरस्कार', 1991 में भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री सम्मान', 1994 में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा 'यश भारती पुरस्कार', 2007 में भारत सरकार द्वारा 'पद्मभूषण सम्मान' से अलंकृत किया गया। इसके अतिरिक्त 1970 में फ़िल्म 'मेरा नाम जोकर' में सर्वश्रेष्ठ गीत–लेखन हेतु आपको तीन बार फ़िल्म फ़ेयर पुरस्कार भी मिला।

श्री बृजलाल धनपत

30 जुलाई, 2018 को श्री बृजलाल धनपत का 106 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 23 जून, 1912 को मॉरीशस के लेमारियान गाँव में हुआ था। आपने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा प्राथमिक स्कूल में की। कई पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें पढ़ने के बाद धनपत जी ने हिंदी सीखी। तत्पश्चात् आपके लेख व कहानियाँ पत्रिकाओं में छपने लगीं। 1935 में हिंदी प्रचारिणी सभा के पंजीकरण के बाद आपने सभा के प्रथम पड़तालक के रूप में कार्य किया तथा आप सभा के संस्थापकों में से एक थे। आपने 'दुर्गा' पत्रिका में छद्म नाम 'व्यास' से कई लेख लिखे तथा 'हम कैसे हैं' कहानी आपकी रचनाओं में शामिल है। आपको हिंदी सेवा के लिए विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा 2013 में 'विश्व भाषा सम्मान' तथा कई अन्य पुरस्कारों से अलंकृत किया गया।

श्री अमृतलाल वेगड़

6 जुलाई, 2018 को प्रसिद्ध हिंदी लेखक, साहित्यकार, पर्यावरणविद् एवं चित्रकार श्री अमृतलाल वेगड़ का 90 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 3 अक्तूबर, 1928 को जबलपुर, मध्य प्रदेश में हुआ था। आप 'नर्मदा पुत्र' के नाम से भी जाने जाते थे। आपने शांति निकेतन में आर्ट की पढ़ाई की। आप ललित कला संस्थान, जबलपुर में शिक्षक के रूप में कार्यरत थे। आपने दो बार नर्मदा नदी की परिक्रमा की थी। आपने पर्यावरण संरक्षण के लिए उल्लेखनीय काम किया है। आपको 'महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार' तथा गुजराती और हिंदी में साहित्य अकादमी पुरस्कार एवं अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। आपने नर्मदा नदी पर चार किताबें लिखी हैं – 'सौंदर्य की नदी नर्मदा', 'अमृतस्य नर्मदा', 'तीरे–तीरे नर्मदा' और 'नर्मदा तुम कितनी सुन्दर हो'।

श्री विष्णु खरे

19 सितंबर, 2018 को कवि, आलोचक, अनुवादक एवं पत्रकार, फ़िल्म आलोचक और पटकथा लेखक श्री विष्णु खरे का 78 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 9 फ़रवरी, 1940 को छिंदवाड़ा में हुआ था। आप महाविद्यालय की पढ़ाई करने इन्दौर गए तथा वहाँ से 1963 में, क्रिश्चियन कॉलिज से अंग्रेज़ी साहित्य में स्नातकोत्तर की डिग्री ली। 1962–63 तक वे इन्दौर से प्रकाशित दैनिक इन्दौर में उप–सम्पादक रहे और बाद में 1963 से 1975 तक मध्य प्रदेश तथा दिल्ली के महाविद्यालयों में प्राध्यापक के रूप में अध्यापन भी किया। आपने कई प्रसिद्ध कवियों की कविताओं के चयन और अनुवाद का विशिष्ट कार्य किया। आपने नई दिल्ली में केन्द्रीय साहित्य अकादेमी में उपसचिव का पद भी संभाला। आपने नवभारत टाइम्स में प्रभारी कार्यकारी सम्पादक और विचार प्रमुख के अलावा इसी पत्र के लखनऊ और जयपुर संस्करणों के सम्पादक, टाइम्स ऑफ़ इण्डिया में वरिष्ठ सहायक सम्पादक तथा लघुपत्रिका 'वयम्' के भी संपादक रहे। आपकी रचनाओं में 'एक गैर रूमानी समय में' (पहला काव्य–संकलन), 'खुद अपनी आँख से', 'सबकी आवाज़ के पर्दे में', 'आलोचना की पहली किताब', 'द पीपुल्स एण्ड द सेल्फ़', 'काल और अवधि के दरमियान', 'पिछला बाकी', 'लालटेन जलाना' आदि आपकी रचनाओं में शामिल हैं। लोठर लुत्से के साथ हिंदी कविता के जर्मन अनुवाद 'डिअर ओक्सेन करेन' के सम्पादन से जुड़ने के अलावा 'यह चाकू समय', अंतिला योझेफ़', 'हम सपने देखते हैं', 'मिक्लोश राट्नोती', 'कालेवाला', 'फ़िनी राष्ट्र काव्य' आदि आपके कई उल्लेखनीय अनुवाद हैं। आपको हिंदी साहित्य के 'नाइट ऑफ़ द व्हाइट रोज़ सम्मान', 'हिंदी अकादमी साहित्य सम्मान', 'शिखर सम्मान', 'रघुवीर सहाय सम्मान', 'मैथिलीशरण गुप्त सम्मान' आदि से सम्मानित किया गया।

श्री विद्याधर सूरज प्रसाद नायपॉल

11 अगस्त, 2018 को श्री वी.एस. नायपॉल का 85 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 17 अगस्त 1932 को ट्रिनिडाड के चगवानस में हुआ था। आपने उपनिवेशवाद, आदर्शवाद, धर्म और राजनीति जैसे विषयों पर हमेशा मुखर होकर लिखा। आपने अपने जीवन में कथा और कथेतर विधा में 30 से अधिक किताबें लिखीं। 'द मिस्टिक मैसर', 'मिगेल स्ट्रीट', 'ए हाउस फ़ॉर मिस्टर बिस्वास', 'ए फ़्लाग ऑन द आइलैंड', 'द मिमिक मैन', 'इन ए फ़्री स्टेट', 'गुरिल्लाज़', 'ए बेंड इन द रिवर', 'फ़ाइंडिंग द सेंटर', 'द इनिग्मा ऑफ़ अराइवल', 'ए वे इन द वर्ल्ड', 'बियॉन्ड बिलिफ़ : इस्लामिक एक्सकर्जन अमंग द कन्वर्टेड पीपुल्स', 'हॉफ़ ए लाइफ़', 'लिटरेरी ऑकेज़न्स' तथा 'मैजिक सीड्स' आपकी प्रमुख कृतियों में शामिल हैं। आपको साहित्य में 'नोबेल पुरस्कार', 'जोन लिलवेलीन रीज पुरस्कार', 'दी सोमरसेट मोगम आवर्ड', 'दी होवथोरडन पुरस्कार', 'दी डब्ल्यू.एच. स्मिथ साहित्यिक आवर्ड', 'बुकर सम्मान', 'दी डेविड कोहेन पुरस्कार', 'बुकर प्राइज़', 'नाइटहुड' आदि से विभूषित किया गया।

– संपादक मंडल

जिस भाषा में तुलसीदास जैसे कवि ने कविता की हो, वह अवश्य ही पवित्र है और उसके सामने कोई भाषा नहीं ठहर सकती।

– महात्मा गांधी

हिंदी एक जानदार भाषा है। वह जितनी बढ़ेगी, देश का उतना ही नाम होगा।

– जवाहर लाल नेहरू

साहित्य तो वह सेतु है, जो साधक और साधना और साधना के दो किनारों को जोड़ता है।

– श्री विद्यासागर

हिंदी भारतवर्ष के हृदय में स्थित करोड़ो नर–नारियों के हृदय और मस्तिष्क को खुराक देने वाली भाषा है।

– हज़ारीप्रसाद द्विवेदी